1

मनोविज्ञानः स्वयं और दूसरों को समझना

हम बहुधा क्रोध और प्रसन्नता की मुद्राओं का अनुभव करते हैं। हम में कविताएं, कहानियाँ और घटनाओं को याद रखने की अद्भुत योग्यता है। हम बहुधा नेताओं का अपने अनुयाइयों पर बहुत अधिक प्रभाव देखते हैं। हम बहुधा समूहों में अन्तःक्रिया करते समय द्वन्द्व और सहयोग का अनुभव करते हैं। किसी समय हममें से कुछ लोग अवसाद, अतिशय दुश्चिंता आदि से ग्रसित होते हैं। हम सभी इन घटनाओं के कारणों को जानने के उत्सुक रहते हैं और अपने तरीके से उनका अर्थ लगा लेते हैं। बहुधा हमारी समझ अपने विश्वासों और व्यक्तिगत अनुभवों पर आधारित होती है जो सही नहीं भी हो सकती है। इस प्रकार से एकत्रित ज्ञान का प्रयोग सिद्धान्तों के प्रतिपादन या लोगों के जीवन में आई समस्याओं को सुलझानें में नहीं किया जा सकता। हमें मानव मन और व्यवहार के कार्य करने का वर्णन करने के लिए निर्भरता योग्य और अपेक्षाकत उचित समझ की आवश्यकता है। मनोविज्ञान ऐसा विषय है जो मानव–व्यवहार के विभिन्न आयामों के प्रति अन्तर्दष्टि प्रदान करता है। इस पाठ में आप मनोविज्ञान के स्वरूप, मनोवैज्ञानिकों की क्रियाओं और मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं के बारे में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आपः

- मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता और मनोविज्ञान की प्रकति को स्पष्ट कर सकेंगे;
- मनोवैज्ञानिक क्या करते हैं बता सकेंगे;

- एक विषय के रूप में मनाविज्ञान के विकास को संक्षेप में बता सकेंगे;
- मनोविज्ञान का अन्य समवर्गी विषयों से सम्बन्ध का उल्लेख कर सकेंगे; और
- मनोविज्ञान के परिवर्तित होते हुए रूप और मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का वर्णन कर सकेंगे।

1.1 मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता

लोग मनोविज्ञान के अध्ययन से अनेक अपेक्षायें रखते हैं, इनमें से बहुत से अज्ञानता के कारण किन्तु कुछ सही भी होते हैं। विभिन्न मानसिक कार्य कैसे घटित होते हैं और लोग विभिन्न परिस्थितियों के कैसे व्यवहार करते हैं, इन बातों को समझने में मनोविज्ञान हमारी सहायता करता है। इसके सिद्धान्तों को विभिन्न परिस्थितियों में प्रयोग किया जाता है। मनोविज्ञान स्कूलों में सीखने–सिखाने की समस्याओं, घर में बच्चों के सामाजीकरण, समस्याओं के समाधान में संगठनों में लोगों को अभिप्रेरित करने और लोगों के व्यक्तिगत जीवन में भावात्मक समस्याओ को सुलझाने में सुसंगत है। इसके अतिरिक्त मानव जीवन में असंख्य अति उल्लेखनीय घटनायें होती हैं जिसमें मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों और प्रविधियों की आवश्यकता होती है। विभिन्न नौकरियों में लोगों का चयन, लोगों की योग्यता और अभिक्षमताओं का मापन, लोगों की कुशलता के विकास हेतु प्रशिक्षण, इस हेतु लक्ष्य निर्धारित और उन्हें प्राप्त करने हेतु अभिप्रेरित करना और उत्तम स्वास्थ्य के लिये जीवन शैली को उन्नत बनाना आदि मनोविज्ञान के कुछ अति लोकप्रिय अनुप्रयोग हैं। संक्षेप में एक व्यक्ति की अभिवद्धि और विकास को समझना, या एक समूह का कार्य करना मनोवैज्ञानिक अनुप्रयोगों के महतवपूर्ण क्षेत्र हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अपने आपको तथा अपनी क्षमताओं को समझने और उन्हें वांछित दिशा में ढालने के लिये मनोविज्ञान के अध्ययन की आवश्यकता है। समूहों और संगठनों, जो मानव की सामूहिकता दर्शाते हैं, के स्तर पर भी एक ऐसा प्रयास किया जाता है। दूसरे शब्दों में, मनोविज्ञान का उपयुक्त अध्ययन और समझ हमें स्वयं और दूसरों को समझने तथा जीवन को उन्नत बनाने में सहयोग कर सकता है।

1.2 मनोविज्ञान का स्वरूप

मनुष्य किस प्रकार परिवेश की जानकारी प्राप्त करते हैं और वस्तुओं को देखते हैं?

लोग अनुभव कैसे प्राप्त करते और याद रखते हैं?

लोग कैसे सोचते, तर्क करते और समस्याओं का समाधान करते हैं?

लोग बुद्धि, व्यक्तित्व और अभिरुचि जैसी विभिन्न मनोवैज्ञानिक विशेषताओं में कैसे मतभिन्नता रखते हैं?

लोग जीवन की समस्याओं का सफलतापूर्वक समाधान कैसे करते हैं?

एक क्षण के अनुचिन्तन से यह स्पष्ट हो जायेगा कि उपर्युक्त सभी प्रश्नों में मस्तिष्क, मन या मानसिक क्रियायें और व्यवहार संलग्न होते हैं। कोई भी अवलोकन योग्य कार्य मस्तिष्क, मन और व्यवहार के समन्वय का परिणाम होता है। मस्तिष्ट की एक भौतिक संरचना होती है जबकि मन को मस्तिष्क का सहगामी माना जाता है। मनोविज्ञान उन नियमों और सिद्धांन्तों में सम्बन्ध बिठाने वाले नियमों और सिद्धान्तों को समझने का प्रयास करता है।

हम अपने दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार से व्यवहार करते हैं और मौखिक व दैहिक अनुक्रियायें एवं कार्य करने के लिए 'व्यवहार' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

मनोवैज्ञानिक मुद्दों के प्रति रुचि का एक लम्बा इतिहास है। फिर भी मनोवैज्ञानिक दश्य घटनाओं की समझ का आधुनिक अर्थों में औपचारी कारण केवल उन्नीसवीं शताब्दी में प्रारंभ हुआ। ऐसा दर्शन और प्राकतिक विज्ञानों के विकास से प्रभावित था। आजकल मनोविज्ञान को एक विज्ञान के साथ ही एक जीवन की गुणवत्ता बनाने वाले व्यवसाय के रूप में लिया जाता है। यह मुख्यतः विभिन्न मानसिक आयामों और व्यावहारिक क्रियाविधि पर केन्द्रित है। मनोवैज्ञानिक व्यावहारिक दश्य घटनाओं के कारण को समझने के लिये वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करते हैं और इनके सम्बन्ध में नियमों और सिद्धान्तों का निर्माण करते है। वे मानव व्यवहार से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों को समझने का प्रयास करते हैं।

इस देश में अपने विकासक्रम में मनोविज्ञान ने बहुत दिशाओं में विस्तार लिया है और मानव जीवन के लगभग हर क्षेत्र को अपनी सीमाओं में आवेष्टित किया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मनोविज्ञान मन, मस्तिष्क और व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है।

1.3 मनोवैज्ञानिक क्या करते हैं?

हममें से बहुतों की धारणा है कि मनोवैज्ञानिक किसी व्यक्ति के चेहरे को पढ़ सकते हैं और व्यक्ति की मनोरचना बता सकते हैं, मानसिक अपसामान्यता से ग्रसित लोगों का इलाज कर सकते हैं, किसी के भविष्य का अनुमान लगा सकते हैं और एक जादूगर की भांति किसी व्यक्ति का मन तुरन्त बदल सकते हैं। बाद में हम दखेंगे कि मनोवैज्ञानिक के हाथ मे कोई जादू नहीं है। मनोवैज्ञानिक कतिपय प्रक्रिया और उपकरणों का प्रयोग करके सूचना एकत्रित करता है और व्यवहार संभावित कारणों से सम्बन्ध के अनुमान और परिणाम निकालने का प्रयास करता है। मनोवैज्ञानिक के सम्मुख दो लक्ष्य होते हैं:

1. व्यवहार की जटिलताओं को समझना और व्याख्या करना, और
2. मनुष्य के जीवन की गुणवत्ता बढ़ाने में योगदान करना।

मूल शोध पर कार्य करने वाले अकादमिक मनोवैज्ञानिक प्रथम लक्ष्य में रुचि रखते हैं। वे मानसिक प्रक्रमों और व्यवहार के विविध पक्षों सम्बन्धी परिकल्पनाओं का परीक्षण करने

का प्रयास करते हैं। वे प्रेक्षण और प्रयोग जैसी विभिन्न विधियों द्वारा सामान्य एवं आधारभूत सिद्धान्त एवं नियम विकसित करते हैं। वे व्यावहारिक सांवति का वर्णन करने, स्पष्ट करने, भविष्यवाणी करने एवं नियंत्रण करने का प्रयास करते हैं। इसके विरुद्ध दूसरे लक्ष्य का उपयोग व्यवसायी अनुप्रयुक्त मनोवैज्ञानिक करते हैं। ये मनोवैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग मनुष्य की विभिन्न समस्याओं को हल करने में करते हैं। वे परामर्श, चिकित्सा, व्यक्तिगत चयन, व्यवसाय निर्देशन, संगठनात्मक व्यवहार में विशेषज्ञ परामर्श (जैसे, टीमनिर्माण, नेतत्व प्रशिक्षण) उपभोक्ता सर्वेक्षण, मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन और विभिन्न कौशलों का प्रशिक्षण (जैसे संप्रेषण, स्व–प्रस्तुतीकरण) आदि क्रियाओं में व्यस्त रहते हैं। आजकल मनोवैज्ञानिक केवल अकादमिक संस्थाओं में शिक्षण और शोध कार्य में संलग्न नहीं रहते अपितु वे चिकित्सालय, विद्यालय, औद्योगिक केन्द्र, क्रीड़ा–संस्थानों, सैनिक प्रतिष्ठानों, सामुदायिक–केन्द्रों आदि में भी कार्य करते पाये जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 1.1

सही विकल्प चुनियेः

1. मनोविज्ञान बहुत सही ढंग से परिभाषित होता हैः
   (क) मन का अध्ययन
   (ख) अचेतन मानसिक प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन
   (ग) मन, मस्तिष्क और व्यवहार का विज्ञान
   (घ) व्यवहार और ज्ञान का विज्ञान
2. मनोवैज्ञानिक निम्नांकित में से किसका प्रयोग नहीं करते?
   (क) साक्षात्कार
   (ख) किसी की हथेली की रेखायें पढ़ना
   (ग) प्रयोग
   (घ) प्रेक्षण

1.4 मनोविज्ञान का एक विषय के रूप में विकास

अति प्राचीन काल से मानव स्वभाव को समझना मनुष्य की मुख्य सरोकार रहा है। भारतीय चिंतिकों ने चेतना, आत्मा, मन, मानसिक क्रियाओं के सम्बन्ध वैदिक और उपनिषदिक काल से वहत सिद्धान्त विकसित किये थे। वेदान्त, सांख्य, योग, बौद्ध, जैन, सूफी इत्यादि दर्शन पद्धतियों ने मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के अनुकूल बहुत बड़े साहित्य की रचना की है। हम यह जान लें कि प्राचीन भारत में विद्वानों और शिक्षकों जैसे प्रथम

शताब्दी ईसा पूर्व के प्रसिद्ध चिकित्सक चरक, वात्सायन और कौटिल्य सभी ने मनोवैज्ञानिक नियमों के प्रयोग हेतु आधार तैयार किया। चूंकि मनोविज्ञान के विकास में सामाजिक और सांस्कतिक परिवेश का अपना महत्व होता है अतः इस बात को भारतीय संदर्भ में समझने की आवश्यकता है।

पश्चिम में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में मनोविज्ञान ने एक वैज्ञानिक विषय का रूप ले लिया। सामान्यतः ऐसा माना जाता है कि सर्वप्रथम विल्हेम ऊन्ट ने 1879 में जर्मनी के लीपजिग विश्वविद्यालय में प्रथम मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला स्थापित की। वह इस दिशा में एक अगुवा थे और उन्होंने विश्व के विभिन्न देशों के विद्यार्थियों का आकर्षित किया जिन्होंने इस विषय को विस्तार देना प्रारम्भ किया। धीरे–धीरे मनोविज्ञान का अध्ययन कतिपय विचार धाराओं में संगठित किया जाने लगा। प्रमुख विचार धाराएँ निम्नलिखित हैं:

संरचनावादः एडवर्ड टिचनर द्वारा विकसित इस सिद्धान्त ने अपना ध्यान चेतना और उसके अवयवों पर केन्द्रित किया जैसे संवेदना, बिम्ब, भाव।

प्रकार्यवादः इसका विकास विलियम जेम्स ने किया। यह चेतना, स्मति, अस्तित्व से सम्बन्धित संवेग और अधिगम जीवों की अभिवद्धि और अनुकूलन पर केन्द्रित था।

व्यवहार वादः यह जे. बी. वाट्सन द्वारा विकसित किया गया। यह प्रेक्षण योग्य व्यवहार के अध्ययन पर केन्द्रित था।

गेस्टाल्टवादः इसका विकास वोल्फगांग कोहलर, कुर्ट कोफका और उनके विश्वसनीय परामर्शदाता मैक्स वदाईमार द्वारा किया गया। इसका मुख्य ध्यान चेतना की सम्पूर्णता था। प्रत्यक्षकरण अध्ययन का प्रमुख क्षेत्र था।

मनोविश्लेषणः इसका विकास सिग्मण्ड फ्रॉयड ने किया। यह अचेतन प्रक्रियाओं, द्वन्द्व, दुश्चिंता तथा मनोविकारों को महत्व देता है।

इन विचारधाराओं के कालखण्ड ने मनोविज्ञान के विविधीकरण का अवसर प्रदान किया। फिर भी यह अनुभव किया गया कि इनमें से कोई भी मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को पूर्णतः स्पष्ट नहीं करता। परिणामस्वरूप विभिन्न विचार आराओं के संप्रत्यों तथा वैज्ञानिक विधि का उपयोग प्रारंभ हुआ।

हाल के आन्दोलनों में सूचना सिद्धान्त तथा अभिकलनिय प्रतिरूपों पर बल शामिल है जिसने संज्ञानात्मक क्रान्ति को विशेष रूप से चिन्हित किया। अब मनोवैज्ञानिक कार्य को रूप प्रदान करने में तंत्रिका प्रक्रियाओं एवं सांस्कतिक प्रक्रियाओं को सशक्त अध्ययन किया जाता है।

आधुनिक भारत में 1916 में कलकत्ता विश्वविद्यालय में मनोविज्ञान का प्रारंभ हुआ। सेनगुप्ता प्रथम विभागाध्यक्ष थे। श्री गिरीन्द्रा शेखर बोस डा, सेनगुप्ता के उत्तराधिकारी हुये। 1924 में *इण्डियन साइकालोजिकल अशोसियशन* की स्थापना हुई और 1925 में

इण्डियन जरनल आफ साइकालोजी का प्रारंभ हुआ। 1940 में कोलकाता में *लुम्बिनी पार्क मेन्टल हास्पिटल* की स्थापना हुई। धीरे–धीरे पटना, लखनऊ और मैसूर जैसे विश्वविद्यालयों में मनोविज्ञान विभाग खोले गये। सातवें दशक में विभिन्न क्षेत्रों और संस्थाओं में मनोविज्ञान अधिक लोकप्रिय हो गया। शिक्षा, उद्योग, स्वास्थ्य, रक्षा और अन्य सम्बन्धित क्षेत्रों में मनोविज्ञान की आवश्यकता व्यापक रूप से अनुभव की जाने लगी है।

1.5 मुख्य मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य

- भौतिक पदार्थों और पशुओं से भिन्न मानव प्राणी आत्म–चेतन हैं और इसीलिये वे स्वयं अपना अध्ययन कर सकते हैं। अपने आपको व्यक्त करने की यह क्षमता मानवीय व्यवहार और तटसम्बन्धी अन्य प्रक्रियाओं के अध्ययन को अधिक जटिल बना देती है। मानवीय व्यवहार में विविध कारणों का समावेश इसके अध्ययन की जटिलता को और बढ़ा देता है। उदाहरण के लिये एक व्यक्ति अपने सहयोगी के बारे में यह शिकायत करता है कि वह अपना कार्य ठीक से नहीं करता/करती है। ऐसा व्यवहार अनेक कारकों–स्वतंत्र या संयुक्त रूप से – के कारण हो सकता है। ऐसा योग्यता के अभाव में, अभिप्रेरणा के अभाव में कार्यस्थल पर उपयुक्त वातावरण के अभाव में या घर की किसी समस्या के कारण हो सकता है। इनमें से किसी एक कारक अथवा उनके संयोजन के परिणामस्वरूप कार्य का निष्पादन कमजोर हो सकता है। यह अधिकांश व्यावहारिक सांवति के सम्बन्ध में सत्य हैं।

- इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोवैज्ञानिक विज्ञान की विधियों का उपयोग करता तो है किन्तु वे भौतिक या प्राकतिक विज्ञानों की भांति प्रभावी कार्य नहीं कर सकतीं। उन्हें व्यवहार के अध्ययन में बहुत से कारकों को ध्यान में रखना पड़ेगा। वे भौतिक और सामाजिक विज्ञानों की विशेषताओं को भी काम में लाते हैं।

- फिर भी, मनोवैज्ञानिक भविष्यवाणिंया जटिल होती हैं और उनकी कुछ सीमायें होती हैं। उनकी परिशुद्धि प्रयुक्त उद्दीपनों, उपकरणों, पारिवेशिक परिस्थितियों और अध्ययन की जाने वाली मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के स्परूप द्वारा सीमित होती हैं। मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का गतिशील स्वरूप सामान्यीकरण को कठिन बना देता है। सामान्यीकरणों का स्वरूप संभावनायुक्त होता है। दूसरे शब्दों में वे संकेत करते हैं कि दी गई दशाओं के अन्तर्गत अमुक प्रकार की घटना घटित होने की संभावना हो सकती है।

मानवीय व्यवहार का अध्ययन करते समय निम्नांकित को ध्यान में रखने की आवश्यकता हैः

(i) व्यक्तियों में परिपक्वता, अधिगम और बढ़ती आयु के कारण परिवर्तन पाये जाते हैं।

(ii) मानवीय व्यवहार किसी समय व्यक्तिगत विशेषताओं और परिवेश के गुणधर्म का सयुक्त कार्य है।

(iii) मनोवैज्ञानिक गुणधर्मों का मापन (जैसे व्यक्तित्व, बुद्धि, रुचि, अभिवति) सामान्यतः अप्रत्यक्ष और अनुमानों पर आधारित होता है।

(iv) सामाजिक व्यवहार के बहुत से आयाम निमय–शासित और संस्कति–विशेष होते हैं।

(v) मानवीय व्यवहार सामान्यतः विविध कारणों द्वारा निर्धारित होता है।

मनोवैज्ञानिक दश्य घटनाओं की समझ और विश्लेषण अनिवार्यतः मानव प्राणी के एक नमूने को लक्षित करते हैं। वे इन नमूनों के मूल में कतिपय सांस्कतिक और दार्शनिक पूर्वानुमानों को लक्षित करते हैं। इसी एक महत्वपूर्ण कारण से मानवीय व्यवहार को समझने के लिये अनेक प्रकार की विधियां या परिप्रेक्ष्य हैं।

आइये हम इन परिप्रेक्ष्यों के सम्बन्ध में अधिक अध्ययन करें:

जैविक परिप्रेक्ष्यः यह मानव प्राणियों को एक जैविक संरचना के अतिरिक्त कुछ नहीं मानता। व्यवहार को शुद्ध शारीरिक अर्थों में लेते हुए यह आन्तरिक शरीर क्रिया संरचना (जैसे मस्तिष्क, तंत्रिकातंत्र) को देखता है। एक भौतिक मत का समर्थन करके यह दावे के साथ कहता है कि समस्त व्यवहार का एक शरीर क्रिया आधार है। इस मत में व्यवहार को बनाने में तंत्रिका तंत्र की क्रिया तथा अनुवांशिक कारकों की भूमिका का महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। यह माना जाता है कि समस्त सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें जैविक प्रक्रियाओं से निसत होती हैं। यह मत जटिल दश्य घटनाओं का विश्लेषण छोटी इकाइयों के आधार पर करना पसन्द करता है। इसने मस्तिष्क के कार्य करने के रहस्यों को खोल दिया है। नशीले पदार्थों का व्यवहार पर प्रभाव, मस्तिष्क के विभिन्न भागों पर विद्युतीय उद्दीपनों के परिणाम, ध्यान का प्रभाव और चेतना की परिवर्तित अवस्थाओं पर किये गये अध्ययनों ने अति रोचक परिणाम दर्शाये हैं।

व्यवहार परिप्रेक्ष्यः यह परिप्रेक्ष्य लोगों के कार्य करने के तरीके निर्धारण पर पारिवेशिक उद्दीपनों की भूमिका पर जोर देता है। इसका तर्क है कि हम जो हैं वह पूर्व के अधिगम का परिणाम है। अतः प्रकट या प्रेक्षणीय व्यवहार मनोविज्ञान की विषय वस्तु बन जाता है। यह कार्यविधि चेतना और स्वगत मानसिक अवस्थाओं को महत्व नहीं देती। इस परम्परा में प्रेक्षणीय व्यवहार और पारिवेशिक स्थितियों से उसका सम्बन्ध ही अध्ययन का केन्द्र बिन्दु है। इसके प्रतिपादक डब्लू.जे. वाट्सन और इसके समर्थक बी. एफ. स्किनर का विश्वास व्यवहार के वस्तुनिष्ठ अध्ययन में था। व्यवहारवाद के अनेक विकल्प हैं किन्तु सभी अधिगम और प्रेक्षणीय घटनाओं पर आधारित व्याख्या के उपयोग में समान रूप से रुचि रखते हैं।

मनोगतिक परिप्रेक्ष्यः बहुधा हम अपने कार्यों के कारणों से अनभिज्ञ होते हैं। सिग्मण्ड फ्रायड, मनोविश्लेषण के प्रतिपादक इस मत से निकट से जुड़ा है। व्यवहार के अभिप्रेरित प्रश्नों पर केन्द्रित होकर यह परिप्रेक्ष्य आन्तरिक प्रक्रियाओं की जांच करता है। इसका विश्वास है कि प्रत्येक व्यवहार का एक कारण होता है और वह कारण मन में पाया जाता

है। यह माना जाता है कि हमारे व्यवहार का अधिकांश जागति की सीमा के बाहर रहने वाली अचेतन प्रक्रियाओं द्वारा शासित होता है। यह मत मानसिक विकारों से ग्रसित लोगों के प्रेक्षण का उपयोग करता है और बचपन के अनुभवों को प्रौढ व्यवहार का निर्धारक मानता है। इस मत के अनुसार मनुष्य मूल रूप से काम और आक्रमक मूल प्रवत्तियों द्वारा चालित होता है। *हार्नी, एरिक्सन* और *एरिचफ्राम सरीखे नव–फ्रॉयडवादियों* ने विभिन्न रूप में मनोविश्लेषण का विकास किया है। इसी प्रकार *युंग* और *एडलर* ने भिन्न परम्परायें विकसित कीं।

संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्यः लोग विश्व के सम्बन्ध में कैसे जानते, समझते और सोचते हैं इस मत का यही केन्द्र है। हमारे व्यवहार में अधिकांश मानसिक या संज्ञानात्मक प्रक्रियायें जैसे प्रत्यक्ष करना, याद करना और सोचना शामिल हैं। हमारे व्यवहार को समझने में ये उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितने पारिवेशिक उद्दीपन। ये पारिवेशिक उद्दीपनों और प्राणी की अनुक्रियाओं में मध्यस्थ का कार्य करते हैं। यह संगठनात्मक और व्यवस्थित रूप में कार्य करते हैं। सक्रिय प्राणियों की भांति हम सूचना प्रक्रम करते हैं और उस पर अमल करते हैं। हमारे संज्ञान हमारे व्यवहार का रूप निश्चित करते हैं। हम परिवेश का प्रेक्षण करते हैं और उसकी व्याख्या के आधार पर प्रतिक्रिया करते हैं। हमारे विचार हमारे प्रकट कार्यों का कारण और परिणाम दोनों हैं। ये परिप्रेक्ष्य उभरते संज्ञानात्मक विज्ञान और कत्रिम वुद्धि के क्षेत्रें से सम्बन्ध रखता है।

मानवतावादी परिप्रेक्ष्यः बहुधा तीसरी शक्ति के रूप में इस परिप्रेक्ष्य को लिया जाता है। यह परिप्रेक्ष्य मनुष्यों को मूलतः अच्छा और उत्तरदायी प्राणी मानता है। यह भी माना जाता है कि व्यक्ति का व्यवहार मात्र पूर्व अनुभवों या वर्तमान परिस्थितियों से नहीं निर्धारित होता है। लोग चयन कर सकते हैं। "स्वतंत्र इच्छा" पर बल होता है। लोगों के कार्य के ढंग का निर्धारण करने में उनके व्यक्तिगत अनुभव और व्याख्यायें महत्वपूर्ण होते हैं। सिद्धान्तों का उपयोग केवल लोगों को समझने के लिये नहीं अपितु व्यक्ति के स्वयं के जीवन को समझने के लिये होना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में आत्म सिद्धि और अध्यात्म की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यह लोगों के जीवन इतिहास की प्रतिकति देखने का प्रयास करता है। यह लोगों के दश्य घटना या अनुभवजन्य जगत पर बल देता है। अब्राहम मासलो और रोजर्स इस मत के प्रतिपादक थे।

भरतीय परिप्रेक्ष्यः भारतीय चिन्तन पद्धति ने मानव जीवन की समस्याओं की चर्चा एक विस्तत परिप्रेक्ष्य में की है। एक मनुष्य परिवेश और दैवी शक्ति से दढ़ता से जुड़ा हुआ है और मन, शरीर और आत्मा के सामंजस्य पर बल देता है। लोग इच्छित पदार्थों की ओर अनजाने आकर्षित होते हैं जो समस्यायें पैदा करता है। लोग अपने सच्चे स्वरूप से अनभिज्ञ होते हैं। जीवन में कठिनाइयों का कारण अपनी क्षमताओं का ज्ञान न होना और स्वयं को भौतिक पदार्थों के साथ अपनी पहचान करने की गल्ती करना है। इसके समाधान के लिये योग की विभिन्न विधाओं का सुझाव दिया जाता है जैसे ज्ञान, कर्म, भक्ति और राजयोग। इसके अतिरिक्त इन सभी पद्धतियों और परम्पराओं में और अधिक विकास हुये हैं।

1.6 मनाविज्ञान का अन्य विषयों से सम्बन्ध

एक व्यवहारपरक विज्ञान होने के नाते मनोविज्ञान अनेक विषयों के साथ आन्तरिक रूप से जुड़ा है। मनोवैज्ञानिक खोजें जैविक विज्ञानों, सामाजिक विज्ञानों और मानवीकी की विभिन्न शाखाओं के साथ सहभागी रहती हैं। ज्ञान के ये सारे क्षेत्र व्यवहारपरक विज्ञानों के रूप में जाने जाते हैं। हाल के वर्षों में मनोविज्ञान का अन्य विषयों के साथ जुड़ाव स्वीकार किया गया है। आजकल बहु–विषयक एवं प्रतिकूल–विषयक अध्ययनों की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। आइये देखें कि किस प्रकार मनोविज्ञान दूसरे विषयों से सम्बन्धित है।

समाजशास्त्रः मानव व्यवहार का सामाजिक या समूहगत आयाम समजाशास्त्र और मनोविज्ञान के विद्याथिर्यो के लिये समान रुचि का विषय है। फिर भी दोनों के स्तरों और कार्य करने के तरीकों में भिन्नता है। दोनों विषय मानव–व्यवहार को सामाजिक सन्दर्भ में समझने में हमे सहायता करते हैं। दोनों सामाजिक दश्य घटनाओं जैसे नेतत्व, सामाजीकरण आदि का विश्लेषण करते हैं। फिर भी समाजशास्त्र विस्तत इकाइयों पर ध्यान देता है। यह समूहों और समुदायों के अध्ययन पर बल देता है, जबकि मनोविज्ञान व्यक्तियों पर अधिक ध्यान देता है। यह सूचना एकत्रित करने के लिये प्रयोगात्मक सर्वेक्षण और प्रेक्षण विधियों का प्रयोग करता है।

मानवशास्त्रः मानवशास्त्र मानव जाति के क्रमिक विकास और सभ्यता के विकास को समझने का प्रयास करता है। विभिन्न सांस्कतिक समूहों में सम्मिलित प्रेक्षण द्वारा लोगों के जीवन का विस्तत प्रेक्षण और अभिलेखन करके संस्कति की प्रक्रमों और विशेषताओं पर भी केन्द्रित होता है। इसके विपरीत, मनोविज्ञान मानव व्यवहार के बारे में सामान्य नियम प्रस्थापित करने का प्रयास करता है। अनेक बार यह सामान्यीकरण संस्कति द्वारा सीमित हो जाते हैं जिसमें शोध कार्य सम्पन्न किया जाता है। हाल में मनोविज्ञान और संस्कति का अति निकट का सम्बन्ध हो गया है। संस्कति की आवश्यकताओं के प्रतिक्रिया करने वाले मनोवैज्ञानिक अध्ययनों ने दर्शाया है कि संवेगों, आत्म संप्रत्यों, अभिप्रेरणों, व्यक्तित्व, मानकों, नैतिकता और विभिन्न संस्कतियों के अन्तर्गत बच्चों का पालन–पोषण के स्वरूप और अभिव्यक्ति में महत्वपूर्ण अन्तर और समानतायें पाई जाती हैं।

शिक्षाः शिक्षा और मनोविज्ञान के सम्बन्ध का एक लंबा इतिहास है। शिक्षा के सिद्धान्त और कार्य विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं जेसे अधिगम, स्मति, अभिप्रेरणा, व्यक्तित्व और बुद्धि से सम्बन्धित सिद्धान्तों और निष्कर्षों पर आधारित होते हैं। प्रभावी कक्षा शिक्षण और अधिगम तभी संभव है जबकि शिक्षक मानवीय विकास के सिद्धान्तों में प्रशिक्षित होते हैं। बच्चे क्रियाशील शिक्षार्थी होते हैं जो सूचनाये एकत्रित करते और तदानुसार कार्य करते हैं। इसलिये एक शिक्षक को अभिप्रेरणा और सम्प्रेषण की तकनीक में दक्ष होना चाहिये। बहुधा शिक्षकों को विद्यार्थियों और अभिभावकों को निर्देशन और परामर्श प्रदान करना

पड़ता है। इसी प्रकार विद्यार्थियों के मूल्यांकन के लिये मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन के सिद्धान्त और कार्यपद्धति की आधारिक समझ होनी चाहिये।

जीव विज्ञान और तंत्रिका विज्ञानः मनोवैज्ञानिकों का एक प्रमुख चिन्ता व्यवहार के जैविक आधारों को समझना है। व्यवहार की समझ नियंत्रण और सुधार में बहुत सी नई खोजें मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र के कार्य के ज्ञान से आई हैं। मस्तिष्क के कार्यों का स्थानीकरण, तंत्रिका आवेग का स्वरूप और गुणधर्म, उत्तेजना और अभिप्रेरणा में जैविक कारक, मनोवैज्ञानिक क्रिया को निर्धारित करने वाले मस्तिष्क के विभिन्न भाग, आदि जांच–पड़ताल का उद्दीप्त क्षेत्र हैं।

पाठगत प्रश्न 1.2

(अ) निम्नलिखित कथनों के जोड़े बनाइयेः

(1) जैविक परिप्रेक्ष्य	(क) मनुष्य की सकारात्मक शक्ति
(2) व्यवहारिक परिप्रेक्ष्य	(ख) व्यवहार में मानसिक प्रक्रिया
(3) मनोगयात्मक परिप्रेक्ष्य	(ग) जैविक इकाई के कार्य
(4) संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य	(घ) मन, शरीर और आत्मा का समन्वय
(5) मानववादी परिप्रेक्ष्य	(ङ) मन का अचेतन आयाम
(6) भारतीय परिप्रेक्ष्य	(च) पारिवेशिक विशेषताओं के कार्य

(ब) बताइये निम्नांकित कथन सत्य हैं या असत्य

(i) समाजशास्त्र और मनोविज्ञान मनुष्य के व्यवहार पर सामाजिक सन्दर्भ के प्रभाव को समझने में सहायता करते हैं। सत्य/असत्य

(ii) मानवशास्त्र मानवजाति के क्रमिक विकास और सभ्यता के विकास का अध्ययन करता है सत्य/असत्य

(iii) शिक्षा और मनोविज्ञान असम्बद्ध हैं। सत्य/असत्य

(iv) मानवीय व्यवहार का कोई जैविक आधार नहीं है। सत्य/असत्य

1.7 मनोविज्ञान के क्षेत्र

विषय के रूप में विकसित होकर मनोविज्ञान ने अनेक दिशाओं में विविधता उत्पन्न की है और विस्तार लिया है। प्रायोगिक और शरीर क्रियात्मक मनोविज्ञान से प्रारंभ हुआ और अब उसका जोर आधारिक मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं से हटकर मनोविज्ञान जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग होने लगा। आगे हम मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं के बारे में अध्ययन करेंगे।

(a) **प्रयोगात्मक और संज्ञानात्मक मनोविज्ञानः** परम्परागत रूप से प्रयोगात्मक मनोविज्ञान का सम्बन्ध संवेदना, प्रत्यक्षीकरण, सीखना, स्मति, अभिप्रेरणा, संवेग, इत्यादि मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं से है। इसका उद्देश्य प्रयोगात्मक विधि की सहायता से उक्त प्रक्रियाओं के अन्तर्गत आने वाले सिद्धान्तों को समझना है। लम्बे समय तक इस क्षेत्र का प्रभुत्व बना रहा। बढ़ती सूचनाओं और जानकारियों के कारण इस क्षेत्र का विविधीकरण हो गया। संज्ञानात्मक मनोविज्ञान का नया क्षेत्र प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के सबसे निकट का क्षेत्र लगने लगा। इस क्षेत्र में प्रत्यक्षीकरण, समझने की शक्ति और सूचनाओं का उपयोग करने वाली प्रक्रियाओं की विभिन्न उद्देश्यों के लिये व्याख्या करने का प्रयास किया। इस प्रकार तर्क, समस्या समाधान, अवधान और तत्सम्बन्धी प्रक्रियाओं का परिष्कत विधियों एवं उपकरणों द्वारा विश्लेषण किया जाने लगा। यह शाखा व्यवहार के आधारभूत कारणों को समझने का प्रयास करती है।

(b) **शरीर क्रिया एवं तुलनात्मक मनोविज्ञानः** यह क्षेत्र व्यवहार के जैविक आधारों की व्याख्या करने से सम्बन्धित है। इसका विश्वास है कि समस्त व्यवहार कतिपय दैहिक प्रक्रियाओं तक सीमित किया जा सकता है। उदाहरण के लिये प्रमस्तिष्की वल्कुट और हाइपोथैलेमस में घटने वाली क्रियायें व्यवस्थित रूप से चिन्तन और अभिप्रेरणा से सम्बन्धित होती हैं। तुलनात्मक मनोविज्ञान चूहों, कबूतरों और बन्दरों जैसे पशुओं के व्यवहार के आयामों और जटिलताओं की खोज करता है तथा उनकी तुलना अन्य उपजाति से करता है।

(c) **वैकासिक मनोविज्ञानः** मनोविज्ञान का यह उपक्षेत्र सम्पूर्ण जीवन में आने वाले परिवर्तनों की समस्या का अध्ययन करता है। ये परिवर्तन शारीरिक, गत्यात्मक, संज्ञानात्मक, व्यक्तित्व, संवेगात्मक, सामाजिक और भाषात्मक क्षेत्रें में घटित होते हैं। इस परिवर्तन का अध्ययन उसी एक व्यक्ति के साथ लम्बे समय तक रहकर किया जा सकता है। विकल्प के रूप में विभिन्न आयु समूहों के लोगों का अध्ययन किया जा सकता है। प्रथम विधि को अनुदेर्ध्य तथा दूसरी को प्रतिनिध्यात्मक कहा जा सकता है। इस शाखा के महत्वपूर्ण भागों के अन्तर्गत बाल मनोविज्ञान, किशोर मनोविज्ञान, प्रौढ़ मनोविज्ञान हैं। वैकासिक मनोविकति विज्ञान का अध्ययन व्यवहार की समस्याओं से ग्रस्त बच्चों को पुनर्वासित करने में अत्यन्त महत्व रखता है।

(d) **समाज मनोविज्ञानः** मानव प्राणियों में एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया हमारे जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पक्ष है। समाज मनोविज्ञान हमारे व्यवहार पर दूसरे व्यक्तियों या समूहों के प्रभाव को समझाने का प्रयास करता है। दूसरे व्यक्तियों को देखना, धारणा बनाना, दूसरों को अपने दष्टिकोण बदलने के लिये समझाना, पूर्वाग्रह, अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण, समूह निर्णय, सामाजिक अभिप्रेरण और नेतत्व समाज मनोविज्ञान में महत्वपूर्ण विषय वस्तु है। जल्दी ही प्रयोगों और नये विशिष्टीकरण में दिलचस्पी दिखाई गयी है जिसे प्रयोगात्मक समाज मनोविज्ञान का नाम दिया गया है। समाज मनोविज्ञान विशेषकर समाजशास्त्रियों के योगदान से लाभान्वित हुआ है।

(e) **शिक्षा और विद्यालय मनोविज्ञानः** एक प्रायोगिक क्षेत्र के रूप में मनोविज्ञान की यह शाखा कक्षा व्यवस्था में शिक्षण और अधिगम की समस्याओं का समाधान करने में सहायता करता है। यह शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को अधिगम की स्थितियों में अधिक प्रभावी ढंग से व्यवहार करने में सहायता करती है। शिक्षा मनोवैज्ञानिक का अधिकांश कार्य, पाठ्यक्रम की योजना बनाना, शिक्षक प्रशिक्षण और अनुदेशों की रूपरेखा तैयार करने पर केन्द्रित होता है। अधिगम और अभिप्रेरण के मनोविज्ञान अधिगम सम्बन्धी आवश्यक सैद्धान्तिक खाका, और अनुभवजन्य आंकड़े, अधिगम के सिद्धान्त, पुनर्बलन, शिक्षण स्थानान्तरण, धारण और विस्मरण में सहायता प्रदान करता है। शिक्षा मनोवैज्ञानिक विद्यालय परिषदों को छात्रों की आवश्यकताओं, रुचियों और योग्यताओं को ध्यान में रखते हुये पाठ्यक्रम की योजना और सुझाव प्रदान करता है। स्कूल मनोवैज्ञानिक का कार्य स्कूल में अधिक तात्कालिक समस्याओं का समाधन करना है। स्कूल मनोवैज्ञानिकों का सम्बन्ध विशेषकर अधिगम की कठिनाइयों का निदान करने और उनका उपचार करने तथा व्यावसायिक तथा अन्य प्रकार के परामर्श देने से है।

(f) **परामर्श मनोविज्ञानः** एक परामर्श–मनोवैज्ञानिक उन लोगों को सहायता पहुंचाता है जो साधारण किस्म का सांवेगिक और निजी समस्याओं से पीड़ित होते हैं। वह व्यक्ति को उसके अपने संसाधनों का निजी समस्याओं के समाधान हेतु प्रभावी उपयोग करने में समर्थ बनाता है। वह वैवाहिक जीवन, बालापराध, विद्यालय में कुसमायोजन, नौकरी में विवाद जैसे सम्बन्धित क्षेत्रों में व्यवहार में परिवर्तन लाता है। परामर्श मनोवैज्ञानिक माडेलिंग, संवेदीकरण तथा तार्किक चिन्तन आदि की सहायता से सम्बन्धित व्यवहार को व्यवस्थित रूप से सही दिशा में ले जाने का प्रयास करता है।

(g) **चिकित्सा मनोविज्ञानः** चिकित्सा मनोवैज्ञानिक के बारे में आम धारणा एक डाक्टर की होती है जो मनोवैज्ञानिक विकतियों का निदान करते हैं और मनश्चिकित्सा की सहायता से उनका उपचार करते हैं। परन्तु वह वास्तव में एक डाक्टर नहीं होता है और उसे मनोरोगविज्ञानी, जिसे चिकित्सा की डिग्री मिली होती है, समझने की भूल नहीं करनी चाहिये। वह रोग से छुटकारा दिलाने के लिये विभिन्न तकनीकों का उपयोग करता/करती है ताकि लोग अपनी समस्याओं के कारणों को समझ सकें। एक चिकित्सा मनोवैज्ञानिक वस्तुतः व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है ताकि पीड़ित व्यक्ति अपनी परिस्थिति के साथ प्रभावी ढंग से अनुकूलन कर सके। वह व्यक्ति के विकास में ऋणात्मक या समस्यापरक पहलू को पहचानता है और उसे दूर करने का प्रयास करता है। उदाहरणार्थ एक चिकित्सा–मनोवैज्ञानिक दुर्भीति अर्थात् अनावश्यक डर का उपचार उन पुनर्बलकों को हटाकर करता है जो उस व्यवहार को बनाये रखते हैं, साथ ही वह रोगी के उपयोगी व्यवहारों को, जो समस्या के समाधान में सहायक हैं, पुनर्बलित करता है।

(h) **औद्योगिक तथा संगठनात्मक मनोविज्ञानः** इस क्षेत्र में काम करने वाले मनोवैज्ञानिक उद्योगों और अन्य संगठनों को कर्मचारियों के चयन, प्रशिक्षण तथा संचार,

उत्पादकता तथा अन्तर्वैयक्तिक तथा अन्तर्सामूहिक सम्बन्धों आदि से जुड़ी समस्याओं के समाधान में सहायता पहुंचाता है। संगठनात्मक विकास हेतु विभिन्न हस्तक्षेपों (जैसे टीम का निर्माण, संचार कौशलों का विकास, लक्ष्य निर्धारण, कार्य अभिकल्प) का उपयोग काम की दशाओं को सुधारने और उत्पादों को उत्तम बनाने में किया जाता है।

(i) **पर्यावरण मनोविज्ञानः** यह मनोविज्ञान का अपेक्षाकत एक नया क्षेत्र है जो मनुष्यों और पर्यावरण के बीच के सम्बन्धों का विशेषरूप से अध्ययन करता है। पर्यावरण–नियोजन, पर्यावरण–प्रत्यक्षीकरण, अभिवति, पर्यावरण की अभिकल्प रूपरेखा, पर्यावरण के प्रतिबल (जैसे भीड़, प्रदूषण, त्रासदी) तथा पर्यावरण के प्रति अभिवति का अध्ययन किया जा रहा है। इस सबका लक्ष्य पर्यावरण को बचाना और इसकी गुणवत्ता में सुधार लाना है।

(j) **अभियांत्रिक मनोविज्ञानः** आधुनिक विश्व में मानव जीवन को संचालित करने में विभिन्न प्रकार की मशीनों की प्रमुख भूमिका है। मशीन और मनुष्य की अन्तःक्रिया से कई प्रकार की समस्यायें पैदा होती हैं। अभियांत्रिकी मनोविज्ञान का मानव कारक अभियांत्रिकी, मनुष्य–मशीन–पर्यावरण व्यवस्था की क्षमताओं और सीमाओं को स्पष्ट करता है ताकि वह व्यवस्था सुरक्षापूर्वक और पूरी क्षमता से कार्य कर सके। इसलिये अभियांत्रिकी मनोवैज्ञानिकों का कार्य उपकरणों और मशीनों का अभिकल्प बनाने तथा कार्यस्थल की रूपरेखा बनाने में सहायता पहुंचाता है। सगणकों (कम्प्यूटर्स) के आने तथा सूचना तकनीकी में नवीन विकासों के कारण सम्बन्धित समस्याओं के समाधान के लिये अनेक नयी विधियों का उपयोग किया जा रहा है।

(k) **स्वास्थ्य मनोविज्ञानः** मनोविज्ञान की यह एक उभरती हुई शाखा है जो स्वास्थ्य के स्तर को उन्नत बनाने वाले कारकों को समझने पर केन्द्रित है। समसामयिक जीवन में स्वास्थ्य के संभावित संकटों (जैसे तनाव, पर्यावरण प्रदूषण, नग्नाशा) की संख्या बढ़ रही है। इन पर सफलतापूर्वक नियंत्रण पाने के लिये हमें स्वास्थ्य व्यवहार की प्रतिकति जैसे व्यायाम, ध्यान, सन्तुलित भोजन, शारीरिक क्रियाशीलता आदि की आवश्यकता है। स्वास्थ्य मनोविज्ञान शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के संवर्द्धन के लिये इन व्यवहारों की भूमिका की जांच करता है। यह अनुपयुक्त व्यवहार को सुधारने और रोगों की रोकथाम के तरीकों को खोजने का भी प्रयास करता है।

1.8 वर्तमानकालीन झुकावः मनोविज्ञान का बदलता रूप

आधुनिक जीवन में बढ़ती जटिलताओं के साथ ही मनोविज्ञान से अधिक बड़ी भूमिका निभाने की अपेक्षा है। मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं के वर्णन से यह बात स्पष्ट है कि इसका क्षेत्र हमारे सामने आने वाले मुद्दों की विस्तत श्रंखला को अपने बारे में ले लेता है। इसका लक्ष्य विभिन्न क्षेत्रें में ज्ञान को बढ़ाना तथा उस ज्ञान का उपयोग समस्याओं के हल करने में करना है। ऐसे प्रयासों में मनोविज्ञान अनेक दिशाओं में बढ़ा है। कुछ आधुनिक झुकाव, जो इस विषय को रूप प्रदान करने में प्रमुख हैं, निम्नलिखित हैंः

1. **सांस्कतिक सन्दर्भ पर बलः** मनोवैज्ञानिक यह अनुभव करने लगे हैं कि मनोवैज्ञानिक दश्य घटनाओं को विशेष सांस्कतिक सन्दर्भ में, जिनमें वे घटित होते हैं, समझा जा सकता है। अन्तः सांस्कतिक मनोविज्ञान और सांस्कतिक मनोविज्ञान के अध्ययनों से ज्ञात होता है कि बहुत से संप्रत्यय (जैसे आत्मा, नैतिकता) और अभ्यास (जैसे सामाजीकरण, जीवन कार्य) सांस्कतिक विशिष्ट हैं। इसलिये इन मुद्दों और प्रक्रियाओं को सांस्कतिक संदर्भ में समझना आवश्यक है।
2. **तंत्रिका विज्ञान की नई खोजेंः** हाल के वर्षों में मस्तिष्क और तंत्रिका तंत्र के अन्य भागों और जैविक कार्यप्रणाली के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण ज्ञान उपलब्ध हुआ है। इसने केवल मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के स्वरूप को समझने में ही सहायता की है अपितु विभिन्न रोगों का इलाज करने के रास्ते भी प्रदान किये हैं।
3. **बहु विषयक दिलचस्पीः** मनोवैज्ञानिक तथा अन्य वैज्ञानिक अब इस बात के कायल हैं कि मानव यथार्थ बड़ा जटिल है और कोई एक विषय उसे पूरी तरह नहीं समझ सकता। अतः मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को समझने के लिये बहुविषयक प्रयास प्रारंभ हुये हैं। विशेष रूप से भाषा, व्यक्तित्व, संवेग और मूल्य के मुद्दों के अध्ययन में भाषा वैज्ञानिक मानवशास्त्री और संज्ञानात्मक वैज्ञानिकों का परस्पर सहयोग चल रहा है।

पाठगत प्रश्न 1.3

(क) सही विकल्प चुनियेः

1. निम्नांकित में से कौन सा मनोवैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं के समाधान में सबसे अधिक संलग्न हैः

   (क) परामर्श मनोवैज्ञानिक　　(ख) सामुदायकि मनोवैज्ञानिक

   (ग) उपचारात्मक मनोवैज्ञानिक　　(घ) समाज मनोवैज्ञानिक

2. मान लीजिये आप लोगों को एक दूसरे की और आकष्ट करने और मित्रता की ओर ले जाने वाले कारकों पर एक लेख लिख रहे हैं। आप निम्नांकित में किसकी लिखी पुस्तक पढ़ेंगेः

   (क) विकास मनोवैज्ञानिक　　(ख) शिक्षा मनोवैज्ञानिक

   (ग) समाज मनोवैज्ञानिक　　(घ) समुदाय मनोवैज्ञानिक

3. आप मनोवैज्ञानिकों के सेमिनार में भाग ले रहे हैं। आपको एक वार्ता शिशुओं की प्रत्यक्षात्मक योग्यता, दूसरी प्रौढ़ों के सामाजीकरण और तीसरी वद्धों के शारीरिक परविर्तनों पर सुनने को मिलती है। आप इन मनोवैज्ञानिकों के विशिष्टीकरण के बारे में क्या अनुमान लगाते हैं?

   (क) शरीर क्रियात्मक　　(ख) संज्ञानात्क

   (ग) सामाजिक　　(घ) विकासात्मक

1.9 मनोविज्ञान एक व्यवसाय के रूप में

अब तक आप मनोविज्ञान के विभिन्न क्षेत्रें के बारे में अच्छी तरह जान चुके होंगे। वास्तव में आजकल मनोविज्ञान से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा है। चाहे वह समाज से, सैन्य शक्तियों से या शिक्षा व्यवस्था से सम्बन्धित हो सभी के द्वारा एक मनोवैज्ञानिक की आवश्यकता अनुभव की जाती है। यह एक लोकप्रिय विषय बनता जा रहा है। मनोविज्ञान की उपाधि रखने वाले विभिन्न नौकरियां पा सकते हैं जैसेः

a) पी.जी.टी. मनोविज्ञान
b) परामर्शदाता–स्वतंत्र रूप से/विद्यालय/संस्था
c) विभिन्न परीक्षण सम्पादित करने वो परीक्षक
d) औद्योगिक संस्थान में मनोवैज्ञानिक
e) शोधकर्ता
f) स्वयंसेवी संगठन में कार्य
g) प्रवक्ता
h) चिकित्सा मनोवैज्ञानिक
i) बाल मनोवैज्ञानिक
j) स्वास्थ्य मनोवैज्ञानिक
k) विद्यालय मनोवैज्ञानिक
l) मानवीयकारक मनोवैज्ञानिक

उक्त सभी नौकरियों के लिये मनोविज्ञान के किसी विशेष क्षेत्र में विशेष योग्यता के साथ स्नातक उपाधि की आवश्यकता होती है।

आपने क्या सीखा

- मनोविज्ञान एक विज्ञान है जो मानसिक और व्यवहार जगत कार्यों का वैज्ञानिक विधियों से व्यवस्थित रूप से अध्ययन करता है।
- मनोवैज्ञानिक प्रत्यक्षीकरण, अभिप्रेरणा, संज्ञान, स्मति, अधिगम, व्यक्तित्व और बुद्धि जैसी प्रक्रियाओं का वर्णन, भविष्य कथन और नियंत्रण करता है।
- एक व्यावसायिक के नाते वे विद्यालयों, उद्योगों, चिकित्सालयों और संगठनों समेत विभिन्न व्यवस्थाओं की समस्याओं को हल करने में अपने मनोवैज्ञानिक ज्ञान का प्रयोग करते हैं।
- शिक्षा, मानवशास्त्र, समाजशास्त्र और जैविक विज्ञान जैसे विषयों से इसका निकट का सम्बन्ध है।
- मनोवैज्ञानिक मुद्दों और समस्याओं के अध्ययन को विभिन्न परिप्रेक्षों यथा व्यवहारगत,

संज्ञानात्मक, मनोगतिक, मानवतावादी, जैविक और भारतीय के रूप में जाना जाता है।

- परिप्रेक्ष्य का मूल विभिन्न दार्शनिक मान्यताओं में है और वे अनेक तरीकों से मानव स्वभाव का वर्णन करते हैं।
- एक विकसित होते विषय के रूप में मनोविज्ञान विभिन्न शाखाओं में विस्तार ले रहा है जो जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में मनोवैज्ञानिक सेवायें देने में विशिष्ट है।
- तंत्रिका विज्ञान में विकास, संस्कृति का अध्ययन और अन्य विषय से सहयोग महत्वपूर्ण तरीकों से मनोविज्ञान के विकास को रूप प्रदान कर रहे हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. मनोविज्ञान के स्वरूप का वर्णन करें।
2. मनोविज्ञान में मनोगत्यात्मक परिप्रेक्ष्य को स्पष्ट करें।
3. मनोविज्ञान शिक्षा से किस प्रकार सम्बन्धित है?
4. नैदानिक मनोविज्ञान और उद्योगिक मनोविज्ञान के क्षेत्रें की विवेचना करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

1.1

(1) ग (2) ख

1.2

(क) 1. ग 2. फ 3. ङ 4. ख 5. क 6. ग

(ख) (क) सत्य (ख) सत्य (ग) असत्य (घ) असत्य

1.3

1. ग 2. ग 3. घ

पाठान्त अभ्यास के संकेत

1. अनुभाग 1.2
2. अनुभाग 1.5
3. अनुभाग 1.6
4. अनुभाग 1.7

2

मनोवैज्ञानिक कैसे अध्ययन करते हैं?

पिछले पाठ में आपने मनोविज्ञान की प्रकति, मनोवैज्ञानिक के कार्य तथा मनोविज्ञान की विभिन्न शाखाओं, इत्यादि के बारे में सीखा है। अब आप विभिन्न विषयों के बीच मनोविज्ञान के महत्वपूर्ण स्थान को समझ सकते हैं। आज आम लोगों, नीति–निर्माताओं, विद्यार्थियों, पेशेवरों, व्यापारियों और महिलाओं में मनोविज्ञान को एक विषय के रूप में जानने के लिए अत्यधिक रुझान है। जैसा कि हम जानते हैं कि मनोविज्ञान मस्तिष्क, मन और व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है, और मनोवैज्ञानिक वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करके अध्ययन करते हैं। मनोवैज्ञानिक जिन विभिन्न विधियों, तकनीकों और उपकरणों का प्रयोग अपने शोध और अध्ययन के लिए करते हैं उनके बारे में आप इस पाठ में अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद, आपः

- मनोवैज्ञानिक अध्ययनों और शोध के लक्ष्यों का वर्णन कर पाएंगे;
- शोध के बुनियादी और प्रायोगिक पहलुओं की चर्चा कर सकेंगे;
- मनोवैज्ञानिकों द्वारा अपनाई गई विभिन्न विधियों से परिचित हो पाएंगे;
- प्रयोागें को करने में सम्मिलित चरणों का वर्णन कर सकेंगे;
- मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रयोग किए गए विभिन्न उपकरणों को जान पाएंगे; और
- मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में सांख्यिकी विश्लेषण के प्रयोग को समझ पाएंगे।

2.1 मनोवैज्ञानिक अध्ययनों और शोध के लक्ष्य

विज्ञान की भाँति ही मनोवैज्ञानिक व्यवहार और अनुभव की प्रकति एवं कार्य को समझने की कोशिश करते हैं। वे विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं जैसे स्मरण, चिन्तन, सीखना, प्रत्यक्षीकरण, बुद्धि इत्यादि से संबंधित प्रश्नों के उत्तर देने की कोशिश करते हैं। ऐसा करते वक्त शोधकर्ता या अन्वेषक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्यों को अपनाते हैं। वे ज्ञान के परिदश्य को इस तरह से विकसित करने का प्रयास करते हैं कि वह विज्ञान की आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। विज्ञान से तात्पर्य ऐसी व्यवस्थित जाँच से है, जो निष्पक्ष पर्यवेक्षण पर आधारित होती है। इस प्रकार वैज्ञानिक ज्ञान किसी भी व्यक्ति द्वारा जांच के लिए उपलब्ध होता है। वह व्यक्ति उसे समझकर उसका सत्यापन करता है। इसलिए वैज्ञानिक ज्ञान को सार्वजनिक की संज्ञा दी जाती है।

दैनिक जीवन में हमारा पर्यवेक्षण अक्सर हमारे पसंदगी या नापसंदगी से प्रभावित होता है। वास्तव में हम दूसरों के कथन को स्वीकार कर लेते हैं और हम पर आकस्मिक पड़ा प्रभाव, वह गलत या सही हो सकता है, हमारे निजी समझ का भाग बन जाता है। इसके विपरीत, एक वैज्ञानिक सिर्फ पर्यवेक्षक पर भरोसा करता है, वह निजी प्राथमिकताओं द्वारा प्रभावित नहीं होता है बल्कि वह ऐसे पक्षपातों से मुक्त होता है। उसी प्रकार, वैज्ञानिक ज्ञान किसी की निजी सम्पत्ति नहीं होता है। आपने वैज्ञानिक पत्रिकाओं के बारे में अवश्य सुना होगा। यदि आपको ऐसी पत्रिका को पढ़ने का मौका मिलता है तो आप पाएंगे कि वैज्ञानिक अध्ययन का तरीका पूरी तरह उल्लिखित या प्रलेखित होता है। दूसरे शब्दो में, ज्ञान सार्वजनिक होता है और कोई भी इसे प्राप्त करना चाहता है, उसके लिए खुला होता है। शोध का प्रलेखन दूसरे उद्देश्य से उपयोगी होता है। कोई भी व्यक्ति स्वयं अध्ययन करना चाहता है, ऐसे दस्तावेज की नकल कर सकता है।

अंततः वैज्ञानिक अध्ययन वस्तुनिष्ठ होता है। यह आत्मनिष्ठ कारकों से मुक्त माना जाता है और कोई भी व्यक्ति दी गई विधि का अनुसरण करके उसका उसी तरह से अवलोकन या अनुभव करता है।

मनोवैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक विधि को स्वीकारा है और ज्ञान को उत्पन्न करने की कोशिश की है। वह ज्ञान विज्ञान के उपर्युक्त उल्लिखित नियमों पर खरा उतरता है। जैसाकि वैज्ञानिक अपने अध्ययन के लक्ष्य से संबंधित निम्न उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश करता है:

1. **विवरणः** बोध प्राप्त करने का पहला कदम अध्ययन के अंतर्गत परिदश्य का उचित या वैज्ञानिक विवरण रखना है। यह वस्तुओं के क्षेत्र व सीमा को निर्धारित करता है।
2. **व्याख्याः** व्याख्या का अर्थ अध्ययन के अंतर्गत परिदश्य को निर्धारित करने वाले कारकों का कथन होता है। दूसरे शब्दों में, कोई कह सकता है कि व्याख्या कारकों

को प्रदान करती है जिससे कुछ घटित होता है। इस प्रकार, जब एक मनोवैज्ञानिक यह दर्शाता है कि अभ्यास व्यवहार में परिवर्तन लाता है तो वह सीखने की व्याख्या कर रहा है।

3. **भविष्य कथन:** जब हम कुछ परिदृश्यों की व्याख्या करने में सक्षम होते हैं तब हम भविष्य क्थन की स्थिति में होते हैं कि विशेष परिस्थितियों के अंतर्गत क्या घटित होगा। भविष्य कथन करने की योग्यता विभिन्न आकस्मिक कारकों के वैज्ञानिक विश्लेषण पर आधारित होती है। उन कारकों की उपस्थिति या अनुपस्थिति में किसी को भविष्य में क्या होगा, बताने में मदद कर सकती है।

4. **नियंत्रण:** भविष्य बताने की योग्यता, परिवर्तन लाने के लिए आवश्यक ज्ञान प्रदान करती है। उदाहरणस्वरूप, पोलियो की दवा के प्रयोग से पोलियो को रोका जाता है। उसी तरह, योगाभ्यास या विश्राम लोगों के स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार ज्ञान का प्रयोग ज्ञानकर्त्ता को इच्छित परिणाम प्राप्त करने के लिए किया जा सकता है। यह सिर्फ उसी वक्त संभव होता है, जब हमारे पास वैज्ञानिक ज्ञान है।

पाठगत प्रश्न 2.1

1. रिक्त स्थान की पूर्ति करें:

   (अ) विज्ञान .... खोज की एक विधि है, वह .... पर्यवेक्षण पर आधारित है।

   (ब) विज्ञान सार्वजनिक है या उसका .... दूसरे व्यक्ति के साथ किया जा सकता है ओर इसे .... किया जा सकता है।

   (स) वैज्ञानिक अध्ययन .... है।

2.2 बुनियादी और प्रायोगिक शोध

कोई अध्ययन या शोध एक प्रश्न या समस्या से शुरू होता है क्योंकि हम उसका उत्तर या समाधान चाहते हैं। ऐसी समस्यायें विभिन्न प्रकार की होती हैं। एक वहद अर्थ में इन समस्याओं का वर्गीकरण ''बुनियादी'' और ''प्रायोगिक'' श्रेणियों में किया जाता है। बुनियादी शोध का निर्धारण विकसित समझ सिद्धान्त निर्माण और सिद्धांत की जांच के साथ होता है और प्रायोगिक शोध का वास्तविक जीवन की समस्याओं के समाधान के लिए प्रयोग किया जाता है। इसे समझा जाना चाहिए कि शोध के इन दोनों प्रकारों की विभाजक रेखा बहुत पतली है। सिद्धांत से प्रयोग या प्रयोग से सिद्धांत में परिवर्तन भी हो सकता है।

प्रचलित अर्थ में, विशेष समस्याओं के समाधान के लिए प्रायोगिक शोध तकनीकी का विकास करता है जिनका प्रयोग निजी, पारिवारिक, स्वास्थ्य संगठन और पर्यावरण संबंधी क्षेत्रों में आने वाली समस्याओं के समाधान के लिए किया जाता है। वास्तव में मनोविज्ञान की अनेक नई शाखाएं विकसित हुई हैं। वे प्रकति से पूरी तरह प्रायोगिक हैं। इसका प्रभाव बहुत आकर्षक है। फलस्वरूप अनेक विश्वविद्यालयों ने प्रायोगिक मनोविज्ञान या इसके विभिन्न विशेषीकत क्षेत्रों में पाठ्यक्रम को शुरू किया है।

मनोविज्ञान में बुनियादी और प्रायोगिक अध्ययन के अंतर को निम्न प्रकार से चिन्हित किया जा सकता है। बुनियादी शोध सैद्धांतिक समझ पर प्रकाश डालता है। यह सिद्धांतों और नियमों के बारे में समझ प्रदान करता है। वे सीमित परिस्थितियों या व्यक्तियों से बंधे नहीं होते हैं। इसके विपरीत प्रायोगिक शोध का एक विशेष समस्या के समाधान का संकुचित लक्ष्य होता है। यह अपने पूर्वाभिमुखीकरण में यथार्थ होता है और सीमित शर्त से बंधा होता है।

आज मनोवैज्ञानिक ज्ञान बुनियादी के साथ–साथ प्रायोगिक दिशाओं में भी अग्रसर हो रहा है और दोनों में पारस्परिक आदान–प्रदान होता है। मनोविज्ञान का क्षेत्र लोगों के जीवन की गुणवत्ता में वद्धि करने के लिए बड़े पैमाने पर विस्तत हो रहा है। उदाहरणस्वरूप, मंद बुद्धि के बच्चों की मदद के लिए हस्तक्षेप कार्यक्रम को विकसित करना या चिन्ताग्रस्त लोगों के लिए प्रायोगिक शोध होता है।

2.3 प्रायोगिक विधि

साधारण भाषा में प्रयोग की व्याख्या नियंत्रित और भिन्न दशाओं के अन्तर्गत पर्यवेक्षण के रूप में कर सकते हैं। सामान्यतया प्रायोगिक विधि को उपर्युक्त अन्य विधियों की अपेक्षा वरीयता दी जाती है क्योंकि इसमें कारणता कारकों को समझने की योग्यता होती है। प्रयोग, पूर्ववर्त्ती दशाओं और अनुगामी दशाओं में क्रमागत परिवर्तनों के बीच संबंध के अध्ययन से संबंधित होता है। प्रायोगिक विधि कारण और प्रभाव एवं इन दो स्थितियों के बीच संबंध प्रस्थापित करने में सहायता करता है, जिसे सामान्यतः विचरण माना जाता है। इसे समझने के लिए हम एक उदाहरण लेंगे।

मान लें कि एक शिक्षक जानना चाहतीं है कि क्या कविता पाठ विधि मौन पाठ की अपेक्षा एक कविता स्मरण में सहायता करेगा? वह निम्न प्रकार की प्रक्रिया को अपनायेगा :

परिकल्पना का निर्माणः समस्या के उत्तर के लिए शिक्षक के पास पक प्रश्न या समस्या है जिसमें कि एक चीज (कविता पाठ विधि) दूसरी चीज (स्मरण) पर प्रभाव को खोजा जाना है। अपने पूर्व ज्ञान और शोधों के आधार पर, प्रयोगकर्ता एक पूर्वकल्पना करता है। वर्तमान विषय में शिक्षक समस्या का संभव उत्तर बताता है। वह पूर्वकल्पना करती है कि कविता पाठ विधि कविता को स्मरण के लिए अच्छा है। पूर्वकल्पना की जांच के लिए वह एक प्रयोग करेगी।

स्वतंत्र और आश्रित विचरणों को पहचाननाः प्रायोगिक विधि को समझने के लिए, व्यक्ति को विचरणों के सिद्धांत से अवश्य परिचित होना चाहिए। ''विचरण पदार्थों, चीजों या प्राणियों का एक मापनेवाला लक्षण होता है।'' परिमाणात्मक रूप से मापी हुई विचरणें आयु, मेधा, परीक्षण संख्या, लिंग, धर्म, जाति, इत्यादि हैं। प्रयोगकर्ता का सम्बन्ध विचरणों के मुख्य दो प्रकारों से होता हैः

- स्वतंत्र विचरण और
- आश्रित विचरण

व्यवहार के कुछ चुने पहलुओं पर इसके प्रभाव को समझने के लिए प्रयोगकर्ता द्वारा (जैसे वर्तमान मामले में सीखने की विधि) स्वतंत्र विचरण का उपयोग किया जाता है। स्वतंत्र विचरण के आश्रित विचरण पर प्रभावों का अवलोकन किया जाता है। जैसे वर्तमान उदाहरण में धारणा। दूसरे शब्दो में, आश्रित विचरण अनुगामी विचरण होता है, जिस पर प्रभाव का परीक्षण किया जाता है।

स्वतंत्र विचरण के आश्रित विचरण पर प्रभाव का अध्ययन करते वक्त, इनका संबंध अक्सर वातावरण में उपस्थित अनेक कारकों की संख्या द्वारा प्रभावित होता है। ऐसे संगत विचरणों को प्रयोगकर्ता द्वारा नियंत्रित करने की आवश्यकता होती है। प्रयोगकर्ता दो समूहों जैसे प्रायोगिक और नियंत्रण का उपयोग करते हुए प्रयोग योजना बनाता है। प्रायोगिक समूह स्वतंत्र विचरण का निरूपण प्राप्त करता है और नियंत्रण समूह आश्रित विचरण की अनुपस्थिति में कार्य करता है। इन दोनों समूहों को स्वतंत्र विचरण के निरूपण के अलावा सभी संदर्भों में समान माना जाता है।

प्रतिभागियों का प्रतिचयनः दूसरा कार्य अध्ययन के लिए जनसंख्या के निर्धारण और प्रतिचयन की विधि का निर्णय लेना है। उदाहरण के लिए, यदि प्रयोग के लिए कोई दशवीं वर्ग के विद्यार्थियों को लेना चाहता है, तो संभवतया वह सभी स्कूलों में नहीं जा सकता है। इसलिए वह एक स्कूल के दशवीं कक्षा के विद्यार्थियों की समान संख्या का चुनाव करती है। प्रतिचयन पूरे जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति को निर्णय करना पड़ता है कि किस प्रकार की प्रतिचयन विधि का उसे उपयोग करना चाहिए। अनियमित प्रतिचयन को सबसे अच्छी विधि माना जाता है क्योंकि प्रतिचयन की इस विधि से जनसंख्या के सभी सदस्यों के चुनाव की समान संभावना होती है।

बाह्य विचरणों पर नियंत्रणः यह संभावना होती है कि कुछ दूसरे विचरणों जैसे आयु, लिंग इत्यादि स्मरण को बुरी तरह प्रभावित कर सकते हैं। इन सभी विचरणों को नियंत्रित किया जाता है। ऐसा करते समय प्रयोगकर्ता समान मेधा, आयु और लिंग के प्रतिभागियों को चुनता है। प्रयोगकर्ता अवांछित बाह्य विचरणों को नियंत्रित करने के लिए तकनीकों का इस्तेमाल करता है। उनमें से कुछ निम्न हैं।

1. **मिलानः** प्रतिभागियों को उनकी विशेषताओं से मिलाया जाता है।

2. **विलोपनः** अवांछित विचरण को विलोप द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है (जैसे शोरगुल)
3. **दशाओं की स्थिरताः** यदि विलोपन संभव नहीं है तो दशा को पूरी अवधि के लिए स्थिर किया जा सकता है।

प्रयोग की योजना (रूपांकन): प्रयोगकर्ता विद्यार्थियों के समूह का चयन करेगा, उन्हें आधे में बांटेगा और उन्हें समान सामग्री (कविता) याद करने के लिए देगा। एक समूह को सामग्री को मौन रूप से पढ़ने का निर्देश दिया जाता है। इस समूह को ''नियंत्रण समूह'' कहा जाता है। दूसरा समूह समान समय में कविता को जोर से पाठ करता है। यह समूह ''प्रायोगिक समूह'' है। दोनों समूहों के स्मरण की तुलना की जाएगी।

पूर्वकल्पना का सत्यापनः यदि प्रयोगकर्ता दोनों समूहों की धारणा में विशेष अंतर पाती है, तो वह अनुमान कर सकती है कि कविता की पाठ विधि कविताओं के धारण के लिए बेहतर है। यह जांच–परिणाम पूर्वकल्पना को साबित करेगा।

प्रायोगिक विधि की सीमाः प्रायोगिक विधि वैज्ञानिक आकड़ें संग्रह करने में बहुत शक्तिशाली होती है। लेकिन इसकी भी सीमाएं हैं। इससे प्राप्त जांच–परिणाम प्राकतिक परिस्थितियों में लागू नहीं किये जा सकते हैं। कभी–कभी प्रयोग अनैतिक या खतरनाक साबित हो सकता है। कुछ परिस्थितियों में, प्रयोग मापे जाने वाले व्यवहार के साथ हस्तक्षेप कर सकता है।

पाठगत प्रश्न 2.2

निम्न कथनों में कौन सा सही या गलत है, उसकी जांच करें।

1. प्रयोग नियंत्रित दशा के अंतर्गत पर्यवेक्षण होता है। सही/गलत
2. स्वतंत्र विचरण का जोड़–तोड़ नहीं किया जाता है। सही/गलत
3. प्रायोगिक समूह स्वतंत्र विचरण के निरूपण को प्राप्त करता है। सही/गलत
4. नियंत्रित समूह प्रायोगिक समूह की अपेक्षा अपने गुणों में भिन्न हो सकता है। सही/गलत

2.4 गैर-प्रायोगिक विधियाँ

प्रायोगिक विधि को मनोविज्ञान में वरीयता दी जाती है, क्योंकि इसमें बहुत अधिक शुद्धता पायी जाती है। लेकिन अनेकों बार हम समस्याओं का समाना करते हैं, जो प्रायोगिक जोड़–तोड़ का विषय नहीं हो सकता है। भीड़ में लोगों के व्यवहार को प्रयोगशाला में अध्ययन नहीं किया जा सकता है, इसे प्रायोगिक विधि द्वारा नहीं समझा जा सकता है

कि एक बच्चा कक्षा में चीजों को क्यों तोड़ता है। ऐसी स्थितियों में विभिन्न विधियों की जरूरत होती है। कुछ गैर–प्रायोगिक विधियों का नीचे वर्णन किया गया है:

पर्यवेक्षण: पर्यवेक्षण सभी विज्ञानों का प्रारंभिक बिन्दु है। यह स्वाभाविक घटना का एक अध्ययन है, जिस वक्त वे घटित होते हैं। लेकिन सिर्फ पर्यवेक्षण ही सब कुछ नहीं हो सकता है। व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि वह क्या पर्यवेक्षण करना चाहता है। अन्यथा कुछ आंकड़े छूट सकते हैं। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में हम नैसर्गिक के साथ नियंत्रित पर्यवेक्षण का इस्तेमाल करते हैं। यह दूसरे प्रकार का पर्यवेक्षण भी होता है, जिसे प्रतिभागी पर्यवेक्षण कहा जाता है, जिसमें पर्यवेक्षक स्वतः समूह के एक भाग के रूप में पर्यवेक्षण करता है।

अन्तर्दर्शन: अन्तर्दर्शन का अर्थ आत्म निरीक्षण होता है। यह मनोविज्ञान की सबसे पुरानी विधि है। यह दुख, सुख, थकान, इत्यादि के भावों को समझने के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण विधि है। यदि कुछ व्यक्ति फिल्म देखने जाते हैं, वे उस फिल्म को पसंद कर सकते हैं, दूसरे उसे नापसंद कर सकते हैं लेकिन वे सिर्फ अन्तर्दर्शन द्वारा पसंद के संवेगात्मक प्रतिक्रिया को समझ सकते हैं। अन्तर्दर्शन में, ध्यान को अपने अंदर यह ढूँढने के लिए लगाया जाता है कि अनुभवात्मक स्तर पर क्या हो रहा है। उदाहरणार्थ, आप वर्षों बाद एक स्कूल के साथी से मिलते हैं, आप हाथ मिलाकर उसका अभिवादन करते हैं– मित्रतापूर्ण व्यवहार की एक क्रिया–लेकिन आप उससे मिलकर अंदर से खुशी का अनुभव नहीं करते हैं क्योंकि उसने आपको कक्षा में धमकाया था।

सर्वेक्षण: यह सामाजिक समस्याओं का अध्ययन होता है, जैसे शराबखोरी की घटना, खास व्यवसाय की लोकप्रियता, असफल शादियों के कारण। लोग इन समस्याओं का जोड़–तोड़ से सर्वेक्षण करने में सफल नहीं हो सकते हैं। मनोवैज्ञानिक प्रश्नों और साक्षात्कार की अनुसूची के साथ लोगों के एक दल के पास जाते हैं। वे जानना चाहते हैं कि कितने लोग टूथ पेस्ट के खास मार्का खरीद रहे हैं। सर्वेक्षक को कभी–कभी लागों का उत्तर देने से मना करना, पक्षपातपूर्ण उत्तर, भटकाने वाले उत्तर, इत्यादि जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। सावधानीपूर्वक किया गया सर्वेक्षण समस्या के खास क्षेत्र में झुकाव के बारे में सूचना प्रदान करता है।

विषय इतिहास: 'व्यक्ति इतिहास' एक व्यक्ति का विस्तत संकलित आंकड़ा होता है। मनोवैज्ञानिक व्यक्ति के व्यवहार को समझने के लिए बाल्यावस्था से वर्तमान समय तक के पूरे इतिहास को संकलित करता है। इस विधि का प्रयोग अक्सर असामान्य व्यवहार, अपराधियों के व्यवहार, बच्चों की समस्या या व्यक्तित्व में विकासात्मक परिवर्तनों के अध्ययन के लिए किया जाता है। संबंधित व्यक्ति के गुणों के साथ ही उसकी कमजोरियों पर भी ध्यान दिया जाता है।

सहसंबंधी शोध: इसका प्रयोग दो श्रेणी के कारकों/विचरणों के संबंधों को पता लगाने के लिए किया जाता है। हम इस विधि का प्रयोग स्कूल संबंधी उपलब्धि में मेधा, आध्यात्मिक उन्नति में धार्मिक प्रवत्ति, परीक्षा परिणाम में भाषा कौशल, इत्यादि के

संबंध को जानने के लिए करते हैं। संबंध शक्ति को सहसंबंधी गुणांक द्वारा प्रकट किया जा सकता हैं, वह 1.00 से + 1.00 की श्रेणी में होता है। एक सकारात्मक सह संबंध सूचित करता है कि जैसे एक विचरण का मूल्य बढ़ता है तो दूसरे विचरण का मूल्य भी बढ़ता है। नकारात्मक सहसंबंध बताता है कि जैसे एक विचरण का मूल्य बढ़ता है तो दूसरे विचरण का मूल्य घटता है। सहसंबंधी शोध कारण और प्रभाव संबंध को प्रदर्शित नहीं कर सकता है। लेकिन यह अध्ययन के अंतर्गत दृश्यवस्तु के नये अंतर्दष्टि को उजागर करता है।

पाठगत प्रश्न 2.3

1. स्वतंत्र विचरण क्या होता है?

   ____

   ____

2. एक विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान के लक्ष्यों को सूचित करें।

   ____

   ____

2.5 मनोवैज्ञानिक उपकरण

अध्ययन करते वक्त मनोवैज्ञानिक संगत आंकड़ा के संग्रह करने के लिए विभिन्न उपकरणों का सहारा लेते हैं। ये उपकरण या साधन विभिन्न प्रकार के होते हैं और इनका इस्तेमाल विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। स्मति ड्रम और टेचिस्टोस्कोप का अक्सर इस्तेमाल स्मति और प्रत्यक्षीकरण के अध्ययन में किया जाता है। उसी तरह ई. ई.जी.जी., ई.सी.जी., पी.ई.टी., जी.एस.आर., एम.आर.आई, एफ.एम.आर.आई. इत्यादि का प्रयोग स्नायु–मनोवैज्ञानिक कार्य के अध्ययन में किया जाता है। इन इलेक्ट्रोनिक और विद्युत उपकरण की मदद उद्दीपनों की प्रस्तुति और अनुक्रियाओं के अभिलेखन में ली जाती है। टेप रिकार्डर और वीडियो रिकार्डिंग का भी इस्तेमाल किया जाता है। इनके अलावा मनोवैज्ञानिक विभिन्न मनोवैज्ञानिक गुणों तक पहुँचने के लिए कागज–पेंसिल का उपयोग करते हैं। इनके अंतर्गत निम्न आते हैं:

1. **प्रश्नावली और साक्षात्कार कार्यक्रम:** लोगों से सूचना प्राप्त करने के लिए मनोवैज्ञानिक ओर अन्य सामाजिक वैज्ञानिक प्रश्नावली का प्रयोग करते हैं, उसे डाक से भेजा जाता है या साक्षात्कार कार्यक्रमों को शोधकर्ताओं द्वारा स्वयं प्रस्तुत किया जाता है। प्रश्न खुले या बंद लक्ष्य वाले हो सकते हैं। खुले लक्ष्य वाले प्रश्न

उत्तरदाता को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं कि वह उत्तर जिस ढंग से देना चाहता है, उसी प्रकार से दे। बल्कि बंद लक्ष्य वाले प्रश्न का निश्चित उत्तर होता है और उत्तरदाता को दिए गए उत्तरों में से चुनना होता है। इन उपकरणों की प्रस्तुति और प्रयोग एक कला होती है और इसके लिए उचित प्रशिक्षण की जरूरत होती है। साक्षात्कार का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है (जैसे नैदानिक, कर्मचारियों का चुनाव, शोध) और सामाजिक आदान–प्रदान की स्थिति को प्रस्तुत करता है। एक अच्छा साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता को खुलकर तथा अपने विचारों को स्पष्ट पदों में प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

2. **मनोमितिक परीक्षणः** मनोविज्ञान शब्द से परिचित कोई व्यक्ति बुद्धि परीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, अभिक्षमता परीक्षण, अभिरुचि सूची और अन्य समान मनोवैज्ञानिक उपकरणों से भी परिचित होगा। वे व्यक्तिगत विभिन्नताओं का माप प्रदान करते हैं। एक परीक्षण व्यवहारों और गुणों के नमूने की मानक माप होती है। इन परीक्षणों का उपयोग व्यक्ति के स्तर को निश्चित करने के लिए, जो लोगों के उस समुदाय से सम्बन्धित किसी विशेषता के आधार पर निर्धारित हो, जिसमें परीक्षण का मानकीकरण किया गया है। उपयोगी होने के लिए, परीक्षण की कई विशेषतायें अवश्य होनी चाहिए (देखें बॉक्स 2.1)।

बॉक्स 2.1: मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की विशेषतायें

विश्वसनीयताः यह परीक्षण की एकरूपता को सूचित करता है। परीक्षण पर निर्भरता के लिए उसे विभिन्न अवसरों पर समान परिणाम देना चाहिए। इस प्रकार, यदि कोई व्यक्ति आज बुद्धि में औसत से ऊपर है तो 3 महीने के बाद भी वह बुद्धि में इसी स्तर पर पाया जाएगा। यदि प्राप्तांक समान होते हैं तो हम कह सकते हैं कि परीक्षण विश्वसनीय है। इसे पुनः परीक्षण–विश्वसनीयता के नाम से जाना जाता है। दूसरे प्रकार की विश्वसनीयता को आंतरिक एकरूपता कहते हें। यह उस सीमा की ओर संकेत करती है, जहाँ पर परीक्षण पर जांच के विभिन्न मद एक दूसरे से संबंधित होते हैं।

वैधताः परीक्षण वैध होता है, यदि यह उसी गुण को मापता है, जिसके लिए उसे तैयार किया गया है। इस प्रकार, बुद्धि का परीक्षण तभी वैध होता है, जब यह बुद्धि को ही मापता है (अभिरुचि या व्यक्तित्व को नहीं)। इस उद्देश्य से हम परीक्षण के अंको को किसी बाह्य लक्षण से संबंधित करते हैं।

प्रतिमानः प्रतिमान समूह द्वारा प्राप्त अंकों को सूचित करता है, जो एक संदर्भ बिन्दु के रूप में कार्य करता है। हम मनोवैज्ञानिक गुणों के शून्य मूल्य को नहीं जानते हैं। अतः निरपेक्ष मापन संभव नहीं होता है। परीक्षण के प्राप्तांक दूसरे व्यक्तियों के प्राप्ताकों के संदर्भ में अर्थपूर्ण होते हैं। एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण प्राप्तांक एक सापेक्ष प्राप्तांक होते हैं। अतः परीक्षणों के लिए प्रतिमानों को विकसित करना आवश्यक है। वे परीक्षण प्राप्ताकों की व्याख्या में मदद करते हैं।

मानकीकरण: इसका अर्थ परीक्षण निष्पादन के लिए विधियों और दशाओं को स्थापित करना है। (जैसे समय, निर्देश, आंकना, व्याख्या)। यह परीक्षण नियमावली में व्यवस्थित रूप से वर्णित होता है। यह अर्थपूर्ण आंकड़ा प्राप्त करने में मदद करता है।

3. **प्रक्षेपी परीक्षण/तकनीक:** इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार के कार्य आते हैं, वह अनिर्देशित या अस्पष्ट होता है। इन कार्यों पर व्यक्ति का निष्पादन को किसी प्रत्यक्ष ढंग से उपयोग नहीं किया जा सकता है। निष्पादन को विचार के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक गुण के प्रक्षेपण के रूप में देखा जाता है। दूसरे शब्दों में ये परीक्षण मनोवैज्ञानिक गुण के अप्रत्यक्ष मूल्यांकन को प्रकट करता है और शोधकर्ता स्पष्ट व्यवहारिक अभिव्यक्ति या निष्पादन की व्याख्या करता है। इस प्रकार, एक व्यक्ति क्या कहता या करता है, उसे सापेक्ष मूल्य नहीं माना जाता है। छिपे हुए अर्थ को प्रत्यक्ष अर्थ की अपेक्षा अधिक प्रमुखता दी जाती है। कुछ प्रसिद्ध प्रक्षेपी परीक्षणों के अंतर्गत रोशा इंक ब्लॉट परीक्षण (Rorschach Ink Blot Test) और मुरे का थेमेटिक एपर्शेप्शन परीक्षण (TAT) आते हैं। प्रथम परीक्षण के वक्त व्यक्ति को स्याही धब्बों के एक समुच्चय को दिखाया जाता है और अपेक्षा की जाती है कि व्यक्ति यह बताए कि धब्बा किस चीज को प्रदर्शित करता है या देखी गई विभिन्न वस्तुएं क्या हैं। व्यक्ति से प्राप्त प्रतिक्रियाओं का उपयोग उसके व्यक्तित्व की खोज में किया जाता है। इस परीक्षण का उपयोग अक्सर नैदानिक समुच्चय से बना होता है। टैट (TAT) तस्वीरों के एक समुच्चय से बना होता है और उत्तरदाता को कहानियों को लिखने की आवश्यकता होती है। इन कहानियों की, व्यक्ति के व्यक्तित्व को समझने के लिए, व्याख्या की जाती है।

2.6 मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में नैतिक विचार

मनोवैज्ञानिक अध्ययन मानवों पर किया जाता है। अतः विशेष सिद्धांतों को अपनाना आवश्यक हो जाता है जिससे कि प्रतिभागियों को किसी प्रकार की चोट न पहुंचे। कुछ मान्य सिद्धांत निम्न हैं:

1. ***सूचित सहमति:*** शोधकर्ता दूसरे व्यक्तियों से पूर्व सहमति लेने के बाद ही उनके ऊपर अध्ययन कर सकते हैं।
2. ***गोपनीयता:*** शोध के जांचः परिणाम को गोपनीय रखा जाता है तथा इसे किसी को भी नहीं बताया जाता है।
3. ***जानकारी देना:*** यदि किसी प्रकार का छल, धोखा या भ्रम अध्ययन में किया जाता है तो शोधकर्ता का कर्तव्य होता है कि वह अपने अध्ययन को पूरा करने के बाद प्रतिभागी को स्पष्ट कर दे।

4. ***वापसी का अधिकारः*** प्रतिभागियों को अध्ययन से अपने को अलग करने का अधिकार होता है। यदि वह ऐसा करना चाहता है।

5. ***उत्तरदायित्वः*** अध्ययन के दौरान प्रतिभागियों को हुई क्षति के लिए शोधकर्ता उत्तरदायी होता है।

आज नीतिशास्त्रीय समिति का गठन आम बात हो गयी है। शोधकर्ता के शोध करने से पहले यह समिति शोध के नीतिशास्त्रीय पहलुओं पर विचार करती है।

नैदानिक परिवेश में परीक्षणों का उपयोग मनोविकार ग्रसित लोगों को प्रमाणित करने के लिए किया जाता है। इसे समुचित देखभाल के साथ और सिर्फ प्रशिक्षित व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाना चाहिए। इसका गलत प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।

2.7 मनोविज्ञान में सांख्यिकी की आवश्यकता

सांख्यिकी गणित की एक शाखा है। इसमें संग्रह, वर्गीकरण, वर्णन और संख्यात्मक आंकड़ों की व्याख्या आते हैं। मनोविज्ञान में सांख्यिकी का उपयोग निम्न के लिए किया जाता हैः

- व्यवहार का वर्णन, तथा
- व्यवहार की भविष्यवाणी।

जब सांख्यिकी का प्रयोग व्यवहार के वर्णन के लिए किया जाता है तो वर्णनात्मक सांख्यिकी का प्रयोग किया जात है। जब इसका प्रयोग व्यवहार की व्याख्या के लिए किया जाता है तो आनुमानिक सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता है।

वर्णनात्मक सांख्यिकी अंक होते हैं, जिन्हें अक्सर विचलन के वर्णन के लिए प्रयोग किया जाता है। प्रमुख वर्णनात्मक सांख्यिकी केन्द्रीय प्रवति माध्य, माध्यिका, बहुलांक विचलन की माप, और सहसंबंध हैं।

आनुमानिक सांख्यिकी का इस्तेमाल प्रयोगों या खोजों के लिए किया जाता है, वह नमूना के आधार पर जनसंख्या के सामान्यीकरण के लिए निर्मित होता है। आनुमानिक सांख्यिकी अनेक होते हें, 'टी' परीक्षण उनमें से एक है।

सांख्यिकी के कार्य

सांख्यिकी अनेक उद्देश्यों की पूर्ति करती है। उनमें से प्रमुख निम्न हैंः

1. आंकड़ा और सूचना को संक्षिप्त और शुद्ध रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है।
2. प्राप्त परिणाम अधिक शुद्ध और वस्तुनिष्ठ होते हैं।
3. आंकड़े का विश्लेषण अधिक वैज्ञानिक बनाया जाता है।

4. सामान्य निष्कर्षों पर पहुंचा जा सकता है।
5. तुलनात्मक अध्ययनों को संभव किया जाता है।
6. दो या दो से अधिक विचरणों के संबंधों की खोज की जा सकती है।
7. व्यवहारों के बारे में पूर्वकल्पना की जा सकती है।

2.8 कुछ बुनियादी सांख्यिकी अवधारणायें

जब आंकड़े के बड़े समुच्चय को संग्रह किया जाता है, इसे सामान्यतः बारम्बारता विभाजन सारणी में संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है तो यह बहुत अर्थपूर्ण और समझने योग्य हो जाता है। बारंबारता विभाजन सारणी सांख्यिकी विश्लेषण की प्रारंभिक अवस्था होती है।

बारंबारता विभाजन

मान लीजिए कि आपने एक कक्षा के 25 विद्यार्थियों को एक परीक्षण दिया है, उन्होंने निम्न अंक प्राप्त किए हैं:

10, 7, 6, 5, 5, 6, 8, 9, 3, 6, 8, 7, 4

8, 9, 5, 7, 4, 9, 6, 6, 11, 10, 8, 9, 8, 3

अंकों के उपर्युक्त विभाजन में अधिकतम अंक 11 है और निम्नतम अंक 3 है। इस प्रकार, सम्पूर्ण समूह ने इन दो अंकों के बीच के अंक को प्राप्त किया है। उपर्युक्त आंकड़े को सारणी के निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है जिसमें आने वाले अंकों और बारंबारता को दिखाया गया है। सारणी दिखाता है कि अधिकतम विद्यार्थियों के अंक श्रेणी 6-8 है।

मिलान निशान (I) एक अंक के लिए प्रयोग किया जाता है और मिलान 5 अंकों के समूह में रखा गया है। पांचवी मिलान निशान प्रथम चार मिलान काटने वाली रेखा से कटता है। ये खंड हमें बड़ी संख्या को गिनने में मदद करता है।

सारणी 2.1: बारंबारता का विभाजन

अंक	मिलान	कुल	अंक	मिलान	कुल	अंक	मिलान	कुल
3	II	2	6	~~IIII~~	5	9	IIII	4
4	II	2	7	III	3	10	II	2
5	III	3	8	~~IIII~~	5	11	I	1

आंकड़े की विशेषताओं का सार निकालने के लिए विधियों के प्रयोग को केन्द्रीय प्रवत्ति का मानक कहते हैं। मानक अंकों के विभाजन की प्रवत्ति का सूक्ष्म वर्णन करता है। अब हम उन पर विचार करें।

माध्य: माध्य केन्द्रीय प्रवत्ति का सबसे लोकप्रिय तथा प्रमुख मानक होता है। इसे 'अंक गणितीय माध्य' के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि यह दूसरे सांख्यीकी जैसे स्तरीय विलगाव और सहसंबंध की गणना के लिए आधार प्रदान करता है और मापे गए विचरणों की विशेषताओं के सार का वर्णन करता है।

उदाहरणार्थ, आपने अवश्य पाया होगा कि जब कभी कोई क्रिकेट श्रंखला खेली जाती है तो लोग अपने टेलिविजन से चिपके होते हैं। अक्सर मैच के दूसरे भाग में टेलिविजन पर शीर्षक जैसे 'रन दर'– वर्तमान और रन दर – अपेक्षित प्रस्तुत होता है। रन दर प्रति ओवर औसत अंक होता है।

माध्य पूरे बनाये अंको का निकाला गया औसत होता है। इसे बनाये गये पूरे अंकों के कुल के द्वारा गणना की जाती है और उसके बाद अंकों को एक साथ संख्या द्वारा भाग दिया जाता है। उदाहरणार्थ, यदि हमारे पास 7 अंक जैसेः 10, 20, 20, 40, 50, 10, 10 हैं।

माध्य की इस विधि द्वारा गणना की जा सकती हैः

एन (अंकों की संख्या) = 7

$$10 + 10 + 20 + 20 + 40 + 50 + 10 + 10 = \frac{160}{7} = 22.86$$

माध्य (M) X द्वारा संबोधित किया जाता है ("X बार'' की तरह उच्चारण किया जाता है।)

व्यक्तिगत संख्या "X" के द्वारा सूचित किया जाता है

कुल संख्या को "N" के द्वारा करते हैं।

माध्यिका: माध्यिका खास मूल्य होता है। यह अंकों के समूह को दो समान भागों में बांटता है। पहले भाग में सभी बड़े मूल्य होते हैं और दूसरे भाग में माध्यिका से छोटे मूल्य होते हैं। माध्यिका स्थितिय औसत होता है और यह अंकों की विशालता से प्रभावित नहीं किया जाता है। इसे आसानी से समझा और गणना किया जाता है।

उदाहरणः निम्न अंकों की माध्यिका 25 हैः

12, 20, 23, 23, **25**, 26, 28, 35, 40

25 से चार अंक छोटे हैं और चार अंक बड़े हैं।

बहुलक (मोड): बहुलक (मोड) एक अंक होता है, वह अंकों की दी हुई श्रेणी में अधिकतम बार आता है। मोड शब्द फ्रांसीसी भाषा से लिया गया है, जिसका अर्थ प्रचलन होता है, इस प्रकार मोड सबसे अधिक आने वाली या 'लोकप्रिय' संख्या होता है। निम्न अंकों में 20 मोड हैः

10, 15, **20, 20, 20,** 35, 35

इसकी गणना बहुत आसानी से होती है। मोड का प्रयोग अक्सर व्यापार, मौसम की भविष्यवाणी, प्रचलन, इत्यादि में किया जाता है।

सहसंबंधः सहसंबंध संख्याओं की एक विधि है, वह हमें बताती है कि विचरणों के दो समुच्चय कैसे एक दूसरे से संबंधित हैं। बड़ी संख्या के उदाहरणों में, दो विचरण सदैव समान या विपरीत दिशा में घटते या बढ़ते हैं। जब यह पाया जाता है कि एक संबंध उभरता हैं उसे 'सहसंबंध' कहा जाता है। जब एक विचरण में अंक समान दिशा में बदलता है जैसा कि दूसरे विचरण में भी होता है या विपरीत दिशा में बदलता है– सहसंबंध (संबंध) का निर्माण होता है।

इस अंक के द्वारा मनोवैज्ञानिक दो वचिरणों के बीच संबंध स्थापित करता है, उसे सहसंबंध का गुणांक कहते हैं। यह घातांक होता है, वह गुण के साथ मात्रा के संबंध को व्यक्त करता है। इन विचरणों के साथ तीन संभावित संबंध संभव होते हैं– सकारात्मक, नकारात्मक और शून्य संबंध।

पारस्परिक संबंध की विशालताः –1.00 से +1.00 की श्रेणी के बीच होता है। सहसंबंध गुणांक की श्रेणी की निम्न तरीके से व्याख्या की जा सकती है।

गुणांक	**संबंध**
.00 + .20 तक	नगण्य
+ .21 + .40 तक	अल्प
+ .41 + .60 तक	सीमित
+ .61 + .80 तक	ऊँचा
+ .81 + .99 तक	बहुत ऊँचा
+ 1.00	पूर्ण

यह सकारात्मक पारस्परिक संबंध की एक श्रेणी है। समान श्रेणी नकारात्मक पारस्परिक संबंध के लिए भी होती है। जिसका अर्थ होता है कि एक विचरण का अंक दूसरे विचरण के अंक के साथ विपरीत दिशा में बदलता है।

पाठगत प्रश्न 2.4

1. केन्द्रीय प्रवत्ति का मानक क्या होता है?

   ____

   ____

2. सहसंबंध किसे कहा जाता है?

   ____

3

मन और व्यवहार की जैवकीय और सांस्कतिक रचना

हमें अकसर यह आश्चर्य होता है कि कैसे हम विभिन्न तरीके का व्यवहार करते हैं। कभी हम आनन्द का अनुभव करते हैं, तो कभी हम दुःखी हो जाते हैं। जिन अवयवों के साथ हमारा जन्म हुआ है– मस्तिष्क, तन्त्रिका प्रणाली और एन्द्रिक– गतिक प्रणाली शरीर रचना के क्रियाविधि का केन्द्र बिन्दु होता है। पहले यह धारणा थी कि हम सभी के भीतर कुछ भाव होते हैं जो कि हमारे व्यवहार को नियन्त्रित करते हैं। आज, हम जानते हैं कि हमारे क्रिया कलाप तथा शारीरिक चेष्टायें एक वातावरण में होते हैं और ये संयुक्त रूप से सामाजिक–सांस्कतिक वातावरण तथा तंत्रिका प्रणाली (स्नायु तंत्र) द्वारा निर्धारित होते हैं। हम एक संस्कति में जन्म लेते हैं जो कि पहले से ही विद्यमान होती है। जिसके परिणामस्वरूप, इस प्रणाली के क्रिया–कलाप अक्सर सामाजिक–सांस्कतिक वातावरण द्वारा व्यवहित (मेडिएटेड) होते हैं। इस प्रक्रिया में, हमारे स्नायुतन्त्र ओटोमोबाइल के एक इंजन के रूप में कार्य करते हैं, जो कि वाहन की हर समय गति तथा चाल को नियन्त्रित करता है। सामाजिक–सांस्कतिक संदर्भ हमें एक खास तरीके से कार्य करने के लिए अवसर प्रदान करता है जो कि हमारे सोचने तथा कार्य करने के तरीके को प्रभावित करता है। जैविक तथा सांस्कतिक कारकों के पारस्परिक प्रभाव को ध्यान में रखे बिना मानव व्यवहार का कोई भी विश्लेषण अपूर्ण ही रहेगा।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप निम्नलिखित के लिए सक्षम होंगे:

- विकासक्रम, आनुवंशिकता तथा वातावरण के बीच संबद्धता स्थापित करने में;

- कोशिका तथा न्यूरॉन की संरचना तथा कार्यों की व्याख्या करने में;
- स्नायु तन्त्र प्रणाली की संरचना एवं कार्यों का उल्लेख करने में;
- मस्तिष्क तथा उनके व्यवहार के नियंत्रण संबंधी विशेष क्षेत्रों का उल्लेख करने में;
- अंतःस्रावी ग्रन्थि तथा इनके क्रिया विधियों की व्याख्या कर सकेंगे तथा योनिग्रन्थि एवं अण्डाशय की महत्ता के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- आनुवंशिक लक्षणों के संचारण का वर्णन कर सकेंगे;
- संस्कति तथा लिंग की भूमिका के बीच संबंधों का उल्लेख कर सकेंगे;
- लिंग पहचान पर दष्टि डालते हुए समाजीकरण तथा परसंस्कतिगह की प्रकति को समझ सकेंगे।

3.1 विकास क्रम, आनुवंशिकता तथा वातावरण

यदि आप अपने आस–पास देखेंगे तो आपको पता चलेगा कि आप विभिन्न ऐसे जीवों से घिरे हुए हैं जो कि रूप और व्यवहार में अलग–अलग हैं। जिनमें मानव जाति, कीड़े–मकोड़े, सरीसप, पक्षी, मानवकल्प, स्तनधारी तथा मछली आदि हैं। प्राणिविज्ञान के विशेषज्ञों का मत है कि विकास क्रम की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप आज शरीर रचना विद्यमान है जो कि कई लाख वर्षों की अवधि की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप इस स्थिति में है। एक अंग्रेजी जीव वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन द्वारा विकास क्रम की अवधारणा का प्रतिपादन किया गया। विकास क्रम के इतिहास के परिणामस्वरूप व्यवहारों की भौतिक संरचना तथा पद्धति आज मिली है। इस विचारधारा के अनुसार, विकास क्रम की प्रक्रिया के लिए वातावरण का अनुकूलन एक केन्द्र बिन्दु है जो गुण और व्यवहार मानव शरीर को अस्तित्व में बनाए रखने में मदद करते हैं वह बने रहते हैं तथा अन्य व्यवहार विलुप्त हो जाते हैं। इसे प्राकतिक चयन की प्रक्रिया के रूप में भी जाना जाता है।

मानव विकास की तीन विशेषताएँ हैं जो इन्हें अन्य उपजातियों से अलग करती हैं। पहली विशेषता को बाइपेडलिज़्म कहा जाता है। यह सीधी तरह से चलने में मदद करने वाली योग्यता को दर्शाता है। दूसरी विशेषता को मस्तीष्करण (एनसीफैलाइजेशन) कहा जाता है। यह मस्तिष्क के आकार में वद्धि तथा विशिष्ट मस्तिष्क ऊतकों के अनुपात को इंगित करता है। इसकी तीसरी विशेषता भाषायी विकास है। निसंदेह यह योग्यता मानव जातियों के लिए प्रभावी संप्रेषण तथा सांस्कतिक उपलब्धियों के लिए महत्वपूर्ण है।

आनुवांशिकता से तात्पर्य उन अनुवांशिक लक्षणों से है जो मनुष्य को माता–पिता से विरासत में मिलता है। इसे अक्सर ब्लू प्रिन्ट के रूप में जाना जाता है। एक व्यक्ति के आनुवांशिक जैविक अथवा आनुवांशिकी (कोड) संहिता व्यवहार को आकार देने के लिए वातावरण के साथ पारस्परिक क्रिया करते हैं। वातावरण में वह भौतिक तथा सामाजिक परिवेश शामिल होता है जिसमें एक व्यक्ति जीवित रहता है, विकसित होता है तथा

आचरण करता है। परिवार, स्कूल तथा समुदाय जिसके भीतर व्यक्ति रहते हैं, उसके द्वारा किए जाने वाले व्यवहार की पद्धति को निर्धारित करने के लिए आनुवांशिक लक्षणों के साथ पारस्परिक क्रिया करते हैं। अब इस पाठ के बाद वाले अनुच्छेद में आनुवांशिक व्यवहार के बारे में अधिक अध्ययन करेंगे।

3.2 जीवन की मूल इकाई के रूप में कोशिका

क्या आपने ईंट तथा उसके पश्चात भवन निर्माण की प्रक्रिया को देखा है? वास्तुविद इसका डिजाइन बनाता है और कारीगर ईट जोड़ता है जिससे ईट की एक इमारत का निर्माण होता है। ठीक इसी तरीके से, हमारा शरीर भी कोशिकाओं से बना है। जिस प्रकार से ईट इमारत में एक छोटी ईकाई के रूप में होता है ठीक इसी प्रकार कोशिका हमारे शरीर में एक छोटी इकाई के रूप में होता है। प्रत्येक जीव चाहे वह पौधा हो, जानवर अथवा मानव जाति ही क्यों न हो, सभी की रचना इन छोटी ईकाइयों से होती है जिसे कोशिका (सेल) कहा जाता है। सभी जैविक प्रजातियों की कोशिकाओं तथा जैविक संघटकों के विभिन्न भागों की कोशिकाओं के बीच कुछ भिन्नताएं होती हैं। सभी कोशिकाओं में द्रव्य जिसे साइटोप्लाज्म कहते हैं नाभि में पाया जाता है जो कोशिका झिल्लियों से घिरे होते हैं। कोशिकाओं के भीतर कार्य तथा विभिन्न कोशिकाओं के बीच समन्वयन (कोआर्डिनेशन) से ही जीवन संभव है। सभी जैविक प्रजातियों का जीवन कोशिकाओं की कार्य प्रणाली पर निर्भर करता है।

3.3 तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन)

जिन कोशिकाओं से स्नायु तंत्र का निर्माण होता है उन्हें तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) तथा ग्लिया कहते हें। केवल तंत्रिका कोशिका ही एक स्थान से दूसरे स्थान तक सूचना पहुँचाते हैं। सूर्यास्त का आनंद लेने, संगीत सुनने, किसी प्रियजन के बारे में एकान्त जगह में सोचने या किसी समस्या का समाधान करने आदि में लाखों तंत्रिका कोशिकाओं के कार्य का संचालन शामिल है। ये तंत्रिका कोशिकाएं वातावरण से ग्राहिका के माध्यम से सूचना संकलित करते हैं और उसके बाद इन सूचनाओं के तालमेल के पश्चात ही पूरा कार्य संभव हो पाता है। तंत्रिका कोशिकाएँ सूचना संग्रहित भी करती हैं जिससे व्यवहार सम्पादित होता है। मस्तिष्क का आधा हिस्सा तंत्रिका कोशिकाओं से बना होता है। ग्लियल कोशिकाएँ शेष आधे भाग का निर्माण करती हैं। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में कोशिकाएँ विभिन्न आकार और माप के होते हैं। तंत्रिका कोशिका के तीन मुख्य अंग होते हैं– कोशिका शरीर (सोमा), डेन्ड्राइट्स और एक्सॉन्स इन संरचनाओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

1. सोमा अथवा कोशिका शरीर, तंत्रिका कोशिका का सबसे बड़ा भाग होता है। यह उपापचय (मेटाबोलिजम) को विनियमित तथा नियन्त्रित करता है और संपूर्ण

कोशिका को अनुरक्षण करता है। सोमा अन्य तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरॉन) से आवेगों को भी प्राप्त करता है। कोशिका शरीर में केन्द्रक होता है जो कि ऐसे रसायनों का निर्माण करता है जो कि संकेतो के प्रेरक होते हैं।

2. वक्षिका (डेन्ड्राइट्स) वह शाखाएं होती हैं जो कि कोशिका शरीर से विस्तारित होते हैं तथा जटिल रूप में फैले होते हैं। तंत्रिका कोशिकाएं डेन्ट्राइट्स वक्षिका न्यूरोसंधिक (सिनाप्टिक कनेक्शन) के माध्यम से अन्य तंत्रिका कोशिकाओं से अनेक आगत (इनपुट) को अधिकता से प्राप्त करती हैं। सूचना भेजने वाली कोशिका एक रसायन छोड़ती हैं जो कि प्राप्ति करने वाली कोशिका की गतिविधि को प्रभावित करता है। सूचना सिनैप्टिक टर्मिनल से होकर डेन्ड्राइट्स अथवा कोशिका शरीर में जाती है परन्तु दूसरे रास्ते से नहीं जाती।

3. अक्षतन्तु (एक्सोन) एक बड़ा तन्तु होता है जो कि कोशिका तन्त्र से दूर तक फैला हुआ होता है। अक्षतन्तु, वक्षिका अन्य तंत्रिका कोशिकाओं अथवा पेशीय तंत्रों तथा ग्रन्थियों को संकेत भेजता है। अक्षतन्तु, केन्द्रीय स्नायु मंडल में तंत्रिका कोशिका मार्ग का निर्माण करता है। माइलिन शेयाथ द्वारा एक्सॉन का पथ्थकरण होता है। माइलिन शेयाथ, ग्लियाल कोशिकाओं का बना होता है।

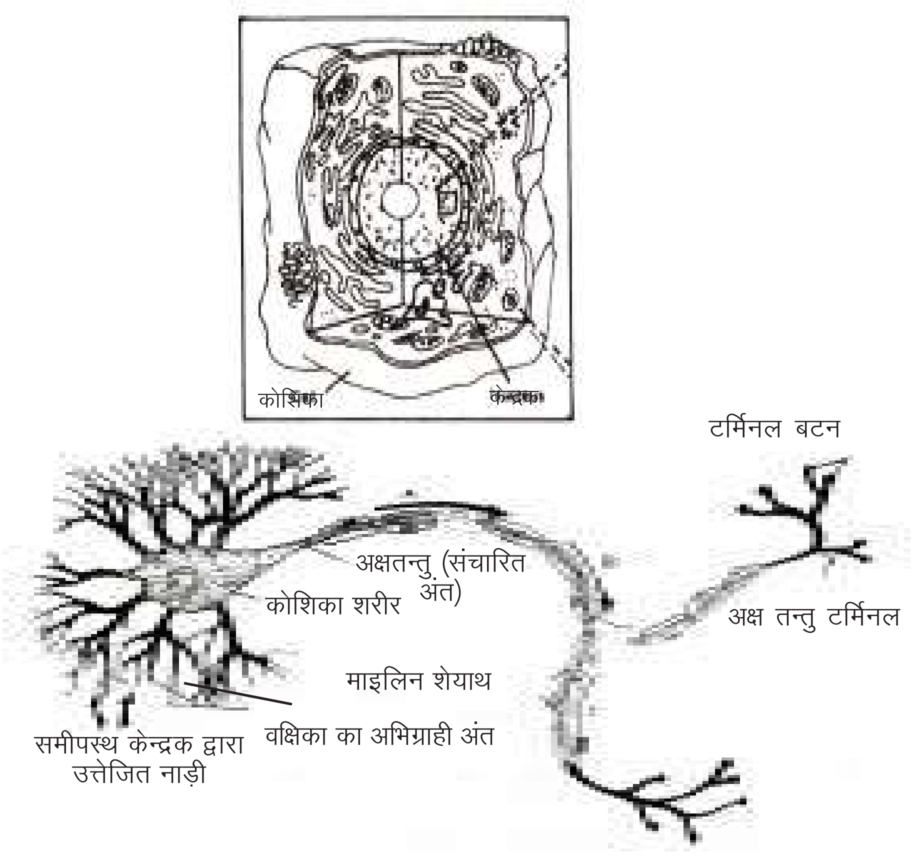

चित्र 3.1: सेल एवं न्यूरान की बनावट

तंत्रिका आवेग (संचारण)

विद्युतीय आवेशों की श्रंखला के माध्यम ये एक सूचना आती है जो कि एक तंत्रिका कोशिका से दूसरे तंत्रिका कोशिका में जाती है। इन्हें तंत्रिका आवेग कहा जाता है। ये मस्तिष्क के विशिष्ट क्षेत्र को भेजी जाती हैं जहाँ संवेदन होता है। अक्षतन्तु (एक्सॉन) और तंत्रिका कोशिकायें, सर्दी या गर्मी जैसी कोशिकाओं को अपने साथ नहीं ले जाती। संवदेन तभी होता है जब सूचना मस्तिष्क में पहुंचती है।

न्यूरोसन्धि (सिनैप्स)

वह क्षेत्र जहाँ आवेग एक तन्त्रिका कोशिका से दूसरी तन्त्रिका कोशिका में जाता है उसे न्यूरोसंधि (सिनैप्स) कहा जाता है। न्यूरोसंधि (सिनैप्स) तंत्रिका कोशिका के बीच एक संगम जैसा होता है। न्यूरोसंधि में खाली जगह (सिनैप्टिक क्लेफ्ट) के माध्यम से संकेतों का संचारण एक तंत्रिका कोशिका से दूसरे तंत्रिका कोशिका में होता है। न्यूरोसंधि (सिनैप्स) के भेजने का क्षेत्र अक्षतन्तु का अन्तिम विवाचन होता है, जबकि न्यूरोसंधि (सिनैप्स) के प्राप्ति का क्षेत्र वक्षिका की शाखाओं का अग्रभाग होता है। वे रासायनिक तत्व जो कि संकेतों को सुचारु रूप से संचारित करते हैं उन्हें (न्यूरो ट्रांसमीटर) तंत्रिका संचारक कहा जाता है।

3.4 तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) के प्रकार

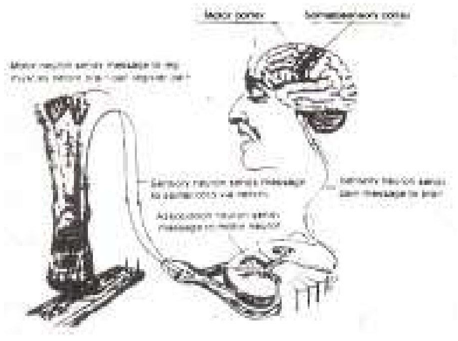

चित्र 3.2: *परिलक्षित कार्यवाहियां*

कार्य के आधार पर मुख्यतः न्यूरॉन दो प्रकार का होता है एक ग्राहक तन्त्रिका कोशिका तथा दूसरा गतिक तन्त्रिका कोशिका ग्राहक तन्त्रिका कोषिका स्नायु तन्त्र में सूचना लाता है ऐसी सूचना संवदेन के माध यम से होकर पहुंचती है। मांस पेशीय गति के लिए गतिक तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) मस्तिष्क के आदेशों को कार्य रूप में परिणित करती है जैसे चबाना, टहलना, लेखन तथा ऐसे कार्य जो कि हमारी संचेतना के तहत आते हैं। परिलक्षित कार्यवाहियां मेरू रज्जु (स्पाइनल कार्ड) द्वारा मध्यस्थ की जाती हैं। सांस लेने और आंख झपकाना अनैच्छिक (इनवालन्टेरि) कार्यवाही है। ये अनैच्छिक कार्यवाहियां गतिक तन्त्रिका कोषिका द्वारा नियंत्रित होती हैं।

स्वयं इसका प्रयास करें

आप अपने मित्र में पहल झपकाना शुरू कर सकते हैं। इसके लिए आपको संतरे के छिलके की जरूरत है। आप संतरे के छिलकों को मित्र की आंखों के 6-7 इंच दूर ले जाएं और उसे आंख में दबाएं। आपके मित्र की आंखें अनैच्छिक रूप से झपकनी शुरू हो जाएंगी।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 3.1

1. अन्य जातियों से मानव जाति में विभिन्नता के क्या लक्षण है?

   ____

   ____

2. तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) की संरचना के मुख्य भागों की व्यख्या करें।

   ____

   ____

3. स्पष्ट करें कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्यः

   (i) केवल तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) एक स्थान से दूसरे स्थान पर सूचना को स्थानान्तरित करती है। सत्य/असत्य

   (ii) स्नायु तन्त्र कोशिकाएं ग्राहकों के द्वारा वातावरण (परिवेश) से सूचना एकत्रित करती हैं। सत्य/असत्य

   (iii) तंत्रिका कोशिकाएं (न्यरॉन) सूचना को स्टोर नहीं करती है।

4. उपयुक्त शब्दों के साथ रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:

   (i) तंत्रिका कोशिकाएं (न्यूरॉन) मस्तिष्क के .... आकार को बनाती हैं।

   (ii) एक कोशिका के तीन भाग होते हैं। ये भाग ...., ... और .... हैं।

3.5 स्नायु तन्त्र

स्नायु तन्त्र अरबों तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरॉन) से बना है। यह सूचना को प्राप्त करने, कार्यवाही करने और उसे भेजने के लिए उत्तरदायी होता है। शरीर की समस्त क्रिया–कलाप स्नायु तन्त्र द्वारा नियंन्त्रित होते हैं। इसके दो हिस्से अर्थात् केन्द्रीय तथा परिधीय हैं।

केन्द्रीय स्नायु तन्त्र (सीएनएस) में मस्तिष्क तथा स्पाइनल कार्ड (मेरुरज्जु) होता है। स्पाइनल कार्ड छोटा कालम होता है जो कि पीठ के मूल (बेस) से शुरू होता है और यह गर्दन से होकर खोपड़ी के मूल तक विस्तारित होता है। मस्तिष्क एक संरक्षक

खोपड़ी से घिरा होता है। केन्द्रीय स्नायु तन्त्र (सीएनएस) स्नायु (नर्व) संवेदन को भेजने तथा संवेदन (सेन्सटी) सूचना के प्राप्त करने के लिए उत्तरदायी होता है।

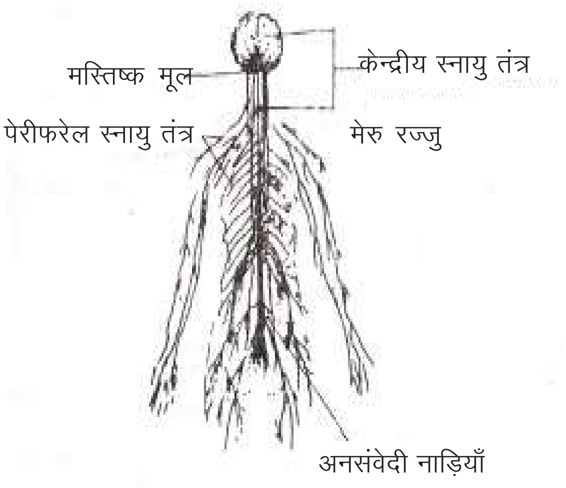

चित्र 3.3: ***स्नायु तंत्र***

पेरीफरेल स्नायु तन्त्र तंत्रिका कोशिका के ऐसे समूह के रूप में होता है जो कि केन्द्रीय स्नायु तन्त्र (सीएनएस) तथा शरीर के शेष हिस्सों के बीच सूचना भेजता है। यह स्नायु आवेगों को शरीर के भीतर और इससे बाहर ले जाने के लिए उत्तरदायी होते हैं। पेरीफेरल स्नायु तन्त्र दो और भागों में बंटा होता हैः

- कायिक तंत्र (सोमैटिक सिस्टम)
- स्वायत्त तंत्र (ऑटोनामिक सिस्टम)

स्नायु तन्त्र में कायिक तंत्र मस्तिष्क तथा मेरू रज्जु को शरीर के ऐच्छिक मांस पेशीय तन्त्रों से जोड़ता है। यह प्रणाली बाहरी विश्व के प्रति संवेदनशील होती है और क्रिया करती है। इसमें दोनों इन्द्रियां तथा गतिक तंत्रिका कोशिकाएं होती हैं। संवेदिक तंत्रिका कोशिकाएं (न्यूरॉन) मिलने वाले संकेतों को केन्द्रीय स्नायु मंडल को स्थानान्तरित करती हैं। ये संकेत ग्राहक (रिसेप्टर) कोशिका में उत्पन्न होते हैं और ज्ञानेन्द्रियों जैसे आंख और कान, में स्थित होते हैं। गतिक तंत्रिका कोशिका (मोटोर–न्यूरॉन), जिनकी कोशिका शरीर मरू रज्जु के भीतर होता है, मरू रज्जु से संकेतों को बाहर भेजता है। कायिक स्नायु तन्त्र कंकाली पेशीय तन्त्रों को नियंन्त्रित करता है, जो कि शरीर के कार्यशीलता में सहायक होता है।

स्वायत्तः स्नायु तन्त्र में तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) शरीर के भीतर अनैच्छिक क्रियाओं, जैसे कि दिल, पेट तथा लीवर (यकत) कार्य करता है, को नियन्त्रित करता है। ऑटोनॉमिक स्नायु तन्त्र अनसंवेदी (सिम्पैथेटिक) तथा अर्द्ध–अनुसंवेदी (पैरा सिम्पैथेटिक) प्रणालियों को संघटित करता है। अनुसंवेदी (सिम्पैथेटिक) स्नायु तन्त्र आपातकालीन परिस्थितियों में प्रबल होते हैं। यह प्रणाली हमारे संवेगों (मनोभाव) को नियन्त्रित करती है। यह शर्करा लेवल बढ़ने, दिल की धड़कन, रक्त दबाव बढ़ने को इंगित करता है तथा पाचन की धीमी प्रक्रिया को भी परिलक्षित करता है। इन परिवर्तनों से हम तनावपूर्ण स्थितियों को सामना करने में सक्षम होते हैं। पैरासिम्पैथेटिक स्नायु तन्त्र आराम की परिस्थितियों में होने वाली गतिविधियों में प्रबल होते हैं। यद्यपि, अनेक परिस्थितियों में दोनों प्रणालियां साथ–साथ कार्य करती हैं तथा अनुकूलन को सम्भव बनाती है।

चित्र 3.4: स्वायत्त (ऑटोनामिक) स्नायु तन्त्र

3.6 केन्द्रीय स्नायु तन्त्र (सीएनएस)

सीएनएस में मस्तिष्क और स्पाइनल कॉर्ड (मेरुरज्जा) होते हैं। आपने सीखा है कि स्पाइनल कॉर्ड में स्थित तंत्रिका कोशिकाएं (न्यूरॉन) रिफ्लैक्स (परावर्तन) क्रिया को उत्पन्न कर सकते हैं। यह एक रिले (प्रसारण) स्टेशन के रूप में भी कार्य करता है। यह शरीर के भीतर ज्ञानेन्द्रिय तंत्रिका कोशिकाओं से सूचना मस्तिष्क को भेजता है और मोटोर आदेशों को लेकर पेशीय तन्त्रों को वापिस भेजता है। स्पाइनल कॉर्ड (मेरुरज्जा) की गंभीर चोट के कारण सामान्यतः ज्ञानेन्द्रिय की होनि होती है तथा चोट लगने के स्थान से नीचे के हिस्से पैरालाइज हो जाते हैं इसके दो प्रमुख घटक हैं जिनके नाम ग्रे तत्व (ग्रे मैटर) तथा व्हाट मैटर (सफेद तत्व) हैं।

ग्रे तत्व (ग्रे मैटर) स्पाइनल कॉर्ड (मेरुरज्जा) के केन्द्र के नजदीक पाया जाता है जो कि सूचनाओं को प्रक्रमित करता है और सफेद तत्व बाहरी परतों में पाया जाता है जिसमें अक्षतन्तु तथा मस्तिष्क को एवं मस्तिष्क से सूचना संचारित करना निहित है।

यदि स्टील के ग्लास में आपके लिए चाय लाया जाता है और आप अचानक उसे उठाने का प्रयास करते हैं तो क्या आपने महसूस किया कि आपकी अंगुलियां कैसे गर्म महसूस करती हैं।

इस मामले में, हमारे त्वचा के गर्म ग्राहक उत्तेजित हो जाते हैं तथा तंत्रिका आवेगों को प्रज्वलित करते हैं।

हमारे हाथ के ग्राहक में आने वाली सूचना तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरॉन) से होकर स्पइनल कॉर्ड (मेरुरज्जु) में जाती है जहाँ यह कार्ड के केन्द्र में स्थित ग्रे–तत्व (ग्रे मैटर) में प्रवेश करती है। यह हमारे मस्तिष्क में सफेद तत्व (व्हाइट मैटर) से होकर आती है। मस्तिष्क संवेदिक सूचना का विश्लेषण करता है और एक अनैच्छिक प्रक्रिया को इंगित करता है जिसके कारण ग्लास को छोड़ने जैसी प्रतिक्रिया होती है।

मस्तिष्क

यदि आप मस्तिष्क की भौतिक संरचना के बारे में समझना चाहते हैं तो आप इसका प्रयास कर सकते हैं। शीशे के सामने खड़े हा जायें तथा अपने संपूर्ण चेहरे के समाने वाले भाग, अपन बांये कान से दोनों भौहों के माध्यम से होते हुए दांये कान तक, की काल्पनिक रेखा खीचें। आपके मस्तिष्क का अधिकांश भाग इस लाइन के ऊपर स्थित होता है।

मस्तिष्क, केन्द्रीय स्नायु तन्त्र (सीएनएस) का प्रमुख भाग होता है जो कि कपालीय कोष्ठ में स्थित होता है। यह संरक्षण के लिए खोपड़ी से ढका हुआ होता है। मस्तिष्क का भार औसतन तीन पाउन्ड (लगभग 1.4 किलोग्राम) होता है जो कि संपूर्ण सीएनएस के 67 प्रतिशत के लगभग होता है। मस्तिष्क, मेरू रज्जु के ऊपर छोर से जुड़ा हुआ होता है और इसकी तीन संरचनाएं होती हैं, प्रमस्तिष्कीय, अनुमस्तिष्क और मस्तिष्क स्तंभ जो कि मेरू रज्जु की ओर जाता है। मस्तिष्क स्तंभ भी मेडुल्ला ओबलोंगाटा, मध्य मस्तिष्क, और पॉन्स में बंटा होता है।

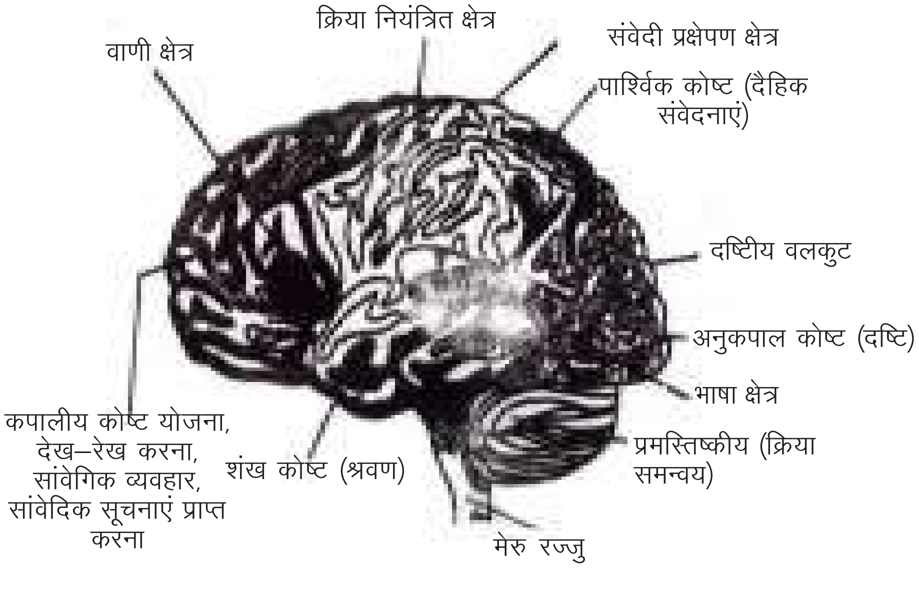

चित्र 3.5: मानव मस्तिष्क का चित्र

क्या आप जानते हैं?

हमारा मस्तिष्क कुछ हद तक अखरोट जैसा दिखता है। हमारे मस्तिष्क में कम से कम 15 अरब (मिलियन) तन्त्रिका कोशिकाएं (न्यूरॉन) होती हैं।

कार्टेक्स (वल्कल) में निर्णय लेने वाला केन्द्र होता है जो कि हमारी भावना और सोच को प्रभावित करता है।

हमारे मस्तिष्क का प्रमुख मनोवैज्ञानिक कार्य सूचना को संवाहित करना है।

(अ) सेरेब्रल कॉर्टेक्स (वल्कल)

मस्तिष्क के सबसे ऊपर की परत को सेरेब्रल कॉर्टेक्स (चित्र 3.5 देखें) कहा जाता है। मस्तिष्क दो बराबर भागों में बंटा होता है: बांया अर्धगोल (लेफ्ट हेमीस्फेयर) तथा दांया अर्द्धगोल (राइट हेमीस्फेयर)। ये अखरोट के आधे हिस्से के समान होता है। यह नोट करना रोचक है कि प्रत्येक हेमीस्फेयर तकरीबन शरीर के विपरीत ओर से सूचना को संवाहित करता है। उदाहरणार्थ, जब आप अपने दाहिने हाथ से लिखते हैं, तो मोटोर सूचना आपके हाथ को आपके बांये हेमीस्फेयर से मूव करता है। कार्टेक्स सघन रूप से भरे तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरॉन) की एक मोटी परत में होता है। यह बड़े क्षेत्र में कपालीय कैविटी के भी स्थित होता है और इसलिए इसमें अनेकों मोड़ और घुमाव होते हैं। मोड़ और घुमाव पहाड़ी तथा घाटी जैसी संरचनाएं बनाते हैं जिसे जाइरी (एकल जाइरस) तथा सुल्की (एकल सल्कस) कहते हैं।

मस्तिष्क के दो मूल कार्य होते हैं: ज्ञानात्मक कार्य/सीखना, याद करना (सोचना आदि) तथा शरीर के देहिकी को विनियमित करना।

(ब) सेरेब्रल कॉर्टेक्स के खण्ड (लोब्स)

सेरेब्रल कॉर्टेक्स 4 खण्डों में बंटा होता है: ललाट बल्कुट, अनुकपाल, पार्श्विक तथा शंख। इन खण्डों के विभिन्न केन्द्र वातावरण की जागरूकता तथा वातावरण में बदलाव की प्रतिक्रिया के लिए उत्तरदायी होते हैं।

दृष्टि सूचना अनुकपाल खण्ड में स्थित प्राइमरी दृष्टिय वल्कुट द्वारा प्राप्त होती है। आंख, दृष्टि मार्ग, अथवा दृष्टि वल्कुट में किसी भी प्रकार की चोट अथवा अव्यवस्थित होने के परिणामस्वरूप आंख की दृश्यता अव्यवस्थित हो जाती है। इसी प्रकार, श्रवण संबंधी सूचना टेम्पोरल खण्डों में स्थित प्राइमरी श्रवण वल्कुट द्वारा प्राप्त की जाती है। हमारे कानों, श्रवण मार्गों तथा श्रवण वल्कुट (कार्टेक्स) में किसी प्रकार की क्षति (चोट) लगने के कारण श्रवण (सुनने में) कठिनाई होती है। शरीर की इन्द्रियों से सूचना सोमैटो इन्द्री वल्कल द्वारा प्राप्त की जाती है, जो कि पार्शविक खण्ड में स्थित होता है।

वल्कल (कार्टेक्स) का दायां और बांया सेरेब्रल अर्द्धभाग इन्द्रिय सूचना प्राप्त करता है तथा शरीर के विपरीत मांसपेशीय क्रिया को नियन्त्रित करता है। दोनों अर्द्धभाग उच्च

मानसिक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं जिसमें भाषा, इन्द्रिय सूचना संवाहन एवं एकीकरण, योजना, निर्णय लेने तथा विवेचना क्रियाएं शामिल हैं।

पाठगत प्रश्न 3.2

(अ) स्पष्ट करें कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्यः

1. केन्द्रीय स्नायु तन्त्र मस्तिष्क तथा स्पाइनल कॉर्ड (मेरुरज्जा) का बना होता है। सत्य/असत्य
2. स्पाइनल कॉर्ड (मेरुरज्जा) के तीन घटक होते हैं। सत्य/असत्य
3. मस्तिष्क संरक्षण के लिए खोपड़ी (स्कल) से ढका हुआ होता है। सत्य/असत्य
4. मस्तिष्क के सबसे निचली परत को मस्तष्कीय वल्कुट कहा जाता है। सत्य/असत्य

(ब) उपयुक्त शब्दों के साथ रिक्त स्थानों की पूर्ति करोः

1. स्नायु तन्त्र के दो प्रमुख भाग .... और .... हैं।
2. मस्तिष्क का प्रत्येक अर्द्धभाग शरीर के .... ओर से सूचना को प्रोसेस करता है।
3. सीएनएस .... और .... का बना होता है।
4. बाहरी (पेरीफेरियल) स्नायु तन्त्र शरीर .... से तथा शरीर के लिए .... ले जाते हैं।
5. सोमैटिक प्रणाली .... को नियंन्त्रित करता है, जो कि शरीर के .... की सहायता करता है।

क्या आप जानते हैं?

मस्तिष्क अनुसंधान तकनीकः जीवित मस्तिष्क के माध्यम से कल्पना

हमारे मस्तिष्क की क्रियाओं को जानने के लिए अनेक तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इस तकनीकों का प्रयोग इस बात का पता लगाने के लिए भी किया जाता है कि मस्तिष्क की कार्यपद्धति में कोई गलती तो नहीं है। जीवित मस्तिष्क प्रणाली में आमतौर पर कुछ प्रयोग की जाने वाली तकनीकें निम्नलिखित हैंः

कैट स्कैनः कम्प्यूटरीकत अक्षीय टोमोग्राफी में कमजोर एक्स–रे बीम व्यक्ति के सिर के आस–पास घुमाया जाता है ताकि व्यक्ति के सिर की छवि दिखाई दे। कम्प्यूटर सिर की छवि को प्रदर्शित करता है। कैट स्कैन मस्तिष्क, रक्त के थक्के (क्लॉट), तथा सेरेब्रल में चोट के क्षेत्र की मात्रा तथा स्थान का निर्धारण करता है।

पेट स्केनः एमीसन टोमोग्राफी की स्थिति में एक रेडिया धर्मी (रेडियो एक्टिव) ग्लूकोज संबंधी तत्व मस्तिष्क के रक्त प्रवाह में इन्जेक्ट किया जाता है। मस्तिष्क में ग्लूकोज की खपत के द्वारा मस्तिष्क का चित्र (इमेज) लिया जाता है। पेट स्कैन में गतिशील चित्र कम्प्यूटर द्वारा लिया जाता है।

एनएमआरआइः न्यूक्लियर मैगनेटिक रिसोनेन्स इमेजिंग तकनीक में, मस्तिष्क को तीव्र मैगनेटिक क्षेत्र में रखा जाता है। उसके बाद कोशिकाओं के मैगनेटिक गुणों को रिकार्ड किया जाता है। इन रिकार्ड किए गऐ गुणों से पुनः चित्र लिया जाता है।

3.7 इन्डोक्राइन सिस्टम

अपने शरीरे के भीतर हारमोन्स के उच्च और निम्न स्तर होने के कारण होने वाली कुछ बीमारियों के बारे में अवश्य सुना होगा। उदाहरण के लिए मधुमेह (डायबिटीज) हारमोन के निम्न लेवल के कारण होता है जिसे इन्सुलिन कहा जाता है। इसी प्रकार, दूसरे हारमोन का स्तर (लेवल) थाइरॉक्सिन हमारे व्यवहार को नियंत्रित करता है। हारमोन्स एक रसायन होता है जो कि हमारे रक्त के भीतर सीधे प्रवाहित होता है। हारमोन्स का श्रवण इन्डोक्राइन ग्रन्थियों से होता है। यह सिस्टम वाहिनीहीन ग्रन्थियों का संग्रहरण होता है जो कि शरीर के विभिन्न क्रियाओं को नियंत्रित करता है। इन्डोक्राइन ग्रन्थियों से रसायनिक पदार्थ का रिसाव (श्रावण) होता है जो कि रक्त प्रवाह में सीधे हारमोन्स के मिलने का संकेत देते हैं। इन्डोक्राइन ग्रन्थियों तथा इनके प्रमुख कार्यों को बॉक्स में दर्शाया गया है। इन ग्रन्थियों की स्थिति को चित्र ३.६ में दर्शाया गया है। कुछ प्रमुख ग्रन्थियां निम्नानुसार हैः

पिट्यूटरी ग्रन्थि रक्तिम ग्रे रंग का होता है, इसका आकार मटर के दाने के समान होता है और यह मस्तिष्क में स्थित होता है। यह मास्टर ग्लैन्ड (मुख्य ग्रन्थि) के रूप में होता है क्योंकि इससे मिलने वाले कुछ हारमोन प्रेरक होते हैं और अन्य अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के हारमोन्स क्रिया को विनियमित करते हैं।

थाइराइड ग्रन्थि गर्दन में स्थित होता है। इससे हारमोन निकलता है जो कि मेटाबोलिज़्म (खाने को ऊर्जा के रूप में परिवर्तित करना) को नियन्त्रित करता है। यह ऊर्जा स्तर तथा मिजाज (मनोदशा) को भी प्रभावित करता है।

अधिवक्क (एड्रीनल) ग्रन्थि गुर्दे के ऊपर स्थित होता है। यह आपातकालीन स्थितियों में एड्रीनालिन और अन्य हारमोन्स को प्रवाहित (निस्सारण) करता है।

पैनक्रियास (अग्न्याशय) पेट के समीप स्थित होता है। यह इन्सुलिन उत्पन्न करता है जो कि रक्त शर्करा के स्तर (ब्लड शुगर लेवल) को नियन्त्रित करता है।

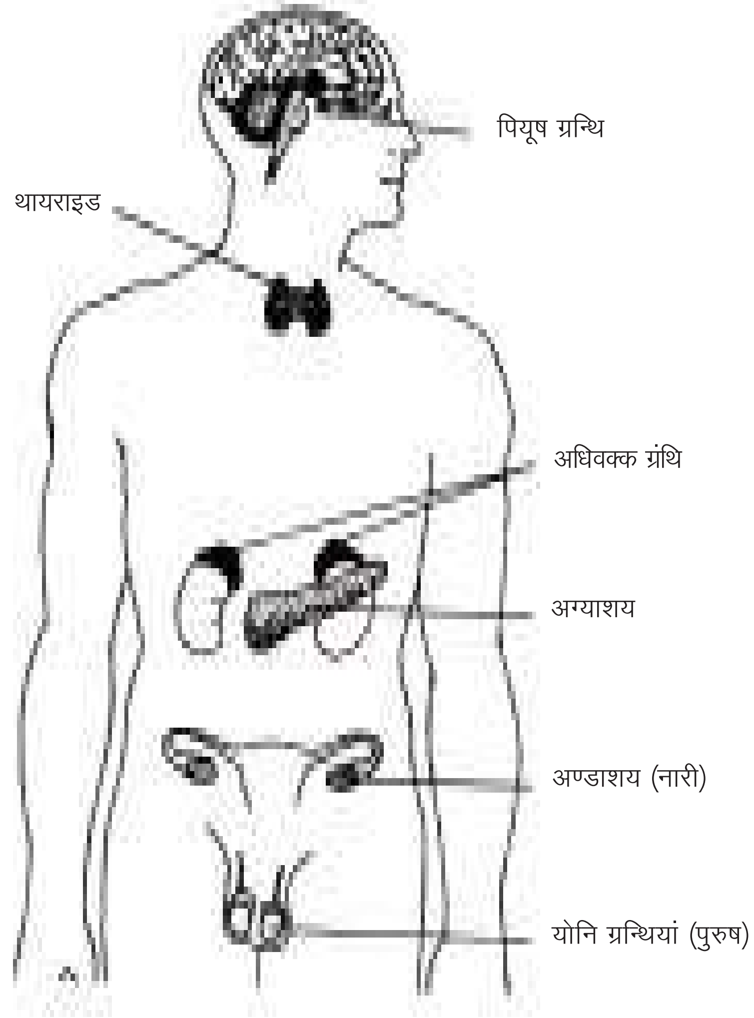

चित्र 3.6: अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ

योनिग्रन्थि (गोनाड्स) यौन विकास तथा यौन व्यवहार को नियन्त्रित करता है। पुरुष योनिग्रन्थियां (टेस्टस) अण्डकोश में स्थित होती है। ये ग्रन्थियां हारमोन उत्पादित करती हैं जिसे टेस्टेस्टोरोन के नाम से जाना जाता है। महिला की यौनिग्रन्थियां (अण्डाशय) हारमोन उत्सर्जित करती हैं जिसे एस्ट्रोजेन के नाम से जाना जाता है। इन दोनों लिंगों (पुरुष तथा महिला) में ये हारमोन न केवल सेक्स ड्राइव को नियंन्त्रित करते हैं बल्कि द्वितीयक लिंग विशेषताओं, यथा पुरुष में दाढ़ी और महिला में छाती, के विकास को विनियमित करते हैं।

एडरोजेन्स (टेस्टोस्टेरोन के जैसा) सामान्यतः पुरुषों में महिलाओं की अपेक्षा उच्च स्तर पर पाया जाता है, जबकि ओएस्ट्रोजोन (ओएट्राडिओल के जैसा) सामान्यतः महिलाओं में उच्च स्तर पर पाया जाता है। बहरहाल, यह समझना महत्वपूर्ण है कि एन्ड्रोजेन्स ''पुरुष हारमोन'' नहीं है और न ही ''ओएस्ट्रोजेन्स'' महिला हारमोन्स है। दोनों श्रेणियां दोनों लिंगों में पायी जाती हैं।

इन्डोक्राइन ग्रन्थियां एवं उनके कार्य	
ग्रन्थि	**कार्य**
पीयूस (पिट्यूटरी) ग्रन्थि	विकासः मेटाबोलिजम (खाने को ऊर्जा में परिवर्तित करना (मास्टर ग्रन्थि); एड्रीनल, थॅयराइड तथा योनिग्रन्थि हारमोन के प्रवाह को बिनियमित करना; महिलाओं में दूध उत्पादित करना
थॉयरॉयड	विकास, ऊर्जा स्तर तथा हमारे मिजाज (मनोदशा) को नियन्त्रित करना
एड्रीनल	लम्बे तनाव का अनुकूलन
अग्न्याशय (पैन्क्रियास)	रक्त शर्करा स्तर का नियन्त्रण
योनिग्रन्थि (गोनाड्स)	प्रजनन, प्राथमिक और द्वितीयक लिंग (सेक्स) लक्षण, सेक्स ड्राइव

3.8 व्यवहार पर आनुवंशिकता का प्रभाव

हम अक्सर बात करते हैं कि लोगों में कुछ विशेषताएं वंशानुगत होती हैं। जैसे नीना की नीली आंखें वंशानुगत रूप में उसकी मां के आंख के लक्षणों से मिला है। अथवा अशोक के घुघराले बाल के लक्षण वंशानुगत रूप में उसके पिता के घुंघराले बाल से मिले हैं। हम मानते हैं कि लम्बे माता–पिता के बच्चे लम्बे होते हैं। आनुवांशिक रूप की ऐसी विशेषताओं को वंशानुगत कहा जाता है। जीव विज्ञान की जो शाखा यह अध्ययन करती है कि वंशानुगत कैसे कार्य करते हैं उसे आनुवंशिक कहते हैं। व्यावहारिक आनुवंशिकता के व्यवहारिक विशेषताओं का अध्ययन है। जन्म से प्राप्त हुई विशेषताओं का अध्ययन करना ही व्यवहारिक अनुवांशिकता है।

सभी जीव प्रजातियां अद्वितीय होती हैं क्योंकि वे अन्य प्रजातियों (बिल्ली–कुत्ते से अगल होती है और मानव जानवरों से भिन्न होते हैं) के सदस्यों से भिन्न होती हैं। एक जीव की शारीरिक संरचना तथा व्यवहार व्यक्तिगत रूप से अलग–अलग होता है। पहले को जेनेटाइप के रूप में जाना जाता है और बाद वाले को फेनोटाईप के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक फनोटाईप व्यक्ति उसके जेनोटाइप तथा वातावरण के बीच पारस्परिकता के परिणामस्वरूप होता है। बड़े भाग में शारीरिक विकास उन गुणों पर निर्भर करता है जिसे हम अपने माता–पिता से वंशानुगत रूप में प्राप्त करते हैं। यह पूर्ण विश्वास है कि आनुवांशिक विशेषताएं आनुवांशिक कारकों द्वारा संचारित होती है और जो कि जीव की योग्यताओं पर निर्भर करता है।

माता–पिता आनुवांशिक सिद्धान्त ग्रेगोरी मेन्डेल के कार्य पर निर्भर करता है। उन्होंने दिखाया कि माता–पिता के लक्षण उनकी सन्तान पर गुण सूत्रों के माध्यम से आते हैं।

ये गुणसूत्र या तो सन्तान में दिखाई देने वाले लक्षणों को उत्पन्न करते हैं अथवा या तो दूसरे वंश के लिए संचारित करते हैं। एक माता–पिता के बच्चे में आवश्यक नहीं है कि उनके सभी गुण वंशानुगत रूप में विद्यमान हों।

दो कोशिकाओं के संगठन, माता के अण्डे तथा पिता के बीजाणु (स्पर्म) से एक नये मानवजीव की रचना होती है। ये दो कोशिकाएं अन्य कोशिकाओं की तरह अपने भीतर ऐसा पदार्थ रखती हैं जोकि रॉड जैसी इकाइयों की निश्चित संख्या के रूप में गुण सूत्र (क्रोमोसोम्स) कहा जाता है। गुण सूत्र आनुवांशिक घटकों (कारकों) अथवा गुणों को ले जाते हैं। केन्द्रक कोशिका जिसमें गुण सूत्र (क्रोमोसोम्स) हाते हैं ये प्रोटीन घटकों के संयोजन से डियोकसीराइबोन्यूक्लिक एसिड (डीएनए) बनाते हैं। गुण सूत्र (क्रोमोसोम्स) जोड़े में होते हैं और प्रत्येक गुणसूत्र (क्रोमोसोम्स) में 100 अथवा इससे अधिक जीन्स होते हैं, ये भी जोड़े में ही होते हैं। चित्र 3.7 देखें

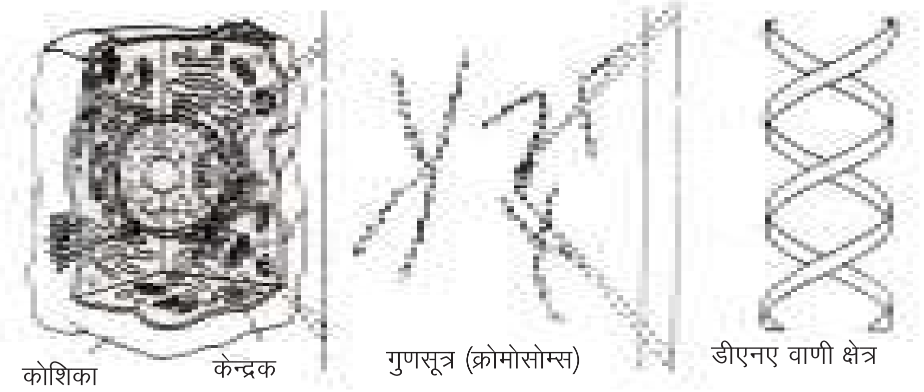

चित्र 3.7: कोशिका, गुणसूत्र (क्रोमोसोम्स) तथा डीएनए

वंशानुक्रम की प्रक्रिया उस प्रक्रिया पर निर्भर होती है जिसमें प्रत्येक माता–पिता से संतान प्रत्येक जीन के जोड़े में से एक प्राप्त करता है। कुछ जीन्स प्रभावी होते हैं और कुछ अप्रभावी होते हैं। प्रबल जीन वाला एक व्यक्ति एक विशेष विशेषता प्रदर्शित करता है वह विशेषता है, क्या केवल एक अथवा दोनों जीन्स, जोड़े में, प्रबल होते हैं। अप्रभावी जीन के मामले में, उसके साथ की विशेषता तब तक दिखाई नहीं देती जब तक जीन जोड़े के दोनों जीन्स अप्रभावी हांते हैं। कुछ विशेषताएं एकल जीन अथवा दोहरे जीन द्वारा उत्पादित की जाती हैं। बहु कारक अनुवांशिकता में बहुत से जीन्स की प्रक्रियायें समाहित होती हैं।

आनुवंशिक इंजीनियरिंग के क्षेत्र में कार्य करने वाले वैज्ञानिकों द्वारा आनुवांशिक कोड का पता लगाने का प्रयास किया जा रहा है, ताकि कोशिका संरचना में बदलाव किया जा सके। इस प्रकार के अनुसंधान का एक उदाहरण क्लोनिंग का चमत्कार है। इस अनुसंधान का मूल लक्ष्य वंशानुगत रूप से संचारित बीमारियों की समस्या तथा व्यवहारात्मक असमान्यता को सुलझाना है। इसके अलावा, आनुवांशिकता में बदलाव के माध्यम से वैज्ञानिकों द्वारा वांछित व्यवहार को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ अवांछित

व्यवहारों को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जा रहा है। आनुवांशिकता बदलाव का पौधों में व्यापक रूप से परीक्षण किया गया है तथा कुछ मात्रा में जानवरों में भी किया गया। आनुवंशिकता बदलाव पर मानव अनुसंधान नैतिक सिद्धान्तों के सख्त नियन्त्रण के अन्तर्गत है।

पाठगत प्रश्न 3.3

1. हारमोन्स क्या है?

   ——————————————————————————

2. पिट्यूटरी ग्रन्थि को क्यों मुख्य ग्रन्थि कहा जाता है?

   ——————————————————————————

3. वंशानुक्रम की प्रक्रिया क्या है?

   ——————————————————————————

3.9 संस्कार और व्यवहार

मनुष्यों के व्यवहार उनके सांस्कतिक संदर्भ में अर्थपूर्ण होता है। कुछ सीमाओं तक विभिन्न संस्कतियां हमें लक्ष्यों के चयन में तथा विभिन्न परिस्थितियों में हमारे व्यवहार को उसी अनुरूप ढालने में हमारा मार्गदर्शन करती हैं। विभिन्न संस्कतियों में पाई जाने वाली व्यवहार की पद्धतियां लोगों के पारस्परिक विचार–विमर्श के संदर्भ में प्रकट होती हैं, जो कि विभिन्न रूपों में कटीकत होती हैं। विभिन्न परम्पराएं, रीति–रिवाज तथा संस्कतियां इन कोडों को परिलक्षित करती हैं। ये प्रचलित संस्कति में रहने वाले लोगों के व्यवहार को प्रस्तुत करने तथा समझने में मदद करते हैं। इस प्रकार एक समुदाय कतिपय मान्यताओं एवं मूल्यों का समर्थन करता है। ये उस समुदाय के लोगों की सामाजिक जागरूकता का एक अंग बन जाती है। संस्कति को परिभाषित करने का सरल तरीका यह है कि उन चीजों से अलग करना जो स्वत: ही अस्तित्व में आती हैं। जो कुछ मानवता द्वारा किया गया है वही संस्कति के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

संस्कति मानव द्वारा किये गये योगदान को प्रस्तुत करती है। यह हमारे वातावरण का मानव निर्मित भाग है। इसमें व्यक्तिपरक तथा वस्तुपरक पहलू होते हैं। संस्कति अक्सर एक वंश से दूसरे में संचारित होती है। संस्कति के व्यक्तिपरक भाग में मूल्य, मान्यताएं (नियम) भूमिका आदि शामिल होते हैं। संस्कति के वस्तुपरक भाग में उपस्कर, मूर्तिकला तथा विभिन्न कलाकतियां शामिल होती हैं।

लोग विभिन्न संस्कतियों में जन्म लेते हैं, जो कि प्रेरणा, भाषा तथा कार्य–कलापों को सुलभ कराता है। यह संस्कति के इन पहलुओं के माध्यम से हमें पता चलता है कि हम क्या हैं। विभिन्न समाजों में बड़ी मात्रा में व्यवहार में असमानता देखने को मिलती है।

ऐसा इसलिए होता है क्योंकि संस्कति दो तरीके से कार्य करती है अर्थात् यह अवसरों को प्रदान करती है एवं हमारे ऊपर नियन्त्रण भी रखती है। विशेष मिश्रित सांस्कतिक विषय पर निर्भरता से विभिन्न व्यवहार तथा कुशलताएं प्रोत्साहित अथवा हतोत्साहित होती हैं।

जीवविज्ञान की संभवयता तथा वातावरणीय योगदानों द्वारा मानव व्यवहार का रूप निर्धारित होता है। बहरहाल, संस्कति में दो पारस्परिक तथा संयुक्त क्रियाएं व्यवहार को निर्धारित करती हैं जो कि व्यवहार को विशिष्ट आकार अथवा दिशा प्रदान करता है। उदाहरणार्थ, परिवार में बच्चा बड़ा होता है तो वह स्कूल में औपचारिक शिक्षा ग्रहण करता है और खिलौनों के साथ खेलता है। एक क्षण विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाएगा कि परिवार, स्कूल और खिलौने सांस्कतिक विचार को विभिन्न रूप से बदल देते हैं। एक बड़े तथा छोटे परिवार की विभिन्न मांगे होती हैं। इसी प्रकार, महानगरीय शहरों के स्कूल तथा दूर–दराज के गांवों के स्कूल में पढ़ने के कमरे, पारस्परिक विचार विमर्श पद्धति तथा अन्य चीजों में विभिन्नता होती है। महानगरों तथा पिछड़े गांव में खिलौनों में अधिक विभिन्नता होती है। बहरहाल यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह संस्कति स्थाई नहीं रहते। प्रत्येक संस्कति अपनी पहचान को बनाए रखने की कोशिश करता है यह अन्य संस्कतियों को प्रभावित करता है तथा दूसरी संस्कतियों से प्रभावित भी होता है। इस प्रकार दोनों में निरन्तरता तथा परिवर्तन होता रहता है।

3.10 सामाजीकरण तथा संस्कति-संक्रमण की प्रक्रियाएं

आइए अब हम सामाजीकरण प्रक्रिया के बारे में बात करते हैं। सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से संस्कति का अनुरक्षण होता है तथा संपूर्ण वंशानुक्रम में संचारित होती है। इस प्रकार की ऐजेन्सियां माता–पिता, मीडिया, स्कूल, समकक्ष समूह तथा धार्मिक संस्थाएं जानबूझकर बच्चों के रूप को परिवर्तित करते हैं तथा लोगों में विशिष्ट व्यवहार की पद्धति को विकसित करते हैं। वे जागरूकता फैलाकर तथा जानबूझकर सामाजिक अपेक्षाओं को परिभाषित करने के लिए प्रयास करते हैं। उदाहरणार्थ, माता–पिता वंशावली के विभिन्न प्रवत्तियों को स्वीकार करते हैं जो कि बच्चों के प्रति स्नेह की मात्रा तथा बच्चों पर नियन्त्रण की मात्रा के अनुसार अलग–अलग होते हैं। यह पाया गया है अधिकारपूर्ण तथा सीमित छूट देने वाले माता–पिता बच्चे के व्यक्तित्व के स्वस्थ विकास में हस्तक्षेप करते हैं। माता–पिता बच्चों के व्यवहार को प्रोन्नत अथवा हतोत्साहित करने के लिए पुरस्कार तथा दण्ड का प्रयोग करते हैं। नकल तथा मॉडलिंग द्वारा बच्चे वातावरण में मौजूद अन्य महत्वपूर्ण चीजों (अर्थात् माता–पिता, अध्यापक) को भी सीखते हैं। वे दूसरों से पहचान बनाते हैं तथा उनमें जो वे देखते हैं उसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों के लक्षणों को आत्सात करते हैं बढ़ते हुए बच्चों के व्यवहार को मूर्त रूप देने में भूमिका–प्रतिरूप बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संक्रमण की प्रक्रिया मौजूदा संस्कति पर नयी तथा विभिन्न संस्कतियों के प्रभाव को प्रस्तुत करती है। इस प्रकार यह संस्कतियों के बीच संपर्क की प्रक्रिया को विशिष्टीकत करता है। ऐसे कान्टैन्ट विभिन्न परिस्थितियों के तहत होते हैं जिसमें उपनिवेशन, आक्रमण, अन्तराराष्ट्रीय व्यापार, यात्रा तथा प्रवसन शामिल हैं। भारतीय समाज संस्कति संक्रमण का एक अच्छा उदाहरण पेश करता है। भाषा, वेश–भूषा तथा शिक्षा पर ब्रिटिश (अंग्रेज) का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है।

संस्कति संक्रमण मांग की प्रक्रिया में लोग अनेक नई चीजें सीखते हैं और विभिन्न तरीकों से वे सामाजिक हो जाते हैं। संस्कति संक्रमण में अक्सर कुछ तनावग्रस्तता पाई जाती है। लोग विभिन्न तरीकों में संस्कति संक्रमण के लिए प्रतिक्रिया करते हैं। वे नई संस्कति को अपना सकते हैं अथवा उसमें अगल पहचान बनाए रख सकते हैं। साथ ही, एक नयी तरह का समाकलित उत्पन्न होता है जिसमें पुरानी तथा नई संस्कति के घटक शामिल होते हैं। अन्य परिस्थितियों में लोगों को उपान्तीय तथा अलगाववाद का अनुभव हो सकता है।

पाठगत प्रश्न 3.4

1. संस्कति किस तरह से मानव व्यवहार को मूर्तरूप देती है?

   ____

2. सामाजीकरण के कौन से मुख्य एजेन्ट हैं?

   ____

आपने क्या सीखा

- मानव व्यवहार विकासात्मक क्रम, वंशानुगत तथा वातावरण के पारस्परिक प्रभाव का परिणाम है। प्राकतिक चयन के माध्यम से विकास क्रम मानव जातियों के जीवन में परिवर्तन लाता है। मानव विकास क्रम को बाइपाडेलिजम, इन्सीफैलाइजेशन तथा भाषा विकास में बाँटा गया है।
- अपने मस्तिष्क की सहायता से हम अपने शरीर तथा मस्तिष्क के कार्यों का अध्ययन करते हैं। हम अपने इन्द्रियों के माध्यम से संवेदन प्राप्त करते हैं और अपने मांस पेशीय तन्त्रों तथा ग्रन्थियों द्वारा प्रतिक्रिया करते हैं। हमारी क्रियाओं के संवेदन तथा नियन्त्रण दोनों को हमारे मस्तिष्क की मध्यस्थता आवश्यक है। सभी जीव, जिसमें मानव जीव शामिल हैं, छोटी इकाइयों से बने होते हैं जिसे कोशिका कहा जाता है। ये कोशिकाएं जीव की मूल इकाई का गठन करती हैं।
- स्नायु तन्त्र, न्यूरॉन (तंत्रिका कोशिका) का बना होता है। ज्ञानवाही तंत्रिका कोशिका ज्ञानेन्द्रिय से सूचना लेकर स्नायुतन्त्र में भेजता है। गतिक तंत्रिका कोशिका मस्तिष्क से निर्देशों को लेकर शरीर की ग्रन्थियों तथा पेशीय तन्त्रों में भेजता है।

सभी न्यूरॉनों में कोशिका शरीर, वक्षिका (विस्तार जैसी शाखा) तथा अक्षतन्तु होता है जो कि अन्य न्यूरॉनों के लिए सूचना संप्रेषित करता है। एक न्यूरॉन के अक्षतन्तु तथा दूसरे के वक्षिका के बीच न्यूरोसंधिक जंकशन के रूप में होते हैं।

- स्नायु तन्त्र में सी एन एस (मस्तिष्क तथा स्पाइनल कार्ड (मेरुरज्जु) तथा पेरिफेरियल स्नायु तन्त्र शामिल होता है। परिधीय सिस्टम पुनः सोमैटिक तथा ऑटोनॉमिक स्नायु तन्त्र में विभाजित होता है। सोमैटिक सिस्टम ज्ञानेन्द्रिय अभिग्राही (रिसेप्टरों में) के माध्यम से सूचना प्राप्त करता है और उसी अनुसार हम ग्रन्थियों तथा पेशीय तन्त्रों के माध्यम से कार्यवाही करते हैं। ऑटोनॉमिक स्नायु तन्त्र में सिम्पैथेटिक और पैरासिम्पैथेटिक भाग होते हैं, जो कि आघातों के प्रति प्रतिक्रिया करने में हमें प्रेरित करते हैं और तत्पश्चात् शरीर को सामान्य अवस्था में लाने का भी कार्य करते हैं।
- सेरब्रल कार्टेक्स के चार खण्ड होते हैं: ललाट, अनुकपाल, पार्शविक तथा शंख। अनुकपाल खण्ड दष्टि के लिए विशिष्टकत होता है। पार्शविक खण्ड छूने (स्पर्श) के अहसास तथा स्वयं शरीर की ज्ञानेन्द्रियों में शामिल रहता है। ललाट खण्ड के कार्य में गति का समन्वय, योजना बनाना, ध्यानाकर्षण, सामाजिक कुशलता आदि शामिल होता है। दायां और बांया सेरेब्रल अर्द्धभाग विभिन्न उच्च क्रम के कार्यों के लिए विशिष्टीकत होते हैं। इन्डोक्राइन सिस्टम नलिका विहीन ग्रन्थियों का संग्रहण होता है जो कि हार्मोन्स के माध्यम से शरीर के विभिन्न कार्यों को नियंत्रित करता है।
- आनुवंशिकी में यह अध्ययन किया जाता है कि कैसे गुण वंशानुगत होती है अथवा ये गुण कैसे माता–पिता से उनके बच्चों में जाते हैं। आनुवंशिकी का अध्ययन यह सुझाव देता है कि व्यक्तियों के बीच विभिन्नता का महत्वपूर्ण भाग अनेक मनोवैज्ञानिक गुणों को दर्शाता है जैसे सतर्कता तथा व्यक्तित्व वंशानुगत होते हैं।
- सांस्कतिक संदर्भ में मानव व्यवहार को सार्थक रूप से समझा जा सकता है। संस्कति, वातावरण का मानव द्वारा बनाया गया भाग है। इसके व्यक्तिपरक आत्मनिष्ठ तथा वस्तुपरक पहलू हैं। संस्कति उन अर्थों और क्रिया–कलापों को प्रतिपादित करती है, जो कि एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचारित होते हैं। संस्कतियां स्थाई प्रवत्ति की नहीं होती। इनका अनुरक्षण सामाजीकरण प्रक्रिया के द्वारा होता है। माता–पिता, इसके समकक्ष व्यक्ति तथा स्कूल आदि समाजीकरण के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं। अन्य संस्कतियों के साथ संपर्कता संस्कति के संक्रमण की प्रक्रिया को जन्म देता है। संस्कति के संबंध में संपर्कता आत्मसातकरण, अलगाववाद अथवा समाकलन को जन्म देता है।

पाठांत प्रश्न

1. तंत्रिका–कोशिका की संरचना तथा कार्य का उल्लेख करें।
2. केन्द्रीय स्नायु तन्त्र के कार्यों का उल्लेख करें।

3. अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियां सिस्टम के कार्यों की व्याख्या करें।
4. माता–पिता के व्यावहारिक लक्षण कैसे उनकी सन्तानों में संचरित होते हैं।
5. मानव व्यवहार को मूर्त रूप देने में संस्कति की भूमिका को उदाहरण देकर स्पष्ट करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

3.1

1. बाइपेडालिजम, एन्सेफैलाइजेशन तथा भाषा 2. कोशिक आकार, वक्षिका तंत्रिका कोशिका

3. (i) सत्य (ii) सत्य (iii) असत्य

4. (i) आधा (ii) साइटोप्लाज्म, केन्द्रक, कोशिका झिल्ली

3.2

(अ) (1) सत्य (2) असत्य (3) सत्य (4) असत्य

(ब) (1) केन्द्रीय, पेरीफेरियल, (2) प्रतिकूल, (3) मस्तिष्क, स्पाइनल कार्ड (मेरुरज्जा) (4) सूचना, (5) स्केलेटल पेशीय तन्त्र, मूवमेन्ट

3.3

(1) हमारी रक्त कणिकाओं में रसायनों का श्रवण होता है।

(2) यह अन्य इन्डोक्राइन ग्रन्थियों की हार्मोनल क्रिया को विनियमित करता है।

(5) यह उस प्रक्रिया पर निर्भर करता है जिसमें सन्तान अपने माता–पिता से प्रत्येक जीव के जोड़े से एक जीन प्राप्त करता है।

3.4

(1) लक्ष्यों के चयन का मार्गदर्शन, व्यवहारों को प्रस्तुत करने के लिए कोड सुलभ करना तथा व्यवहार के कुछ चयनित प्रतिमान सुलभ करना

(2) माता–पिता, अध्यापक, पीयर्स, मीडिया

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. अनुच्देद 3.4 देखें
2. अनुच्देद 3.6 देखें
3. अनुच्देद 3.7 देखें
4. अनुच्देद 3.8 देखें
5. अनुच्देद 3.9 देखें

4

अपने आस-पास के संसार से अवगत होना

मनुष्य एवं पशु अपने आस–पास के परिवेश को समझने, ध्वनियों को सुनने, विभिन्न प्रकार के भोजनों को चखने, विभिन्न गंधों को सूंध पाने, बाहरी वातावरण में गर्मी व सर्दी को महसूस करने, तथा चोट लगने पर दर्द का अनुभव करने में सक्षम होते हैं। जीव, मानव या गैर–मानव में अत्यंत विशिष्ट गुण उनके द्वारा धारित विभिन्न इंद्रियां हैं। बाहरी दुनिया से सूचना एकत्र करने के लिए ये इंद्रियां (यथा आखें, कान, जीभ, नाक, त्वचा आदि) प्रवेश द्वार का काम करती हैं। इनमें से प्रत्येक इंद्री विभिन्न प्रकार के उद्दीपनों के प्रति चुनिंदा रूप से संवेदनशील होती है। उदाहरण के लिए, दष्टि इंद्री (आंख) केवल प्रकाश उर्जा को प्राप्त के प्रति संवेदी होती है। कान ध्वनि के प्रति संवेदी होती है और अन्य इंद्रियां भी इस प्रकार संवेदी होती हैं। मनुष्य अपने आस–पास के संसार से सूचना प्राप्त करने के लिए दष्टिमूलक, श्रव्यमूलक, तथा त्वचामूलक पर ही मुख्य रूप से आश्रित होता है। हम प्रयोग किए जाने वाले समय का लगभ 90 प्रतिशत समय दष्टि इंद्री और उसके बाद श्रव्यमूलक इंद्री का प्रयोग किया जाता है। इस पाठ में हम विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों का अध्ययन करेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात, आपके लिए सम्भव होगाः

- विभिन्न इंद्रियों की संरचना व क्रियाओं का उल्लेख करना;
- बताना कि जीव कैसे बाहरी व भीतरी दुनिया से सूचना एकत्र करते हैं;
- उद्दीपन की शारीरिक प्रकति का वर्णन तथा संवेदी स्तर पर इन्हें कैसे प्राप्त किया जाता है; और
- शारीरिक उद्दीपन तथा मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं के मध्य संबंध का विश्लेषण करना।

4.1 दष्टि, श्रवण तथा अन्य इंन्द्रियां

सभी इंन्द्रियां, कुल मिलकर 10, सूचना एकत्रण प्रणाली का निर्माण करती हैं। इनमें से आठ इंन्द्रियां वे हैं जो बाहरी दुनिया से सूचना एकत्र करती हैः दष्टि, श्रवण, गन्ध, स्वाद, स्पर्श, उष्णता, शीत, तथा दर्द। अन्य दो को गहन इंन्द्रियां कहते हैं यथाः प्रघ्राणक तथा गतिबोधक। यह हमें शरीर का संतुलन बनाए रखने तथा शरीर की स्थिति व शारीरिक कामों का एक–दूसरे से संबंधित संचलन के संबंध में सूचना उपलब्ध कराने में सहायक होता है। इस खण्ड में आप विभिन्न इंन्द्रियों की संरचना व क्रिया के संबंध में अध्ययन करेंगे तथा यह देखेंगे कि ये बाहरी व आन्तरिक दुनिया से सूचना एकत्र करने में कैसे सहायक होते हैं।

बाहरी उद्दीपन (यथा प्रकाश) एक विशिष्ट इंन्द्री (यथा आंख) द्वारा ग्रहण किया जाता है। एक इन्द्री के भीतर विशिष्टिकत संग्राहक होते हैं जो शारीरिक उर्जा को तांत्रिकी संकेतों में परिवर्तित करते हैं (इस प्रक्रिया को परांतरित्रण कहते हैं)। तत्पश्चात ये संकेत मस्तिष्क के विशिष्ट क्षेत्रों में सम्प्रेषित होते हैं तंत्रिकीय क्रिया के प्रतिस्प की पहचान मस्तिष्क द्वारा की जाती है। अन्य शब्दों में, वास्तविक उर्जा (सूचना) विशिष्ट इन्द्रि द्वारा प्राप्त की जाती है। इन्द्री सूचना को पूर्व–प्रक्रियारत (कूट करना) करती है तथा कूरीकत सूचना मस्तिष्क के विशिष्ट भाग में प्रसारित होती है जहां कूटीकत संदेश वकूटित होती है तथा पुनः साधित होती है, जिससे प्रत्यक्षीकरण होता है। इन घटनाओं के क्रम को चित्र 4.1 में दर्शाया गया है।

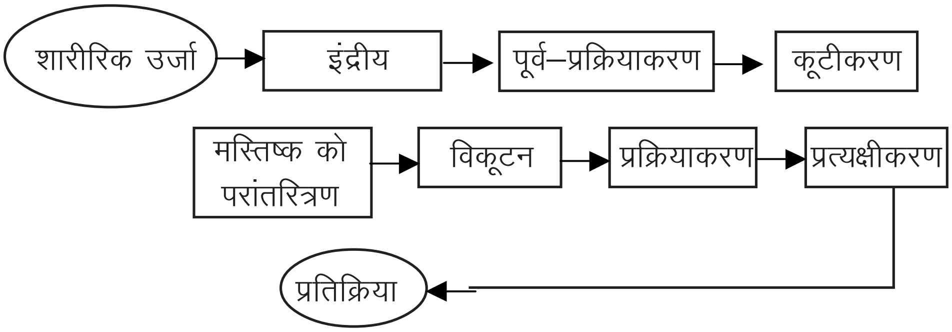

चित्र 4.1 : उद्दीपन सूचना के प्रक्रियाकरण का क्रम

क्या आप जानते हैं

संवेदी अनुकूलन

क्या आप जानते हैं कि निरन्तर उद्दीपन में, शामिल संवेदनशीलता की जागरूकता मंद हो जाती है या पूर्णतः समाप्त हो जाती है? उदाहरण के लिए यदि हम एक ऐसे कमरे में बैठने जाते हैं जहां सुगंधित स्प्रे डाला गया हो तो वहां कुछ समय बैठने के पश्चात सुगंध के प्रति

संवेदनशीलता कम हो जाएगी या पूरी तरह समाप्त हो जाएगी। इस प्रक्रिया को 'संवेदी अनुकूलन' कहते हैं। स्पर्श तथा गन्ध का अहसास शीघ्र अनुकूलित हो जाता है जबकि दर्द का अहसास धीरे–धीरे अनुकूलित होता है। दूसरी ओर, दृष्टि प्रकारता में यह प्रक्रिया पूर्णतः भिन्न है। अर्थात यदि आप एक वस्तु को लगातार देखते रहते हैं तो वह वस्तु न तो मंद पड़ती है और ना ही गायब होती है जबकि अन्य इंन्द्रियों के मामले में ऐसा होता है। यह सम्भव हो पाता है क्योंकि नेत्र गोलिका अतितीव्र स्पंदन के कारण छवि संग्राहकों के एक समूह से दूसरे समूह पर स्थानांतरित करती रहती है, दृष्टि प्रकारता में विभिन्न प्रकार के अनुकूलन उत्पन्न होते हैं जिन्हें प्रकाशयुक्त तथा अंधकारयुक्त अनुकूलन कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.1

सही विकल्प का चयन कीजिए:

1. कौन सी इंन्द्री शरीर के भीतर से सूचना एकत्र करने से संबंधित नहीं है:

   क) गतिबोध ख) उत्तक संवेदी

   ग) स्वाद घ) प्रघ्राणक

2. मनुष्य शरीर में .... इन्द्रियां होती हैं।

   क) 10 ग) 7

   ख) 5 घ) 8

3. शारीरिक उद्दीपन को तंत्रीय संकेतों परिवर्तित करने वाली प्रक्रिया को .... कहते हैं।

   क) संप्रेषण ग) परांतरित्रण

   ख) रूपांतरण घ) संकेतन

4.2 दृष्टि

मनुष्य शरीर में सर्वाधिक विकसित तथा सबसे अधिक प्रयोग होने वाली इन्द्री दृष्टि है। मस्तिष्क की अधिकतर क्रिया किसी अन्य इन्द्री की तुलना में दृष्टि के तंत्रों पर व्यस्त रहता है। अन्य इन्द्रियों की तुलना में दृष्टि का सूचना प्राप्त करने की क्रिया में आधिपत्य रहता है। उदाहरण के लिए, हम जो सुनते हैं उससे अधिक महत्वपूर्ण होता हम जो देखते

हैं बाह्य संसार में हमारे दिन प्रति दिन के संव्यवहारों में हम दष्टि का प्रयोग अन्य सभी इन्द्रियों के संयुक्त प्रयोगों से भी अधिक करते हैं अर्थात समय के ६० प्रतिशत तक।

4.2.1 दष्टि उद्दीपन की शारीरिक प्रकति

जैसे कि पहले चर्चा की गई है, विभिन्न इन्द्रियों में से प्रत्येक इन्द्री विशिष्ट शारीरिक उद्दीपन के प्रति संवेदी होती है, जिसे यथोचित उद्दीपन कहते हैं। उदाहरण के लिए, स्पर्शीय बोध (स्पर्श या दबाव) शरीर की त्वचा की सतह पर होने वाले स्पर्श या दबाव के प्रति संवेदनशील है। इसी प्रकार, नेत्र केवल प्रकाशीय उद्दीपन (प्रकाश) के प्रति संवेदनशील है। अर्थात प्रकाश तरंगे (विद्युत चुंबकीय उर्जा) नेत्रों के लिए यथोचित उद्दीपन है। प्रकाश तरंगें दष्टि संग्राहकों यथा बसी तथा शंकु को सक्रिय करती हैं। संसार में विद्यमान वस्तुओं से प्रतिबिंबित प्रकाश नेत्रों को प्राप्त होता है तथा इस प्रक्रिया से हम रंग, आकार, गहराई, उभार आदि की अवधारणा बनाते हैं।

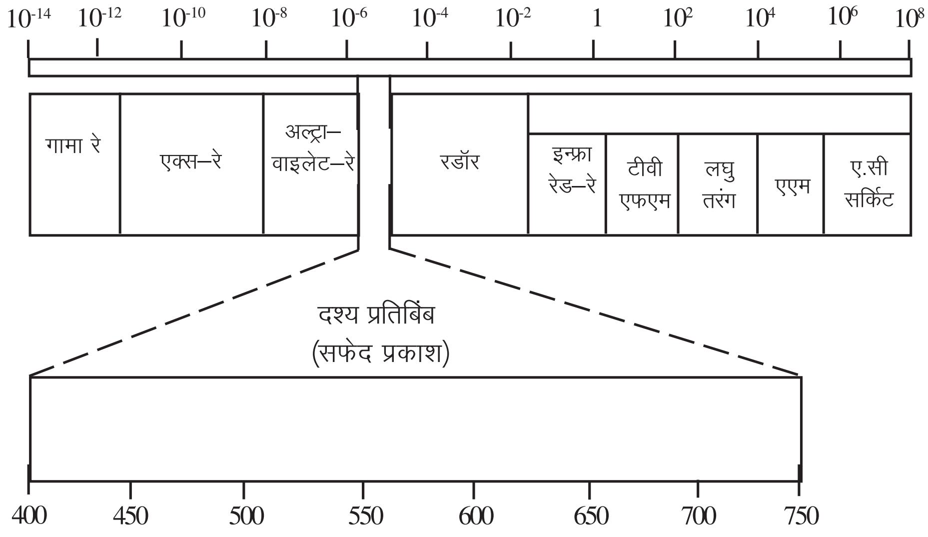

चित्र 4.2: दश्य प्रतिबंब

मानव नेत्र के लिए दश्य प्रतिबिंब का विस्तार 400 एन एम (नेनोमीटर या मिली–माइक्रोन) से लेकर 750 एनएम तक है। इस दश्य प्रतिबिंब के भीतर भी मानव नेत्र सभी वेवलैंथों के प्रति समरूपता से संवेदी नहीं होते हैं, चित्र 4.2 से देखा जा सकता है कि दश्य प्रतिबिंब के निम्नतर छोर पर पराबैगनी किरण तथा उपरी छोर पर अवरक्त किरण हैं। इन किरणों को मानव नेत्र से नहीं देखा जा सकता है तथा यदि नेत्र भारी मात्रा में इन किरणों के संपर्क में आते हैं तो उन्हें क्षति हो सकती है।

4.2.2 नेत्र की संरचना

प्रत्येक नेत्र का व्यास 25 मिमी तथा भार लगभग 7 ग्राम होता है। मानव नेत्र के दो प्रमुख भाग होते हैं:

(i) **कनीनका**

(ii) **पुतली**

(iii) **लैंस**

(iv) **दष्टिपटल**

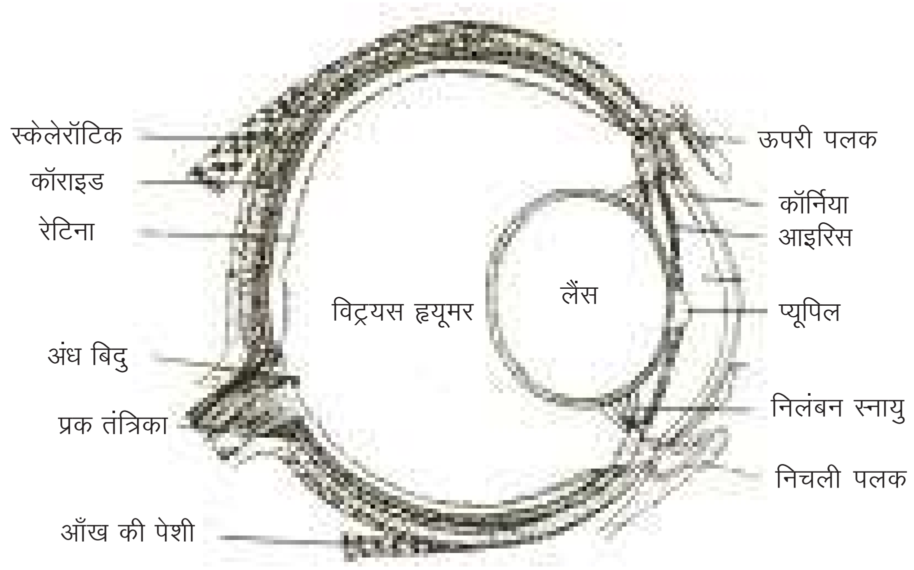

चित्र 4.3: नेत्र की संरचना

प्रकाश किरणें कनीनका नेत्र के आगे एक पारदर्शी आवरण, के माध्यम से नेत्र में प्रवेश करती हैं, कनीनका लक्षण वक्रित है। यह दष्टिपटल पर प्रकाश किरणों को डालती हैं। कनीनका के पीछे दष्टिमंडल होता है जो काला प्रतीत होता है। दष्टिमंडल में प्रवेश करने वाले प्रकाश की मात्रा को पुतली द्वारा नियंत्रित किया जाता है। पुतली मास–पेशियों का एक छल्ला है जिसकी रंजकता नेत्र का उसका रंग (भूरा, नीला आदि) प्रदान करता है। पुतली प्रत्यावर्तित रूप से संकुचित तथा विस्तारित होती है और बाहरी दीप्ति परिस्थितियों के अनुसार दष्टिपटल पर पहुंचने वाले प्रकाश की मात्रा को नियंत्रित करती है। पुतली प्रकाश के स्तर में परिवर्तिन के साथ नेत्र के समायोजन को भी सम्भव बनाती है। उदाहरण के लिए, जब हम एक अंधेरे कमरे में प्रवेश करते हैं तो पुतली दष्टिमंडल को विस्तारित कर देती है ताकि अधिक प्रकाश नेत्रों में प्रवेश कर सके, तथा जब हम अंधेरे कमरे से सूरज के प्रकाश के सम्पर्क में आते हैं तो पुतली दष्टिमंडल को संकुचित कर देती है ताकि नेत्रों में कम प्रकाश प्रवेश कर पाए। एक छोटे यंत्र से प्रवेश करने के पश्चात प्रकाश की किरणें एक पारदर्शी संरचना में प्रवेश करती है जिसे लेंस कहते हैं। लेंस में संलग्न रोमक पेशियां दष्टिपटल पर पड़ने वाले प्रकाश को केन्द्रित करने के लिए इसकी वक्रता में परिवर्तन करता है।

दूरी के अनुसार लेंसों को समायोजित करने, ताकि, दष्टिपटल पर बाहरी वस्तु की छवि केन्द्रित हो सके, की प्रक्रिया को अनुकूलन कहते हैं जैसा कि कैमरे में फोकसिंग होती है।

नेत्र के दष्टिपटल के आगे तथा चारों ओर से स्थिर श्वेतपटल में पारदर्शी कनीनका नेत्र को बनाए रखती है। रंजितपटल गाढ़ी सामग्री की एक मध्य परत है जिसमें बहुत सारी रक्त की धमनियां होती हैं। दष्टिपटल एक मोटी व नाजुक आन्तरिक पटल है जिसे फोटो संग्राहक तथा तात्रिक कोशिकाओं को जोड़ने वाला एक व्यापक नेटवर्क समाविष्ट होता है, दष्टिपटल नेत्र का सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है।

4.2.3 दष्टिपटल

प्रकाश, जलीय द्रव (औदिक तथा सान्द्र द्रव) से युक्त अग्र तथा पश्च कक्षों तथा विभिन्न दष्टिपटलीय परतों के माध्यम से दष्टिपटल में प्रवेश करता है। अन्ततः यह दष्टि संग्राहकों यथा बासी तथा शंकु में पहुंचता है। प्रत्येक दष्टिपटल के पिछले भाग के समीप स्थापित होते हैं ये विशिष्ट सेल प्रकाश उर्जा को विद्युतीय क्षमता (विद्युतीय संकेतों) मं परिवर्तित करते हैं।

स्वयं करके देखें (दष्टि संग्राहकों की संवेदनशीलता)

यह कहा जाता है कि शलाका या मंद प्रकाश में दंड सर्वाधिक कुशलता पूर्वक कार्य करते हैं जबकि शंकु मंद प्रकाश में तुलनात्मक दष्टि से कम कुशलतापूर्वक कार्य करते हैं। अंधकार में दंड तथा शंकु की कार्यप्रणाली को स्वयं देखना रुचिकर होगा।

एक अंधेरे कमरे में एक सिक्का फैंक दीजिए, तथा प्रत्यक्ष रूप से उस सिक्के को देखते हुए उसे खोजने का प्रयास कीजिए। आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि प्रत्यक्ष रूप से सिक्के को खोजने से वह सिक्का आपको नहीं मिलेगा। अब उस सिक्के को केन्द्र से हटकर लगभे 10 डिग्री अलग होकर देखिए, अपनी आंखें को सिक्के से कुछ अलग लगाइए तथा सिक्के की छवि शर्तिका से परे दंड पर पड़े। आपको सिक्का मिल जाएगा। इससे यह स्पष्ट होता है कि शंकु से युक्ति गर्तिका अंधेरे में निष्क्रीय हो जाती है जबकि दंड इस स्तर पर कुशलापूर्वक कार्य करते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.2

सही विकल्प का चयन कीजिए

1. विभिन्न इंन्द्रियों में से .... सर्वाधिक महत्वर्ण तथा आधिपत्य स्थिति प्राप्त किए हुए है।

   क) कान

टिप्पणी

ख) आंख

ग) उर्धगोलाकर

घ) जीभ

2. नीचे प्रत्येक इंद्री कार्यविधियों के लिए उपर्युक्त उद्दीपन प्रस्तुत किए गए हैं। बताइए कि इनमें से इंद्री प्रकारता के लिए कौन–सा उद्दीपन सही नहीं है।

क) दृष्टि–प्रकाश

ख) श्रव्य–ध्वनि

ग) स्पर्श–रसायन

घ) तापमान–गर्म व ठण्डा

3. प्रकाश की किरण अन्तत् दृष्टिपटल पर पहुंचने के लिए .... से होकर गुजरती है।

क) कनीनका

ख) दृष्टिमंडल

ग) लेंस

घ) उपर्युक्त सभी

4. लेंसो में परिवर्तन जो प्रकाश किरणों का दृष्टिपटल पर प्रतिबिंबित होने को सम्भव बनाती हैः

क) अभिबिन्दुल

ख) अनुकूलन

ग) संकेंडण

घ) केनद्रण

5. शंकु मध्यस्थता करता है

क) दिवा दृष्टि

ख) वर्ण दृष्टि

ग) विस्तत दृष्टि

घ) ऊपर के सभी

6. दंड मध्यस्थता करता हैः

क) शलाका दृष्टि

ख) वर्जुहीन दृष्टि

ग) चमक की सूचना

घ) ऊपर के सभी

4.3 दष्टि से इतर संवेदी प्रक्रियाएं

अभी तक हमने दष्टि तथा दश्य प्रक्रियाओं के संबंध में कुछ विस्तार से चर्चा की है। अब हम संक्षेप में कुछ अन्य इंद्रियों के संबंध में चर्चा करेंगे। दष्टि के पश्चात, अन्य इंद्रियों की तुलना में सबसे अधिक प्रयोग श्रवण का होता है। दष्टि तथा श्रवण के अतिरिक्त अन्य इंन्द्रियों को निम्नानुसार समूहबद्ध किया जा सकता हैः

1. त्वचीय इंद्रियां– इसमें दबाव, स्पर्श, तापमान (ठण्ड व गर्माहट) तथा दर्द शामिल है।
2. स्वाद
3. गंध
4. गहन इंद्रियां– इसमें गतिबोधक तथा प्रघाण शामिल हैं।

श्रवण

कानों के भीतर श्रव्य संग्राहक ध्वनि तरंगों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं जिससे तंत्रीय संकेत उत्पन्न होते हैं। वातावरण में दबाव में परिवर्तनों द्वारा ध्वनि तरंगे उत्पन्न होती हैं। कर्णपटह सम्पीडन तथा विस्तारण द्वारा धकेला व खींचा जाता है। यह ध्वनि द्वारा उत्पन्न प्रतिरूप के कम्पायमान होता है।

ध्वनि तरंगों के दो महत्वपूर्ण व्यवहारिक पहलू हैंः आवति तथा आयाम। ध्वनि की पिच उसकी आवति पर निर्भर करती है। जितनी अधिक पिच होगी, आवति भी उतनी ही अधिक होगी (उदाहरण के लिए, महिला की आवाज में पुरुष की आवाज से अधिक पिच होती है। आवति को हर्टस नामक इकाई में व्यक्त किया जा सकता है। युवा वर्ग 20 हर्ट्स से 20,000 हर्ट्स की आवति सीमा वाली ध्वनि को सुन सकते हैं जिसके सर्वाधिक संवेदनशीलता मध्यम क्षेत्र में रहती है। आयु बढ़ने के साथ श्रव्य रेंज कम हो जाती है विशेष रूप से उच्च आवति वाली ध्वनियों के प्रति।

गहनता आयाम पर निर्भर करती है। गहनता को सामान्यतः डेसिबल नामक इकाइयों में अभिव्यक्त किया जाता है।

डैसिबल की अवधारण को समझने के लिए नीचे कुछ डेसिबल मूल्य दर्शाए गए हैं।

फुसफसाना – 30 डैसिबल

सामान्य वार्ता – 60 डैसिबल

भारी तूफान – 120 डैसिबल

जेट विमान का उड़ान भरना – 140 डैसिबल

120 डैसिबल से ऊपर की ध्वनियां मानव कानों के लिए दर्दनाक होती हैं। यदि बड़ी संख्या में असंबद्ध ध्वनि तरंगों द्वारा ध्वनि उत्पन्न होता है तो उसे शोर माना जाता है जिसका हम विश्लेषण नहीं कर सकते हैं एक जैट विमान या आपने प्रेशर कूकर से आने वाली ध्वनि को 'श्वेत ध्वनि' कहते हैं।

कान की संरचना

कान के मुख्य तीन भाग हैं:

(i) बाहरी कान, जिसमें कर्ण पल्लव तथा श्रवण नलिका शामिल होते हैं।

(ii) मध्य कान कर्ण पटह (कर्णपटह झिल्ली) होती है तथा

(iii) आन्तरिक कान तीन छोटी हड्डियों से बना होता है जिन्हें अस्थिका कहते हैं यथा मैलियस (हथोड़ा), स्थूण (निहाई) तथा स्टेप।

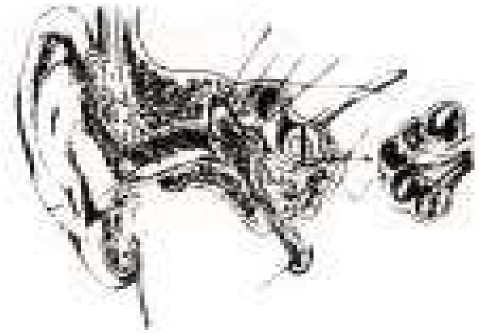

चित्र 4.4: कान की संरचना

अण्डाकार प्रवेश का कम्पन्न कर्णावर्त से भरे द्रव में तरंगे उत्पन्न करता है। जब तरंगे कर्णावर्त द्रव से होकर गुजरती हैं तो रोम कोशिकाएं आगे व पीछे को झुकती हैं। इस बिन्दु पर तरंग की यांत्रिक उर्जा विद्युत रसायनिक आवेग में पारक्रमित होती हैं जो कि श्रवण तंत्रिका द्वारा मस्तिष्क तक ले जाती हैं। कर्णावर्त में रोम कोशिकाएं सुनने के लिए संग्राहक के रूप में कार्य करते हैं जैसे कि दष्टि में दंड तथा शंकु कार्य करते हैं। श्रवण तंत्रिका रेशे रिले स्टेशनों की श्रंखला के माध्यम से श्रवण सूचनाओं को मस्तिष्क के शंख पालि में स्थित श्रवण वल्कुट में भेजी जाती हैं।

पाठगत प्रश्न 4.3

(क) निम्नलिखित को जोड़ें:

क) पिच	(i) डैसिबल

ख) गहनता	(ii) आवति
ग) श्रव्य रेंज	(iii) विस्तार
घ) स्पीडल	(iv) 20-20,000 Hz

(ख) सही विकल्प का चयन कीजिए

1. इनमें से कौन श्रवण प्रणाली का भाग नहीं है?

   क) कर्णपटह झिल्ली

   ख) डेसिबल

   ग) स्टेप

   घ) कर्णावर्त

2. सुनने के लिए श्रवण संग्राहक हैंः

   क) रोम कोशिकाएं

   ख) कर्णावर्त

   ग) कर्णपटह झिल्ली

   घ) मैलियस

त्वचीय संवेद

त्वचा या त्वचीय संवेद हमें हमारे शरीर की सतह के संबंध में सूचना उपलब्ध कराता है। त्वचा को एक ''विशाल इन्द्री'' कहा जा सकता है जो सम्पूर्ण शरीर को शामिल करती है। त्वचीय संवेद को समस्थैटिक प्रणाली भी कहते हैं जिसमें शामिल हैं–

(i) दबाव व स्पर्श

(ii) तापमान संवेदनशीताः शीत व कोष्णता

(iii) दर्द

यह देखा गया है कि त्वचा सम्पूर्ण शरीर में समान रूप से संवेदी नहीं है बल्कि भिन्न–2 भाग में भिन्न–2 संवेदनशीलता होती है। अर्थात स्पर्श, शीत, कोष्णता तथा दर्द की अधिकतम संवेदनशीलता के बिन्दु शरीर में भिन्न–भिन्न स्थानों पर स्थापित होते हैं। कुछ क्षेत्र स्पर्श के प्रति अधिक संवेदी होते हैं, कुछ दर्द के लिए, इत्यादि।

दबाव तथा स्पर्श

दबाव का अनुभव उत्पन्न करने के लिए अपेक्षित दबाव की मात्रा शरीर के विभिन्न भागों के लिए व्यापक रूप से भिन्न होती है। जीभ का सिरा, अंगुलियों का सिरा तथा हाथ

शरीर के सर्वाधिक संवेदी क्षेत्र होते हैं। स्पर्श का अनुभव तब महसूस किया जाता है जब त्वचा पर हल्का दबाव डाला जाता है या हम शरीर के बालों को हलके से हिलाते या स्पर्श करते हैं।

यह मान्यता है कि गोरी त्वचा वाले शरीर जिसे ''माइज़नर कणिका'' कहते हैं, शरीर के बाल रहित क्षेत्रों में दबाव सवेद में सहायक होता है तंत्रिका छोर बालों की जड़ों के लिए यही कार्य करते हैं। यह मान्यता है कि तंत्रिका रहित छोर स्पर्श आवेग उपलब्ध कराते हैं।

तापमान को महसूस करना: शीत व कोष्णता

त्वचा तापमान के सामन्य प्रवणता में परिवर्तन द्वारा शक्ति तथा कोष्णता का अनुभव किया जाता है। इस प्रकार त्वचा सतह के तापमान तथा रक्त के तापमान के मध्य भिन्नता होती है। यह माना जाता है कि तंत्रिका मुक्त छोर तापमान संबंधी सूचना संकेतन के लिए उत्तरदायी होते हैं।

दर्द

मानव जीवन में दर्द का व्यापक महत्व होता है। हालांकि हम अपने जीवन में इनका अनुभव नहीं करना चाहते हैं। दर्द का अत्यधिक जैविक महत्व है क्योंकि यह संकेत देता है कि शरीर के भीतर कुछ अव्यवस्था है। यदि दर्द का संवेद न होतो चोट लगने के अहसास के बिना ही रक्त बहने से हमारी मत्यु हो सकती है। इस प्रकार दर्द हमारा मित्र है, न कि दुश्मन।

यह सिद्ध तथ्य है कि मुक्त तंत्रिका छोर ऊषक क्षति द्वारा उद्दीपित संग्राहक है। यह माना जाता है कि दर्द के क्षेत्रों के तंत्रिका मुक्त छोरों को दर्दयुक्त उद्दीपन पर प्रतिक्रिया करने के लिए किसी न किसी रूप में विशिष्टीकत होना चाहिए। इस प्रकार, तंत्रिका मुक्त छोर विभिन्न शरीरिक परिस्थितियों को ग्रहण करने तथा व्यक्त करने के लिए विशिष्टीकत होते हैं।

पाठगत प्रश्न 4.3

सही विकल्प का चयन कीजिए:

1. इनमें से कौन त्वचा संवेद का भाग नहीं है?

   क) दबाव तथा स्पर्श

   ख) तापमान

ग) दर्द

घ) गतिबोधक

2. इनमें से कौन सा संग्राहक दबाव तथा स्पर्श संवेद का भाग नहीं है:

क) माइज़्नर कणिका

ख) बास्केट तंत्रिका छोर

ग) मुक्त तंत्रिका छोर

घ) रोम कोशिक

1. तापमान का संवेद .... के माध्यम से संकेतित होता है:

क) मुक्त तंत्रिका छोर

ख) रोम कोशिका

ग) न्यरॉन

घ) इनमें से कोई नहीं

स्वयं करके देखें

हालांकि इम इंद्रियों का अध्ययन इकाइयों के रूप में करने का प्रयास करते हैं किन्तु हमारी इन्द्रियगोचर प्रणाली में विभिन्न इन्द्रियों का संबंध है। उदाहरण के लिए, जब हम सेब को चखते हैं तो उसके स्वाद में, विशिष्ट प्रकार की खुशबू, उकसी दश्य विशेषता (लाल रंग), उसकी स्पर्शीय विशेषता (गोलाई, चिकनापन, ठोसता आदि) तथा उसका तापमान (शीत या गर्म) के संयुक्त प्रभाव भी शामिल होते हैं। जब आपको जुखाम लगा हो तो उस समय सेब का स्वाद लीजिए, तो उस समय खुशबू का अहसास न्यनतम होगा या बिल्कुल नहीं होगा। यदि आप सेव का अपने हाथ में न लें, अपनी आंखें बछ कर लें तथा सेब को खाएं तो उसका स्वाद बिल्कुल भिन्न होगा। जब आपकी तबियत पूरी तरह से ठीक हो तो पुनः उसी किस्म के सेब को सामान्य परिस्थितियों में खा कर देखें आपको वह सेब अत्यंत स्वादिष्ट लगेगा तथा पहली परिस्थिति से बिल्कुल भिन्न लगेगा। यह दर्शाता हे कि हमारे स्वाद के संवेद के प्रति अनेक इन्द्रियां अंशदान करती हैं। यह अन्य इंद्रियों के लिए भी सत्य है। आप टेप–रिकार्ड में संगीत सुनने की तुलना में संगीत का अधिक आनन्द उस समय लेंगे जब गीतकार आपके सामने गा रहा हो।

स्वाद का संवेद

स्वाद का संवेद, या स्वाद प्रणाली में चार मूल स्वाद होते हैं: नमकीन, खट्टा, मीठा और कड़वा। जीभ सभी उद्दीपनों के प्रति समान रूप से संवेदनशील नहीं होती है। उदाहरण के लिए जीभ का पिछला भाग कड़वे स्वाद के प्रति संवेदी होता है तथा जीभ का अग्र मीठे के प्रति संवेदी होता है। जीभ के दोनों ओर मुख्य रूप से खट्टे के प्रति संवेदी होता है तथा अग्रभाग तथा साइड के भाग नमकीन स्वाद के प्रति संवेदी होता है।

स्वाद बड में रोम कोशिकाएं होती हैं जो स्वाद संग्राहक का कार्य करती हैं। लोग औसतन इस प्रकार के 10,000 टेस्ट बड ग्रहण किए हुए होते हैं। ये टेस्ट बड जीभ की संपूर्ण सतह तथा दोनों ओर पर तथा कुछ मुंह के अन्य क्षेत्रों में स्थित होते हैं। बहरहाल, ये अधिकतर जीभ के ऊपर समूह में पाए जाते हैं तथा इन्हें प्राग्रिका कहते हैं।

अधिकतर प्राग्रिका में चारों तरफ खांचे बने होते हैं तथा जब हम कुछ खाते या पीते हैं तो मुंह में आया तरल प्राग्रिका के दोनों ओर पर बने खांचों को भर देता है तथा रसायनिक रूप से रोम कोशिकाओं को उद्दीप्त करता है। कोशिकाएं अपने कार्य के रूप में मस्तिष्क को संवेदी संदेश भेजती हैं तथा उसे परिणामस्वरूप स्वाद का संवेदन उत्पन्न होता है।

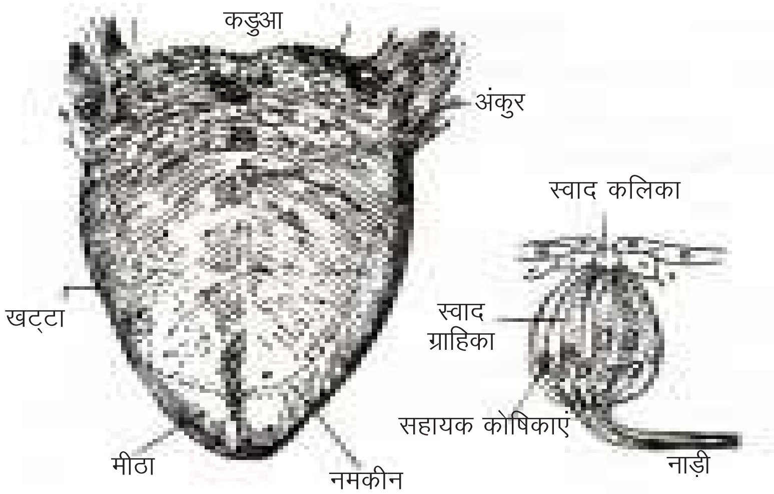

चित्र 4.5: जीभ की संरचना

गंध का संवेद

गंध या गंधीय प्रणाली, वायु में अवलम्बित रासायनिक मिश्रणों के संबंध में सूचना उपलब्ध कराती है। हमारे शरीर में तीन मुख्य संवेद होते हैं जो दूर से ही उद्दीपनों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं यथा गंध, श्रवण तथा दष्टि। गंध इन तीनों में से सबसे आदिम

संवेद है। हालांकि मनुष्य शरीर में गंध के छोटा संवेद है किन्तु यह हमारे भोजन के आनन्द में व्यापक रूप से वद्धि कर देता है तथा इत्र तथा डियोड्रेंड के महत्व को बता देता है। इसके विपरीत अनेक जानवरों यथा कुत्तों आदि के लिए गंध अत्यंत महत्वपूर्ण कारक है। कुत्ते तथा अन्य जानवर भोजन, शिकार आदि का पता लगाने के लिए इस संवेद का प्रयोग करते हैं।

गंधी संग्राहन नासिका छिद्रों से गले को जाने वाले नासिका मार्ग के ऊपर को स्थित होते हैं। ये संग्राहक दो टुकड़ों में होते हैं एक इस मार्ग के उपरी भाग में दाई ओर तथा दूसरा बांई ओर स्थापित होता है। ये संग्राहक श्लेष्मा लेपित झिल्ली में सन्निहित होते हैं जिसे गंधीय एपिथेलियम कहते हैं। ये संग्राहक वायु के मुख्य मार्ग से कुछ अलग स्थापित होते हैं। वायु मे अवलम्बित रसायन नासिका मार्गों द्वारा गुजरते हैं तथा गंधीय संग्राहकों को उद्दीपन करते हैं जो गंधीय तंत्रिका से जुड़ा हुआ होता है। मनुष्य लगभग १०,००० भिन्न गंधों में अन्तर कर सकता है। पुरुषों की तुलना में महिलाएं गंध के प्रति अधिक संवेदनशील तथा सटीक होती हैं।

गहन संवेद

संवेदों का एक समूह जीवों को उनके स्वयं के संचलन तथा वातावरण में उनके महत्व की सूचना उपलब्ध कराने का कार्य करता है। दो विभिन्न संवेदनों यथा गतिबोधक तथा प्रघ्राण प्रणालियों के मिश्रण को गहन संवेद कहते हैं।

(i) **गतिबोधक प्रणाली:** शरीर के ढांचागत संचलन को गतिबोधन द्वारा संवेदित किया जाता है। यह गतिबोधन, मासपेशियों, मांसरज्जु तथा जोड़ों में संग्राहकों से हमें प्राप्त होने वाली सभी सूचनाओं के लिए एक संयुक्त शब्द है। यह हमें शरीर के संचलन की सूचना के साथ–साथ शारीरिक अंग–विन्यास तथा अभिविन्यास की भी जानकारी उपलब्ध कराता है। निसंदेह दष्टि इस संबंध में अत्यधिक सहमता उपलब्ध कराती है।

(ii) **प्रघ्राण प्रणाली:-** संग्राहकों का अन्य समूह, जो आन्तरिक कान में स्थित है, सिर के घूर्णन का संकेत देता है। ये संग्राहक अर्धगोलाकार नसिकाओं में होते हैं जो आन्तरिक कान के प्रघ्रण उपकरण के भीतर स्थित होते हैं। कान के भीतर तीन नलिकाओं में श्यान तरल समविष्ट होता है जो सिर के घूर्णन के साथ संचालित होता है। इस तरल का संचलन प्रत्येक नलिका के एक छोर पर स्थित रोम कोशिका को झुका देता है। जब ये रोम कोशिकाएं झुकती हैं तो तंत्रिका प्रणोदन को बढ़ा देती हैं जो सिर के संचलन या घूर्णन की प्रकति तथा स्तर की सूचना उपलब्ध कराते हैं। अर्धगोलाकार नलिकाओं के अन्त में प्रघ्रण कोश होते हैं, जिनमें रोम कोशिकाएं समविष्ट होती है जो सिर के विशिष्ट कोण के प्रति संवेदी होते हैं। यह सिर की स्थिति सीधे उपर व नीचे या झुका हुआ, के संबंध में सूचना उपलब्ध करता है। यह प्रणाली गुरुत्वाकर्षण के प्रति प्रतिक्रिया करती है तथा अन्तरिक्ष में हमारे शरीर की स्थिति के संबंध में सूचना उपलब्ध कराती है।

पाठगत प्रश्न 4.5

सही विकल्प का चनय कीजिए:–

1. जीभ का पिछला भाग .... उद्दीपन के प्रति संवेदी होता है।

   क) खट्टी

   ख) कड़वा

   ग) नमकीन

   घ) मीठा

2. स्वाद संग्राहक हैः

   क) टेस्ट बड

   ख) रोम कोशिकाएं

   ग) प्राग्रिका

   घ) मुक्त तंत्रिका छोर

3. गंधीय संग्राहक कहां स्थित होते हैं:

   क) नाक में

   ख) नलिका मार्ग में ऊपर की ओर

   ग) गले में

   घ) नाक के आरम्भिक भाग में

4. गहन संवेदों में शामिल हैं:

   क) गतिबोधक प्रणाली

   ख) प्रघ्राण प्रणाली

   ग) अर्धगोलाकार नलिकाएं

   घ) उपर्युक्त सभी

5. गतिबोध प्रणाली में हमें संग्राहकों द्वारा .... से सूचना प्राप्त होती हैः

   क) मांसपेशियां

   ख) मांसरज्जु

ग) जोड़

घ) उपर्युक्त सभी

6. प्रघ्राण प्रणाली एक प्रतिक्रिया प्रणाली है जो मस्तिष्क को .... के संबंध में सूचना उपलब्ध कराती है।

क) दर्द

ख) स्पर्श

ग) हमारे शरीर के संचलन

घ) उपर्युक्त सभी

4.4 मन, मस्तिष्क तथा चेतना

भाग–१ में आपने बाहरी तथा आन्तरिक विश्व के संबंध में सूचना उपलब्ध कराने में इंद्रियों की भूमिका के संबंध में पढ़ा। बहरहाल, बाहरी विश्व से सूचना प्राप्त करना तथा उसे मस्तिष्क को संप्रेषित करने की प्रक्रिया आधी ही प्रक्रिया है। घटनाओं की कड़ी इंद्रियों द्वारा उद्दीपन प्राप्त करने से आरम्भ होती है तथा इनकी सूचना उपलब्ध करने पर समाप्त होती है जैसे ''खूबसूरत फूल, कड़वा स्वाद या चमकदार हरा'' संवेदी अनुभव जो हम अपने संग्राहकों के माध्यम से उद्दीपनों से प्राप्त करते हैं, एक प्रक्रिया है तथा अन्त में प्राप्त उत्पाद को हम प्रत्यक्षीकरण कहते हैं, जिसके संबंध में आगामी अध्याय (अध्याय–३) में चर्चा करेंगे। बहरहाल, इस खण्ड में अध्ययन करेंगे कि कैसे हमारा मस्तिष्क हमारी इंन्द्रियों द्वारा प्राप्त सूचना को सचेत संवेदी अनुभव में परिश्कत करता है।

सामान्यतः, हमारा सचेत अनुभव विभिन्न संवेद प्रक्रियाओं (यथा, दष्टि, श्रवण, स्पर्श आदि) से हमें प्राप्त सूचनाओं को परिष्कत करने का परिणाम है। इस प्रकार, हम जो अनुभव करते हैं, वह विभिन्न इन्द्रियों (प्रणालियों) द्वारा की गई भागीदारी का परिणाम है, जिसके कारण एक सचेत अनुभव या संवेद का निर्माण होता है।

चेतना

हम अपनी चेतना के माध्यम से अपने आस–पास के संसार के संबंध में जागरूक होते हैं। चेतना व्यक्ति द्वारा अनुभव की गई बाहरी तथा आन्तरिक घटनाओं की जागरूकता की स्थिति है। सामान्य जाग्रत स्थिति (चेतन) में हम अपने आसपास की क्रियाओं के प्रति जागरूक होते हैं। अपने विचारों, भावनाओं, इच्छाओं, दष्टिकोण आदि के प्रति जागरूक होते हैं। दूसरी ओर, यदि व्यक्ति निम्न रक्तचाप के कारण अचेत होकर गिर जाता है तो व्यक्ति को अपने आसपास होने वाली घटनाओं का अहसास नहीं होता है। जब व्यक्ति को पुनः चेतना प्राप्त होती है तो उसे यह पता नहीं चलता है कि उसे चेतना में लाने के

लिए क्या प्रयास किए गए हैं। बहरहाल चेतना की स्थिति में परिवर्तन होता रहता है, यहां तक कि जाग्रत स्थिति के दौरान भी। हम एक समय विशेष में अनेक क्रियाएं करते रहते हैं। कुछ चेतना में रहते हुए तो कुछ क्रियाएं स्वतः ही क्रियान्वित हो जाती हैं। उदाहरण के लिए कार को चलाते समय हम अपने साथ बैठे व्यक्ति से बातें करते हैं। इस अवधि के दौरान जब हम बातें करते हैं तो हम इस तथ्य के प्रति सचेत नहीं हाते हैं कि कब हम अपना पैर एक्सलेटर पैडल से उठाकर, क्लच को दबाया, गियर को बदला तथा पुनः एक्सलेटर दबा दिया। इस उदाहरण में ड्राइवर अन्य व्यक्ति के साथ हो रही वार्ता पर ध्यान केन्द्रित करता है (सचेत क्रिया) जबकि ड्राइविंग की सम्पूर्ण प्रक्रिया स्वतः ही (बिना हमारी चेतना के) हो जाती है। हालांकि जहां ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता हो वहां हम एक समय पर एक ही कार्य कर सकते हैं किन्तु साथ ही साथ हम ऐसा अन्य कार्य भी कर सकते हैं जो हमने व्यापक रूप से सीखा हो (यह स्वचालित ही हो जाता है तथा इसमें सचेत नियंत्रण की आवश्यकता नही होती है), किन्तु मान लीजिए कि ड्राइवर अभी कार चलाना सीख ही रहा हो तो वह दूसर व्यक्ति से बात नहीं कर पाएगा क्योंकि दोनों ही कार्यों में यहां ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता है।

कम्प्यूटर एंव मनुष्य

कम्प्यूटर तथा मनुष्य की तुलना करना रोचक क्रिया है। आधुनिक कम्प्यूटर प्रभावशाली हैं, किन्तु कोई भी मनुष्य मस्तिष्क में युक्त उद्‌बुध क्षमताओं का मुकाबला नहीं कर सकता है। कुछ मामलों में कम्प्यूटर को मनुष्य से बेहतर समझा जा सकता है। उदाहरण के लिए कम्प्यूटर की स्मति मनुष्य की स्मति से अधिक हो सकती है, इसके अतिरिक्त कम्प्यूटर बड़ी संख्या में विविध क्रियाएं एक साथ कर सकता है। दूसरी ओर मनुष्य मूल रूप से क्रमिक प्रक्रियाओं (एक समय पर एक कार्य) में सक्षम है। उदाहरण के लिए, यदि आप एक किताब पढ़ रहे हैं जिसमें ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है तो आप इसके साथ संगीत नहीं सुन सकते हैं बशर्ते संगीत में ध्यान केन्द्रि करने की आवश्यकता न हो। बहरहाल, ऐसे कार्य जिनका अत्यधिक अभ्यास प्राप्त है, जैसे कार चलाना, को ऐसे अन्य कार्यों के साथ किया जा सकता है जिनमें ध्यान दिए जाने की आवश्यकता हो। अर्थात एक कार्य स्वतः ही निष्पादित हो जाता है (बिना सचेत नियंत्रण के) तथा अन्य को सचेत नियंत्रण के अन्तर्गत किया जाता है।

यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि कम्पयूटर चिन्तन का कार्य नहीं कर सकता है (कम से कम वर्तमान में तो नहीं)। कम्प्यूटर में मानव मस्तिष्क की भांति भावनाएं, काल्पनिकता, दूरदर्शिता, इच्छा, उद्देश्य तथा सजनशीलता नहीं होती है। कम्प्यूटर हार्ड–वेयर तथा उसके डाले गए प्रोग्रामों के स्तर तक निष्पादन कर सकता है। दूसरी ओर, मानव मस्तिष्क बिना किसी सीमा के विभिन्न संज्ञात्मक कार्य तथा प्रभावपूर्ण क्रियाएं करने की क्षमता रखता है। इन दोनों में सबसे महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि मनुष्य में चेतना होती है जबकि कम्प्यूटर में चेतना नहीं होती।

मन का प्रायः मस्तिष्क की सह संबंधित क्रिया विधि के रूप में देखा जाता है। हमारे विचार, स्मति मानसिक छवियां, युक्तिकरण, निर्णय लेना आदि सभी मानव मन के पहलू हैं। मस्तिष्क की शारीरिक संरचना है (यथा न्यूरॉन) तथा जब कभी मस्तिष्क कार्य करता है तो कुछ जैविक क्रिया उत्पन्न होती है। इसकी जैविक सहसंबद्धता को ही हम मन कहते हैं। सामाजीकरण की प्रक्रिया तथा अनुभवों को प्राप्त करने के दौरान मनुष्य अपने हार्ड–वेयर (मस्तिष्क में) बड़ी मात्रा में प्रोग्रामिंग से गुजरना होता है।

चेतना के स्तर

मनो–विश्लेषण के संस्थापक सिगमंड फ्रॉयड मानते हैं कि मानव मस्तिष्क के तीन भिन्न स्तर होते हैं: सचेत, पूर्वचेत तथा अचेत।

सचेत मन में हमारे वर्तमान विचार, जो कुछ भी हम एक निश्चित क्षण में चिन्तन या अनुभव करते हैं शामिल हैं।

पूर्वचेत मन में वे स्मतियां शामिल हैं जो वर्तमान चिन्तन का भाग नहीं हैं किन्तु आवश्यकता पड़ने पर मन में लाए जा सकते हैं। अन्त में अचेत मन है। मानव मन के इस भाग की तुलना हिमशैल से की जाती है जिसका प्रमुख अंश छिपा हुआ होता है।

अचेत मन में वे विचार, इच्छाएं तथा मनोवेग शामिल हैं जिनके संबंध में हम व्यापक रूप से अनभिग्य रहते हैं। मानव व्यवहार चेतना के सभी तीनों स्तरों को प्रदर्शित करता है। बहरहाल, अनेक मनोविद चेतना के इन तीन स्तरों को स्वीकार नहीं करते हैं। प्रथम स्तर 'चेतन' को सभी स्वीकार करते हैं। पूर्वचेत को हम भण्डारित सामग्री (स्मति) कहते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर सामग्री को पुनः प्राप्त किया जा सकता है। बहरहाल, तीसरा स्तर (अचेत) सबसे विवादास्पद स्तर है तथा अधिकतर मनोवैज्ञानिक विशेषरूप से प्रयोगात्मक या संज्ञात्क मनावैज्ञानिक इस स्तर को बिल्कुल भी स्वीकार नहीं करते हैं।

आपने क्या सीखा

- इन्द्रियाँ बाहरी संसार से सूचना एकत्र करने में खिड़कियों का कार्य करती हैं।
- मनुष्य में दस भिन्न प्रकार की इन्द्रियों की पहचान की गई है। ये इन्द्रियां हैं– दष्टि, श्रवण, स्पर्श, कोष्णता, शीत, दर्द, गन्ध, स्वाद, गतिबोधक तथा प्रघ्राण। इन्द्री विशेष शारीरिक उर्जा (सूघना) को तंत्रीय संकेतों में परिवर्तित करती है तथा इन संकेतों को मस्तिष्क में प्रसारित करती है। यह संदेश मस्तिष्क में वकूटित तथा साधित किया जाता है जो प्रत्यक्षीकरण को जन्म देता है।
- मानव शरीर में सर्वाधिक विकसित तथा अत्यधिक प्रयुक्त होने वाली इन्द्री है दष्टि। प्रकाश तरंगे नेत्रों के लिए उद्दीपन का कार्य करती हैं। दश्य संग्राहक यथा रॉड व कोन, इन प्रकाश तरंगों द्वारा सक्रिय होते हैं।

- कानों में श्रव्य संग्राहक ध्वनि तरंगों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं। वातावरण में दबाव में परिवर्तनों के कारण ध्वनि तरंगें उत्पन्न होती हैं। कान के तीन प्रमुख भाग होते हैं– बाहरी कान, मध्य कान तथा आन्तरिक कान।
- त्वचा (त्वचीय संवेद) हमारे शरीर के सतह के संबंध में सूचना उपलब्ध कराती है। कुछ मुख्य संवेद हैं– दबाव तथा स्पर्श, तापमान संवेदन (शीत तथा कोष्णता), तथा दर्द।
- हम अपनी जीभ की सहायता से स्वाद का अनुभव कर सकते हैं। जीभ में स्वाद बड होते हैं जो जीभ की स्तर तथा दोनों ओर फैले हुए होते हैं इन टेस्ट बडों को संयुक्त रूप से प्राग्रिका कहते हैं।
- गन्ध संवेद का नाक द्वारा अनुभव किया जाता है। गंधीय संग्राहक नासिका मार्ग में स्थित होते हैं। ये संग्राहक श्लेष्मा लेपित झिल्ली में समूहबद्ध होते हैं जिसे गंधीय एपिथेलियम कहते हैं।
- गतिबोधक तथा प्रघ्राण संवेदों का समूह है जो जीवों को उनके स्वयं के संघलन तथा अभिविन्यास की सूचना प्रदान करता है। इन्हें गहन संवाद कहते हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. विभिन्न इन्द्रियों के नाम बताइए? मस्तिष्क द्वारा उद्दीपन को कैसे प्राप्त किया जाता है?
2. संक्षेप में निम्नलिखित की क्रियाविधि का उल्लेख कीजिए:

   क) रैटीना

   ख) दंड

   ग) शंकु
3. मानव कान के तीन प्रमुख भागों के नाम बताइए।
4. त्वचीय संवेद क्या है? उनके नाम बताइए तथा कार्यों का उल्लेख कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

4.1

1. ग 2. 10 3. ग

4.2

1. ख 2. ग 3. घ

4. ख 5. घ 6. घ

4.3 (क)

क. (ii)　　ख (i)　　ग (iv)　　घ (iii)

(ख) 1. ख　　2. क

4.4

1. घ　　2. ख　　3. क

4.5

1. ख　　2. ख　　3. ख

4. घ　　5. घ　　6. ग

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. खण्ड 4.3 का संदर्भ लें
2. खण्ड 4.4 का संदर्भ लें
3. खण्ड 4.5 का संदर्भ लें
4. खण्ड 4.6 का संदर्भ लें

5

अवधान और प्रत्यक्षीकरण

जब आप एक व्यस्त सड़क से गुजरते हैं तो आपकी इन्द्रियों को अनेक उद्दीपन उत्तेजित करते हैंः लेकिन इनमें से आप केवल बहुत ही कम उद्दीपनों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिए विभिन्न रंग की वेश–भूषा वाले अनेक लोग आपके आस–पास से गुजरते हैं, कार तथा बसें आस–पास की सड़कों से गुजरती हैं और दुकानें व भवन भी आपके ध्यान को आकष्ट करते हैं। बहरहाल, उपलब्ध उद्दीपनों में से केवल एक छोटा–सा और चुना हुआ हिस्सा ही व्यक्ति के ध्यान में प्रोसेसिंग के लिए रह जाता है और शेष सारे उद्दीपन छंटकर ध्यान से हट जाते हैं। उद्दीपन के लिए चयनित प्रतिक्रिया अथवा उद्दीपन की रेन्ज (दूरी) की इस प्रक्रिया को अवधान कहा जाता है। इस प्रकार, अवधान उन सभी प्रक्रियाओं का अवलोकन करता है जिसके द्वारा हमें चयनित चीजों का प्रत्यक्षीकरण होता है।

आपने इस पाठ में पढ़ा ''हमारे आस–पास के संसार के बारे में जागरूक होना'' है कि हमारे पास दस ज्ञानेन्द्रियां होती हैं जो कि बाहरी तथा भीतरी संसार के बारे में हमें सूचना उपलब्ध कराती हैं। परन्तु कुछ केन्द्रीय विनियामक यन्त्रावली चयनित सूचना को पकड़ती है। आपके घर के छत पर लगा हुआ डिश एन्टिना उन सभी संकेतों को पकड़ सकता है जो कि वहां पर सुलभ होती हैं। परन्तु टेलीविजन सेट में लगा हुआ ट्यूनर केवल उन्हीं संकेतों का चयन करता है जिसे आप देखना चाहते हैं, और अन्य संकेतों को छांटकर अलग कर देता है। इसी प्रकार, बड़ी मात्रा में मौजूद उद्दीपनों से, जो कि बाहरी देश में उपलब्ध होती हैं, चयनित उद्दीपन के प्रत्यक्षीकरण को अवधानात्मक प्रक्रियाएं सीमित करती हैं। इस प्रकार, अवधानात्मक प्रक्रियाओं में भावी प्रोसेसिंग के लिए चयनित सूचना को ट्यूनर फिल्टर करता है जो कि अन्ततः प्रत्यक्षीकरण को उत्पन्न करता है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात, आप निम्नलिखित कार्य में सक्षम हो जाएंगे:

- अवधान की प्रकति तथा कार्यों को स्पष्ट करने में;
- प्रत्यक्षीकरण की प्रक्रिया आ उल्लेख करने में;
- प्रत्यक्षीकरण के आकार (अनुकति) तथा भ्रम की व्याख्या करने में;
- स्थान प्रत्यक्षीकरण तथा इसमें प्रयोग किए जाने वाले संकेतों की समस्या को समझने में;
- प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले कारकों का उल्लेख करने में; और
- इन्द्रियतीत अनुभूति का वर्णन करने में।

5.1 अवधान तथा इसकी संघटक प्रक्रियाएं

अवधान एक केन्द्रीय प्रक्रिया है और प्रत्यक्षीकरण बिना अवधान की प्रक्रियाओं के संभव नहीं है। इसका मतलब अवधान प्रत्यक्षीकरण से पहले होता है। अवधान प्रक्रियाएं हमारे प्रत्यक्षीकरण के संगठन में तथा अन्य संज्ञानात्मक कार्यों में विभिन्न कार्यों का निष्पादन करती हैं। अवधान के विभिन्न कार्य हैं:

1. सावधान/सतर्क करना
2. चयनित करना
3. सीमित क्षमता चैनल
4. सतर्कता

आइए इन कार्यों का संक्षिप्त रूप से परीक्षण करें।

1. **सावधान करना:** एक बिल्ली चूहे के बिल को ध्यानपूर्वक अर्थात् सावधानी से देखती रहती है। यदि आप इस स्थिति में बिल्ली को ध्यान से देखेंगे तो आपको पता चलेगा कि बिल्ली के कान की दिशा चूहे के बिल की तरफ है (बिल के भीतर चूहे के मूवमेंट की धीमी से धीमी आवाज को सुनने के लिए), आंखें परिवर्तित होकर बिल की तरफ ध्यान से देखती हैं (दिखाई देने वाल चूहे का चित्र प्राप्त करने के लिए जैसे वह बाहर निकलने की कोशिश करे), चारों पैर की मांसपेशियां पूर्ण सावधानी की स्थिति में होती हैं (जैसे चूहा बिल से निकले उसको झपटने के लिए)। शिकार को पकड़ने के लिए बिल्ली में पूर्ण मनोवैज्ञानिक तथा मानसिक तैयारी देखने को मिलती है। यह सावधानी का एक उदाहरण है, जिसे हम अवधान की सावधानी कार्य कहते हैं।

आपने देखा होगा कि बिल्ली आने पास सतर्कता संबंधी उपलब्ध सभी संसाधनों को विनियोजित करती है, उसका यह प्रदर्शन अवधान के सावधानी प्रकति को इंगित करता है।

आइए, अवधान की सावधानी प्रकति को प्रतिपादित करने के लिए दूसरा उदाहरण लेते हैं। जब एक अध्यापक कक्षा में विद्यार्थी को इस बात को ध्यानपूर्वक सुनने के लिए कहता है कि वह क्या पढ़ा रहा है, इसका मतलब है कि विद्यार्थी स्वैच्छिक रूप से ऐसी स्थिति उत्पन्न कर सकता है जिससे कि वह कक्षा में मानसचित्र (रिसेप्ट) तथ सावधान रहने के लिए तैयार रहे। इस अर्थ में हम क्रमशः संसाधन (प्रोसेसट) होते हैं। इसका मतलब दो या इससे अधिक कार्य, जिसके लिए जटिल संज्ञानात्मक प्रक्रमण आवश्यक है, एक साथ नहीं किए जा सकते। बॉटल नेक केन्द्रीय स्तर (मस्तिष्क में) पर होता है। अर्थात्, मस्तिष्क दो या इससे अधिक कार्य एक साथ करने में सक्षम नहीं होता। इस मामले में, मानव जातियों से कम्प्यूटर बेहतर है जिसमें कि समानान्तर रूप में सूचना का प्रक्रमण किया जा सकता है।

4. **सतर्कता कार्यः** कार्य पर निरन्तर ध्यान बनाये रखना कुछ समय के लिए रडार स्क्रीन पर देखने जैसा लगता है जिसे सतर्कता अथवा अनवरत अवधान बनाए रखना कहा जाता है। इससे यह पता चलता है कि लम्बी दूरी के टैक्सिंग के कार्य को करना, विशेषकर यदि कार्य एक समान रूप का हो और जिसके कारण कार्य निष्पादन में गिरावट होती है। निम्नलिखित गतिविधि को करके आप सतर्कता के बारे में अच्छी तरह समझ सकेंगे। (बॉक्स 5.1 को देखें)

बॉक्स 5.1: सतर्कता को समझना

गतिविधि

500 अक्षरों की एक अनियमित सूची (e,g,c,P, x,a,e, t,m) तैयार करें और उन्हें दो अक्षरों के बीच एक स्ट्रोक के अन्तर पर पंक्ति में रखें। अक्षर बोल्ड तथा लोवर केस में होने चाहिए। अनियमित अक्षरों की पंक्तियों वाली पेपर सीट को प्रतिभागी को सौंपे और उनको अनुदेश दें कि पंक्तियें में दर्शाए गए स्वरों (ए इ आइ ओ यू) को, जितनी जल्दी से जल्दी हो सके, निरस्त करें। दो मिनट के पश्चात् उन्हें रोके और जहाँ पर वे रुके/रुकी हैं उसे चिन्हांकित करें। तत्काल, उन्हें इस कार्य को पुनः शुरु करने के लिए कहें और पुनः दो मिनट के पश्चात् उन्हें कार्य को रोकने के लिए कहें और जहां पर वे रुके हैं उसको चिन्हांकित करें।

गतल रूप से निरस्त किए गए अक्षरों की गलतियों की गणना करें और छूट गए अक्षरों (व सभी स्वर जिसे निरस्त करना था परन्तु उनको निरस्त नहीं किया) की भी गणना करें। दोनों गलतियों को जोड़ें और

पहले दो मिनट में किए गए कार्य तथा अगले दो मिनट में किए गए कार्य दोनों की तुलना करें।

आप पाएंगे कि प्रयोग के दूसरे भाग में पहले की अपेक्षा गलतियों की संख्या ज्याद होगी। इससे स्पष्ट हो सकता है क्योंकि एक समान कार्य पर निरन्तर ध्यान बनाए रखने के कारण केन्द्रीय (मस्तिष्क) थक जाता है।

आप दो बार की बजाय पांच बार प्रयास करके सतर्कता तुलनात्मक अध्ययन भी कर सकते हैं और अक्षरों की जगह अनियमित संख्याओं (अर्थात् 8, 1, 0, 5, 4 ....) के साथ प्रयास कर सकते हैं और 1, 4, 5 एवं 8 को निरस्त करने के लिए कह सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 5.1

बताएं कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्य

1. अवधान एक केन्द्रीय प्रक्रिया है। सत्य/असत्य
2. बिना अवधान के प्रत्यक्षीकरण संभव है। सत्य/असत्य
3. अवधान उन सभी प्रक्रियाओं का उल्लेख करता है जिसके द्वारा हमें चयनात्मक चीजों का प्रत्यक्षीकरण होता है। सत्य/असत्य
4. अवधान के चार कार्य हैं:

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

5.2 वास्तविकता के संसार का सजन: प्रत्यक्षीकरण

हम त्रिआयामीय दुनिया के साथ रहते हैं और इनसे संबंध रखते हैं जिसमें विभिन्न आकारों और स्वरूपों, तथा रंगों की वस्तुएं होती हैं। सामान्यतः, बाहरी विश्व के संबंध में हमारा अनुभव बिल्कुल सही और गलती विहीन होता है। बहरहाल, हमें अनेक भ्रम होते हैं (जैसे रात्रि में एक रस्सी का प्रत्यक्षीकरण सांप जैसा होता है)। इस संसार में अस्तित्व बनाए रखने तथा जिन्दा रहने के लिए हमारे वातावरण से हमें सही सूचना प्राप्त होनी

चाहिए। यह सूचना हमारी सभी दस ज्ञानेन्द्रियों द्वारा एकत्रित की जाती है। इनमें से आठ बाहरी (दष्टि, श्रवण, गन्ध, स्वाद, स्पर्श, गर्माहट, सर्दी तथा दर्द) और दो आन्तरिक तथा गहन इन्द्रियां (जैसे प्रघाणक (वेस्टीबुलर) एवं गतिबोधक) होती हैं।

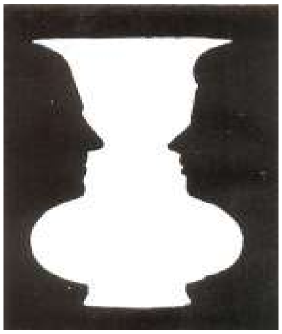

चित्र 5.1: *चित्र एवं आधार*

आपने इन्द्रिय प्रक्रियाओं से संबंधित पाठ का अध्ययन पहले ही कर लिया (पाठ 4 ''हमारे आस–पास के संसार के बारे में जागरूक होना'') है और इस अनुच्छेद में आप प्रत्यक्षीकरण के बारे में सीखेंगे। सूचना से कैसे हम एक वास्तवित संसार का निर्माण करते हैं जिन्हें कि हम ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त करते हैं? ज्ञानेन्द्रिय तथा प्रत्यक्षीकरण के बीच की सीमा का स्पष्ट चित्रण नहीं है जहां स्वेच्छा से एक समाप्त होता है और दूसरा शुरू होता है। ज्ञानेन्द्रिय तथा प्रत्यक्षीकरण के बीच विभाजन वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए किया गया है। अधिकांश मनोवैज्ञानिकों ने प्रत्यक्षीकरण को इन्द्रियों की व्याख्या के रूप में समझा है। वैज्ञानिक अनुसंधान के प्रयोजन से हमें इन्द्रिय प्रणाली पर ध्यान देना होगा, जिसमें ज्ञानेन्द्रियों, ट्रांसडक्शन, एफस्टे न्यूरानों के माध्यम से तंत्रिका कोशिकीय उद्दीपनों को संचरण द्वारा उद्दीपनों की प्राप्ति तथा वहद् मस्तिष्क में उपयुक्त स्थान पर पहुँचना शामिल है (जैसे सेरेब्रल कॉर्टेक्स के आक्यूपिटल खण्ड में दश्यिक उद्दीपन पहुंचता है।

इस खण्ड में आप अध्ययन करेंगे कि कैसे हमारी ज्ञानेन्द्रियां बाहरी तथा आन्तरिक संसार से सूचना को एकत्रित करती हैं। इसके अतिरिक्त, पिछले अनुभव, ज्ञान, स्मति, प्रोत्साहन, सांस्कतिक पष्ठभूमि, मान्यताओं तथा व्यवहार आदि को ध्यान में रखते हुए आन्तरिक प्रणाली से मस्तिष्क संकेतों के इन्द्रिय को बाहर भेजता है जो कि इसे विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त करता है। अतः, कैसे हम बाहरी संसार से सूचना को प्राप्त करते हैं और आन्तरिक प्रणाली की सहायता से हम वास्तविकता के संसार का निर्माण करते हैं। इस सबका हम प्रत्यक्षीकरण में अध्ययन करेंगे। हम पहले ही प्रत्यक्षीकरण में अवधान की भूमिका पर विचार कर चुके हैं। अतः, हमारे पास बाहरी संसार से उद्दीपन के बहुविद तथा मिश्रित (जटिल) प्रकति उपलब्ध है और अवधान प्रक्रियाओं के प्रचालन से हम कुछ चुनी हुई सूचना प्राप्त करते हैं और उनमें से कुछ सूचनाएं छँट जाती हैं। अधोलिखित अनुच्छेद में आप प्रत्यक्षीकरण के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं का अध्ययन करेंगे।

5.3 आकति का प्रत्यक्षीकरण

''आकति'' तथा ''रूप'' शब्द अक्सर एक–दूसरे के स्थान पर प्रयोग किया जाते हैं। आकति प्रत्यक्षीकरण के अध्ययन से अनेक प्रश्न उठते हैं, जोकि इस प्रकार हैं: कैसे हमें

आकति का प्रत्यक्षीकरण होता है? आकति तथा रूप अथवा सीख का प्रत्यक्षीकरण करना क्या हमारी योग्यता है? किस आधार से कैसे हम चित्र को अलग करते हैं? क्या कोई विधि है जो कि प्रत्यक्षीकरण के संघटन को संचालित करता है? भ्रांतियां क्या हैं और कैसे ये भ्रांतियां होती हैं? ये कुछ प्रश्न हैं जिसका कि हम इस खण्ड में स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

कैसे हमें आकति का प्रत्यक्षीकरण होता है?

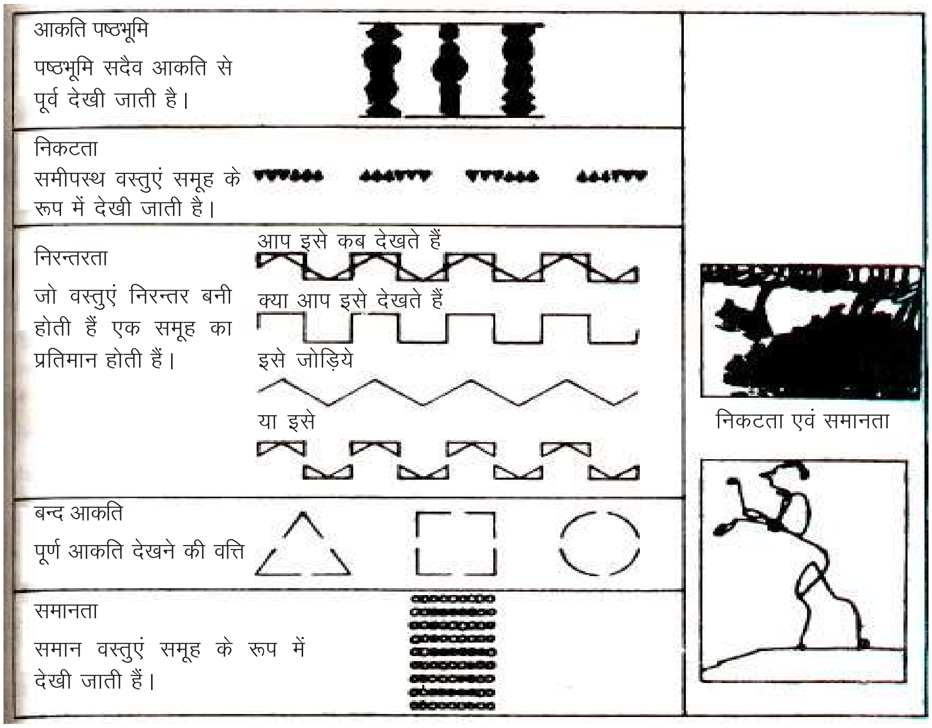

चित्र 5.2

आकति अथवा रूप दश्यता के क्षत्र के रूप में पारिभाषित किया गया है जो कि दश्यमान रूपरेखा द्वारा शेष क्षेत्र से आरम्भ होता है। सन् 1935 में बेरनेर ने यह प्रतिपादित किया कि आकति अथवा रूप के प्रत्यक्षीकरण में कैसी रूपरेखा और उसकी भूमिका है। एक आकति की परिकल्पना के लिए उस आकति की रूपरेखा इतनी स्पष्ट होनी चाहिए कि वह उस आकति को स्पष्ट कर सके। उदाहरण के लिए, चित्र 5.1 देखें, जिसमें रूपरेखा स्पष्ट रूप से एक ऐसे फील्ड को चित्रित करता है जो कि एक गोला (सर्कल) है। यदि रूपरेखा अस्पष्ट अथवा कमजोर होती है, तो आकति भी अस्पष्ट नजर आती है।

आकति और पष्ठभूमि

कल्पना करें, यदि आकति और पष्ठभूमि में पथक्करण नहीं होता तो हमारे लिए संसार कितना भ्रमपूर्ण हो गया होता। शायद, प्रत्यक्षीकरणात्मक संघटक संभव नहीं होता।

उदाहरण के लिए, चित्र 5.1 देखें जिसमें अनियमित आकति को चित्र के रूप में स्पष्ट दिखाया गया है और पेज को पष्ठभूमि के रूप में दिखाया गया है। दूसरा उदाहरण, आपके अध्यापक द्वारा ब्लैक बोर्ड पर जो कुछ भी लिखा जाता है वह ''चित्र'' होता है और ब्लैक बोर्ड एक ''ग्राउण्ड'' (पष्ठभूमि) के रूप में होता है। आप ब्लैक बोर्ड पर लिखे गऐ शब्दों को तब तक नहीं पढ़ सकते जब तक कि चित्र (शब्द) ग्राउण्ड (ब्लैकबोर्ड) से अलग नहीं होते। हमारा दष्टि क्षेत्र (हमें आस–पास के वातावरण में जो कुछ भी दिखाई पड़ता है) का कुछ क्षेत्र चित्रों के लिए पथक होता है और शेष बैक ग्राउण्ड के लिए होता है जिसके कारण चित्रों का प्रत्यक्षीकरण होता है। आकति के प्रत्यक्षीकरण के लिए चित्र ग्राउण्ड का पथक्करण होना आवश्यक है। यह न केवल दष्टि प्रत्यक्षीकरण की विशेषताएं हैं बल्कि यह सभी ज्ञानेन्द्रियों में होता है। उदाहरण के लिए, जब आप संगीत सुनते हैं तो संगीत की आवाज वाला भाग (जो संगीतकार गाता है) चित्र होता है और यान्त्रिकीय ध्वनि (इन्स्ट्रमेंटल पार्ट) वाला पार्ट पष्ठभूमि के रूप में विकलता है। यदि श्रोतागण संगीत का इन्सट्रूमेंटल पार्ट (चित्र) सुनना चाहते हैं तो आवाज (ध्वनि) ''ग्राउण्ड'' के रूप में हो जाता है।

चित्र तथा पष्ठभूमि के बीच अन्तर को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा हैः

1. चित्र की एक आकति होती है जबकि ग्राउण्ड आकति विहीन होता है।
2. ग्राउण्ड ''चित्र'' के पीछे दिखता है।
3. चित्र में वस्तु की कुछ विशेषताएं होती हैं, जबकि बैक ग्राउण्ड वस्तु के आकार जैसा नहीं दिखता।
4. चित्र सामान्यतः सामने उभरा हुआ दिखता है जबकि ग्राउण्ड उसके पीछे दिखता है।
5. चित्र अधिक आकर्षक, सार्थक तथा अच्छी तरह से स्मरण करने वाला होता है।

क्रिया

चित्र 5.3ः अस्पष्ट चित्र

विभाजन के लिए उपरोक्त अस्पष्ट चित्र ए दिखायें और लगभग एक मिनट बाद (चित्र बी एवं सी) साथ–साथ दिखाएं और इसके बाद उनसे उस चित्र को पहचानने के लिए कहें जिसको उन्होंने पहले देखा था। आपके द्वारा दिखाए गए (बी अथवा सी) के विषय पर बताए गए चित्र को नोट करें। इस प्रयोग को विभिन्न प्रतिभागियों पर पुनः दोहराएं।

आप ध्यान रखें कि बी तथा सी चित्रों को अलग–अलग कुछ दूरी पर रखें अथवा यह बेहतर होगा कि आप सी चित्र को बाएं तथा बी चित्र को सी चित्र के दाएं रखें।

आप महसूस करेंगे कि विभिन्न प्रतिभागियों द्वारा चित्र ग्राउण्ड को अलग–अलग रूप से संघटित किया गया होगा। कुछ भागीदार को 'बी' चित्र का प्रत्यक्षीकरण होगा और दूसरे प्रतिभागियों को सी चित्र का। जब चित्र बी को (चित्र के रूप में) प्रत्यक्षीकरण किया जाता है तो सी चित्र पष्ठभूमि के रूप में हो जाता है और इसे विषय के रूप में नहीं स्मरण किया जाता है। याद रखें कि चित्र ए एक अस्पष्ट चित्र है जिसमें चित्र बैक ग्राउण्ड में संबंध उल्टा है। इसे उल्टा चित्र भी कहा जाता है।

अतः, आप आश्वस्त हो गए होंगे कि आपने चित्र ए का प्रदर्शन केवल स्पिलिट सेकेन्ड अवधि के लिए है। प्रयोगशाला में चित्र ए को टैचीटोस्कोप की सहायता से प्रदर्शित किया गया है जिसमें प्रदर्शन अवधि को नियन्त्रित किया जा सकता है।

5.4 चित्र पष्ठभूमि के संगठन के निर्धारक

जर्मनी के गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक, मुख्य रूप से कोहलेर, कोफका तथा व वरदाइमर ने बताया कि प्रत्यक्षीकरण संघटन के लिए मस्तिष्क में स्वाभावितक क्षमता होती है। उन्होंने संघटन के विधियों की पहचान की, जिसके कारण हमें वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण होता है। उन्होंने दढ़तापूर्वक कहा कि प्रत्यक्षीकरण के संघटन के लिए मस्तिष्क में निहित विद्युतीय क्षेत्र उत्तरदायी होता है। वे चित्र–पष्ठभूमि पथक्करण के अनुसंधान में भी रुचि रखते थे कि पष्ठभूमि के सामने चित्र कैसे उभरकर दिखाई देते हैं।

प्रत्यक्षणात्मक संघटन की विधियां

(i) **अच्छा रूप (प्रेगनान्ज की विधि):** यह विधि बताता है कि प्रत्यक्षात्मक संघटन सदैव ''अच्छे'' के रूप में रहेगा जैसा कि मौजूदा स्थितियां स्वीकार करें। साधारण से साधारण संगठन आवश्यक आंशिक ज्ञानात्मक प्रयास सदैव निर्गत करेगा। प्रेगनान्ज का अर्थ है जिसको हम अति साधारण संगठन के रूप में प्रत्यक्षीकरण करें, जो कि उद्दीपन पद्धति में सटीक हों।

(ii) **निकटता:** सभी उद्दीपन जो कि स्थान अथवा समय पर साथ–साथ होते हैं को साथ–साथ व्यवस्थित करना होगा। चित्र 5.4 में आज उर्ध्व (खड़ी) लाइनों के तीन समूह देख सकते हैं। इससे आपको पता चलेगा कि एक–एक लाइन को देखने में कठिनाई होती है।

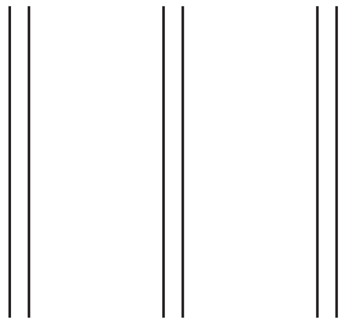

चित्र 5.4: *निकटता का नियम*

(iii) **समानताः** अन्य चीजें जो बराबर हों, वे तत्व जो कि संरचना में समान हों अथवा जिन चीजों की विशेषताएं समान हों को एक समूह में रखा जाएगा। चित्र 5.5 में, 5 वर्ग, 5 त्रिभुज और 5 सर्किल (वत्त) को कालम में साथ–साथ समूह में रखा गया है।

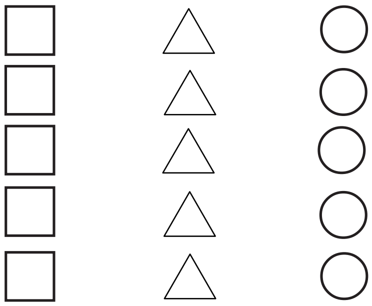

चित्र 5.5: *समानता का नियम*

(iv) **बन्द आकतिः** एक अधूरा चित्र एक पूर्ण चित्र के रूप में दिखाई देगा। चित्र 5.5, एक ऐसा चित्र है जिसमें अधूरी लाइनें हैं इन लाइनों के बीच में अन्तर है। यह एक त्रिभुज के रूप का प्रत्यक्षीकरण कराता है जबकि वास्तव में इसकी भुजाएं अधूरी हैं। एक क्लोजर व्यक्तिनिष्ठ रूपरेखा के आभास के समान होता है। चित्र 5.5 में आप देखेंगे कि त्रिभुज सही नहीं है (त्रिभुज बनाने वाली लाइनें नहीं हैं)। जबकि यह चित्र में त्रिभुज का प्रत्यक्षीकरण कराता है।

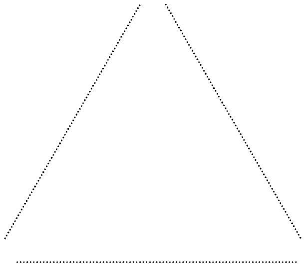

चित्र 5.6: *बन्द आकति का नियम*

5.5 विभ्रम

विभ्रम गलत प्रत्यक्षीकरण को कहते हैं, जो कि इन्द्रिय सूचना की गलत व्याख्या के परिणामस्वरूप उत्पन्न होते हैं। विभ्रम को गलत प्रत्यक्षीकरण के रूप में भी जाना जाता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई मोटी रस्सी अन्धेरे में एक किनारे पर पड़ी हो तो वह एक सांप के रूप में दिखाई पड़ती है। भ्रांतियां एक सामान्य घटना के रूप में होती हैं जिसकी अनुभूति सभी मानव प्रजातियों एवं जानवरों द्वारा की जाती है।

आपको चन्द्रमा की विभ्रम का अनुभव अवश्य हुआ होगा। चन्द्रमा दिगन्त (होरिजन) में शीर्ष बिन्दु पर स्थित चन्द्रमा की तुलना में अधिक बड़ा दिखाई देता है। हम जानते हैं कि दिगन्त अथवा शीर्ष बिन्दु पर स्थित चन्द्रमा का प्रतिबिम्ब दष्टि पटल (रेटिन) पर एक समान होता है (जब चन्द्रमा पथ्वी से समान दूरी पर स्थित होता है), बहरहाल, इसके आकार में काफी अन्तर का प्रत्यक्षीकरण होता है। आकार और दूरी के बीच संबद्धता का यह एक उदाहरण है। बहुत समय पहले हेल्महोल्टज ने बताया था कि आकार के संबंध में अनुमान दूरी के अनुमान पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, रेटिना का कोण स्थिर होता है, यदि एक बस्तु के दूरी का अनुमान उसके वास्तविक दूरी से अधिक है तो उसके वास्तवित आकार की अपेक्षा प्रत्यक्षीकरण किया गया आकार बड़ा होगा और विपरीत स्थिति में इसके प्रतिकूल वस्तु का आकार दिखाई देगा। यह दढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि रेटिनल इमेज (दष्टि पटलय प्रतिबिम्ब) के समान रहने पर, दिगन्त (होरिजन) में स्थित चन्द्रमा की दूरी का प्रत्यक्षीकरण जेनिथ (शीर्ष बिन्दु) में स्थित चन्द्रमा की दूरी से अधिक होता है। अतः, दिगन्त (होरिजन) में स्थित चन्द्रमा का आकार शीर्ष बिन्दु पर (जेनिथ) स्थित चन्द्रमा के आकार की अपेक्षा बड़ा दिखाई देगा।

ज्योमितीय विभ्रम : यहां पर कुछ विभ्रम दी गई हैं जिन्हें कुछ लाइनें खींचकर प्रदर्शित किया गया है इन सभी को ज्यामितीय विभ्रम कहा जाता है। सबसे अधिक प्रसिद्ध मुल्लेर–लाइयेर विभ्रम हैं कुछ ज्यामितीय विभ्रम के लिए चित्र 5.6 देखें।

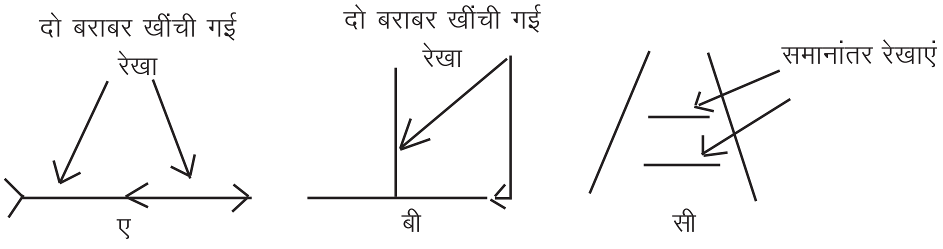

चित्र 5.7: *ए) मुल्लेर लेयर विभ्रम बी) वर्टिकल होरिजेन्टल विभ्रम सी) पान्जो विभ्रम*

5.6 स्थान का प्रत्यक्षीकरण

स्थान का प्रत्यक्षीकरण आकार तथा दूरी के प्रत्यक्षीकरण को भी उल्लिखित करता है। वास्तविकता से समस्या उप्तन्न होती है कि तीन आयामीय संसार का प्रतिबिम्ब दो

आयामीय रेटिना पर प्रक्षेपित किया जाता है। इससे प्रश्न उठते हैं: दो आयामीय प्रतिबिम्ब से कैसे हम तीन आयामीय संसार का प्रत्यक्षीकरण करते हैं? अथवा दूसरे शब्दों में कैसे हम गहराई और दूरी का प्रत्यक्षीकरण करते हैं? फासले के प्रत्यक्षीकरण की समस्या को चित्र 5.7 में प्रदर्शित किया गया है।

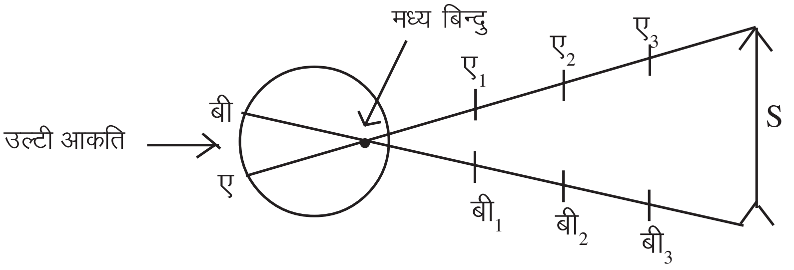

चित्र 5.8: *स्थान प्रत्यक्षीकरण की समस्या*

चित्र 5.8 से यह देखा जा सकता है कि बिन्दु $ए_1$, $ए_2$, $ए_3$, ... दष्टि लाइन रेटिना ''ए'' पर पड़ रही है। इसी प्रकार, बिन्दु $बी_1$, $बी_2$, $बी_3$, ... दष्टि ''बी'' रेटिना पर पड़ रही है। (रेटिना पर पड़ने वाली बाहरी वस्तुओं का प्रतिबिम्ब उल्टा है)। रेटिना पर उपलब्ध सूचना केवल फासले में इन बिन्दुओं की दिशा को इंगित कर सकता है, परन्तु आंख से दूरी $ए_1$, $ए_2$ तथा $ए_3$ अथवा $बी_1$, $बी_2$ तथा $बी_3$ की स्थिति।

बहरहाल, अपने दिन–प्रतिदिन के अनुभव में हम जान गए हैं कि गहराई और दूरी के बारे में हमारे अनुमान लगभग सही साबित होते हैं। यदि गहराई और दूरी के बारे में हमारे अनुमान सही नहीं होते तो बाहरी संसार की वस्तुओं के साथ हमारा विरोध ही जाएगा। यदि गहराई और दूरी के संबंध में हमारे अनुमान सही नहीं होते तो हम साइकिल और स्कूटर नहीं चला पाते। समस्या यह है कि कैसे हम रेटिना पर दो आयामीय प्रतिबिम्ब से सही स्थान (गहराई और दूरी) का अनुमान लगाते हैं आपको शीघ्र ही पता चलेगा कि स्थान (स्पेश) का अनुमान (प्रत्यक्षीकरण) संभव है क्योंकि हमारे लिए विभिन्न संकेत उपलब्ध हैं।

विभिन्न संकेतों का अध्ययन करने से पहले हमें यहाँ पर प्रयोग होने वाले उन विभिन्न शब्दावलियें को स्पष्ट रूप से समझना होगा।

दूरी (डिस्टेंस): यह प्रेक्षक तथा वस्तु के बीच पूर्ण स्थानिक विस्तार को स्पष्ट करता है। चित्र 5.8 ए देखें। फिजिकल दूरी (डी) के अनुकूल दूरी (डी') का प्रत्यक्षीकरण होता है कभी–कभी इसे प्रत्यक्ष दूरी के रूप में स्पष्ट किया जाता है।

गहराई (डेप्थ): प्रेक्षकों के विचार के अनुसार यह दो पदार्थों के बीच स्थानिक विस्तार की संबंद्धता को प्रदर्शित करता है। उदाहरणार्थ, एक प्रेक्षक के विचार के अनुसार, दो पेड़ों के बीच सापेक्ष एक्सटेन्ट होता है। (चित्र 5.8 बी देखें) प्रत्यक्षीकरण की गई गहराई ही वास्तविक गहराई होती है जिसे व्यक्तियों द्वारा अनुभव किया जाता है।

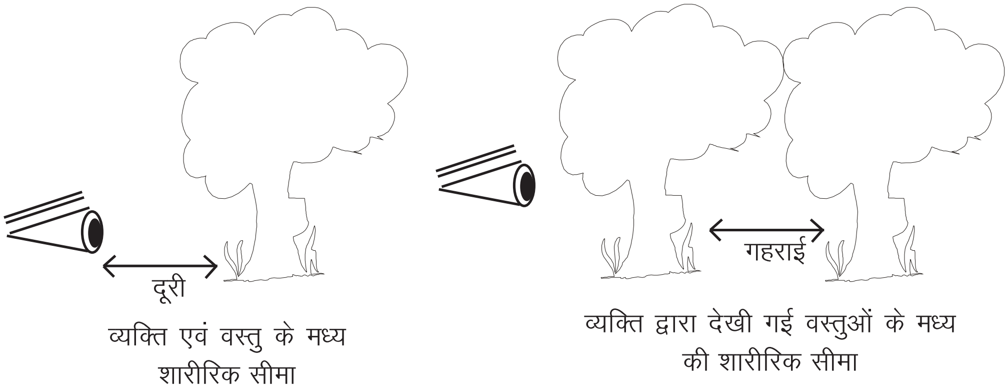

चित्र 5.9: ए. दूरी बी. गहराई

आकार: वस्तु का एक मोखिक आकार (एस) होता है जो कि बाहर दिखता है। जब व्यक्ति द्वारा इसका प्रत्यक्षीकरण किया जाता है तो इसे प्रत्यक्षीकत आकार (एस') कहा जाता है।

हमारे पास उपलब्ध विभिन्न संकेतों की सहायता से हमें गहराई और दूरी का प्रत्यक्षीकरण होता है। इन संकेतों को तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

1. **गैर-दश्यिक संकेत**
2. **द्विअक्षिक संकेत**
3. **एकाक्षिक संकेत**

हम इन संकेतों के बारे में संक्षिप्त रूप से चर्चा करेंगे।

1. गैर-दश्यिक संकेत

एकमोडेशन (समायोजन) और कनवर्जेन्स (अभिबिन्दुता) दो गैर–दश्यिक संकेत हैं। इन संकेतों को गैर दश्यिक (नॉन–विजुअल) कहा जाता है क्योंकि ये रेटिनल इमेज से उत्पन्न नहीं होते।

a. समायोजनः जिसे हम कैमरे में फोकस कहते हैं आंख के संदर्भ में इसे समायोजन कहते हैं। आंख में लेन्स की सहायता से बाहरी वस्तुओं का प्रतिबिम्ब रेटिना पर पड़ता है। पक्ष्माभिकी (सिंलियरी) पेशीय तन्त्रों द्वारा, रेटिना पर वस्तुओं के दूर तथा नजदीक फोकस करने के लिए, लेन्स को समायोजित किया जाता है। पक्ष्माभिकी पेशीय तन्त्र लेन्स की उत्तलता (कॉनवैक्सिटी) को परिवर्तित करता है ताकि वस्तु का प्रतिबिम्ब स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो सके। इस प्रक्रिया को समायोजन (एकमोडेशन) कहा जाता है।

यदि वस्तु अपेक्षाकत दूरी पर (2 मीटर से अधिक अथवा इतनी ही दूरी) स्थित है तो पक्ष्माभिकी (सिलियरी) पेशीय तन्त्र शान्त रहता है। जब वस्तु नजदीक से नजदीक दूरी

पर आता है तो पेशीय तन्त्र अधिक से अधिक संकुचित होता जाता है और लेन्स को अधिक उन्नतोदर (कान्वेक्स) बनाता है।

पक्ष्माभिकी (सिलियरी) पेशीय तन्त्रों के संकुचन की मात्रा गतिबोधक उद्दीपनों के माध्यम से मस्तिष्क को संकेत भेजती है, जिससे दूरी का पता चलता है। अर्थात्, यदि देखने वाले से वस्तु काफी दूर होता है, तो पक्ष्माभिक पेशीय तन्त्र शान्त रहती हैं और जब वस्तु नजदीक होता है तो पक्ष्माभिक तन्त्र उत्तेजित हो जाता है। पक्ष्माभिकी पेशीय तन्त्र में संकुचन की मात्रा समायोजन के संकेत के रूप में मस्तिष्क में जाती है। बहरहाल, अनुसंधान इंगित करता है कि समायोजन गहराई और दूरी के प्रत्यक्षीकरण का एक कमजोर संकेत है।

b. अभिसरण (कन्वर्जेन्स): जब आप मुद्रित लाइन के अक्षरों को पढ़ते हैं, तो आप दोनों आखों के प्रतिबिम्ब को लाने के लिए अपनी आंखों को (प्रत्येक आंख के बाहर स्थित छः इन्ट्रा–अक्यूलर पेशीय तन्त्रों की सहायता से) अभिसारित (कन्वर्ज) करते हैं। प्राप्त की गई अभिसरण की मात्रा मस्तिष्क को संकेत करती है और यह दूरी के संकेत को प्रदान करता है। उदाहरण के लिए यदि वस्तु नजदीक है तो अभिसरण (कन्वर्जेन्स) का कोण बड़ा हो जाएगा और जब वस्तु काफी दूर चली जाती है तो अभिसरण का कोण कम हो जाएगा। काफी दूर स्थित वस्तुओं के लिए आंखों की दूरी अधिक हो जाती है अथवा थोड़ी समानान्तर हो जाती है। प्राप्त की गई अभिसरण की मात्रा मस्तिष्क को उत्तेजित करता है और यह दूरी का एक संकेत है। पुनः, अनुसंधान स्पष्ट करता है कि समायोजन के समान यह प्रत्यक्षीकरण दूरी का कमजोर संकेत है।

2. द्विअक्षिक संकेत (बाइनाकूलर क्यूज)

द्विअक्षिक संकेत, पहले दो चर्चा किए गए संकेतों से भिन्न, अपने आप रेटिनल प्रतिबिम्ब से उत्पन्न होते हैं। ये संकेत निम्नलिखित हैं:

a. दोहरा प्रतिबिम्ब

b. द्विअक्षिक विषमता

a. दोहरा प्रतिबिम्बः आप पहले ही सीख चुके हैं कि जब हम अपनी आंखों को स्पेस में स्थित वस्तु पर स्थिर करते हैं तो समेकन हो जाता है और हमें एक वस्तु दिखाई पड़ती है। बहरहाल, जब हम आंख को एक वस्तु पर स्थिर करते हैं तो स्थिरीकरण बिन्दु की अपेक्षा सभी अन्य वस्तुएं नजदीक अथवा दूर नॉन–कोरेसपांडिंग बिन्दुओं पर पड़ती हैं और दोहरे प्रतिबिम्ब को प्रदर्शित करती हैं।

आप इस चमत्कार के प्रयोग की कोशिश कर सकते हैं। दो पेंसिल लें, इस पेंसिल को ऊर्ध्वगामी रूप में पकड़कर अपने नाक के सामने सीधी रेखा में एक पेंसिल को नजदीक तथा दूसरी पेंसिल को दूर रखें। अब, अपनी आंख को नजदीक वाले पेंसिल पर स्थिर करें, इस पेंसिल का प्रतिबिम्ब अग्रिम बिन्दुओं पर पड़ेगा (जैसा कि आप अपनी आंखों को

कन्वर्ज तथा समायोजित करेंगे) और संयोजन (फ्यूजन) होगा। आप पेंसिल को देखने में सक्षम होंगे। बहरहाल, दूसरे पेंसिल के दो प्रतिबिम्ब होंगे, क्योंकि यह नॉन–कारेसपांडिंग बिन्दुओं पर पड़ता है और समेकन (फ्यूजन) नहीं होता। इसी प्रकार, अब यदि आप अपनी आंख दूर वाली पेंसिल पर स्थिर करते हैं तो नजदीक वाले पेंसिल के दो प्रतिबिम्ब हो जाएंगे।

बहरहाल, आप दो प्रतिबिम्बों को केवल अनुभव कर सकते हैं ये प्रकति में एक समान नहीं होते। पहला बिना क्रास किया हुआ दोहरा प्रतिबिम्ब होगा तथा दूसरा क्रास किया हुआ प्रतिबिम्ब होगा। इस दश्य की व्याख्या के लिए चित्र 5.9 ए एवं बी देख सकते हैं।

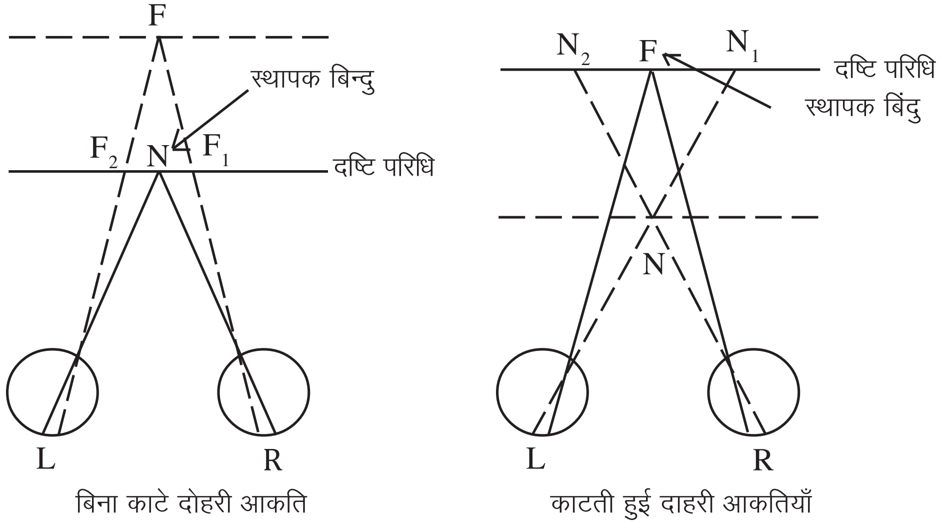

चित्र 5.10:

अतः, जब हमें बिना क्रास दोहरा प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ता है तो वस्तु स्थिरीकरण बिन्दु से काफी दूरी पर होता है। दूसरे शब्दों में जब हमें क्रास किया हुआ दोहरा प्रतिबिम्ब दिखाई देता है तो वस्तु स्थिरीकरण बिन्दु से नजदीक होता है।

b. द्विअक्षिक विषमता: वे वस्तुएं जो कि स्थिरीकरण बिन्दु से नजदीक तथा दूरी पर स्थित हैं तो उनका रेटिनल प्रतिबिम्ब दो रेटिनाओं (दष्टिपटलों) की नॉन–करोस्पांडिंग अथवा विषम क्षेत्रों पर पड़ेगा। वस्तु की स्थिरीकरण बिंदु से अधिक दूरी होने पर द्विअक्षिक विषमता बढ़ेगी। अर्थात्, स्थिरीकरण बिन्दु से वस्तु की दूरी बढ़ने के कारण विषमताएं बढ़ती हैं। स्थरीकरण बिन्दु से वस्तु की दूरी के बारे में दष्टि पटलीय विषमता संभावित संकेत है।

3. एकाक्षिक संकेत (मोनोक्यूलर फ्यूज)

एकाक्षिक संकेत को चित्रात्मक संकेत भी कहा जाता है क्योंकि इनमें फोटोग्राफ तथा पेंटिंग में पाई जाने वाली गहराई से संबंधित सूचना के प्रकार शामिल होते हैं। इन संकेतों का प्रयोग चित्रकारों द्वारा अपनी पेंटिंगों में किया जाता है। ये संकेत निम्नलिखित हैं:

a. इन्टर पोजीशन

b. आकशीय परिप्रेक्ष्य

c. रेखीय परिप्रेक्ष्य

d. प्रकाश एवं छाया

e. सुपरिचित आकार

f. टेक्सचर–डेनसिटी ग्रेडिएन्ट (संरचना सघनता अनुपात)

(a) इंटरपोजीशनः जब एक वस्तु (ए) आंशिक रूप से दूसरी वस्तु (बी) के अन्दर बन्द होता है तो बन्द हुई वस्तु बन्द करने वाली वस्तु की अपेक्षा अधिक दूरी पर दिखाई पड़ता है (चित्र 5.10 देखें)। यह संकेत बच्चों में जल्दी विकसित होता है।

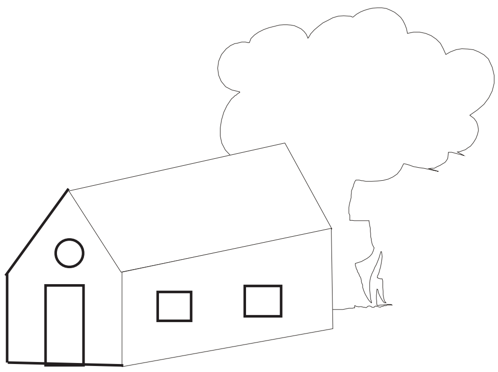

चित्र 5.11: *इंटरपोजीशन पेड़ घर से काफी दूर दिखाई पड़ रहा है।*

(b) आकाशीय (एरियल) परिप्रेक्ष्यः जब आप शहर में भवनों को देखते हैं, तो देखने पर भवन बिल्कुल नजदीक लगती है और उनकी बाउण्ड्री (रूपरेखा) दूरस्थ इकाईयों की तुलना में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जो कि घूसर और धुंधली दिखती है। बिल्डिंगें, पेड़ तथा अन्य वस्तुएं जो कि धुंधली दिखाई देती हैं ये वस्तुएं स्पष्ट दिखाई देने वाली वस्तुओं की तुलना में काफी दूर होती हैं।

(c) रेखीय परिप्रेक्ष्यः जब दो समानान्तर रेखाएँ दूरी में पीछे झुकी हुई होता हैं, जैसे कि रेल सड़क मार्ग, वे आपके रेटिनल प्रतिबिम्ब में एक बिन्दु की ओर अभिमुख होती हैं (चित्र 5.11 देंखें)। इसके अतिरिक्त, दष्टिक क्षेत्र (विजुअल फील्ड) में काफी दूर स्थित दो वस्तुएं एक दूसरे के समीप दिखाई देंगी। दूसरे शब्दों में, हमारे पास की दो वस्तुएं एक दूसरे से दूर दिखाई पड़ती हैं। यह संकेत बच्चों में काफी समय बाद दिखता है।

(d) प्रकाश और छायाः हम अक्सर प्रकाश के स्रोत तथा दिशा के प्रति जागरूक हो जाते हैं। यह सामान्यतः ऊपर से पड़ने वाले प्रकाश जैसे सूर्य की रोशनी के प्रति

होता है। एक वस्तु द्वारा बिखेरी गई परछाई पर दूसरा यह इंगित कर सकता है कि कौन सी वस्तु काफी दूरी पर है।

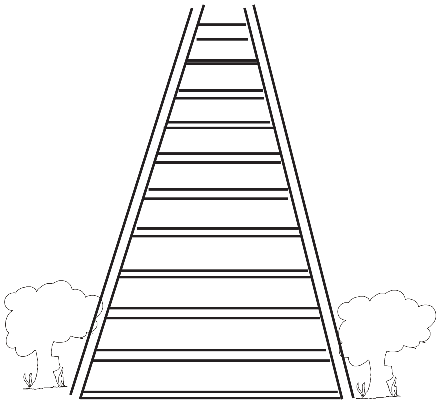

चित्र 5.12: *रेखीय परिप्रेक्ष्य*

(e) सुपरिचित आकारः क्योंकि आप अपने मित्र की लंबाई जानते हैं इसलिए आप अनुमान लगा सकते हैं कि वह कहाँ पर खड़ा है। ऐसा इसलिए संभव होता है क्योंकि हमारे मस्तिष्क में उस वस्तु का प्रतिबिम्ब स्टोर रहता है जो कि हमसे दूर है तो हम उस वस्तु के परिचित आकार को ध्यान में रखकर रेटिनल प्रतिबिम्ब से उस वस्तु की दूरी बता सकते हैं। एक प्लेइंग कार्ड (ताश का पत्ता) लें और उस मित्र को दें जो कि आपसे 10 फीट दूरी पर खड़ा हो। उससे पूछें कि वह दूरी बताएं जहाँ पर कार्ड रखा है। वह ताश के पत्ते के आकार का अनुमान कुछ सही कर सकेगा। क्योंकि वह कार्ड के आकार से परिचित है जो कि सदैव एक समान आकार (मानक आकार) होता है।

(f) संरचना सघनता ग्रेडिएन्टः जुताई किए हुए खेत को देखें, नजदीक की सतह उबड़–खाबड़ दिखाई देगी और जब हम अपनी दष्टि को दूर तक विस्तारित करते हैं तो उसकी संरचना उबड़–खाबड़ न होकर चिकना दिखाई देती है तो आप घास की पत्तियों को स्पष्ट रूप से देख सकेंगे, लेकिन जब आप अपनी दष्टि को दूरस्थ बिन्दु पर ले जाते हैं तो मैदान हरे रंग का पेंट किया हुआ जैसा दिखेगा और घास की पत्तियां स्पष्ट रूप से दश्यमान नहीं होंगी। यह संरचना सोपान दूरी के अनुमान के लिए एक संकेत है। सतह पर पड़ी वस्तुएं स्पष्ट और चिकनी दिखती हैं।

5.7 प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले कारक

किसी विशेष समय पर बहुत से उद्दीपन निकलते हैं जिन पर हमारा ध्यान जाता है और जिसमें परिणामस्वरूप प्रत्यक्षपरक संघटन उत्पन्न होता है। उद्दीपनों की विशेषताएं महत्वपूर्ण हैं क्योंकि हमारी अपनी आन्तरिक आवश्यकताओं, प्रोत्साहनों तथा हमारी विशेष सामाजिक सांस्कतिक पष्ठभूमि जिसमें हम पले बढ़े होते हैं। ये सभी कारक, उद्दीपन

परिवर्तनशील होते हैं और एक व्यक्ति के लिए आन्तरिक कारक विलक्षण होते हैं, यह निर्धारित करते हैं कि हमारे प्रत्यक्षीकरण कैसे संघटित होते हैं। निम्नलिखित खण्ड में आप सीखेंगे कि कैसे उद्दीपन तथा आन्तरिक कारक हमारे प्रत्यक्षीकरण को निर्धारित करते हैं।

(i) संदर्भ एवं समूह प्रभाव

(ii) आवश्यकताएं एवं प्रयोजन (उद्देश्य)

(iii) सामाजिक एवं सांस्कतिक कारक

(i) संदर्भ एवं समूह प्रभाव

तत्काल संदर्भ के कारण एक उद्दीपन मूलतः विभिन्न प्रत्यक्षीकरणों को प्रदान कर सकता है। संदर्भ हमारे मस्तिष्क में एक प्रत्याशा उत्पन्न करता है (ऊपर–नीचे की ओर) जो कि एक विशेष समय पर हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। उदाहरणार्थ, शोर–गुल स्थिति में आपके समक्ष एक वाक्य बोला जाता है ''ईल घूम रहा है''। आपको इस शब्द (ईल) का प्रत्यक्षीकरण ''व्हील'' के रूप में होगा क्योंकि इस संदर्भ को वाक्य के बाद वाले हिस्से से दिया गया है। इसी प्रकार एक उद्दीपन मौखिक रूप से दिया जाता है ''ईल द ऑरेन्ज''। आप 'ईल' शब्द को ''पील'' शब्द के रूप में प्रत्यक्षीकरण करेंगे। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि ''ऑरेंज'' शब्द पूर्व में दिए गए शब्द के प्रत्यक्षीकरण के लिए प्रत्याशा प्रदान करता है।

प्रत्यक्षपरक समूह भी हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करता है। प्रत्यक्षपरक समूह हमारे मानसिक प्रत्याशाओं का उल्लेख करता है। प्रत्यक्षपरक समूह इसको प्रभावित कर सकता है कि क्या हम सुनते हैं एवं क्या हम देखते हैं। व्यापक रूप में यह, हमारे शैक्षिक बोलचाल, सामाजिक तथा सांस्कतिक अनुभवों के रूप को जिसका हम प्रत्यक्षीकरण करते हैं, को परिभाषित करता है। दूसरे शब्दों में, हमारे द्वारा सीखी गई धारणाएं एवं मान्यताएं हमारे प्रत्यक्षीकरण को संघटन में हमारी सहायता करती हैं। उदाहरणार्थ, यदि हम भगवान के बारे में बहुत विश्वास रखते हैं तो मन्दिर का प्रत्यक्षीकरण हमें एक ऐसे स्थान के रूप में होगा जो कि हमें शांति, प्यार, सान्त्वना, स्नेह और सन्तुष्टि का अनुभव प्रदान करते हैं। इसी प्रकार, रूढ़िवादी धारणाएं (लोगों के समूह के बारे में सामान्य मान्यताएं) उन व्यक्तियों के प्रत्यक्षीकरण में हमारी सहायता करती है जिनसे हम पहली बार मिले हैं। हमारी अधिकांश सामाजिक सहक्रियाएं रूढ़िवादी मान्यताओं द्वारा निर्धारित होती है, जिन्हें हम व्यक्तिगत रूप में तथा समूहों में बनाए रखते हैं।

(ii) आवश्यकताएं एवं उद्देश्य (प्रयोजन)

हमने ऊपर देखा कि तत्काल संदर्भ और प्रत्यक्षपरक समूह हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार, व्यक्तिगत परविर्तनशीलता, आवश्यकताएं, भावनाएं, मान्यताएं व्यक्तित्व आदि हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करते हैं। एक व्यक्ति के

प्रत्यक्षीकरण पर आवश्यकता के प्रभाव को यह उदाहरण स्पष्ट करेगा। दो आदमी, जिनमें से एक भूखा और एक प्यासा होता है, भोजनालय में जाते हैं और वेटर दोनों आदमियों को आदेश प्राप्त करने के लिए खाने का मेन्यू (भोजन की सूची) देता है। यह पाया गया कि भूखा आदमी तत्परतापूर्वक सरसरी निगाह से खाने की वस्तुओं को देखता है जबकि प्यासा व्यक्ति पेय पदार्थ से संबंधित मैन्यू को देखता है।

यह उदाहरण इस परिकल्पना का समर्थन करता है कि व्यक्तियों की आवश्यकताएं उसे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करती हैं। यह पाया गया है कि, भावनाएं, प्रेरणा और व्यक्तित्व कारक हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण के संघटन पर जब हम पुरस्कार और दण्ड के प्रभाव का अध्ययन करते हैं तो यह पता चलता है कि दण्ड की तुलना में बच्चे चित्र–पृष्ठभूमि (उद्दीपन) के पुरस्कत पहलुओं का अधिक प्रत्यक्षीकरण करते हैं।

(iii) सामाजिक और सांस्कतिक कारक

प्रत्यक्षपरक सीख और विकास सामाजिक सांस्कतिक वातावरण के संदर्भ में होता है। हमारे प्रत्यक्षीकरण पूर्व में सीखे गए प्रभाव को दर्शाते हैं और इसलिए यदि सीख तथा सामाजीकरण एक विशेष सामाजिक–सांस्कतिक पष्ठभूमि में होता है तो यह हमारे प्रत्यक्षीकरण में परिलक्षित होता होगा। अनेकों अध्ययन हमारे प्रत्यक्षीकरण पर संस्कति के प्रभाव की कल्पना का समर्थन करते हैं। यह पता चलता है कि घने जंगलों में रहने वाले अफ्रीकी लोग उर्ध्वाधर क्षेतिज चित्र तथा पश्चिमी शहरों में मुलर–लायर चित्र में अधिक विभ्रम दर्शाते हैं।

विभिन्न संस्कति में उनके अनुभवों के कारण विभिन्नताएं उत्पन्न हुईं। अतः, संस्कति की पष्ठभूमि वाले लोगों को संसार का अनुभव अलग होता है।

5.8 इंन्द्रियतीत प्रत्यक्षीकरण (Extra Sensory Perception)

हमने प्रत्यक्षीकरण पर की गई पूर्व चर्चा में देखा कि ज्ञानेन्द्रियां कच्ची सामग्री अथवा आंकड़ा उपलब्ध कराती हैं जहां पर हमारे प्रत्यक्षीकरण संघटित होते हैं। बहरहाल, यह दूसरी तरह का प्रत्यक्षीकरण है जिसमें प्रत्यक्षीकरण बिना इंन्द्रियों की संलिप्तता के संघटित होता है इसे इन्द्रियतीत प्रत्यक्षीकरण कहा जाता है।

जैसा कि शब्द सूचित करता है कि इन्द्रियतीत प्रत्यक्षीकरण बिना (वास्तविक) उद्दीपन का प्रत्यक्षीकरण होता है।

इन्द्रियतीत प्रत्यक्षीकरण में जैसे टेलीपैथी, परोक्ष दर्शन तथा दूर गति बोधन शामिल होता है।

टेलीपैथी: यह विभिन्न स्थानों पर स्थित व्यक्तियों के बीच विचारों को स्थानान्तरित करता है।

परोक्ष दर्शन: इन्द्रियों के बिना घटनाओं तथा वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण है।

दूर गतिबोधन: बिना वस्तुओं को स्पर्श किए उनको नियन्तित्र करना।

ई.एस.पी. अर्द्ध मनोवैज्ञानिकता के विचार को प्रतिपादित करता है। वैज्ञानिक प्रवत्ति के मनोवैज्ञानिक, सामान्यतः ई.एस.पी. के तथ्य के बारे में शंकालु होते हैं।

पाठगत प्रश्न 5.2

1. प्रत्यक्षीकरण को परिभाषित करें।

   ____

   ____

   ____

2. आकति और रूप को दश्य क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया गया है जो कि ....द्वारा शेष फील्ड से आरंभ होते हैं।

3. प्रत्यक्षपरक संघटन बिना .... पथक्करण के संभव नहीं होगा।

4. गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक ने .... पहचान की जो कि हमारे प्रत्यक्षपरक संघटकों को निर्धारित करते हैं।

5. विभ्रम .... होती हैं जो कि इन्द्रिय सूचना की गलत व्यख्या के कारण से उत्पन्न होती हैं।

6. दिगन्त में चन्द्रमा का आकार शीर्ष पर स्थित (जेनिथ) चन्द्रमा के आकार से बड़ा दिखाई पड़ता है, जिसे .... कहा जाता है।

7. दूरी और गहराई का प्रत्यक्षीकरण .... की सहायता से होता है।

8. संकेतों की तीन श्रेणियां हैं:

   (i) ....

   (ii) ....

   (ii) ....

आपने क्या सीखा

- अवधान प्रत्यक्षीकरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। इसका सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य सूचना को फिल्टर करना है, जो कि उस विशेष समय पर उपयुक्त नहीं होते, यह प्राप्त की गई सूचना को चयनित करके आगे की प्रक्रमण के लिए भेजता है। अवधान के चार महत्वपूर्ण कार्य–सावधानी करना, चयनित करना, सीमित क्षमता चैनल और सतर्कता है।
- सावधान करने संबंधी कार्य उस प्रक्रिया का उल्लेख करता है जिसके द्वारा एक जीव विशेष परिस्थिति के लिए मनोवैज्ञानिक तथा मानसिक रूप से तैयार रहता है। यह व्यक्ति को त्वरित कार्यवाही के लिए तैयारी के साथ कार्य को करने के लिए तैयार करता है।
- चयनित करना उस प्रक्रिया को दर्शाता है जिसमें रुचि के उद्दीपन पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है तथा अन्य की उपेक्षा अथवा उसको फिल्टर कर दिया जाता है।
- कार्य जिसके लिए अवधान संसाधनों की आवश्यकता है उसे उद्दीपनीय रूप से नहीं किया जा सकता।
- कुछ समय के लिए कए कार्य पर ध्यान को केन्द्रित किए रहने को ध्यान बनाए रखना अथवा सतर्कता कहा जाता है। कुछ कार्य पर ध्यान बनाए रखने, विशेषकर एकरूपता की प्रकति वाले कार्य, के कारण कार्य निष्पादन में गिरावट आती है।
- सूचना से कैसे हम वास्तविक संसार का निर्माण कर सकते हैं, जो कि हमें अपने ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होती है, क्या हमने प्रत्यक्षीकरण में अध्ययन किया है।
- हमारे पूर्व के अनुभव, ज्ञान, स्मरण शक्ति, प्रेरणा, सांस्कतिक पष्ठभूमि आदि को ध्यान में रखकर ही हम वास्तविकता के संसार का निर्माण कर सकते हैं।
- हमने आकति अथवा रूप के प्रत्यक्षीकरण तथा फासला (अन्तर) के प्रत्यक्षीकरण का भी अध्ययन किया है।
- आकार को दश्य क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया गया है जो कि दश्यिक रूपरेखा द्वारा शेष दश्यिक क्षेत्र से आरंभ होता है।
- रूपरेखा, आकति को निर्धारित करते हैं।
- बिना चित्र–पष्ठभूमि के पथ्क्करण के प्रत्यक्षीकरण संघटन संभव नहीं है। चित्र–पष्ठभूमि सभी इन्द्रिय मॉडेलटीज अर्थात् दष्टि, श्रवण, स्पर्श आदि में संभव है।
- जर्मनी में गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों ने बताया कि प्रत्यक्षीकरण के संघटन–संघटन की विधियों के लिए मस्तिष्क मं स्वाभाविक क्षमता निहित होती है।

- प्रत्यक्षपरक संघटन की विधियां हैंः अच्छा रूप, निकटता, समानता, समापन आदि।
- विभ्रम, गलत प्रत्यक्षीकरण होती हैं जो कि इन्द्रिय सूचना के गलत प्रत्यक्षीकरण के कारण उत्पन्न होती हैं।
- स्थान का प्रत्यक्षीकरण आकार तथा दूरी के प्रत्यक्षीकरण को स्पष्ट करता है।
- स्थान प्रत्यक्षीकरण की समस्या उस तथ्य से प्रकट होती है जब रेटिनल प्रतिबिम्ब दो आयामीय होती है। गहराई तथा दूरी के विभिन्न संकेतों की सहायता से तीसरे आयाम का प्रत्यक्षीकरण होता है।
- हमारे पास संकेतों के तीन समूह उपलब्ध हैंः

  – गैर–दष्यिक संकेत

  – द्विअक्षिक संकेत

  – एकाक्षित संकेत
- हमारे प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करने वाले कारक हैंः

  – संदर्भ और समूह

  – आवश्यकताएं एवं प्रेरणा

  – सामाजिक और सांस्कतिक कारक

पाठान्त प्रश्न

1. अवधान के प्रमुख कार्य क्या हैं?
2. प्रत्यक्षपरक संघटन के विधियों का उल्लेख करें।
3. स्पेस प्रत्यक्षीकरण के गैर–दश्यिक संकेतों का उल्लेख करें।
4. उन कारकों का उल्लेख करें, जो कि प्रत्यक्षीकरण को प्रभावित करते हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

5.1

1. सही   2. गलत   3.सही

4. (i) सतर्क कार्य

(ii) चयनित कार्य

(iii) सीमित क्षमता माध्यम

(iv) सतर्कता

5.2

2. सुस्पष्ट परिरेखा
3. आकति पष्ठभूमि
4. संगठनों के नियम
5. त्रुटिपूर्ण प्रत्क्षीकरण
6. चन्द्र विभ्रम
7. संकेत
8. (i) अस्पष्ट संकेत

   (ti) द्विनेत्रीय संकेत

   (iii) एकनेत्रीय संकेत

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. खण्ड 5.3 का संदर्भ लें
2. खण्ड 5.3 का संदर्भ लें
3. खण्ड 5.3 का संदर्भ लें
4. खण्ड 5.3 का संदर्भ लें

6

सीखने का प्रक्रम तथा कौशल अर्जित करना

क्या आपने किसी नवजात शिशु को बातें करते, चलते, अपने आप भोजन करते या वस्त्र पहनते देखा है? मां बच्चे को भोजन कराती और वस्त्र पहनाती है और धीरे धीरे उसे चलना व बोलना सिखाती है। किन्तु आप इन सभी कार्यों को स्वयं कर सकते हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि यह नाटकीय परिवर्तन कैसे हुआ? निस्सन्देह सीखने से। इसके अलावा, आप सामाजिक आदतें और रिवाज सीखे होते हैं, और एक वयस्क व्यक्ति के रूप में आप जीवन में अनेक स्थितियों का सामना करते हैं। यहां तक कि टाइपिंग, पठन, साइकिल चलाना, बोलना आदि जैसे विभिन्न व्यावसायिक दक्षताएं तक भी सीख चुके होते हैं।

चूंकि हम जो कुछ भी करते हैं और सोचते हैं, वह सीखने से आता है, इसलिए यह इस बात को समझने की कुंजी है कि अधिकांश व्यक्ति किस तरह व्यवहार करते हैं। यह सीखने की प्रक्रिया के द्वारा ही होता है कि हम कुशल एवं निपुण बनते हैं और विभिन्न कार्यकलाप सम्पन्न करते हुए जीवन में आगे बढ़ते हैं। हम वही बनते हैं जो हम सीखते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप बिना यह जाने कि सीखा कैसे जाता है, अपने पूरे जीवन भर सीखते रहते हैं। इस अध्याय में हम यह अध्ययन करेंगे कि सीखने की प्रक्रिया कैसे होती है, सीखने के तरीके तथा वे कारक जो इसे प्रभावित करते हैं।

उद्देश्य

इस अध्याय को पढ़ने के बाद, आप निम्न के लिए सक्षम होंगे:

- सीखने की अवधारणा की व्याख्या करना;
- सीखने की प्रक्रिया तथा इसके क्षेत्र का वर्णन करना;

- सीखने के भिन्न–भिन्न तरीकों का वर्णन करना; तथा
- विशिष्ट महत्वपूर्ण अवधारणाओं जैसे सीखने के लिए तैयारी, सीखने से संबंधित अयोग्यता के बारे में सीखना आदि की व्याख्या करना।

6.1 सीखने की प्रकति

यदि कोई बच्चा एक बार चोट खाने के बाद जलती हुई लकड़ी को छूने से बचता है, तो कहा जा सकता है कि सीखने की प्रक्रिया हुई है। सीखना वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यवहार में एक विशिष्ट परिवर्तन अथवा सुधार आता है। 'व्यवहार' से अभिप्राय ऐसे किसी भी कार्य से है जो शारीरिक, सामाजिक, मानसिक अथवा इनका संयोग हो सकता है।

सीखने को ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके द्वारा अभ्यास तथा/अथवा अनुभव के परिमाणस्वरूप व्यवहार में अपेक्षाकत स्थायी परिवर्तन आता है। इस परिभाषा के तीन महत्वपूर्ण तत्व हैं:

(i) सीखना व्यवहार में परिवर्तन लाता है, अच्छा या बुरा;

(ii) यह वह परिवर्तन है जो अभ्यास अथवा अनुभव के द्वारा आता है; विकास, परिपक्वता, थकान अथवा चोट की वजह से होने वाले परिवर्तन सीखने में शामिल नहीं होते। इस प्रकार सीखने से कार्य निष्पादन में सुधार आता है।

(iii) इससे पहले कि इसे सीखना कहा जा सके, परिवर्तन अपेक्षाकत स्थायी अथवा ठोस होना चाहिए, अर्थात् यह लम्बे समय तक चलना चाहिए। उदाहरणार्थ, एक बार एक व्यक्ति साइकिल चलाना सीख लेवे इसे नहीं भूलता।

> ***स्वयं करके देखें***
>
> *आपके घर अथवा पड़ोस में 6-8 माह का कोई बच्चा अवश्य होगा। उसे एक छोटा पिल्ला दिखाएं और जब वह इसे छुए, तो खुशी भरी ध्वनि निकालें। बच्चे को खुशी का अनुभव होगा और वह कुत्तों को पसन्द करना सीखेगा। अन्य अवसर पर बच्चे को पिल्ला दिखाते समय, एक डरावनी आवाज निकालें। बच्चे को बुरा अनुभव होगा और वह कत्तों से दूर रहना सीखेगा। पहले मामले में आपने बच्चे को सकारात्मक पुनर्बलन के द्वारा सिखाया और दूसरे में नकारात्मक पुनर्बलन के द्वारा। इस गतिविधि से आप बीच के संबंध को समझ पएंगे।*

पाठगत प्रश्न 6.1

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:

   सीखने का तात्पर्य .... में ऐसे किसी परिवर्तन से है जो .... के परिणामस्वरूप आता है।

2. नीचे दिए गए सीखने के गुणों के सामने सही या गलत लिखें:
   (क) सीखना एक सतत् प्रक्रिया नहीं होती। सही/गलत
   (ख) कार्य निष्पादन में सुधार सीखने के माध्यम से लाया जाता है। सही/गलत
   (ग) सीखना एक धीमी प्रक्रिया है। सही/गलत
   (घ) परिपक्वता अथवा थकान की वजह से व्यवहार में परिवर्तन सीखना कहलाता है। सही/गलत

सीखना किसी दिए हुए उद्दीपन के प्रति एक विचारयुक्त प्रतिक्रिया होती है। सीखने को अन्य अवधारणाओं जैसे परिपक्वता, सहजक्रिया तथा मूल प्रवत्यात्मक व्यवहार से भिन्न करके देखना चाहिए।

एक बच्चा तब तक चलना नहीं सीख सकता जब तक उसके पैर की मांसपेशियां उसका वजन उठाने के लिए पर्याप्त रूप से मजबूत न हों। इसका अर्थ है कि परिपक्वता से सीखने के लिए आवश्यक तैयारी प्राप्त होती है। कौशल अथवा ज्ञान प्राप्त करने के लिए परिपक्वता का एक निश्चित स्तर आवश्यक होता है।

सीखना तथा परिपक्वता, दोनों का परिणाम व्यवहार में परिवर्तन के रूप में होता है। कभी कभी यह अन्तर करना कठिन हो जाता है कि इनमें से किसने व्यवहार पर अधिक प्रभाव डाला है। परिपक्वता को तंत्रिकीय तथा मांसपेशीय तन्त्र के विकास के द्वारा हुए विकास के रूप में समझा जा सकता है, जबकि सीखना प्रेरक स्थितियों का परिणाम होता है।

अन्य प्रकार के व्यवहार, जो सीखने से संबंधित नहीं होते, वे होते हैं जो मूल प्रवत्यात्मक तथा सहजक्रियात्मक कार्यों से उत्पन्न होते हैं। मूलप्रवत्तियां जटिल प्रकार का व्यवहार है। उदाहरण के लिए चिड़िया द्वारा घोंसला बनाना मूलप्रवत्यात्मक है।

प्रत्येक प्रकार के प्राणी की एक निश्चित स्वभावगत व्यवहार पद्धति होती है जो उनके अस्तित्व के लिए आवश्यक होती है। सहजक्रियात्मक कार्य एक ज्ञानेन्द्री के उद्दीपन पर किसी मासपेशी अथवा ग्रन्थि की प्रत्यक्ष तथा तुरन्त प्रतिक्रिया होती है। उदाहरणार्थ किसी व्यक्ति की आखों के सामने एकाएक होने वाली किसी वस्तु की गतिविधि के परिणामस्वरूप आंख का झपकना। ये जन्मजात प्रवत्तियां होती हैं तथा अभ्यास के जरिए प्राप्त नहीं होती। तथापि, मूलप्रवत्यात्मक व्यवहार को सीखने से सुधारा जा सकता है।

> ***स्वयं करके देखें***
>
> *एक तीन माह के शिशु को चलना सिखाने का प्रयत्न करें। क्या वह चल सकता है? नहीं, क्योंकि उसके पांव पर्याप्त रूप से विकसित तथा परिपक्व नहीं होते। किसी एक वर्ष के बालक को चलना सिखाने का प्रयत्न करें। क्या वह चल सकता है? हाँ, क्योंकि उसके पैरों की मांसपेशियां उसके भार को सम्भालने के लिए पर्याप्त विकसित तथा परिपक्व हो चुकी हैं। इससे सीखने तथा परिपक्व के बीच संबंध पता चलता है।*

पाठगत प्रश्न 6.2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:
   (क) परिपक्वता से सीखने के लिए .... उपलब्ध होता है।
   (ख) बिना परिपक्वता के...................... (सीखा जा सकता है/नहीं सीखा जा सकता) है।
   (ग) सीखने के लिए .... तथा अनुभव आवश्यक होते हैं।
   (घ) सहजक्रियात्मक व्यवहार एक ज्ञानेन्द्री के .... पर किसी मांसपेशी अथवा ग्रन्थि की .... तथा .... प्रतिक्रिया होती है।

6.2 सीखने में मूलभूत प्रयोग

मनोवैज्ञानिकों ने सीखने की विभिन्न प्रकारों की खोज की है। सीखने के महत्वपूर्ण प्रकारों में शामिल हैं– 'शास्त्रीय अनुकूलन;, 'सक्रिय अनुकूलन', अन्तदष्टि, प्रयास एवं भूल, गतिक सीखना, मौखिक सीखना तथा सामाजिक सीखना। इस खण्ड में हम सीखने के कुछ प्रमुख रूपों का अध्ययन करेंगे।

(क) अनुमान्य संकेतों को सीखना : शास्त्रीय अनुकूलन

अनुकूलन सहचर्यजन्य सीखने का एक रूप होता है। शास्त्रीय अनुकूलन में एक उद्दीपन तथा प्रतिक्रिया के बीच एक सम्बन्ध अथवा सहयोग स्थापित किया जाता है। उदाहरणार्थ, एक बालक का व्यवहार जो एक बार जलती हुई लकड़ी द्वारा जलने के बाद उससे बचता है।

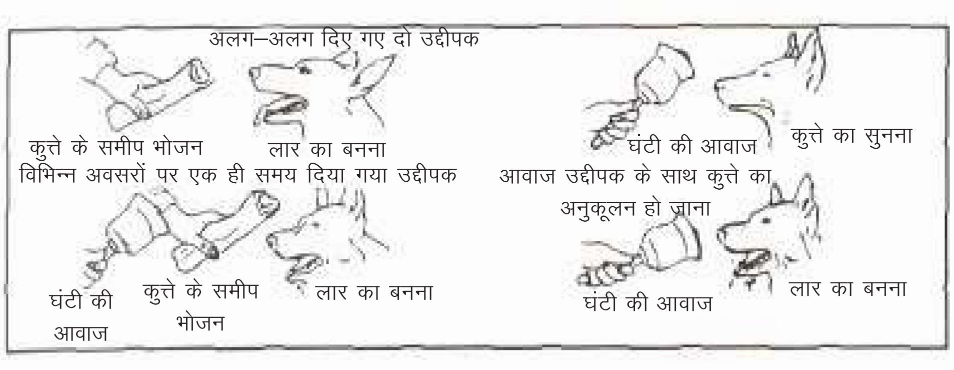

चित्र 6.1: *पॉवलोव का शास्त्रीय अनुकूलन का अनुभव*

शास्त्रीय अनुकूलन ईवान पॉवलोव (1849-1936) के प्रयोगों का परिणाम है। इसे कभी कभी प्रतिक्रियात्मक अनुकूलन अथवा पॉवलोवियन अनुकूलन भी कहा जाता है। पॉवलोव ने पाया कि खाना खिलाए जाने से थोड़ा सा पहले, उसके प्रयोगशाला के कुत्तों के मुंह

में लार टपकने लगती थी। अपने पहले प्रयोग में, पावलोव ने कुत्तों को एक घंटी के बजने के साथ ही अथवा उसके तुरन्त बाद भोजन दिया। घंटी तथा भोजन के बीच बीस से चालीस अनुभवों के बाद, कुत्तों के मुंह से केवल घंटी की आवाज पर ही लार टपकने लगी। घंटी की आवाज ने मूल रूप से भोजन के उद्दीपन का स्थान ले लिया था, जिससे कि अकेले घंटी की आवाज ही कुत्तों के लार का प्रवाह बनाने में सक्षम हो गई थी। इस प्रकार, लार की प्रतिक्रिया का अनुकूलन घंटी की आवाज नामक एक उद्दीपन के रूप में हो गया था।

अनुकूलन के होने के लिए अनिवार्य आवश्यकता यह है कि दो उद्दीपन एक साथ घटित हों। प्रयोगशाला में, दो उद्दीपनों का प्रस्तुतिकरण या तो साथ साथ किया जाता है अथवा नया उद्दीपन पुराने की अपेक्षा जरा सा पहले किया जाता है। यदि पुराना उद्दीपन नए से पहले घटित होता है तो कोई सीखना नहीं होता अथवा बहुत कम सीखना होता है। ऐसा करना किसी बालक के कोई काम पूरा करने से पहले ही उसे पुरस्कार दिए जाने की प्रक्रिया की तरह होगा।

शास्त्रीय अनुकूलन को निम्नानुसार प्रदर्शित किया जा सकता है:

अ–अनुकूलित उद्दीपन → अ–अनुकूलित प्रतिक्रिया (भोजन→लार)

अनुकूलित उद्दीपन + अ–अनुकूलित उद्दीपन → अ–अनुकूलित प्रतिक्रिया (घंटी + भोजन + लार)

अनुकूलित उद्दीपन → अ–अनुकूलित प्रतिक्रिया → पुनर्बलन (घंटी→लार→भोजन)

सामान्यीकरण अथवा विभेदीकरण: सीखने की प्रक्रिया में एक नयी सीखी हुई अनुकूलित प्रतिक्रिया उद्दीपन तथा प्रतिक्रिया के संबंध में सामान्यीकत हो सकती है। यदि दो अलग–अलग उद्दीपन, जो थोड़े बहुत अलग हों, के प्रति एक जैसी प्रतिक्रिया घटित होती है, तो वह सामान्यीकत प्रतिक्रिया होती है। उदाहरण के लिए, कुत्ते को घंटी के बजने पर लार टपकाना सिखाया जाता है, वही कुत्ता किसी बज़र के बजने पर भी लार टपका सकता है। आगे और अभ्यास से, जानवर को उद्दीपनों के बीच विभेद करने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है। यदि भोजन केवल घंटी की आवाज पर दिया जाए, बज़र की आवाज पर नहीं, तो पशु बज़र के प्रति अपनी प्रतिक्रिया उत्पन्न करना बंद कर देगा और विभेद करना सीख सकेगा।

विलोपन तथा सहज प्रतिलाभ: चूंकि कुछ अनुकूलित प्रतिक्रियाएं अवांछित होती हैं, जैसा कि हम देख चुके हैं, भाग्यवस इन्हें भुलाया जा सकता है। किसी अनुकूलित प्रतिक्रिया को भुलाने का एक तरीका यह है कि बिना पुनर्बलन के उद्दीपन को दोहराया जाए। कुत्ते के मामले में, इस का अर्थ होगा घंटी को बिना भोजन दिए बजाना। थोड़े अंतराल के बाद, कुत्ते की लार घंटी की ध्वनि पर नहीं टपकेगी। प्रतिक्रिया विलुप्त हो चुकी है। भूलने की तरह ही विलोपन प्रतिक्रिया की स्थायी समाप्ति की अपेक्षा अस्थायी प्रतीत होता है। किसी विलुप्त प्रतिक्रिया को कहीं अधिक शीघ्रता से पुनः सीखा जा सकता है जब एक

बिल्कुल नई प्रतिक्रिया पर प्रवर्तन किया जाए। किसी नई प्रतिक्रिया से अच्छा एक विलुप्त प्रतिक्रिया को कहीं अधिक शीघ्रता से प्रवर्तन देने से पुनः सीखा जा सकता है।

सहज प्रतिलाभ सहज रूप से प्रतिलाभ प्राप्त करने की प्रवत्ति होती है। पॉवलोव ने अनुभव किया कि कुत्तों को विलोपन के परीक्षण दिए जाने के एक दिन के बाद, लार की प्रतिक्रियाएं वापस आ गईं, विलोपन की समाप्ति के समय वे जितनी बलवती थीं उससे अधिक बलवती होकर। यह एक प्रकार से उलट रूप में भूल जाना होता है, पहले हो चुके विलोपन को भूलने की प्रवत्ति।

मानवों में हम पाते हैं कि साइकिल चलाना सीखने में होने वाली प्रतिक्रियाओं, जैसे सन्तुलन, ब्रेक लगाना आदि को स्कूटर चलाते समय सामान्यीकत किया जाता है। तथापि, एक साधारण साइकिल चलाते समय गियर का प्रयोग नहीं होता। स्कूटर चलाते समय व्यक्ति विभेद करना तथा आगे गियरों का इस्तेमाल करना सीखता है। यदि मनुष्य लम्बे समय के लिए साइकिल या सस्कूटर चलाना बंद कर दे, तो वह अस्थायी रूप से सन्तुलन बनाना भूल सकता है, यह विलोपन होता है। तथापि, प्रयत्न करने पर, पुनः सीखना बहुत जल्दी, सीखने के लिए पहले लिए गए समय की अपेक्षा अधिक शीघ्र होता है। यह सहज प्रतिलाभ होता है।

(ख) परिणामों द्वारा सीखना

सक्रिय अनुकूलन अनुकूलन का एक अन्य महत्वपूर्ण प्रकार सक्रिय अनुकूलन होता है। बी.एफ. स्किनर सक्रिय व्यवहार को एक जीव का स्वतः स्फूर्त व्यवहार बताते हें। सक्रिय अनुकूलन में, प्रवर्तन जीव की प्रतिक्रिया पर निर्भर होता है। चूंकि प्रवर्तन प्राप्त करने में प्रतिक्रिया नैमित्तिक होती है, इसे नैमित्तिक अनुकूलन अथवा सीखने के रूप में भी जाना जाता है।

सक्रिय सीखने की एक केन्द्रीय अवधारणा पुनर्बलन होती है। जिस व्यवहार का पुनर्बलन किया जाता है, उसका दोहराया जाना सम्भावित होता है। उदाहरण के लिए, एक भूखे कबूतर को एक बक्से में रखा जाता है जिसकी दीवार पर एक प्रकाशित बटन होता है। कबूतर बक्से के अन्दर इधर उधर टकराता भटकता है। अन्ततः यह बटन से टकराएगा और बक्से के एक क्रियातंत्र द्वारा पक्षी को थोड़े से अन्न के दाने मिलते हैं। कबूतर इन्हें खाता है और बक्से में अपनी गतिविधि जारी रखता है। एक बार फिर यह अचानक बटन से टकराता है और भोजन से पुनर्बलन होता है। अन्ततः कबूतर यादच्छिक व्यवहार बंद कर देगा और यथोपेक्षित भोजन पाने के लिए सहज ही बटन से टकराएगा। कबूतर ने भोजन पाने के लिए बटन दबाना सीख लिया है।

सक्रिय अनुकूलन किसी भी रूप से पशुओं तक सीमित नहीं है। पुनर्बलन के माध्यम से नया व्यवहार सीखने के सिद्धान्तों को स्किनर ने मनुष्यों पर लागू किया है। उदाहरण के लिए (i) नियोजित सीखना (एक ऐसा तरीका जिसके द्वारा सीखने वाला प्रत्येक सही

कदम से प्रतिक्रिया द्वारा पुनर्बलित होता है) के जरिए स्कूलों में नई सामग्रियां सिखाना (ii) व्यवहार की दष्टि से बांछित बच्चों तथा बड़ों का इलाज करने के लिए व्यवहार संशोधन की तकनीकें।

सीखने के अन्य प्रकार

कौशल सीखना

कौशल सीखना तीन चरणों में होता है। उदाहरण के लिए, साइकिल सीखते समय व्यक्ति कार्य में अपेक्षित तथा कार्य के कतिपय विनिर्दिष्ट अंगों के बारे में सीखता है। यह संज्ञानात्मक चरण होता है। दूसरे चरण अर्थात् 'सम्बद्ध चरण' में त्रुटिहीनता तथा सटीकता से कौशल को सुधारा जाता है। अंततः व्यक्ति किए जाने वाले कार्य के विभिन्न पक्षों के बारे में सोचता तक नहीं है। यह कौशल स्वतः स्फूर्त हो जाता है। रोजाना का जीवन ऐसी गतिविधियों से परिपूर्ण होता है जिनमें कौशल सीखने की मांग होती है जैसे मोटर सीखना; चम्मच से खाना खाना; बातें करना; लिखना; टाइप करना; कार चलाना, कोई संगीत वाद्य बजाना आदि। इन सब में गति तथा शुद्धता के साथ प्रतिक्रियाएं करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। मोटर संबंधी कौशल में वातावरण तथा भीतरी शारीरिक उद्दीपन तथा किए जाने वाले कार्य के बीच समन्वय की आवश्यकता होती है।

मौखिक सीखना

जैसे जैसे बच्चा बड़ा होता है वह मौखिक सीखना आरम्भ कर देता है। प्रारम्भ में, बच्चे को इस बात की सीमित समझ होती है कि कुछ निश्चित शब्दों तथा हरकतों का क्या अर्थ होता है। मौखिक सीखने में शब्दों के प्रति अथवा शब्दों के साथ प्रतिक्रिया करना सीखना शामिल होता है। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है वह विभिन्न मौखिक कौशल विकसित करता है जैसे वस्तुओं के नाम लेना, शब्दों को उच्चारित करना, शब्द जोड़कर वाक्य बनाना, किसी विचार को सम्प्रेषित करने के लिए वाक्य लिखना आदि। वह सही तरीके से संवाद करने के लिए एक नया शब्द भण्डार अर्जित करता है।

मौखिक कौशल सामान्यतया याद करके, दोहराकर, पुनः याद करके तथा वस्तुओं को पहचानकर अर्जित किए जाते हैं। बोलना एक जटिल कौशल है जिसमें गतिशीलता के साथ–साथ सांकेतिक अथवा मौखिक कुशलताएं शामिल होती हैं। इसे शैशवकाल के दौरान आंशिक रूप से प्रतिक्रियात्मक स्वरोच्चारण के आधार पर, तथा इसे नकल उतार कर तथा मॉडलिंग द्वारा भी ग्रहण किया जा सकता है।

मौखिक शिक्षण का अध्ययन करते समय मनोवैज्ञानिक सामग्री को प्रस्तुत करने के लिए अनेक पद्धतियों का प्रयोग करते हैं। वे इसमें श्रृंखलाबद्ध शिक्षण, मुक्त पुनःस्मरण, तथा युग्मित संबद्ध शिक्षण को शामिल करते हैं। श्रृंखलाबद्ध शिक्षण में सीखने वाले को उसी क्रम में शब्दों को दोहराने को कहा जाता है जिस क्रम में उसे वे शब्द प्रस्तुत किए गए

थे। मुक्त पुनःस्मरण में प्रस्तुत किए जाने वाले क्रम से ध्यान में रखे बिना शब्दों को दोहराने को कहा जाता है। युग्मित शिक्षण में मौखिक सामग्री के जोड़ों में प्रस्तुत करने को कहा जाता है जैसे खगनप–पुस्तक।

अवधारणा सीखना

अवधारणा एक श्रेणी का नाम है तथा इसकी कतिपय विशेषताएं होती हैं। अवधारणा शिक्षण में सामान्यीकरण तथा विभेदीकरण दोनों शामिल होते हैं। व्यक्ति दो या अधिक उद्दीपनों, जो कुछ मायने में भिन्न होती हैं, में अन्तर करना सीख लेता है। उदाहरण के लिए बच्चा पहले सीखता है कि जानवर क्या है, और बाद में वह कुत्ते व बिल्ली आदि में विभेद करना सीख लेता है। इस प्रकार, व्यक्ति विभिन्न श्रेणियों के उद्दीपनों को विभिन्न प्रतिक्रियाएं करना सीख लेता है। सभी अवधारणाएं विशेषताओं के एक समूह का प्रतिनिधित्व करती हैं जो किसी नियम की सहायता से जुड़े होते हैं।

व्यक्ति विभिन्न गुणों जैसे रंग, आकार, स्थिति, संख्या और अन्य के आधार पर अपने परिवेश में वस्तुओं के प्रति प्रतिक्रिया करना सीख लेता है। वह वस्तुओं के एक समूह में कतिपय समान गुणों को खोजने का प्रयास करता है तथा उन्हें किसी श्रेणी का नाम दे देता है। विभिन्न शब्द जो सामान्यतः वस्तु को दर्शाने के लिए प्रयोग होते हैं जैसे घर, कार, स्कूल, जानवर, डॉल आदि अवधारणाओं के उदाहरण हैं। अवधारणाओं का शिक्षण विश्व को समझने तथा समस्याओं के समाधान में उपयोगी होता है। अधिकतर विषय जिनका हम अध्ययन करते हैं, उनमें अवधारणा शिक्षण शामिल होता है।

सामाजिक सीखना

जैसे–जैसे हम बड़े होते हैं हमारा पर्यावरण (परिवेश) विस्तत होता जाता है जिसमें हम लोगों, वस्तुओं तथा घटनाओं को शामिल करते हैं। हम नई आदतें सीखते हैं तथा साथ ही साथ वस्तुओं, घटनाओं, व्यक्तियों तथा अभिवत्त्सि के प्रति अपनी धारणाओं को भी शोधित करते हैं। एक व्यक्ति के शिक्षण में बड़ा भाग उसकी अभिवति में परिवर्तन का होता है। अभिवति एक सीखा हुआ तरीका है जिससे वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति या विचार के प्रति प्रतिक्रिया की जाती है। यह व्यक्ति परिस्थिति, स्थान या वस्तु के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल प्रतिक्रियाओं का निर्धारण करता है। उदाहरण के लिए, व्यक्ति आदतों के निर्माण तथा अभिवतियों के कारण अपने परिवेश में विभिन्न व्यक्तियों का आदर या निरादर करना सीख लेता है। कतिपय सामाजिक प्रतिक्रियाएं समाज द्वारा पुनर्बलित की जाती हैं यदि वे समाज के नियमों के अनुसार स्वीकार्य हैं। तदानुसार व्यक्ति द्वारा सीखे जाने वाले व्यवहार को 'आकार' प्राप्त होता है।

अन्य तंत्रों के अतिरिक्त सामाजिक शिक्षण में आदर्श मॉडलों की 'नकल' करना शामिल है, जो कि ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अन्य लोगों को देख कर नए व्यवहार को सीखता है जिसे मॉडलिंग या प्रेक्षण–विषयक कहते हैं। इस प्रक्रिया में कोई प्रत्यक्ष पुनर्बलन शामिल नहीं है।

पाठगत प्रश्न 6.3

1. निम्नलिखित का मिलान करें :

(क) शास्त्रीय अनुकूलन	(क) बी. एफ. स्किनर
(ख) सक्रिय अनुकूलन	(ख) इवान पॉवलोव
(ग) गतिक सीखना	(ग) विचारों के सजन के लिए शब्द, वाक्य
(घ) मौखिक सीखना	(घ) सामाजिक नियमों के अनुसार व्यवहार को ढालना
(ङ) अवधारणा सीखना	(ङ) मांस–पेशियों का संचलन
(च) सामाजिक सीखना	(च) समान गुणों के आधार पर वस्तुओं का वर्गीकरण

6.3 सीखने की वक्ररेखा

सीखने के लिए दिए गए कार्य के आधार पर व्यक्ति के कार्यनिष्पादन का आकलन करके मापा जा सकता है। सीखने की दर, जिसे सामान्यतः कार्यनिष्पादन द्वारा मापा जाता है, को ग्राफ के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है जिसमें 'अभ्यास की इकाइयों' को 'X'-अक्ष तथा शिक्षण की डिग्री को 'Y'-अक्ष में रखा जाता है। ग्राफ का अनुप्रस्थ अक्ष अभ्यास की मात्रा या इकाइयों को दर्शाता है, ऊर्ध्वाधर अक्ष कार्यनिष्पादन के कुछ मापों यथा सही प्रतिक्रिया का प्रतिशत, लक्ष्य की प्राप्ति में लगा समय आदि पर सीखने की डिग्री को दर्शाता है।

चित्र 6.4 में वक्र 'क' प्रारम्भ में बहुत कम या कोई सुधार नहीं दर्शाता है, उसके बाद तीव्र सुधार की अवधि आती है और तत्पश्चात नगण्य सुधार या कोई सुधार नहीं की अवधि आती है जो सपाटता को दर्शाता है।

वक्र क – प्रारभं में मंद सीखने तत्पश्चात तीव्र सीखने को दर्शाता है।

वक्र ख – अनियमित सीखने को दर्शाता है

वक्र ग – आरम्भ में धीमा सीखने तत्पश्चात तीव्र सीखना दर्शाता है।

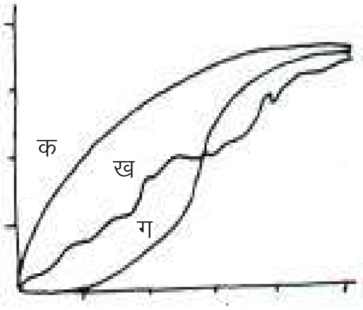

चित्र 6.4: *सीखने की वक्ररेखा*

किसी कार्य विशेष के लिए किसी व्यक्ति विशेष हेतु सीखने की दर व्यक्ति–व्यक्ति के लिए तथा समय–समय पर भिन्न होती है। उदाहरण के लिए टाइपिंग सीखने के मामले में एक विद्यार्थी प्रारम्भ में तीव्र सुधार दर्शाता है जबकि अन्य व्यक्ति को टाइपिंग में सुधार लाने के लिए लम्बा समय लगता है। कभी कभी व्यक्ति टाईपिंग का एक निश्चित स्तर प्राप्त कर लेने के पश्चात कुछ दिनों के लिए उस स्तर पर बना रहता है और उसके बाद सुधार दर्शाता है। किसी भी सीखने के कार्य के लिए सीखने का वक्र बनाया जा सकता है।

पाठगत प्रश्न 6.4

1. रिक्त स्थान भरिए:
   (क) सीखने का वक्र दर्शाता है कि .... के दौरान किस प्रकार .... भिन्न–भिन्न समय के दौरान भिन्न होता है।
   (ख) सीखने का वक्र एक .... है जो .... तथा .... को दर्शाता है।
2. निम्नलिखित वाक्यों में सही या गलत बताएं:
   (क) सीखने के वक्र में अभ्यास की इकाइयों को 'X'- अक्ष में रखा जाता है। सही/गलत
   (ख) अभ्यास के साथ सीखने की दर बदल जाती है। सही/गलत
   (ग) एक कार्य का निष्पादन सीखने का संकेत नहीं होता है। सही/गलत

6.4 सीखने को प्रभावित करने वाले कारक

सीखने को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण कारकों का वर्णन नीचे किया गया है। ये कारक उद्दीपन, कार्य या प्रशिक्षु से संबंधित हैं।

(क) पुनर्बलन

सीखने के लिए प्रेरणा की आवश्यकता होती है तथा पुनर्बलन प्रेरणा का एक महत्वपूर्ण पहलू है। पुनर्बलन ऐसी कोई भी वस्तु हो सकती है जो प्रतिक्रिया को सुदढ़ बनाती है तथा इसके आगमन की सम्भावनाओं को बढ़ाती है। पुरस्कार पुनर्बलन का उदाहरण है। पुनर्बलन सीखने की कुंजी है। यदि सही रूप में व सही समय पर इसे लागू न किया जाए तो यहां कोई प्रेक्षणीय सीखना नहीं होगा। पुनर्बलन दो प्रकार के होते हैं यथा प्राथमिक तथा गौण। पुनर्बलन के स्रोत को पुनर्बलक कहते हैं।

प्राथमिक पुनर्बलन के प्राकतिक या अग्रहणित स्रोत होते हैं। भूखे जानवर के लिए भोजन प्राथमिक (सकारात्मक) पुनर्बलन है।

दूसरी ओर गौण पुनर्बलन के सीखे हुए या अधिग्रहित स्रोत हैं। एक गौण पुनर्बलन का सीखने का नियम है कि उसे प्राथमिक पुनर्बलन के साथ युग्मित किया जाना चाहिए। पुनर्बलन का प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि यह कैसे दिया गया है।

(ख) प्रतिपुष्टि या परिणाम का ज्ञान

यह एक अन्य प्रेरणादायक कारक है। यदि आपको परिणाम या प्रतिक्रिया का ज्ञान उपलब्ध कराया जाए तो आपके सीखने की कुशलता में वद्धि होगी। उदाहरण के लिए, टाइपिंग सीखते समय प्रत्येक प्रयास में व्यक्ति के निष्पादन का ज्ञान यह जानने में सहायक होगा कि व्यक्ति ने कहां त्रुटियां की हैं। व्यक्ति तदनुसार उन्हें ठीक करने का प्रयास कर सकता है। यह त्रुटियों को समाप्त करने तथा कार्यनिष्पादन की सटीकता में वद्धि करने में भी सहायक होता है।

परिणाम का ज्ञान, विशेष रूप से सकारात्मक, सीखने को पुनर्बलित करता है तथा रुचि व प्रेरणा बनाए रखता है।

(ग) अभ्यास का वितरण

अभ्यास सत्र की अवधि तथा परीक्षणों के मध्य विश्राम अवधियों का वितरण सीखने की प्रक्रिया को व्यापक स्तर पर प्रभावित करता है। यह पाया गया है कि विस्तत श्रंखला के गतिक कौशलों में अभ्यास उस वक्त अधिक प्रभावी हो जाता है जब उसमें अल्प तथा न्यायोचित विश्राम अंतराल दिए जाते हैं। इसके कारण निरन्तर अभ्यास की तुलना में त्वरित शिक्षण सम्भव होता है। बहरहाल, अभ्यास अवधि को काफी लम्बा नहीं होना चाहिए। बैडमिंटन के खेल में प्राप्त कौशल को अधिक सुधारा जा सकता है यदि छोटे अन्तरालों वाले एक–एक घण्टे के तीन अभ्यास सत्र किए जाएं ना कि तीन घण्टों का एक ही लम्बा अभ्यास सत्र रखा जाए। अभ्यास सत्र को बहुत छोटा या बारम्बार भी नहीं होना चाहिए। इसके कारण कार्य छोटे तथा अर्थहीन भागों में विभाजित हो जाता है।

(घ) सम्पूर्ण एवं आंशिक सीखना

यदि आपने इस सम्पूर्ण पाठ का समग्र रूप से अध्ययन किया है तो इसे याद करना आपके लिए कठिन रहा होगा क्योंकि समग्र रूप से अध्ययन किए जाने की तुलना में भागों में अध्ययन करना आसान होता है। प्रायः तीव्र अध्ययनकर्ताओं के लिए तथा छोटी व अर्थपूर्ण सामग्री, जिसे सम्पूर्ण रूप से (एक ही बार में) आसानी से याद किया जा सके को सीखने के लिए सम्पूर्ण सीखने की पद्धति को उचित माना जाता है। किन्तु यदि विषय–वस्तु अत्यधिक लम्बी है तो पहले उसका अध्ययन भागों में किया जाना चाहिए और तत्पश्चात सम्पूर्ण रूप से।

(ङ) अर्थपूर्णता

अर्थपूर्ण शब्दों यथा बिल्ली, कुत्ता, मकान, घर आदि को याद करने का प्रयास कीजिए और लिल्बी, ताकु, नकाम, रध आदि अर्थहीन शब्दों को याद कीजिए अर्थपूर्ण शब्दों का

अध्ययन आपकी सीखने की कुशलता में वद्धि करता है। यदि अध्ययन की जाने वाली सामग्री अर्थपूर्ण है तो सीखने की गति तीव्र हो जाती है। सामग्री जितनी अधिक अर्थपूर्ण होगी उसे याद करने के लिए उतने ही कम प्रयास या अभ्यास सत्रों की आवश्यकता होगी।

(च) रुचि व अभिवतियां

प्रभावी सीखने का एक महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व है, अध्ययन की जाने वाली सामग्री के प्रति अध्ययनकर्ता की अभिवति। उदाहरण के लिए यदि आपमें सीखने व अध्ययन के प्रति रुचि है तो, यह रुचि आपको लक्ष्य प्राप्ति में सहायक होगी, आप सीखने के पाठों के प्रति सकारात्मक अभिवति विकसित कर लेंगे तथा अध्ययन तथा उसे याद करने के लिए निष्ठापूर्ण प्रयास करेंगे। यदि व्यक्ति के मन में यह भावना उत्पन्न हो जाए कि किसी भी सीखने का कोई सार्थक परिणाम नहीं होगा तो उसके सीखने की प्रगति की गति (दर) कम होगी।

पाठगत प्रश्न 6.5

1. शिक्षण को प्रभावित करने वाले कारकों की सूची बनाइए

   (क) ——————————

   (ख) ——————————

   (ग) ——————————

   (घ) ——————————

2. निम्नलिखित का मिलान करें :

(क) प्रतिक्रिया	(i) अभ्यास सत्र की अवधि
(ख) अभ्यास का वितरण	(ii) अध्ययन सामग्री की मात्रा
(ग) सम्पूर्ण बनाम आंशिक अध्ययन	(iii) परिणामों का ज्ञान
(घ) शिक्षण सामग्री की अर्थपूर्णता	(iv) बेहतर एवं तीव्र अध्ययन

3. निम्नलिखित वाक्यांश सही हैं या गलत–

   (क) यदि व्यक्ति की अध्ययन सामग्री में रुचि है तो अध्ययन में अधिक समय लगेगा। सही/गलत

   (ख) व्यक्ति के स्तर पर प्रेरणा सीखने को बेहतर बनाती है। सही/गलत

   (ग) सीखने में पुरस्कार व दण्ड का महत्व नहीं होता है। सही/गलत

   (घ) प्राथमिक पुनर्बलक सीखे जाते हैं। सही/गलत

   (ङ) दण्ड एक सकारात्मक पुनर्बलन है। सही/गलत

   (च) पुरस्कार तथा दण्ड अनुकूलन में प्रयोग होते हैं। सही/गलत

6.5 सीखने संबंधी तथ्य

सीखना, अध्ययन के सबसे व्यापक अनुसंधानात्मक क्षेत्रों में से एक है। जिसके परिणामस्वरूप, अनुसंधानकर्ताओं ने इसमें विविध प्रकार के तथ्यों को पाया है जो सीखने की प्रक्रिया के क्षेत्र में विलक्षण हैं। आपने इनमें से कुछ के संबंध अनुकूलन तथा सीखने को प्रभावित करने वाले कारक विषय में पढ़ा है। इस खण्ड में आप तीन अन्य महत्वपूर्ण तथ्यों का अध्ययन करेंगे। ये तीन तथ्य हैं– सीखने की तत्परता, सीखने की अक्षमता, तथा सीखने का स्थानान्तरण।

शिक्षण के लिए तत्परता

आपने यह देखा होगा कि विभिन्न जीव तथा जानवरों (यथा मनुष्य, चूहा, बिल्ली, कुत्ता) में उनकी संवेदी तथा गतिक क्षमताएं भिन्न–भिन्न होती हैं। कुत्ते की अति संवेदनशील नाक होती है। इसी प्रकार बिल्ली तीव्र गति से छलांग लगा सकती है तथा दौड़ सकती है। विभिन्न प्रजातियों में पाई जाने वाली विविधता की गहन संविक्षा करने पर पता चलता है कि जीव विशिष्ट जैविक सीमाओं के अन्तर्गत क्रियाएं करते हैं। प्रत्येक जीव प्रस्तुत क्रिया को सीखने के लिए समान रूप से तैयार या तत्पर नहीं होता है। जीवों के भिन्न–भिन्न रूप से प्रतिक्रिया करने की क्षमता होती है। इस प्रकार सीखने की सम्भावना तथा सुगमता, किसी दिए गए कार्य के प्रति जीव की ओर से तत्परता की मात्रा द्वारा निर्धारित होती है। सभी जीव सभी प्रतिक्रियाओं या कार्यों के लिए समान रूप से तैयार नहीं हाते हैं। यह सीखने का एक मुख्य निर्धारक तत्व बन जाता है।

शिक्षण अक्षमता

यह एक विकति है जिसके परिणामस्वरूप पढ़ने, लिखने, बोलने, गणित के सवाल हल करने में कठिनाईयां उत्पन्न होती हैं। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में कुछ समस्याएं होने के कारण इस प्रकार की कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं। यह संवेदी अक्षमता या किसी प्रकार की मानसिक/शारीरिक अपंगता से संबंधित भी हो सकती है। ये समस्याएं औसत या उत्कष्ट बौद्धिकता वाले बच्चों में भी हो सकती है। यदि इनका उपचार न किया जाए तो ये समस्याएं चलती रहती हैं तथा आगामी वर्षों में व्यक्ति के व्यक्तित्व व सामाजिक विकास को प्रभावित करती हैं। सीखने की अक्षमता वाले बच्चों के मुख्य लक्षण हैं–लिखने व पढ़ने में कठिनाई, ध्यान केन्द्रण संबंधी समस्या, खराब गतिक समन्वय, दष्टिकोणात्मक विकति, अनुदेशों का अनुसरण करने में कठिनाई। उनके समक्ष आने वाली एक महत्वपूर्ण समस्या है पठन अक्षमता जिसमें बच्चा वर्णों को पहचानने में विफल रहता है। (उदाहरण के लिए कमल तथा कलम में विभेद करना)। इस प्रकार के बच्चों की सहायता के लिए निवारक सीखने का उपयोग किया जाता है।

6.6 सीखने का स्थानान्तरण

सीखने का स्थानान्तरण एक प्रक्रिया है जिसमें ज्ञान, कौशल, आदतों, अभिवत्तियों या अन्य प्रतिक्रियाओं को एक सीखने की स्थिति, जिसमें प्रारम्भिक तौर पर उसे प्राप्त किया

गया है, से दूसरी सीखने की स्थिति में लागू किया जाता है या ले जाया जाता है। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति जिसने साइकिल चलाना सीख लिया है, उसे स्कूटर चलाना सीखने में आसानी होती है। इसका अर्थ है कि एक कार्य का अनुभव या निष्पादन सीखने के अन्य कार्य के निष्पादन को भी प्रभावित करता है। वस्तुओं को पहचानने, सबंधों के विवेक तथा दैनिक जीवन के अनुभवों की अवधारणा निर्धारण में सीखने का स्थानान्तरण सुविधा उपलब्ध कराता है। इस प्रकार के स्थानान्तरण का प्रभाव न केवल बौद्धिक क्रियाओं में तथा जटिल गतिक कौशलों में पड़ता है बल्कि व्यक्तियों के मनोभावात्मक प्रतिक्रियाओं तथा अभिवत्तियों पर भी पड़ता है। यदि सीखने का स्थानान्तरण न हो तो प्रत्येक कार्य को नए सिरे से सीखने की आवश्यकता होगी।

शिक्षण हस्तांतरण के प्रकार

सीखने का स्थानान्तरण नए कार्य के सीखने को तीन रूपों में प्रभावित करता हैः–

(क) सकारात्मक, (ख) नकारात्मक, (ग) शून्य

(क) सकारात्मक स्थानान्तरण

जब किसी कार्य के सीखने से दूसरे कार्य की सीखने की प्रक्रिया आसान हो जाए तो वहां सकारात्मक स्थानान्तरण प्रभाव नज़र आता है। व्यक्ति ने एक विषय या कार्य को सीखने में जो ज्ञान प्राप्त किया है वह अन्य विषय या कार्य को सीखने में सहायक होता है। सकारात्मक स्थानान्तरण में ज्ञान या कौशल को आगे ले जाना भविष्य के शिक्षण में लाभदायक होता है।

उदाहरण के लिए, जब बच्चा मकान शब्द बोलना सीख जाता है तो 'दुकान' शब्द सिखाए बिना वह इसे बोल लेता है तथा उपर्युक्त घ्वनि नियम को लागू कर लेता है। इसी प्रकार, साइकल चलाने का कौशल स्कूटर चलाने को सीखनें में सहायक होता है। जोड़ व घटा के नियमों को सीखने के पश्चात बाजार से खरीददारी करने पर व्यक्ति आसानी से अपने पैसे तथा वापस प्राप्त वकाया पैसों का हिसाब रख पाता है। कार चलाने की प्रक्रिया को सीखने से ट्रक या बस को चलाना सीखना आसान हो जाता है। इन सभी मामलों में पूर्ववर्ती सीखने का अनुभव आगामी सीखने वाले अनुभवों को सुलभ बनाते हैं।

सकारात्मक स्थानान्तरण तब होता है जब दो कार्यों या शिक्षण परिस्थितियों से सम्भावित प्रतिक्रियाएं समान हों। बहरहाल, सकारात्मक स्थानान्तरण की सर्वाधिक मात्रा तब प्राप्त की जाती है जब उद्दीपन तथा प्रतिक्रिया तत्व पिछले व नए सीखने की स्थितियाँ समान हों। उदाहरण के लिए, सीखने के उद्दीपन अनुक्रिया संबंध $5 \times 8 = 40$ तथा $8 \times 5 = 40$ के समान है। इस मामले में, उद्दीपन अनुक्रिया संबंधों के तत्वों के मध्य समानता है।

(ख) नकारात्मक स्थानान्तरण

कई बार ऐसे मामले सामने आते हैं जब पूर्ववर्ती सीखना आगामी सीखने में अवरोध उत्पन्न करता है। ऐसे मामलों में एक कार्य में प्राप्त ज्ञान या अनुभव आगे अन्य सीखने

में अवरोध उत्पन्न करता है। नकारात्मक स्थानान्तरण के परिणामस्वरूप एक कार्य का निष्पादन आगामी कार्य के निष्पादन में बाधा उत्पन्न कर सकता है। उदाहरण के लिए, बच्चा जब 'लड़का' शब्द का विलोम 'लड़की' सीखता है तो वह इसी अनुभव को चूहा शब्द के लिए प्रयोग करते हुए इसका विलोम चूही लिखता है।

नकारात्मक स्थानान्तरण सामन्यतः तब उत्पन्न होता है जब पूर्ववत में सीखे गए कार्य तथा नए कार्य में प्रेरणा समान या तुलनात्मकीय हों किन्तु प्रतिक्रियाएं समान न हों।

(ग) शून्य स्थानान्तरण

ऐसे उदाहरण भी हैं जहां एक कार्य का सीखना दूसरे कार्य के निष्पादन में व्यक्ति की क्षमता को किसी भी रूप में प्रभावित नहीं करता है। यह तब होता है जब कार्य उद्दीपनों तथा प्रतिक्रियाओं की दष्टि से असमान हो। शून्य स्थानान्तरण में नई परिस्थिति में निष्पादन पूर्ववर्ती सीखने से न तो सहायता प्राप्त करती है और ना ही अवरुद्ध होता है। इतिहास का शिक्षण प्राप्त करने से व्यक्ति अपनी संस्कति के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकता है किन्तु यह गणित का ज्ञान प्राप्त करने में कोई प्रभाव नही पड़ता है। इसी प्रकार फुटबाल के खेल में अपने कौशल को विकसित करने से व्यक्ति के निबंध लेखन के कौशल में सुधार लाने पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। टाइपिंग सीखने की प्रक्रिया का चित्रकारी सीखने की प्रक्रिया पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

पाठगत प्रश्न 6.6

१. शिक्षण का स्थानान्तरण क्या है?

२. सकारात्मक स्थानान्तरण, नकारात्मक स्थानान्तरण तथा शून्य स्थानान्तरण के एक–एक उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।

क. ....

....

....

ख. ....

....

....

ग. ....

....

....

आपने क्या सीखा

- सीखने को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके अन्तर्गत अभ्यास या अनुभव के परिणामस्वरूप व्यवहार में सापेक्ष रूप से स्थायी परिवर्तन उत्पन्न होता है। यह एक निरन्तर व सतत् प्रक्रिया है जो कार्यनिष्पादन में सुधार लाती है।
- सीखना अन्य अवधारणाओं यथा परिपक्वता, प्रत्यावर्तित क्रियाएं तथा मूल प्रवत्यात्मक व्यवहार से भिन्न है। शिक्षण अनुभव का परिणाम है जबकि परिपक्वता प्रकति के जैविक हैं।
- परिपक्वता सीखने के लिए तत्परता उपलब्ध कराती है तथा तंत्रिकी तथा मांस–पेशीय विकास के कारण उत्पन्न होती है, जबकि सीखने का अभ्यास तथा अनुभव से प्राप्त किया जाता है। सीखना तथा परिपक्वता दोनों के कारण व्यवहार में परिवर्तन होता है।
- व्यवहार के कतिपय जटिल प्रतिकति है, जो जन्मगत होते हैं, उन को मूल प्रवति कहते हैं।
- प्रतिवर्त ज्ञानेन्द्रिय की उत्तेजना के प्रति मांसपेशी या ग्रंथि की प्रत्यक्ष व तत्काल प्रतिक्रिया है।
- अनुकूलन संबद्ध सीखने का एक रूप है। शास्त्रीय अनुकूलन में एक तटस्त अनुकूलन उद्दीपन को अनानुकूलित उद्दीपन के साथ युग्मित किया जाता है जो एक अनानुकूलित प्रतिक्रिया को जन्म देता है। बारम्बार दो उद्दीपनों के युग्मन के पश्चात अनुकूलित उद्दीपन अनानुकूलित प्रतिक्रिया के समान प्रतिक्रिया को उत्पन्न करता है। इस उत्पन्न प्रतिक्रिया को अनुकूलित प्रतिक्रिया कहते हैं।
- अनुकूलन से संबंधित कुछ अवधारणाएं हैं:– सामान्यीकरण, विभेदन, विलोपन तथा सहज प्रतिलाभ।
- सक्रिय अनुकूलन में प्रतिक्रिया पुरस्कार पाने या दण्ड से बचने में सहायक सिद्ध होता है।
- कौशल शिक्षण में मांस–पेशी प्रतिक्रिया संबंधी संचालन उत्पन्न करने के लिए परिवेशीय तथा आन्तरिक शारीरिक उद्दीपन के मध्य समन्वय की आवश्यकता होती है। यह तीन स्तरों यथा संज्ञानात्मक, संयोजन तथा स्वचालन पर उत्पन्न होता है।
- मौखिक सीखने में शब्दों की पहचान जैसे बच्चों द्वारा शब्दों का उच्चारण करना, वाक्य बनाने के लिए उन्हें जोड़ना, शब्दों के माध्यम से अर्थ व्यक्त करना शामिल हैं।
- अवधारणा सीखने, वस्तुओं की विशेषताओं या समान गुणों की दष्टि से उन्हें वर्गीकत करने की व्यक्ति की क्षमताओं का विकास करती है।
- सामाजिक सीखने में नई अभिवतियों, सामाजिक नियमों का शिक्षण तथा मॉडलिंग के माध्यम से समाज के सामाजिक रूप से स्वीकार्य प्रतिकति के अनुसार रहने तथा व्यवहार करना शामिल है।

- सीखने का स्थानान्तरण एक प्रक्रिया है जिसमें ज्ञान, कौशल, आदतों, अभिवत्तियों या अन्य प्रतिक्रियाओं को एक सीखने की स्थिति, जिसमें प्रारम्भिक तौर पर उसे ग्रहरण किया गया है, से दूसरी सीखने की स्थिति में लागू किया जाता है या ले जाया जाता है।
- सकारात्मक स्थानान्तरण में, एक स्थिति में सीखना अन्य सीखने की स्थिति में सुधार उत्पन्न करती है।
- नकारात्मक स्थानान्तरण में एक स्थिति में सीखने की अन्य स्थिति में सीखने को बाधित करती है।
- शून्य स्थानान्तरण में एक स्थिति में सीखना दूसरी स्थिति में सीखने को प्रभावित नहीं करती है क्योंकि दो परिस्थितियों के उद्दीपनों तथा प्रतिक्रिया में कोई सम्बन्ध नहीं होता है।
- सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों में शामिल हैं:– पुरस्कार व दण्ड, प्रतिक्रिया या परिणाम का ज्ञान, अभ्यास का वितरण, शिक्षण कार्य का विभाजन, अर्थपूर्णता, रुचि तथा अभिवत्ति तथा प्रोत्साहन।

पाठान्त प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के संक्षेप में उत्तर दीजिए:

1. उल्लेख कीजिए कि सीखना कैसे होता है?
2. निम्नलिखित अवधरणाओं में अन्तर बताइए:

   (i) सीखना तथा परिपक्वता (ii) शिक्षण, प्रतिवर्त तथा मूल प्रवति
3. अनुकूलन के दो प्रमुख प्रकारों का वर्णन कीजिए।
4. आपके अनुसार कौन सा कारक सीखने को सबसे अधिक प्रभावित करता है? और कैसे?
5. दैनिक जीवन में सीखने के स्थानान्तरण का क्या महत्व है।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

6.1

1. रिक्त स्थानों को भरें:

   अपेक्षाकत, स्थायी, व्यवहार, अभ्यास, अनुभव
2. सही या गलत

   (क) गलत (ख) सही (ग) सही (घ) गलत

6.2

रिक्त स्थानों को भरें:

(क) तत्परता (ख) नहीं (ग) अभ्यास

(घ) परिपक्वता, सीखना (ङ) उद्दीपन, प्रत्यक्ष, तत्काल

6.3

1. (क)–(ख), (ख)–(क), (ग)–(ङ), (घ)–(ग), (ङ)–(च), (च)– (घ)

6.4

1. (क) सीखना, निष्पादन

   (ख) ग्राफ, अभ्यास की इकाइयां, सीखने की मात्रा

2. (क) सही (ख) सही (ग) गलत

6.5

1. (क) प्रतिक्रिया या परिणाम का ज्ञान (ख) अभ्यास का वितरण

   (ग) अर्थपूर्णता (घ) प्रेरणा

2 (क)– iii, (ख)– i, (ग)– ii, (घ)– iv

3. (क) गलत, (ख) सही, (ग) सही, (घ) गलत, (ङ) गलत, (च) सही

6.6 1. सीखने का हस्तांतरण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा पूर्ववर्त में सीखे गए कौशलों का प्रयोग एक शिक्षण स्थिति से दूसरी शिक्षण स्थिति में किया जाता है।

2. (क) रेखाचित्र के शिक्षण से लिखने के शिक्षण में सहायता मिलती है–सकारात्मक हस्तांतरण

(ख) बाएं हाथ की कार चालन प्रक्रिया को सीखने से दाएं हाथ की कार चालन प्रक्रिया को सीखने में बाधा उत्पन्न होती है–नकारात्मक शिक्षण।

(ग) फुटबाल खेलने का सीखना निबंध लेखन के सीखने को प्रभावित नहीं करता है– शून्य हस्तांतरण

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. खण्ड 6.1 का संकेत लें
2. खण्ड 6.2 का संकेत लें
3. खण्ड 6.3 का संकेत लें
4. खण्ड 6.5 का संकेत लें
5. खण्ड 6.6 का संकेत लें

7

स्मति तथा विस्मति

क्या आपको सकूल में अपना पहला दिन याद है?

आप पिछले हफ्ते बाजार किस दिन गए थे?

क्या आप अपने दोस्तों के नाम बता सकते हैं?

हमारे दिन प्रतिदिन के जीवन में लगभग सभी गतिविधियां किसी न किसी रूप में स्मति से संबंध रखती हैं। स्मति का लोप अर्थात व्यक्ति के स्वयं का लोप। शिक्षण का कोई अर्थ नहीं रह जाता है यदि उसे व्यक्ति द्वारा याद न रखा जा सके। यह केवल स्मति की क्षमताओं के कारण ही सम्भव है कि हम विभिन्न घटनाओं, अनुभवों, परिस्थितियों, लोगों तथा वस्तुओं से संबंध रख पाते हैं। इसके अतिरिक्त हम समझ का भी प्रयोग करते हैं जो विभिन्न परिप्रेक्ष्यों तथा विभिन्न अवसरों पर विकसित होती हैं। इस प्रकार स्मति समय व स्थान के दबावों के बावजूद भी इनके प्रचालन को संभव बनाती है।

एक बच्चा अपनी कक्षा में कुछ सीखता है तथा उसका प्रयोग बाजार में या घर या किसी अन्य स्थान पर करता है। स्मति शक्ति विविध अनुभवों के मध्य सम्पर्क स्थापित करती है। यह एक उत्कष्ट मानसिक क्षमता है– लगभग जादुई सी है। सामाजिक संबंधों को बनाने ज्ञानात्मक सक्षमताओं (मानसिक क्षमताएं) में विशेषज्ञता प्राप्त करने तथा विभिन्न समस्याओं को सुलझाने के लिए इसकी आवश्यकता पड़ती है। कई बार ऐसे अवसर भी आते हैं जब हमारी स्मति शक्ति विफल हो जाती है तथा हम कोई नाम, एक फार्मूला भूल जाते हैं या व्यक्ति को पहचान नहीं पाते हैं। स्मति का अध्ययन मनोविज्ञान में अनुसंधान के सबसे पुराने क्षेत्रों में से एक है। इस पाठ में हम अध्ययन करेंगे कि हमारी स्मति शक्ति कैसे कार्य करती है, हमारी स्मति क्षमताओं को बढ़ाने व कम करने वाले कारक कौन से हैं तथा स्मति में सुधार लाने के लिए क्या किया जा सकता है।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आपके लिए सम्भव होगाः

- मानव स्मति प्रणाली की प्रकति का उल्लेख करना;
- अल्पकालीन स्मति तथा दीर्घकालीन स्मति तथा प्रतिधारण के मापने की विभिन्न विधियों के मध्य अन्तर करना;
- विस्मति के कारणों का वर्णन करना;
- दिन–प्रति–दिन के स्मतिों के महत्वपूर्ण पहलुओं का उल्लेख करना;
- स्मति की रचनात्मक प्रकति का उल्लेख करना; तथा
- स्मति में संवर्धन के तरीकों का वर्णन करना।

7.1 स्मति का महत्व

स्मति एक असाधारण मानसिक प्रक्रम तथा एक मानसिक प्रणाली है जो उद्दीपनों (बाह्य या आन्तरिक) से सूचना प्राप्त करती है, उसे प्रतिधारण करती है तथा किसी भावी अवसर पर उसे उपलब्ध कराती है। यह विभिन्न अवसरों पर हमारे अनुभवों को निरन्तरता प्रदान करती है। एक क्षण का चिन्तन आपको बता देगा कि आपकी सही स्मति क्रिया के अभाव में जीवन कितना कठिन हो सकता है। आप अपनी स्वयं की पहचान या बोध (समझ) खो सकते हैं कि आप क्या हैं तथा आप हमेशा एक नौसिखिया बने रहेंगे क्योंकि आपके पुराने अनुभवों का आपके लिए कोई मूल्य या महत्व नहीं होगा।

स्मति एक टेप–रिकार्डर के समान लगती है जो एक गीत या संगीत को रिकार्ड करता है तथा जब कभी हम उसकी मांग करते हैं वह उसे सुना देता है। किन्तु हमारी स्मति ऐसा नहीं करती है अपितु वह एक टेपरिकार्डर से अधिक गतिशील तथा बहुमुखी है। जब कोई हमें खास गीत गाने को कहता है और हम उसे गाते हैं तो हम टेपरिकार्डर की तरह कार्य कर रहे होते हैं। किन्तु मानव स्मति अनेक महत्वपूर्ण रूपों में टेपरिकार्डर से भिन्न होती है। उदाहरण के लिए हम केवल मौखिक सामग्री को ही याद नहीं रखते हैं बल्कि दश्य अनुभवों, स्पर्शी प्रभावों, पीड़ा व खुशी की अनुभूतियाँ, गतिक कौशल, घटनाएं, गतिविधियां इत्यादि। दूसरा, सूचना का प्रत्यानयन सटीक रूप से उसी प्रकार से या विभिन्न रूप से हो सकता है। तीसरा, नई सूचना की प्राप्ति व्यापक रूप से इस तथ्य पर निर्भर करती है कि हमारे पास पहले से क्या सूचना उपलब्ध है। चौथा, हम प्राप्त होने वाली सभी सूचनाओं को ना तो प्राप्त करते हैं औ ना ही उन्हें प्रतिधारण करते हैं क्योंकि सूचनाओं को ग्रहण करने में बहुत वरणात्मकता होती है। पांचवां, सभी टेप रिकार्डरों में सूचनाएं एकत्र करने की कुछ सीमा होती है किन्तु मानव स्मति अत्यधिक बड़ी मात्रा में सूचनाएं एकत्र कर सकती है। अन्ततः हमारी स्मति प्रणाली एक सक्रिय प्रणाली है। यह

प्राप्त सूचना पर कार्य करती है। यह सूचना को एकीकत, संवर्धित, संशोधित, छोड़ या पहचान सकती है। यह टेपरिकार्डर की तरह निष्क्रिय नहीं है जो सूचना को केवल उसके मूल रूप में ही प्रस्तुत करता है।

7.2 स्मति के महत्वपूर्ण पहलू

उपर चर्चित मानव स्मति प्रणाली की विशेषताओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि स्मति एक बोधात्मक क्रियाशील मानसिक प्रणाली है। यह सूचना प्राप्त करती है, कूट बनाती है, संशोधित करती है, प्रतिधारित करती है तथा उसका प्रत्यानयन करती है, अब हम इन मदों को और स्पष्ट रूप से समझेंगे।

''कूट बनाने'' से तात्पर्य आने वाले उद्दीपन को एक विशिष्ट तंत्रिका कूट में रूपांतरित करना है जिसे व्यक्ति का मस्तिष्क चालित कर सके।

भण्डारण एक समयावधि के दौरान कूटित सामग्री को प्रतिधारित करना है।

प्रत्यानयन भण्डारित या प्रतिधारित प्राप्त सूचना को बाद में किसी अवसर पर प्राप्त करना है।

स्मति के इन घटकों को चित्र 7.1 पर देखा जा सकता है।

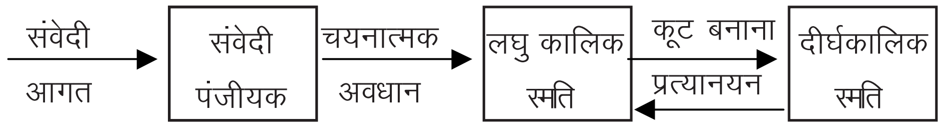

चित्र 7.1: *मानव स्मति प्रणाली का एक सामान्य मॉडल*

हम अपनी ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से सूचना एकत्र करते हैं। प्रत्येक संवेदी कार्यविधि का अपना एक संवेदी रजिस्टर (या संवेदी स्मति) होता है। यह सूचना को एक अति अल्प अवधि के लिए बनाए रखता है और तत्पश्चात उस सूचना को दीर्घकालीन स्मति के रूप में संसाधित करने के लिए भेज देता है। आइये अब हम स्मति की तीन प्रमुख प्रणालियों को समझने का प्रयास करें:

संवेदी स्मति: अपने सामने एक चित्र रखिये और थोड़ी देर उसे सावधानी से देखिये। अब अपनी आँखे बन्द कीजिए और देखिये उस चित्र का स्पष्ट बिम्ब कब तक बना रहता है। एक वस्तु का स्पष्ट बिम्ब हमारे संवेदी स्मति में लगभग 1/2 सेकंड के लिए रहती है। संवेदी स्मति, संवेदी प्रणाली के भीतर उत्पन्न होती है जब वह मस्तिष्क में प्रसारित हो रही होती है।

हम क्या याद (स्मति) रख पाते हैं, यह व्यापक रूप से इस तथ्य पर निर्भर करता है कि संवेदी स्मति में पहुंचने के पश्चात सूचना की क्या स्थिति है। विभिन्न प्रकार के संवेदी

उद्दीपन निरन्तर बड़ी मात्रा में हमारे मस्तिष्क में प्रवेश करते रहते हैं। चूंकि हम इन सभी पर प्रतिक्रिया नहीं कर सकते हैं इसलिए, यह महत्वपूर्ण है कि हमें चयनात्मक रूप से उन तथ्यों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जो महत्वपूर्ण हैं। इस प्रकार की चयनात्मक अवधान के आधार पर सम्भव है। अवधान की प्रक्रिया, पर्यावरण से हमें प्राप्त होने वाली सूचना के आगमन को सीमित कर देती है। अतः चयनात्मक अवधान से सूचना अल्पकालीन स्मति में प्रवेश करती है। अल्पकालीन स्मति इस सूचना को कुछ क्षणों के लिए प्रतिधारण करती है और तत्पश्चात दीर्घकालीन स्मति में प्रसारित कर देता है, जहाँ सूचना को प्रतिधारित करने की अत्यधिक क्षमता है।

पाठगत प्रश्न 7.1

सही विकल्प का चयन करें:

1. स्मरण .... चरणों से निर्मित होता है।

   (क) एक (ख) दो (ग) तीन (घ) चार

2. संवेदी पंजी में दश्य सूचना को क्षीण होने में सामान्यतः लगभग कितना समय लगता है?

   (क) लगभग एक सैकिंड

   (ख) कई संकिंडों से एक मिनट तक

   (ग) एक मिनट

   (घ) समान्यतः एक घण्टा या अधिक

3. स्मति प्रतिरूप में, अल्पकालीन स्मति में तुरंत प्रवेशित सूचना को सर्वप्रथम

   (क) ध्यान दिया जाएगा।

   (ख) भण्डारित किया जाएगा।

   (ग) व्यापक रूप से संसाधित किया जाएगा

   (घ) पुनः प्राप्त किया जाएगा।

7.3 अल्पकालिक स्मति और दीघ्रकालीन स्मति

हम पढ़ चुके हैं कि मानव स्मति तीन अन्तर–संबंधित उपप्रणालियों यथा संवेदी पंजी, अल्पकालीन स्मति तथा दीर्घकालीन स्मति से बना होता है। संवेदी पंजी, जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है, पर्यावरणिक आगत या सूचना को अति अल्प अवधि यथा मिलि

सेकेंड के लिए उपलब्ध करता है। प्रतिधारण, जो भविष्य में सूचना के प्रयोग के लिए आधार का निर्माण करता है, मुख्य रूप से अल्पकालीन स्मति तथा दीर्घकालीन स्मति से संबंधित है। अब हम जानेंगे कि अल्पकालीन स्मति या दीर्घकालीन स्मति क्या हैं?

अल्पकालीन स्मति तथा दीर्घकालीन स्मति की प्रकति व क्रियाविधि भिन्न हैं। इनमें क्षमता, अवधि, प्रतिधारित सूचना के प्रकार, विस्मति के कारणों के आधार पर विभेद किया जा सकता है। ये विभेद तालिका – १ में दर्शाए गए हैं।

अल्पकालीन स्मति

जब आप पढ़ाई कर रहे हों, एक क्षण के लिए ऊपर देखें व अपने आस–पास का अवलोकन करें।

इस क्षण में आपके मस्तिष्क में क्या विचार उत्पन्न हो रहे हैं? क्या आप जानते हैं कि अभी–अभी आपने क्या किया है? आपने अपनी अल्पकालीन स्मति की अन्तर्वस्तु को पहचान लिया है। अल्पकानीन स्मति को ''कार्यकारी स्मति'' भी कह सकते हैं। उदाहरण के लिए आप टेलीफोन डायरी से एक टेलीफोन नम्बर देखते हैं। टेलीफोन पर बात पूर्ण हो जाने के पश्चात आप डायरी को अपनी जेब में रख लेते हैं। डायरी देखना व टेलीफोन नम्बर का उपयोग करना एक अल्पकालीन स्मति है। आप नम्बर डायल करने के पश्चात उसे भूल जाते हैं।

दीर्घकालीन स्मति

क्या आप अपने बचपन के दोस्त का नाम बता सकते हैं? क्या आपने कभी सोचा है कि आप बहुत समय पुरानी बातों/घटनाओं को कैसे याद रख पाते हैं। यह दीर्घकालीन स्मति के कारण सम्भव होता है। संवेदी स्मति तथा अल्पकालीन स्मति अवधि की दष्टि से सीमित नहीं होती हैं। दीर्घकालीन स्मति हमारे जीवन भर बनी रह सकती है। यह अपेक्षाकत बनी रहने वाली स्मति है जिसमें सूचना को बाद में प्रयोग किए जाने के लिए भण्डारित किया जाता है।

तालिका-1: *अल्पकालीन स्मति तथा दीर्घकालीन स्मति की तुलना*

विशेषताएं	**अल्पकानी स्मति**	**दीर्घकालीन स्मति**
क्षमता	7 मदों तक सीमित	असीमित
अवधि	सामान्यतः 30 सेंकंड तक किन्तु विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न हो सकती है।	दिनों से जीवन भर के लिए रख सकती है।
सूचना का प्रकार	दश्य बिम्ब, ध्वनियां, शब्द, वाक्य	अर्थपूर्ण मौखिक सामग्री जीवन की घटनाएं
विस्मति के कारण	नई सूचना द्वारा पुरानी सूचना का विस्थापन, अपर्याप्त	सामग्री का हस्तक्षेप, संगठन

तालिका–1 से यह स्पष्ट है कि जहां अल्पकालीन स्मति की सीमित क्षमता है जो अल्प अवधियों के लिए विद्यमान रहती हैं वहीं दीर्घकालीन स्मति की कोई ज्ञात सीमाएं नहीं हैं। लोगों द्वारा कहानियों व कविताओं को याद रखने में व्यापक स्तर का अन्तर देखा जाता है। वेद मौखिक परम्परा के रूप में एक युग से दूसरे युग में चले आ रहे हैं हमारे यहां ऐसे विद्वान भी हैं जो अभी भी वेदों, रामायण तथा महाभारत को प्रतिधारित किए हुए हैं तथा इनका वाचन कर सकते हैं।

हम यह भी पाते हैं कि अल्पकालीन स्मति में सूचनाएं टुकड़ों में होती हैं जो साधारण तथा अपेक्षाकत कम व्यवस्थित होती हैं। इसके विपरीत, दीर्घकालीन स्मति में सूचना व अनुभवों की व्यापक श्रेणी होती है। ये सामान्यतः अर्थपूर्ण रूप से संगठित होती हैं तथा इसमें व्यक्तिगत जीवन की घटनाओं से लेकर अमूर्त सैद्धान्तिक ज्ञान तक की श्रेणी की सूचनाओं की व्यापक श्रंखला विद्यमान हैं।

अन्ततः, इन दो स्मति प्रणालियों में विस्मति के कारण भी भिन्न हैं। अल्पकालीन स्मति प्रणाली में नई सूचनाओं का प्रवेश पुरानी सूचनाओं को विस्थापित कर देता है। इसके कारण पुरानी सूचना का विस्मति हो जाता है।

दीर्घकालीन स्मति में विभिन्न प्रकार की घटनाएं, अनुभव तथा उद्दीपन प्रतिधारित रहते हैं। विस्मति अनेक कारकों के परिणामस्वरूप होता है जिनमें एक सूचना का दूसरी सूचना में व्यतिकरण, प्रतिधारित सामग्री के सुसंगठन का अभाव तथा/या पुनः प्राप्ति के समय उपयुक्त संकेत की अनुपलब्धता शामिल हैं।

प्रत्यक्षदर्शी स्मति

मानव स्मति एक सक्रिय प्रक्रम के रूप में एक मुख्य चुनौती उस समय उत्पन्न करती है जब हम दुर्घटनाओं या अन्य घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी घटकों को एकत्र करते हैं। लोग कई बार देखी गई घटना का वर्णन उस रूप में करते हैं जिस रूप में वे स्वयं चाहते हैं और उनकी स्मति में भी वही प्रदर्शित होता है।

यह देखा गया है कि हम हमेशा सक्रिय रूप से अपनी स्मतियों को संसाधित करते हैं तथा उन्हें उस क्रम या उन विश्वासों में समायोजित करने का प्रयास करते हैं जो परिस्थिति के संबंध में हम धारण करते हैं। जब हम एक स्मति के सम्पूर्ण अर्थ व परिदश्य को देखते हैं, तभी घटनाओं की वास्तविकता का निर्णय कर पाते हैं। अनेक मामलों में विस्तत वर्णन में स्मति के अति महत्वपूर्ण पक्ष शामिल नहीं होते।

आत्मकथात्मक स्मति

इस प्रकार की स्मति लोगों के स्वयं के व्यक्तिगत अनुभवों को निर्देशित करती है। अध्ययन दर्शाते हैं कि आत्मकथात्मक स्मति तीन विभिन्न स्तरों पर संगठित होती हैं। उच्चतम स्तर में जीवनभर की अवधि शामिल है। यह वे समय अवधियां हैं जिनमें

व्यक्तिगत जीवन के कुछ पहलू यथोचित रूप से विद्यमान रह जाते हैं (उदाहरण के लिए किसी के साथ रहना, किसी संगठन विशेष में कार्य करना)। तीसरा स्तर घटना–विशिष्ट ज्ञान का स्तर है। इसमें एक व्यक्ति के जीवन की घटना विशेष के ब्यौरे शामिल हैं। जैसे–जैसे हम अपने जीवन से गुजरते हैं हम अपनी व्यक्तिगत स्मतियों को विभिन्न चरणों तथा अवधियों में संगठित करते हैं।

प्रतिधारणा का मापन

स्मति का मापन दो प्रकार के उपायों की सहायता से किया जाता है यथा सुस्पष्ट तथा अस्पस्ट। सुस्पष्ट उपायों में अपेक्षा होती है कि व्यक्ति कुछ प्रस्तुत सूचना को स्मति में भण्डारित रखे। व्यक्ति पूर्व के अनुभवित घटनाओं या सामग्री के विवरण को याद करने के सुविचारित प्रयास करता है। इस प्रकार, स्मति के प्रत्यक्ष उपाय का प्रयोग किया जाता है। स्मति के अस्पष्ट (अप्रत्यक्ष) उपाय वह है जिसमें व्यक्ति को कुछ ऐसा कार्य करना होता है जिसमें स्मति को पुनः प्राप्त करने के लिए सुविचारित या इरादतन प्रयास नहीं किए जाते हैं। अब हम विस्तार में इनमें से कुछ उपायों पर चर्चा करेंगे।

सुस्पष्ट उपाय

पुनःस्मतिः पुनःस्मति में व्यक्ति पहले शब्दों की एक सूची को याद करता है। तब उसे याद की गई सामग्री को पुनः स्मति करने की आवश्यकता होती है। सही ढंग से पुनः प्राप्त की गई मदों की संख्या सुस्पष्ट स्मति के उपाय बन जाते हैं। कहानी के पुनः उत्पादन की परिशुद्धता सुस्पष्ट स्मति के उपाय उपलब्ध कराती है।

पहचानः पहचान के रूप में व्यक्ति को पूर्व में याद मदों या शब्दों के साथ नई मदों को मिश्रित करके प्रस्तुत किया जाता है तथा उसका कार्य पूर्व में याद की गई मदों को पहचानना होता है। सामान्यतः पहचान पुनःप्राप्ति की तुलना में अधिक संवेदनशील उपाय है।

अस्पष्ट उपाय

शब्द पूरा करनाः इस कार्य में व्यक्ति को विखण्डित शब्द प्रस्तुत किए जाते हैं। व्यक्ति को उस विखण्डित शब्द को पूरा करना होता है। इस प्रकार ल–– का एक विखण्डित शब्द है।

उपक्रामण कार्यः इस कार्य में पष्ठभूमि गतिविधियां (यथा एक कहानी पढ़ना) एक विशिष्ट प्रकार से शब्द के विखण्डन को पूरा करने में सहायक होता है। पष्ठभूमि कार्य उपक्रामण है।

ऊपर उल्लिखित दोनों कार्यों में व्यक्ति को सुस्पष्ट रूप से स्मति करने को नहीं कहा गया है।

7.4 विस्मति के कारण

स्मति एक अति जटिल मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है तथा भण्डारण प्रक्रिया तथा पुनःप्राप्ति की दष्टि से किसी प्रकार की यांत्रिक अनुरूपता इसे कम कर देती है। इस प्रक्रिया में सूचना न केवल उस रूप में प्रतिधारित की जाती है जिसमें वह मूल रूप से होती है बल्कि उसमें परिवर्तन तथा संशोधन भी हो सकते हैं। हम कई बार स्मति करने में विफल होते हैं, यह मस्तिष्क क्षत के कारण होता है जिसके परिणामस्वरूप स्मति क्रियाएं कार्य करना बंद कर देती हैं, जिसे स्मति–लोप कहते हैं। किन्तु लोग अपने सामान्य जीवन चक्र में भी बातें भूल जाते हैं। यद्यपि याद रखना तथा भूल जाना दो प्राकतिक प्रक्रियाएं हैं जो हर किसी के जीवन को प्रचालित करने वोल अनेक कारकों पर निर्भर करती हैं।

विस्मति के कारकों को समझने से स्मति की प्रकति को स्पष्ट करने में सहायता मिलती है और वह उसे अधिक प्रभावी बनाती है। अब हम कुछ महत्वपूर्ण कारकों का अध्ययन करेंगे जो प्रतिधारण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

(i) स्मति चिह्नों का क्षयः सामान्यतया देखा जाता है कि बहुत सी घटनाओ और अनुभवों की स्मति समय के साथ धूमिल हो जाती हैं, जैसे एक फोटो का रंग सूर्य की रोशनी में उड़ जाता है।

अनेक पूर्ववर्ती मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस धारणा को विस्मति का एक सामान्य कारण बताया गया है। बहरहाल, लोग बिना किसी विकति के अपनी अधिक आयु में भी प्रारम्भिक बचपन की अनेक घटनाएं याद रखते हैं। इसलिए, क्षय को विस्मति का सामान्य कारण नहीं समझा जा सकता है। बहरहाल, यह पाया गया है कि संवेदी स्मति तथा अल्पकालीन स्मति में जब पूर्वाभ्यास की कमी की स्थिति में क्षय एक महत्वपूर्ण कारक है।

(ii) हस्तक्षेपः हम जो कुछ भी सीखते हैं वह किसी परिप्रेक्ष्य में सीखते हैं। इस प्रकार, सीखने का प्रत्येक अनुभव कुछ अन्य अनुभवों, जो इससे पहले या इसके बाद आते हैं, से प्रभावित होता है। जब इस प्रकार के प्रभाव प्रतिकूल होते हैं तो इन्हें हम हस्तक्षेप कहते हैं। जब पूर्व में सीखी बातें प्रतिकूल रूप से वर्तमान मदों को प्रभावित करते हैं तो उसे अग्रलक्षी हस्तक्षेप कहते हैं तथा जब वर्तमान अनुभव पूर्ववर्ती स्मतियों को प्रभावित करता है तो उसे पूर्वलक्षी हस्तक्षेप कहते हैं। यह देखा गया है कि सीखी गई दो सामग्रियों में समानता जितनी ज्यादा होगी उनके मध्य हस्तक्षेप का स्तर उतना ही ज्याद होगा।

(iii) प्रेरणाः 'फ्रॉयड' के अनुसार विस्मति इसलिए होता है क्योंकि घटना सुखद नहीं होती है। हम भूल जाते हैं क्योंकि हम याद नहीं रखना चाहते हैं। यदि हम स्मतियों को पसंद नहीं करते हैं तो हम उन्हें हटा देते या अपनी चेतना से अलग कर देते हैं। फ्रॉयड इस प्रक्रिया को दमन कहते हैं। यह एक सामान्य अनुभव है कि हम

आमतौर पर हम दुखद घटनाओं की तुलना में सुखद घटनाओं को अधिक याद रखते हैं। इसके अतिरिक्त, हममें पूर्ण कार्यों की तुलना में अपूर्ण कार्यों को याद रखने की एक दढ़ प्रवति होती है। इसे जेगार्निक प्रभाव कहते हैं। मानव स्मति में मूड की भूमिका दर्शाती है कि हमारे जीवन के प्रभावपूर्ण पहलू भी व्यापक रूप से हमारी स्मति को स्वरूप प्रदान करते हैं।

(iv) प्रत्यानयन विफलता: यह पाया गया है कि बहुत सा विस्मति, विशेष रूप से दीर्घकालीन स्मति में, उन्हें पुनःयाद करते समय प्रत्यानयन संकेतों के अभाव या अनुपलब्धता के कारण होते हैं। सीखने (कूट करने) के अवसर से पुनः याद (प्रतयानयन) के समय तक शारीरिक तथा मानसिक परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन के कारण भी प्रतिधारण में कमी आ जाती है। कई बार परीक्षा के दौरान हम ''शून्य'' हो जाते हैं।

रचनात्मक प्रक्रम के रूप में स्मति

प्रत्यानयन में विफलता की दष्टि से विस्मति का अर्थ यह संकेत देता है कि स्मति भण्डार स्थिर है। बहरहाल, ऐसा नहीं है। स्मति तथा स्मरण विशेष रूप से एक रचनात्मक प्रक्रम है। सारांश में पुनरोत्पादन की प्रकति रचनात्मक होती है। स्मति की रचनात्मक प्रकति किसी घटना के पुनर्स्मरण में स्पष्ट दिखाई देती है। यदि आप अपने दोस्तों के साथ देखी फिल्म की कहानी की तुलना करते हैं तो पाएंगे लोगों ने उसी कहानी को कितने भिन्न ढंग से रच दिया है। वास्त में कभी–कभी अफवाहें भी कुछ ब्योरों को उल्लेखित तथा उन्हें आत्मसात करने की प्रवति को दर्शाती है। यह प्रतीत होता है कि पुनःस्मति प्रत्यानयन व पुनर्निमाणा का मिश्रण है। तीन मुख्य प्रवतियां हैं–तीक्ष्ण करना, सतह पर लाना तथा आत्मसात्करण।

7.5 स्मति में संवर्धन के तरीके

यह एक सामान्य अनुभव है कि आमतौर पर विस्मति लोगों के लिए समस्या उत्पन्न करता है। प्रतिदिन की वार्ता, कक्षा में भागीदारी, परीक्षा में निष्पादन, साक्षात्कार, प्रस्तुतीकरण तथा बैठकों में सम्प्रेषण हम पर सूचना को याद रखने की आवश्यकता दर्शाते हैं। ऐसा करने में विफलता के कारण हमें बुरे परिणामों से गुजरना होता है। जो हम सभी अपने जीवन में अलग–अलग मात्रा में अनुभव करते हैं। जिसके कारण हम सभी अपनी स्मति में संवर्धन करना चाहते हैं। स्मति सहायकों तथा संबंधित तकनीकों के अध्ययन को स्मतिगत कहते हैं। स्मति में सुधार लाने के लिए प्रयोग होने वाली कुछ तकनीकें निम्नानुसार हैं:–

1. **संगठन:** सीखने वाले व्यक्ति को याद करने के लिए सामग्री तैयार करते समय उसे किसी रूप में संगठित कर लेना चाहिए। प्राकतिक संदर्भ के सजन द्वारा ऐसे संगठन में मदद मिलती है तथा याद की गई सामग्री को प्रत्यानयन करते समय संगत

संकेत भी प्राप्त होते हैं। यदि सामग्री में प्राकतिक संगठन का अभाव होता है तो सीखने वाले द्वारा कत्रिम संगठन का सजन किया जाना चाहिए।

2. **एकाग्रता:** विस्मति का एक मुख्य कारण है सामग्री को संसाधित करते समय अवधानिक स्रोतों का अपर्याप्त आवंटन होना। जिसके परिणामस्वरूप सामग्री भण्डारित नहीं होती है तथा आवश्यकता पड़ने पर हम उसे पुनःस्मति नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार सामग्री के संसाधित किए जाने के समय ध्यान केन्द्रित करने से हम भण्डारण व पुनःस्मति की सम्भावनाओं को बढ़ा सकते हैं।

3. **लोकाई की पद्धति:** जैसा कि नाम से प्रतीत होता है इस तकनीक में स्थान या कार्य से संबंधों का प्रयोग किया जाता है। इसका दश्यीकरण कार्य के पुनः स्मति करने में संकेत उपलब्ध कराता है। किसी क्रिया को उचित ढंग से चयन करके व्यक्ति दिन के किसी भी बिन्दु पर उस स्मति का प्रयोग कर सकता है। ऐसे स्मति कूटों का प्रयोग करने से व्यक्ति नई सूचना तथा पूर्व ज्ञान के मध्य सुस्पष्ट तथा विशिष्ट संबंध बना सकता है। प्रसंग से संबंध बनाए रखने से संकेत बहुत प्रभावित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति को एक भवन, उसके कमरों, फर्नीचर तथा अन्य विवरणों की स्पष्ट दश्य छवि हो सकती है। ये विभिन्न विचारों से संबंधित हो सकते हैं तथा इन संबंधों का प्रयोग करके इन विचारों के स्मति को बढ़ाया जा सकता है।

4. **पुनःकूटीकरण:** अर्थहीन सामग्री से निपटते समय व्यक्ति स्मति की जाने वाले मदों को अधिक अर्थपूर्ण तरीके से पुनःकूटित कर सकता है। पुनःकूटीकरण कई रूप ले सकता है। उदाहरण के लिए लोग सभी मदों को प्रथम अक्षर का प्रयोग करके एक वाक्य बना सकते हैं। इस प्रकार का वर्णनात्मक ढांचा संकेत का काम करता है। परिवर्णी शब्दों (यथा यू.एन.ओ., टी.वी., सी.बी.आई, डब्ल्यू.एच.ओ.) का प्रयोग भी इस उद्देश्य के लिए किया जाता है जिसमें सभी प्रथम अक्षरों का प्रयोग होता है। विस्तारण का प्रयोग करके और अधिक सूचना शामिल की जा सकती है जो सामग्री को अधिक अर्थपूर्ण बनाती है। चंकिंग पुनःकूटीकरण का एक अच्छा उदाहरण है। बहरहाल इसे विदग्धता का प्रयोग करके दो या तीन अर्थपूर्ण टुकड़ों में विभाजित किया जा सकता है। वहत कूटन का प्रयोग करके व्यक्ति कहानी के रूप में अनेक मदों को प्रस्तुत कर सकता है तथा उसे पुनःस्मति कर सकता है।

पाठगत प्रश्न 7.2

सही विकल्प का चयन करें:

1. सामान्य परिस्थितियों के अन्तर्गत अल्पकालीन स्मति एक समय पर .... मदें धारित कर सकती है।

   (क) लगभग 2

(ख) लगभग 7

(ग) लगभग 14

(घ) लगभग 100

2. निम्नलिखित में से कौन सी मद सर्वाधिक रूप से अल्पकालीन स्मति में एकल 'चंक' के समान कार्य करेगी?

(क) 843348

(ख) सी के एन यू एच

(ग) मैं तुम्हें पसन्द करता हूं

(घ) मोहन, नदी, बैग

3. राधा तथा निशी एक परीक्षा के लिए साथ–साथ अध्ययन कर रही हैं। राधा की नीति है कि वह अपनी पुस्तक को बार–बार पढ़ती है। निशी पढ़ने वाली सामग्री को अन्य अवधारणाओं, जिन्हें वह जानती है, से जोड़ना चाहती है। इसका सम्भाविक परिणाम क्या होगा।

(क) राधा को अधिक सामग्री याद रहेगी।

(ख) राधा ने जो याद किया है वह लम्बे समय तक बना रहेगा।

(ग) निशि भ्रमित हो जाएगी।

(घ) निशि को बेहतर ढंग से याद रहेगा।

4. जब आप अपनी पाठ्य पुस्तक को पढ़ते हैं तो कौन सी तकनीक पाठों की विषयवस्तु के पुनःस्मति में सहायक होगी।

(क) आपके द्वारा पढ़ी गई सामग्री के संबंध में स्वयं से प्रश्न पूछना।

(ख) अन्य लोग आपसे प्रश्न पूछें।

(ग) एक–एक शब्द पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए अपनी एकाग्रता की शक्ति का प्रयोग करें।

(घ) शिथिल बने रहना तथा सामग्री के साथ अधिक लिप्त होने का प्रयास न करना।

आपने क्या सीखा

- मानव स्मति एक गतिशील प्रणाली है। यह हमें सूचना को अवधारित रखने तथा भविष्य में प्रयोग हेतु उसे उपलब्ध कराने में सहायक होती है।

- हम विभिन्न संवेद कार्यविधियों के माध्यम से सूचना प्राप्त करते हैं। सूचना संवेदी स्मति में पंजीकत होती है तथा चुनिंदा विकेन्द्रण द्वारा अल्पकालीन स्मति में चली

जाती है। तब यह कूटीकत होकर दीर्घकालीन स्मति में चली जाती है। संवेदी स्मति एक सेकिंड के लिए विद्यमान रहती है।

- अल्पकालीन स्मति में सीमित क्षमता होती है तथा वह केवल कुछ सेकेंडों या मिनटों के लिए विद्यमान रहती है।
- दीर्घकालीन स्मति में असीमित क्षमता होती है तथा यह घण्टों महीनों या सम्पूर्ण जीवन विद्यमान रहती है। विस्मति कई कारकों के कारण होता है यथा हस्तक्षेप, प्रोत्साहन, प्रत्यानयन में विफलता तथा पुनर्संरचना।
- सामग्री के सुसंगठन, एकाग्रता, लोकाई तथा कूटन की पद्धतियों का प्रयोग करके प्रतिधारण की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।

पाठान्त प्रश्न

1. मुख्य प्रकार की मानव स्मति प्रणाली का वर्णन करें?
2. अल्पकालीन स्मति की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?
3. विस्मति के प्रभावी कारकों का उल्लेख करें।
4. कुछ स्मतिकारी उपकरणों का प्रयोग करें व अपने अनुभव बताएं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

1. ग 2. ख 3. क 4. क

7.2

1. ख 2. ग 3. घ 4. क

पाठान्त प्रश्न हेतु संकेत

1. खण्ड 7.3 को देखें
2. खण्ड 7.4 को देखें
3. खण्ड 7.5 को देखें
4. खण्ड 7.6 को देखें

8

यथार्थ के आगे: चिन्तन और तर्क

मान लीजिए कि आप अपने मित्र को लेने के लिए एयरपोर्ट जा रहे हैं। घर छोड़ने से पहले आप यह निर्णय लेंगे कि आप किस रास्ते से होकर जाएंगे। हो सकता है कि आप सबसे छोटे रास्ते को न चुनें क्योंकि आप को लगता है कि भीड़ का समय होने के कारण आपको कई स्थानों पर ट्रैफिक जाम का सामना करना पड़ेगा। इस प्रकार एयरपोर्ट के लिए घर से निकलने से पहले आप उन तमाम विकल्पों पर विचार करते हैं जो आपके पास उपलब्ध होते हैं। आप निर्माणाधीन व अति व्यस्त रास्तों से होकर जाना पसन्द नहीं करेंगे। किसी विशेष रास्ते से होकर जाने का आपका निर्णय आपको सामने आ सकने वाली इस प्रकार की समस्याओं पर सोच विचार करने पर निर्भर करेगा। इस प्रकार इस तरह की एक सामान्य सी समस्या के लिए भी सोच और तर्क के प्रयोग की जरूरत पड़ती है। किसी समस्या का समाधान आस–पास के माहौल से व पिछले अनुभवों से आपके पास उपलबध जानकारियों पर सोच–विचार करने के बाद निकलता है। इस अध्याय में आपको सोच व तर्क के महत्त्वपूर्ण पहलुओं के बारे में जानकारी दी जा रही है।

उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् आप के लिए संभव होगा:

- चिन्तन की प्रकृति को समझना;
- विचार प्रक्रिया के विभिन्न घटकों की व्याख्या करना;
- समस्या समाधान के विभिन्न चरणों का निरूपण करना;
- तर्क के प्रकारों की व्याख्या करना तथा
- भाषा व विचार के बीच संबंध का निरूपण करना।

8.1 चिन्तन की प्रकति व घटक

चिन्तन एक मानसिक क्रिया है जिसकी शुरूआत् प्रायः किसी समस्या के द्वारा होती है। यह मन के अंदर चलने वाली आंतरिक क्रियाओं की एक श्रंखला का अनुगमन करता है जिसमें अनेक मनोयोग, अनुमान, तर्क, कल्पना व स्मरण आदि शामिल होते हैं। चिन्तन एक अनुभव आधारित प्रक्रिया है जिसमें हम वस्तुओं और घटनाओं के प्राकतिक रूप में प्रतीक चिह्नों का प्रयोग करते हैं। यह एक रचनात्मक प्रक्रिया है ठीक वैसी ही जैसे कि हम कुछ नवनिर्माण करते हैं। चिन्तन अनेक प्रकार की मानसिक संरचनाओं पर निर्भर करता है जैसे कि (1) संकल्पना, (2) समाकति तथा (3) मानसिक बिम्बविधान। आइए इन मानसिक संरचनाओं पर विचार करें।

विचार प्रक्रिया के घटक

1. संप्रत्यय

हमारे पास वस्तुओं, घटनाओं, मनुष्यों या जो कुछ भी हम जानते या अनुभव करते हें की अनिवार्य विशेषताओं को समझने की क्षमता विद्यमान है। उदाहरण के लिए सेब देखकर हम उसे 'फल' के रूप में वर्गीकत कर देते हैं। इसी प्रकार बिल्ली देखकर हम उसे 'जानवर' के रूप में वर्गीकत करते हैं। ऐसा ही अन्य के बारे में भी होता है। जब कभी कोई नई वस्तु हमारे सामने आती है, हम उसे वर्गीकत करने में लग जाते हैं। उदाहरण के लिए गली में किसी कुत्ते को देखकर हम इसका वर्गीकरण 'जानवर' के रूप में कर देते हैं तथा इसके साथ भी किसी अन्य जानवर की ही तरह व्यवहार करते हैं अर्थात इसकी उपेक्षा करते हैं। ठीक ऐसे ही जब हम किसी नई सामाजिक स्थिति का सामना करते हैं तो हम इसे पिछले अनुभवों के आधार पर वर्गीकत करने की कोशिश करते हैं तथा उचित कार्रवाई करते हैं। इसे चिन्तन के मूल पहलुओं में से एक माना जाता है।

संप्रत्यय मानसिक संरचनाएं हैं। जो वर्ग हम बनाते हैं उन्हें संप्रत्यय कहा जाता है। वे चिन्तन के आधार स्तम्भ हैं। वे हमें ज्ञान को व्यवस्थित रूप में संगठित करने की अनुमति देते हैं। अधिकांश शब्द (व्यक्तिवाचक संज्ञा को छोड़कर) संप्रत्यय का निरूपण करते हैं क्योंकि ये किसी एक अकेली वस्तु या घटना का निरूपण नहीं करते बल्कि पूरे वर्ग का निरूपण करते हैं। उदाहरण के लिए 'मकान' शब्द भवनों के उस एक वर्ग को निरूपित करता है जिसमें एक सी विशेषताएं हों। इसमें कमरे, रसोईघर, शौचालय, भण्डार कक्ष आदि होते हैं तथा तथा इसका प्रयोग लोग व परिवार अपने रहने के लिए करते हैं। इसमें कुछ सुविधाएं होती हैं। 'भवन' शब्द मकान की तुलना में ज्याद आम है। भवन शब्द एक बड़ी संकल्पना है। इसमें मकान, कार्यालय, बाजार आदि शामिल हैं। संप्रत्यय वस्तुओं, गतिविधियों, विचारों व जीवित प्राणियों का निरूपण करती हैं। वे गुणों (जैसे हरा या बड़ा) मनोभावों (जैसे ईमानदार प्यार) तथा संबंधों (जैसे कि तुलना में बड़ा) का भी निरूपण करती है।

संप्रत्यय का ज्ञान प्राप्त करने में सामान्यीकरण व विभेदीकरण की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का उपयोग होता है। उदाहरण के लिए जब कोई बच्चा 'कुत्ता' की संकल्पना से परिचित होता है तो शुरू में वह सभी छोटे जानवरों (जैसे बिल्ली) को सामान्यतः कुत्त ही समझता है। लेकिन जब तक संप्रत्यय सही तरीके से निर्मित न हो जाए बच्चा माता–पिता द्वारा करवाए गए सुधारों व सीखने की प्रक्रिया में इसमें थोड़ा सा विभेद करना सीख जाता है। इस समय यह केवल एक घरेलू कुत्ता था लेकिन इसमें विभिन्न नस्लों व विभिन्न आकार के अन्य कुत्तों को शामिल करने के लिए बच्चा इस संप्रत्यय का सामान्यीकरण कर सकता है। आगे वह पालतू कुत्ते व गली के कुत्ते, मित्रवत कुत्ते व आक्रामक कुत्ते के बीच के संप्रत्यात्मक विभद को परिष्कत कर सकता है।

संप्रत्यय मूर्त (जैसे कुत्ता, मेज, पेड़ आदि) या अमूर्त (जैसे ईमानदारी, लोकतंत्र, न्याय आदि) हो सकती हैं। बच्चा जीवन में मूर्त संप्रत्ययों से बहुत जल्दी परिचित हो जाता है तथा अमूर्त संप्रत्ययों से बाद में परिचित होता है। **प्याजे** द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चलता है कि बच्चा सबसे पहले वस्तु संप्रत्ययों की जानकारी प्राप्त करना है जैसे कि गेंद तथा अमूर्त कल्पनाओं की जानकारी बड़े होने के क्रम मं प्राप्त करता है।

क्रियाकलाप 8.1

संप्रत्यय निर्माण

8 × 20 से.मी. आकार के 20 सफेद कार्ड लें। तीन आकतियों (त्रिभुज, चतुर्भुज व वत्त) व तीन रंगों (लाल, हरा व नीला) का चयन करें। प्रत्येक कार्ड पर नीचे अलग–अलग आकतियां (त्रिभुज व चतुर्भुज) बनाएं तथा इन दोनों आकतियों के ऊपर, कार्ड के बीच में एक अन्य आकति (या तो त्रिभुज या चतुर्भुज) बनाएं जैसा कि चित्र 8.1 में दिखलाया गया है।

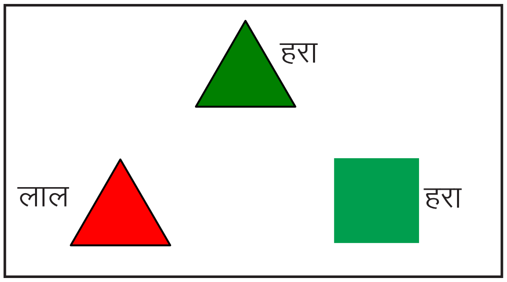

चित्र 8.1: *कार्ड का नमूना*

नीचे वाली दोनों आकतियां आकार व रंग में एक दूसरे से अलग होनी चाहिए तथा ऊपर वाली अकेली आकति का आकर नीचे वाली दोनों आकतियों से पहले वाले की तरह तथा इसका रंग दूसरी वाली आकति की तरह होना चाहिए। ध्यान रखें कि आकतियों का आकार, एक ही आकार के स्क्वेयर से काटा गया हो। इसी प्रकार से ऐसे 20 कार्ड तैयार करें। इसमें से सभी के ऊपर अलग–अलग आकतियों व रंगों का संयोजन हो।

इन सभी कार्डों को एक पैकेट में रख दें। कार्ड के पैक को मेज पर रखें तथा एक समय में एक कार्ड को उठाएं और इसे प्रतिभागी (बच्चा) के सामने रख दें तथा उससे ऊपर वाली आकति को नीचे दी गई दोनों आकतियों में से एक के साथ मिलाने को कहें। बच्चे को आकति या रंग के बारे में कोई संकेत न दें। कार्ड को एक–एक कर के बच्चे के सामने रखें तथा बच्चे को यथाशीघ्र जबाब देने के लिए प्रोत्साहित करें।

बच्चे की प्रतिक्रिया को प्रतिक्रिया अर्थात आकार व रंग के रूप में रिकार्ड करें। यदि बच्चा लाल त्रिभुज को हरे त्रिभुज के साथ मिलाता है तो इसका अर्थ यह है कि बच्चा आकति के आधार पर मैचिंग कर रहा है अतः आकति के तहत चिह्न लगाएं। दूसरी तरफ यदि बच्चा हरे त्रिभुज को हरे चतुर्भुज के साथ मैच करता है तो इसका अर्थ यह है कि बच्चा रंग के आधार पर मैचिंग कर रहा है। अतः रंग के तहत चिह्न लगाएं।

इस तरीके से सभी 20 कार्डों को एक–एक करके बच्चे के सामने रखें व उसकी प्रतिक्रियाओं को रिकार्ड करें। सभी चिह्नों की कलर (संप्रत्यय) व आकति (संप्रत्यय) के तहत गणना करें। आपके इस परीक्षण से बच्चे के अन्दर संप्रत्यय विकास की चल रही प्रक्रिया का पता चलता है। क्रियाकलाप में यह देखते हैं कि बच्चे संप्रत्यय के संबंध में रंग व आकति का किस प्रकार से वर्गीकरण करते हैं। इससे बच्चों में संप्रत्यय निर्माण के स्तर का पता चलता है। अनुसंधान से पता चलता है कि बच्चे के अंदर सबसे पहले रंग की संप्रत्यय का विकास होता है। आकति की संप्रत्यय का विकास उसके बाद होता है। वस्तुओं, घटनाओं या विचारों को एक से वर्ग में वर्गीकत कर देने से सूचनाएं प्राप्त करने में समय और प्रयास की बचत होती है। चिन्तन प्रक्रिया में यह अत्यंत सहायक होता है।

हम वस्तुओं, और घटनाओं की विशेषताओं या गुणों (जैसे रंग, आकति, आकार आदि) के आधार पर केवल इनका वर्गीकरण करना ही नहीं सीखते हैं बल्कि इन गुणों के साथ जुड़े संप्रत्ययात्मक नियमों का भी ज्ञान प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए हम ट्रैफिक लाइट के रंगों लाल, हरा, पीला का केवल वर्गीकरण करना नही नहीं सीखते हैं बल्कि इन रंगों के साथ जुड़े संप्रत्ययात्मक नियमों की भी जानकारी प्राप्त करते हैं। जैसे कि यदि लाइट लाल है तो 'रुकना' पीली है तो 'जाने या रुकने के लिए तैयार होना' और यदि लाइट हरी है तो 'जाना'। यह आश्चर्यजनक है कि हम बहुत से संप्रत्ययात्मक नियमों की जानकारी प्राप्त करते हैं, उसे एकत्र करते हैं और आवश्यकतानुसार अपने दैनिक कार्यों में इनका प्रयोग करते हैं।

2. अन्विति योजना (स्कीमा)

समाकतियां संप्रत्यय से थोड़ी जटिल हैं। प्रत्येक अन्विति योजना में अनेक अलग–अलग संप्रत्यय होती हैं। उदाहरण के लिए हममें से प्रत्येक व्यक्ति के पास एक आत्म अन्विति

योजना होती है अर्थात एक ऐसा मानसिक ढांचा जिसमें हमारे बारे में ढेर सारी जानकारियां होती हैं (जैसा कि हम अपने आप को समझते हैं)। इस आत्म अन्विति योजना में अपने बारे में बहुत सी अलग–अलग संप्रत्यय होंगी। उदाहरण के लिए आप अपने को बहुत समझदार, आकर्षक, स्वस्थ, परिश्रमी और खुश मान सकते हैं। ये सभी अलग–अलग संप्रत्यय आत्म अन्विति योजना का निर्माण करती हैं। ये अन्विति योजना चिन्तन के महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ हैं।

3. मानसिक बिम्ब विधान

चिन्तन मं दश्य, श्रव्य या दूसरी आकतियों का जोड़–तोड़ भी होता है। यहां हम दश्य आकतियों पर प्रकाश डालेंगे। ऐसा पाया गया है कि वस्तुओं की आकति पर किया जाने वाला मानसिक कार्य बिल्कुल वास्तविक वस्तु पर किए गए मानसिक कार्य के जैसा ही होता है। जब किसी वस्तु, व्यक्ति या स्थिति की हमारे मन में एक छवि बन जाती है या स्थिति की हमारे मन में एक छवि बन जाती है तो जब कभी हम इसके बारे में सोचते–समझते हैं तो ऐसा लगता है कि यह वस्तु हमारे सामने वास्तव में विद्यमान है। हम ऐसा कह सकते हैं कि हम वस्तुओं को अपने 'दिमागी आंखों' से देखते हैं। उदाहरण के लिए यदि आपको किसी तंग दरवाजे वाले कमरे में विद्यमान एक बड़ी मेज को कमरे से बाहर निकालना हो तो सर्वप्रथम आप अपने मन में ही मेज को इधर उधर घुमाएंगे और फिर मेज को कमरे से बाहर निकालने की तरकीब निकालेंगे। ऐसा देखा गया है कि हम प्रायः शब्दों (शब्द संकल्पना का निरूपण करते हैं जैसे मेज) में सोचते हैं। कई बार हम मानसिक आकतियों पर निर्भर होते हैं जैसे कि मेज की दश्य आकति। उपर्युक्त समस्या में कोई व्यक्ति मेज को कमरे से बाहर निकालने के लिए सीधे शारीरिक प्रयास भी कर सकता है पर उससे ज्यादा परिपक्व कोई व्यक्ति इस समस्या को हल करने के लिए मानसिक प्रयास करेगा अर्थात वह सबसे पहले मेज को अपने मन में ही इधर–उधर घुमाएगा। इस अध्याय के प्रारम्भिक भाग में आपने एयरपोर्ट जाने के लिए रास्ते का चुनाव करने की योजना के बारे में पढ़ां संबंधित व्यक्ति इसे शब्दों में सोच सकता है या फिर मानसिक बिम्ब के माध्यम से रास्ते का चयन कर सकता है। इसके लिए वह एयरपोर्ट जाने वाले रास्ते की अपने मन में छवि निर्मित करेगा और फिर निर्णय लेगा।

पाठगत प्रश्न 8.1

1. रिक्त स्थानों को उचित शब्दों द्वारा भरें:

   (क) चिन्तन एक .... प्रक्रिया है जिसमें हम प्रतीक चिह्नों का प्रयोग करते हैं।

   (ख) हम जीवन में विद्यमान वस्तुओं का .... करते हैं।

(ग) बच्चे .... संप्रत्यय की तुलना में .... संप्रत्यय का ज्ञान पहले प्राप्त कर लेते हैं।

(घ) संप्रत्ययों का ज्ञान प्राप्त करने में .... तथा .... शामिल हैं।

(च) वस्तुओं को एक समान वर्ग में वर्गीकत करने से .... आसान हो जाता है।

8.2 समस्या समाधान

समस्या समाधान एक महत्वपूर्ण अनुभव आधारित क्रिया है। यह चिन्तन प्रक्रिया के इतने निकट है कि बहुत से लोग एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग करते हैं। हमारी सभी दिनचर्या में समस्या समाधान विद्यमान होती है। समस्या सामान्य या जटिल हो सकती है। सामान्य समस्याएं दिन प्रतिदिन पेश आने वाली समस्याएं होती हैं जैसे कि यह निर्णय लेना कि नाश्ते में क्या खाएं। जटिल समस्याएं इस प्रकार की हो सकती है जैसे कि यह निर्णय लेना कि रोजगार के लिए कौन सा क्षेत्र चुनें। समस्या समाधान चिन्तन की तरफ ले जाता है और आगे यह चिंतन किसी विशेष कार्य/स्थिति को हल करने में प्रवत्त होता है। इस प्रकार के चिन्तन के तीन चरण होते हैं। इसके प्रारम्भिक चरण में समस्या का सामने आना उसके बाद इस पर मानसिक कार्रवाई व अंत में समस्या का समाधान हो जाना शामिल है।

समस्या समाधान के चरण व रणनीति

समस्या उस स्थिति को दर्शाती है जिसका समाधान अपेक्षित होता है। इसके तीन चरण होते हैं जिसका विवरण नीचे दिया गया है:–

1. प्रारम्भिक अवस्था: समस्या
2. कार्रवाई: कार्य
3. लक्ष्य अवस्था: समाधान

आइए इन तीनों चरणों की व्याख्या एक मूर्त समस्या के साथ करें। मान लीजिए आपको भुगतान करने के लिए कई अप्रत्याशित बिल प्राप्त होते हैं। बिल का प्राप्त होना प्रारम्भिक चरण है अर्थात यह समस्या है। इस बिल का भुगतान करने हेतु पैसे की व्यवस्था करना और पैसे की व्यवस्था इस प्रकार करना कि आपका मूल पारिवारिक बजट गड़बड़ न हो, आपका लक्ष्य है। इस समस्या के समाधान के लिए कुछ कार्रवाई करने की आवश्यकता होगी। समस्या समाधान के लिए की जाने वाली कुछ कार्रवाइयां दूसरों से ज्याद वांछनीय होती हैं। उदाहरण के लिए किसी मित्र से रुपया उधार लेने के बजाय क्रेडिट कार्ड के जरिए रुपया निकालना ज्यादा स्वीकार्य समाधान माना जाता है। सबसे

अधिक स्वीकार्य चरण से निकलकर लक्ष्य अवस्था में पहुंचते हैं जहां समस्या का समधान हो जाता है। जटिलता के स्तरों के आधार पर समस्याएं अलग–अलग हो सकती हैं पर समाधान के चरण एक से रहते हैं। अति जटिल समस्याओं के लिए द्वितीय चरण में समय ज्यादा लगता है क्योंकि यहाँ अनेक मानसिक कार्रवाइयां करनी होती हैं।

8.2 समस्या समाधान में (मानसिक स्थिति) मनोस्थिति

'मनोस्थिति' किसी व्यक्ति की वह प्रवत्ति है जिसमें वह किसी नई समस्या पर ठीक उसी प्रकार की क्रिया करता है जैसा कि उसने पहले किसी समस्या को हल करने के लिए किया था। किसी विशेष नियम को अपनाकर प्राप्त हुई पिछली सफलता व्यक्ति के अंदर एक प्रकार की 'मानसिक हठता' लाती है। इस मानसिक हठता से रचनात्मकता बाधित होती है।

कभी कभार यह मनोस्थिति समस्या को समझने व समस्या समाधान की गुणवत्ता व गति को बढ़ा सकती है लेकिन कुछ स्थितियों में यह हमारी मानसिक क्रियाओं या चिन्तन की गुणवत्ता को रोक भी सकती है। अपनी दैनिक व अन्य जटिल समस्याओं को हल करने के लिए हम प्रायः उन पिछली जानकारियों व अनुभवों का सहारा लेते हैं जिनके द्वारा हमने पहले कोई ऐसी ही या इससे मिलती जुलती समस्या का समाधान किया हो। यदि आप क्रियाकलाप 8.2 को करें तो मनोस्थिति की विशेषता से भली भांति परिचित हो सकेंगे। क्रियाकलाप 8.2 को 'लुचिन्स वाटर जार' समस्या कहा जाता है।

क्रियाकलाप 8.2

मनोस्थिति व समस्या समाधान

अपने किसी मित्र को नीचे दी गई समस्याओं के सेट को हल करने को दें। उसे निम्नलिखित निर्देश दें:

अगले पेज पर दी गई तालिका में 7 समस्याएं हैं। 3 खाली जार (क, ख, ग) तथा एक कंटेनर में पर्याप्त पानी उपलब्ध है। दिए गए जारों की मदद से आपको अपेक्षित पानी की मात्रा उपलब्ध कराना है। समस्या सं. 1 की मदद से समस्या को हल करेन का विवरण तालिका 8.1 में दिया गया है।

आपके पास तीन जार उपलब्ध हैं जिसमें से क की क्षमता 21 मि.ली, ख की 127 मि.ली. तथा ग की क्षमता 3 मि.ली. है। इन तीनों जारों की मदद से आपको 100 मि.ली. पानी निकालना है। अतः जार ख में पानी भरें तथा जार क को भरने के लिए जार ख में से पर्याप्त पानी निकालें। जार ख से जार क में पानी डालने के बाद जार ख में 106 मि.ली. पानी बचा। जब जार ख से पर्याप्त पानी निकालकर जार ग को दो बार भरें। अब जार ख में 100 मि.ली. पानी बचा। इसी तरह से आगे बढ़िए और शेष छः समस्याओं को हल करिए।

तालिका 8.1: *वाटर जार समस्या*

समस्या सं	पानी जारों की क्षमता			अपेक्षित मात्रा
	क	ख	ग	
1.	21	127	3	100
2.	14	163	25	99
3.	18	43	10	5
4.	9	42	6	21
5.	20	59	4	31
6.	14	36	8	6
7.	28	76	3	25

प्रतिभागी ठीक वही प्रक्रिया (ख–क–2ग) अपनाकर समस्या को हल कर लेगा। लेकिन छठी समस्या थोड़ी जटिल है। इसका हल पहले वाली प्रक्रिया से भी निकाला जा सकता है तथा एक अन्य सीधे व सामान्य तरीके से भी निकाला जा सकता है। इसके जार क से जार ग में पानी डालना होगा। अर्थात क–ग करना होगा। शुरूआती 5 समस्याओं को हल करने के दौरान बनी हुई मनोस्थिति के कारण प्रतिभागी आसान व अलग प्रकार के समाधान के प्रति मानकिस रूप से अंधा हो जाता है। सातवीं समस्या दूसरी जटिल समस्या है। इसमें व्यक्ति पिछली प्रक्रिया (ख–क–2ग) के माध्यम से समाधान तक नहीं पहुंच पाता है। दूसरी से सातवीं तक समस्या को हल करने में व्यक्ति द्वारा लगाए गए समय को देखना रोचक है। 7वीं समस्या को हल करने में व्यक्ति सबसे ज्यादा समय लगाएगा। क्योंकि वह इस समस्या को पिछले तरीके से हल नहीं कर सकता है।

पाठगत प्रश्न 8.2

निम्नलिखित कथनों पर सही या गलत का चिह्न लगाएं:

(क) समस्या का समाधान चरणों में होता है। सही/गलत

(ख) मनोस्थिति समस्या समाधान को बाधित कर सकती है। सही/गलत

(ग) समाकति एक संप्रत्यय से निर्मित है। सही/गलत

(घ) आकतियां मानसिक मैनिपुलेसन को कठिन बनाती हैं। सही/गलत

8.4 तर्क तथा निर्णयन

तर्क

तर्क एक मानसिक प्रक्रिया है। तर्क, तार्किक चिन्तन, समस्या समाधान तथा निर्णयन में शामिल है। तर्क के अन्तर्गत, परिवेश से प्राप्त जानकारी तथा दिमाग में विद्यमान जानकारी का प्रयोग किसी निर्णय या लक्ष्य पर पहुँचने के लिए किया जाता है। तर्क व निर्णयन में व्यक्ति कुछ नियमों का अनुपालन करता है। तर्क को हम दो मुख्य भागों में वर्गीकत कर सकते हैं'– 1. निगमनात्मक तर्क तथा 2. आगमनात्मक तर्क। आइए इन दोनों पर संक्षेप में विचार करें।

1. **निगमनात्मक तर्कः** निगमनात्मक तर्क के अंतर्गत व्यक्ति दो आधार वाक्यों की सहायता से तर्क के प्रयोग द्वारा निष्कर्ष प्राप्त करता है। निगमनात्मक तर्क का एक उदाहरण जिसे हेत्वनुमान के नाम से जाना जाता है, नीचे दिया जा रहा है। इसमें दो आधार वाक्य और एक निष्कर्ष होता है।

   सभी क ख हैं (आधार वाक्य)

   सभी ख ग हैं (आधार वाक्य)

   इसलिए सभी क ग हैं।

यह प्रामाणिक हेत्वनुमान का एक उदाहरण है। आइए अब अप्रामाणिक हेत्वनुमान के एक उदाहरण पर विचार करेंः

   सही क ख हैं (आधार वाक्य)

   कुछ ख ग हैं

   इसलिए कुछ क ग हैं।

यह अप्रामाणिक हेत्वनुमान का एक उदाहरण है। निगमनात्मक तर्क में हम आदर्श रूप में सामान्य से विशिष्ट की तरफ जाते हैं। हम वही साामन्य नियम लागू करते हैं जैसे कि सभी मनुष्य मर्त्य हैं। रमेश एक मनुष्य है। इसलिए रमेश मर्त्य है।

2. **आगमनात्मक तर्कः** निगमनात्मक तर्क की तुला में आगमनात्मक तर्क प्रक्रिया उल्टी है। इसमें हम उपलब्ध प्रमाण से किसी वस्तु की संभावना के बारे में निष्कर्ष निकालते हैं। आगमनात्मक तर्क में हम कई उदाहरणों पर विचार करते हैं तथा यह निर्धारित करने का प्रयास करते हैं कि नये सभी उदाहरण किस सामान्य नियम के तहत आते हैं। आइए आगमनात्मक तर्क को एक उदाहरण की सहायता से समझें।

मान लीजिए आप अपने स्कूटर की चाभी को ढूंढ रहे नहीं पा रहे हैं। आप उन्हें उस स्थान पर ढूंढने की कोशिश करते हैं जहां पर प्रायः आप चाभियों को रखते हैं। पर आपको वे

वहां नहीं मिलती हैं। आप अपनी स्मरण शक्ति पर जोर डालने के लिए आगमनात्मक तर्क का प्रयोग करते हैं– ''मैंने स्कूटर की चाभियां निकाली तथा दूसरी चाभी से घर का प्रवेश द्वार खोलकर घर में घुसा। घर में घुसते ही तुरन्त मैंने देखा कि फोन की घंटी बज रही थी। मैं फोन पर बात करने के लिए फोन के पास गया। मुझे एक संदेश लिखना था। मैंने अपनी जेब से कलम निकाला और टेलीफोन डायरी पर संदेश लिखा। मैंने चाभियां टेलीफोन के आस पास ही कहीं छोड़ी होंगी।'' आप चाभियां ढूंढने वहां जाते हैं और वे आपको वहां मिल जाती हैं।

वैज्ञानिक अनुसंधानों के अधिकतर मामलों में आगमनात्मक तर्क शामिल होता है। वैज्ञानिक व सामान्य मनुष्य अनेक उदाहरणों पर विचार करते हैं और फिर यह निर्धारित करने का प्रयत्न करते हैं कि ये सभी किस सामान्य नियम के तहत आते हैं। उदाहरण के लिए एक 15 वर्षीय बालक मूडी, आक्रामक, अधीर व अति क्रियाशील होता है– वह एक 'किशोर' (टीन एजर) है। यह सामान्य उक्ति कि ''वह एक किशोर है'', उसके व्यवहार को एक अतिसामान्य कथन में निरूपित करने का प्रयास है।

निर्णयन

दैनिक जीवन में हम प्रायः निजी, आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक निर्णय लेते रहते हैं जिसके दूरगामी परिणाम हो सकते हैं। अपने अध्ययन में भौतिक विज्ञान को विशेष अध्ययन के एक विषय के रूप में लेने के आपके निर्णय का आप की जिन्दगी पर दूरगामी प्रभाव हो सकता है। हम प्रायः दैनिक जीवन से संबंधित सामान्य निर्णय लेते रहते हैं जैसे कि नाश्ते में क्या खाना है या कौन सी फिल्म देखनी है। निर्णय लेते समय हम कुछ विकल्पों पर भी विचार करते हैं। ये विकल्प कोई निर्णय लेने में महत्वपूर्ण होते हैं। उदाहरण के लिए आपका कोई निकट संबंधी अस्पताल में भर्ती है और मरीज की जांच करने के बाद डॉक्टर उसकी जान बचाने के लिए सर्जरी करने की सलाह देता है। डॉक्टर द्वारा दी गई सलाह पर अमले करने का निर्णय लेने से पहले आप कई अन्य विकल्पों पर भी विचार करेंगे। इन विकल्पों में– दूसरे डॉक्टर की सलाह लेना, इलाज की किसी अन्य विधि पर विचार करना, क्या मरीज सर्जरी करने योग्य है, कौन सा डाक्टर सर्जरी करेगा, सर्जरी किस अस्पताल में होगी, सर्जरी पर आने वाला खर्च आदि बातें हो सकती हैं। संबंधित विषयों पर विचार करने के बाद आप निर्णय लेते हैं।

8.5 फैसला और निर्णयन

फैसला और निर्णयन परस्पर जुड़ी हुई प्रतिक्रियाएं हैं। फैसले के अन्तर्गत विश्व (वस्तु, घटनाओं, व्यक्तियों आदि) के बारे में जानकारियों का मूल्यांकन होता है जबकि निर्णय के तहत विकल्पों की जरूरत होती है। आइए इस अंतर को एक उदाहरण के द्वारा स्पष्ट करें। न्यायाधीश, वकील द्वारा प्रस्तुत तर्कों को सुनता है तथा उपलब्ध कराए गए सबूतों की जांच करता है। इसके बाद ही वह किसी मामले में फैसला सुनाता है। दूसरी तरफ

निर्णयन एक प्रकार का समस्या समाधान है। इसके तहत कुछ उपलब्ध विकल्पों में से व्यक्ति को कोई एक विकल्प चुनना होता है। उदाहरण के लिए, आपको एयरपोर्ट जाना है और आपके पास वहां जाने के लिए तीन रास्ते उपलब्ध हैं। इन तीनों ही रास्तों की विभिन्न लाभ व कतियों पर विचार करने के बाद ही आप निर्णय लेंगे।

पाठगत प्रश्न 8.3

निम्नलिखित कथनों पर सही या गलत का चिह्न लगाएं

(क) तर्क, उपलब्ध जानकारी से आगे और अधिक जानकारी प्राप्त करने में सहायक है। सही/गलत

(ख) आगमन सामान्य से विशिष्ट की ओर ले जाता है। सही/गलत

(ग) निगमन विशिष्ट से सामान्य की ओर ले जाता है। सही/गलत

8.6 भाषा और विचार

कल्पना कीजिए कि अपने मन के भावों को व्यक्त करने के लिए यदि हमारे पास भाषा नहीं होती तो क्या हुआ होता। अपने भावों को व्यक्त करना तथा दूसरों के साथ संवाद करना, भाषा के बिना सम्भव नहीं हुआ होता। भाषा ग्रहण करने की प्रक्रिया अत्यंत रोचक है। एक बच्चा छः महीने की उम्र में सर्वप्रथम माँ—माँ—माँ कहना शुरू करता है। उसकी यह आवाज सुनकर खुद बच्चा व उसके माता—पिता तथा अन्य लोग आनंदित होते हैं। धीरे—धीरे बच्चा मम्मी—पापा कहना सीख जाता है और फिर आगे धीरे—धीरे अन्य एकाक्षरों को भी सीख जाता है। बाद में अपनी आवश्यकताओं को बताने आदि के लिए दो या अधिक शब्दों की तुलना भी करने लगता है।

प्रारम्भ में बच्चा घर में बोली जानी वाली भाषा में ही बात करना सीखता है। इसे मातभाषा कहा जाता है। बाद में बच्चा स्कूल में एक औपचारिक भाषा सीखता है जैसे कि हिन्दी या अंग्रेजी। उस समय बच्चा दो भाषाएं सीख सकता है। माँ—माँ'—माँ कहने से लेकर भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेने की यह विकास यात्रा अत्यंत आकर्षक है। कुछ सजनशील लेखक, कवि या उपन्यासकार बन जाते हैं। वह भाषा प्रयोग ही है जो हमें पशुओं से अलग करती हैं।

भाषा का प्रयोग

दो शब्द से शुरू होकर अति जटिल वाक्यों को बोलने तक बच्चा तेजी से विकसित होता है। तीन साल की उम्र में ही बहुत सारे बच्चे जटिल वाक्यों को बोलना शुरू कर देते हैं जैसे कि ''यह खिलौना मुझे चाहिए क्योंकि यह अच्छा है''। इस प्रकार रोने, किलकारी

मारने व चहकने से शुरूआत करके बच्चे विकास की प्रक्रिया में धीरे–धीरे भाषा–भाषी समाज के अंग बन जाते हैं। अब वे दूसरों के साथ वार्तालाप करने में पूरी तरह सक्षम हो जाते हैं तथा अच्छी तरह बातचीत कर लेते हैं।

भाषा विचारों की वाहक तथा सभी प्रकार के सामाजिक मेल–मिलापों की कड़ी है। भाषा इरादों, अनुभूतियों, उद्देश्यों, दष्टिकोण व मान्यताओं आदि को व्यक्त करने का माध्यम है।

भाषा व संप्रेषण

हम प्रतीकों की एक व्यवस्था के माध्यम से सूचनाएँ सम्प्रेषित करते हैं। भाषा ऐसी ही एक प्रतीक व्यवस्था है। इसकी दो मुख्य विशेषताएं हैं– प्रतीकों की उपस्थिति तथा सम्प्रेषण। प्रतीक कुछ अन्य चीज के द्योतक हैं। उदाहरण के लिए घर, विद्यालय, कार्यालय, मंदिर आदि ये सभी ईमारतें हैं, लेकिन ये ईमारतें 'ईमारत' शब्द में निहित अर्थ के अलावा कुछ अन्य अर्थ प्रकट करती हैं। यह अर्थ 'ईमारत' शब्द में निहित अर्थ से अधिक व्यापक एवं बड़ा है। घर वह जगह है जहां परिवार रहता है। विद्यालय वह ईमारत है जहां बच्चों को शिक्षा प्रदान की जाती है। जब ये शब्द (जैसे घर, विद्यालय) किसी निश्चित कार्य से सम्बद्ध हो जाते हैं तो इन्हें अलग अर्थ मिल जाता है। हम उन शब्दों को पहचानने लगते हैं तथा उनका प्रयोग दूसरों के साथ बातचीत में करने लगते हैं। अतः जब किसी अन्य व्यक्ति से आप यह कहते हैं कि आप मंदिर जा रहे हैं तो आप उसे सम्प्रेषित कर रहे हैं कि आप किसी जगह पर (किसी ईमारत में) पूजा करने के लिए जा रहे हैं।

प्रतिदिन प्रयोग में आने वाल मूर्त वस्तुओं व अनुभवों के अलावा भाषा अमूर्त भावों या विचारों को व्यक्त करने में भी सहायक होती है। भाषा के माध्यम से ही हम अपने अमूर्त विचारों को व्यक्त करने में सक्षम हैं। हम अपने शारीरिक अंगों का प्रयोग करके भी दूसरों से संवाद करते हैं। इसे भंगिमा के हावभाव कहते हैं। इस प्राकर के सम्प्रेषण को अमौखिक सम्प्रेषण कहा जाता है। यह ध्यान देने योग्य बात है कि प्रतीक भाषा भी मानव भाषा का ही एक रूप है।

भाषा तथा चिन्तन

प्रायः लोग यह प्रश्न उठाते हैं कि क्या चिन्तन के लिए भाषा आवश्यक है। क्या बिना भाषा के चिन्तन सम्भव है। हमारे अधिकांश चिन्तन में शब्द तो शामिल होते ही हैं। यह सर्वमान्य है कि भाषा व विचार आपस में जुड़े हुए हैं। वाट्सन चिन्तन को 'आन्तरिक भाषा' कहते हैं। यदि चिन्तन के लिए भाषा अनिवार्य है तो स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है कि जिन लोगों के पास कोई भाषा नहीं है या जिन व्यक्तियों को भाषा का पूर्णरूपेण विकास नहीं हुआ है (जैसे कि युवा बच्चे) उनके साथ क्या होता है। यह तर्क दिया जाता है कि ऐसे व्यक्ति प्रतीक भाषा का प्रयोग कर सकते हैं। इस प्रकार वे एक दूसरे के विचारों को समझ सकते हैं। उदाहरण के लिए बधिर लोग प्रतीक भाषा में सोच और संवाद कर सकते हैं। कोई व्यक्ति यह कह सकता है कि भाषा चिन्तन का एक

अनिवार्य साधन है पर यह नहीं कहा जा सकता है कि बिना भाषा के चिन्तन संभव नहीं है।

भाषा चिन्तन में सहायक है और साथ ही भाषा विचारों के वाहक के रूप में कार्य करती है। इस तरह हम जो कुछ भी सोचते हैं, उसका सम्प्रेषण भाषा के माध्यम से होता है।

आपने क्या सीखा

- चिन्तन एक मानसिक या अनुभव आधारित प्रक्रिया है जिसकी शुरूआत प्रायः किसी समस्या स्थिति से होती है।
- चिन्तन में अनेक प्रकार की मानसिक संरचनाएं विद्यमान होती हैं जैसे कि संप्रत्यय, समाकतियां व मानसिक बिम्बविधान।
- संप्रत्यय वर्गीकरण पर आधारित वर्ग नाम हैं। संप्रत्यय निर्माण में सामान्यीकरण व विभेदीकरण शामिल हैं। संप्रत्यय मूर्त या अमूर्त हो सकती हैं।
- समाकति उस मानसिक संरचना की तरफ संकेत करती है जो अनेक संप्रत्ययों व बिम्बविधानों से निर्मित है।
- समस्या समाधान चिन्तन का एक महत्वपूर्ण पहलू है। यह किसी समस्या से प्रारम्भ होता है, कुछ निश्चित मानसिक क्रियाओं के साथ धूमता है तथा अंततः समाधान पर पहुंचता है। यहां समस्या समाप्त हो जाती है।
- किसी व्यक्ति द्वारा विकसित मानसिक विन्यास हठता उत्पन्न कर सकता है तथा समस्या–समाधान में रोड़ा अटका सकता है।
- तर्क अनुमान लगाने की मानसिक प्रक्रिया है। तर्क के दो प्रकार हैं। प्रथम निगमनात्मक तर्क तथा दूसरो आगमनात्मक तर्क। निगमनात्मक तर्क सामान्य आधारवाक्य से होकर विशिष्ट निष्कर्ष की ओर जाता है। इसके विपरीत आगमनात्मक तर्क में विशिष्ट सूचनाओं से सामान्य निष्कर्ष निकाला जाता है।
- निर्णयन रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी हुई एक आम अनुभव आधारित प्रक्रिया है। इसमें हम अनेक प्रकार के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कार्रवाई की दिशा तय करने की योजना बनाते हैं। फैसले के अन्तर्गत उपलब्ध सूचनाओं का मूल्यांकन किया जाता है।
- भाषा विचारों की वाहक है। भाषा प्रतीकों की सहायता से सम्प्रेषण करने में मदद करती है। अमूर्त भावों व विचारों को सम्प्रेषित करने में भाषा विशेषकर सहायक होती है।
- यद्यपि हम चिन्तन तो भाषा के माध्यम से ही करते हैं, पर चिन्तन के लिए भाषा अनिवार्य नहीं है। बधिर व्यक्ति भी तो सुनते हैं जब कि उनके पास भाषा नहीं होती।

पाठान्त प्रश्न

1. संकल्पना की परिभाषा लिखें और संप्रत्ययों के निर्माण का वर्णन करें।
2. विचार प्रक्रिया के मुख्य घटक क्या हैं?
3. समस्या समाधान के विभिन्न चरणें का वर्णन करें तथा इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट करें।
4. चिन्तन के लिए भाषा का महत्व है।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

8.1 (क) अनुभव आधारित (ख) वर्गीकरण (ग) अमूर्त

(घ) विभेदीकरण, सामान्यीकरण (च) सूचना प्रक्रमण

8.2 (क) सही (ख) सही (ग) गलत (घ) गलत

8.3 (क) सही (ख) गलत (ग) गलत

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. खण्ड 8.1 देखें।
2. खण्ड 8.1 देखें।
3. खण्ड 8.2 देखें।
4. खण्ड 8.6 देखें।

9

अभिप्रेरणा

स्कूल से आने के आद आपको भूख लगी होती है, अतः आप कुछ खाना चाहते हैं। आप खाना इसलिए चाहते हैं क्योंकि कोई ऐसी शक्ति है जो आपको खाने के लिए मजबूर करती है। इसी प्रकार यदि आपसे यह प्रश्न पूछा जाए कि आप कॉलेज में प्रवेश क्यों चाहते हैं तो इसका जबाब कई प्रकार से दिया जा सकता है। आप कह सकते हैं कि आप ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं या एक अच्छी नौकरी प्राप्त करने के लिए डिग्री प्राप्त करना चाहते हैं। आप ढेर सारे मित्र बनाने के लिए भी कॉलेज में प्रवेश लेने के इच्छुक हो सकते हैं। कोई कार्य हम क्यों करते हैं या वे कारण जो हमें कुछ कार्यों को करने हेतु प्रेरित करते हैं। हमें इस मनोवैज्ञानिक प्रक्रिय का अध्ययन करने हेतु तैयार करते हैं। इस मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया को 'प्रेरणा' कहा जाता है। इस अध्याय में आप प्रेरणा की प्रकति, प्रेरणा के प्रकार आंतरिक व बाह्य प्रकार की प्रेरणा, द्वन्द्व तथ हताशा (या कुंठा) के बारे में अध्ययन करेंगे। प्रेरणा का ज्ञान हमें कार्य की गतिशीलता के बारे में जानने की अंतर्दष्टि प्रदान करता है।

उद्देश्य

इस अध्याय के अध्ययन के बाद आपके लिए संभव होगाः

- प्रेरणा के अर्थ की व्याख्या करना;
- प्रेरणा के प्रकारों का वर्णन करना;
- आंतरिक व बाह्य प्रेरणा के बीच अंतर कर पाना;
- प्रेरक के रूप में आत्मबल, जीवन लक्ष्यों तथा मूल्यों का वर्णन करना तथा
- द्वन्द्व तथा कुंठा का वर्णन करना।

9.1 प्रेरणा का अर्थ

प्रेरण शब्द मनोविज्ञान में बारम्बार प्रयोग किए जाने वाले शब्दों में से एक है। यह उन कारकों के बारे में जानकारी देता है जो प्राणियों को क्रियाशील या गतिशील बनाते हैं। जब हम लोगों को किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कार्य करते हुए देखते हैं तो हमें वहां प्रेरणा के होने का अंदाजा होता है। उदाहरण के लिए एक विद्यार्थी उसके समक्ष आने वाले लगभग प्रत्येक कार्यों को अत्यंत परिश्रम से करता हुआ दिखलाई पड़ता है तो इससे हमें यह अंदाजा लगता है कि उसके पास लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रेरणा विद्यमान है।

मनुष्य द्वारा किया जाने वाला हर व्यवहार किसी न किसी आंतरिक (मनोवैज्ञानिक) या बाह्य (परिवेश) संबंधी उत्प्रेरक द्वारा उत्पन्न होता है। कोई भी व्यवहार बेमतलब नहीं होता है। ऐसा प्रायः देखा जाता है कि लक्ष्य की उत्पत्ति के परिणामस्वरूप ही व्यवहार (कार्य) की शुरूआत होती है। इस प्रकार प्रेरणा को एक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कार्य करने के लिए व्यक्ति को तैयार करने और उसे दिशा निर्देश देने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। व्यक्ति द्वारा वह लक्ष्य प्राप्त कर लेने के बाद, यह प्रक्रिया प्रायः समाप्त हो जाती है।

कार्य शुरू करने की प्रक्रिया को तकनीकी तौर पर 'प्रेरणा' कहा जाता है। किसी निश्चित लक्ष्य की तरफ व्यवहार (कार्य) को लगाना प्रेरणा की अनिवार्यता है। प्रेरणा हमेशा प्रत्यक्ष रूप में दिखाई नहीं देती। इसका अनुमान लगाया जाता है तथा व्यवहार की व्याख्या करने के लिए प्रयोग किया जाता है। जब हम यह प्रश्न करते हैं कि ''किसी विशेष कार्य को करने के लिए एक व्यक्ति को कौन सी चीज प्रेरित करती है?'' तो आमतौर पर हमारा मतलब यह होता है कि व्यक्ति वह कार्य क्यों करता है। दूसरे शब्दों में कहें तो प्रेरणा कार्य के कारण या 'व्यवहार क्यों किया जाता है' को बतलाती है।

हम अपने सभी लक्ष्यों से अवगत नहीं हैं। अचेतन लक्ष्य भी व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं। यदि हमें लक्ष्य की सही जानकारी है तो व्यवहार को स्पष्ट करने के लिए हमारे पास एक शक्तिशाली साधन उपलब्ध है। हम अपने दिन प्रतिदिन के व्यवहार को विभिन्न लक्ष्यों के संदर्भ में स्पष्ट करते हैं। लक्ष्य से व्यवहार के बारे में भविष्यवाणी करने में भी हमें मदद मिलती है। हम यह बता सकते हैं कोई व्यक्ति भविष्य में क्या करेगा? लक्ष्य ये तो नहीं बता सकता कि बिलकुल यही होगा पर ये हमें जानकारी अवश्य दे देते हैं कि भविष्य में व्यक्ति की गतिविधियों का दायरा क्या होगा। इस प्रकार, शिक्षा के क्षेत्र में उपलब्धि प्राप्त करने का इच्छुक व्यक्ति स्कूल में कठिन परिश्रम करेगा। जिस व्यक्ति को खेलकूद में निपुणता हासिल करने की जरूरत होगी वह मैदान में कठोर परिश्रम करेगा। इसी प्रकार व्यापार व अन्य क्षेत्रों में भी होता है।

पाठगत प्रश्न 9.1

1. सही विकल्पों का प्रयोग करते हुए रिक्त स्थानों को भरिएः
   (क) प्राणियों में .... करने की प्रक्रिया की शुरूआत को प्रेरणा कहते हैं।
   (ख) सभी साभिप्राय व्यवहारों में .... होती है।
   (ग) प्रेरणा .... दष्टिगोचर है।
   (घ) लक्ष्य .... की भविष्यवाणी करने में सहायक होते हैं।
2. प्रेरणा की परिभाषा लिखें।

   ———————————————————————————————

   ———————————————————————————————

9.2 प्रेरणा की मूल संकल्पनाएं

'प्रेरणा' नामक इस अध्याय को पढ़ते समय आप आवश्यकता, उद्देश्य व प्रोत्साहन आदि जैसे कुछ शब्दों से परिचित होंगे। आइए इनमें से कुछ शब्दों के अर्थ जानें।

(क) आवश्यकताएं व अभिप्रेरक

प्राणियों के जरूरत की किसी वस्तु के अभाव या कमी की स्थिति, आवश्यकता है। समस्थिति को बनाए रखने या इसे संतुलित रखने के लिए प्राणियों को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना जरूरी होता है।

आवश्यकताएं कई तरह की होती हैं। भोजन पानी की आवश्यकता एक शारीरिक आवश्यकता है। यह आवश्यकता प्राणी के शरीर में भोजन या पानी के अभाव या कमी के कारण उत्पन्न होती है। मल–मूत्र त्यागने की आवश्यकता भी शारीरिक आवश्यकता है क्योंकि प्राणियों के लिए शरीर में उपस्थित गंदगी को बाहर निकालना जरूरी है। दूसरे व्यक्तियों से सम्पर्क स्थापित करने की आवश्यकता सामाजिक आवश्यकता है। अन्य सामाजिक आवश्यकताओं में प्रतिष्ठा, सामाजिक रुतबा, स्नेह, आत्म–सम्मान, आदि शामिल हैं। आवश्यकताओं की पूर्ति न होने पर व्यक्ति अपनी उन आवश्यकताओं के प्रति और भी जागरूक हो जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो भूखा हाने पर आपको भोजन की आवश्यकता तथा प्यासा होने पर आपको पानी की आवश्यकता होती है। इन मामलों में आप भोजन और पानी से वंचित हैं और आपका शरीर इनकी कमी से कहीं न कहीं कष्ट व असंतुलन की स्थिति में है।

आवश्यकताओं को व्यापक रूप से प्राथमिक या शारीरिक आवश्यकताएं, तथा द्वितीयक या सामाजिक आवश्यकताओं के रूप में वर्गीकत किया जा सकता है। भोजन, पानी, सेक्स, नींद तथा आराम की आवश्यकता प्राथमिक आवश्यकताएं हैं। उपलब्धि हासिल

करना सम्पर्क स्थापित करने तथा शक्ति प्राप्त करने की आवश्यकता सामाजिक आवश्यकताओं के उदाहरण हैं।

'अभिप्रेरक' शब्द से प्राणियों के लक्ष्य निर्देशित व्यवहार तथा उनके अंदर ऊर्जाप्रद स्थितियों के होने का बोध होता है जो व्यवहार को संचालित करते हैं। सामान्यतः इसका प्रयोग कुछ स्थितियों को बताने के लिए होता है। ये स्थितियाँ व्यक्ति को प्रतिक्रिया करने हेतु जागत करने के अलावा उसे प्रतिक्रिया हेतु या अभिप्रेरक के अनुरूप उचित व्यवहार करने के लिए पहले से तैयार भी कर देती हैं। अभिप्रेरक व्यक्ति की गतिविधियों को उसके लक्ष्यों की तरफ ले जाता है।

(ख) लक्ष्य

लक्ष्य एक अन्तिम अवस्था है जिसका प्रतिनिधित्व संज्ञान द्वारा किया जाता है। लक्ष्य के बारे में चिन्तन किसी व्यक्ति को अपने कार्यों को संगठित करने हेतु प्रेरित करता है। यदि भूख एक आवश्यकता है तो भोजन करना लक्ष्य। इस प्रकार लक्ष्य आवश्यकता से सीधे जुड़ा हुआ है। कुछ मामलों में व्यवहार भी आंतरिक लक्ष्यों द्वारा निर्देशित होता है। इसका अर्थ यह है कि व्यवहार के लिए हमेशा बाहरी लक्ष्यों का होना आवश्यक नहीं है। यह स्वतः में ही संतोषप्रद व आनंददायक हो सकता है। कुछ लोग केवल गाने, नाचने या खेलने मात्र के लिए ही गाने, नाचने या खेलने का कार्य कर सकते हैं। उन्हें इस तरह के कार्य पसंद होते हैं। इस प्रकार लक्ष्य आंतरिक या बाह्य हो सकते हैं।

(ग) प्रोत्साहन

प्रोत्साहन लक्ष्य वस्तुओं का बोध कराती है। इनसे आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। इनकी गुणवत्ता व मात्रा बदलती रहती है इसलिए इनसे प्राप्त होने वाली संतुष्टि का स्तर कम या ज्यादा हो सकता है। इस प्रकार अत्यधिक आकर्षक प्रोत्साहन प्राप्त करने के लिए कोई व्यक्ति बहुत ज्यादा प्रयास कर सकता है। वस्तुतः बहुत सारे प्रोत्साहन लोगों की जिन्दगी में बहुत ज्यादा महत्व रखते हैं और लोग इन प्रोत्साहनों को प्राप्त करने के लिए सभी संभव प्रयास करते हैं।

(घ) मूलप्रवत्तियाँ

मूलप्रवत्ति प्रेरणा के क्षेत्र की एक पुरानी संकल्पना है। इसे एक 'सहज जैविक बल' के रूप में परिभाषित किया गया है जोकि प्राणियों को एक निश्चित तरीके से कार्य करने के लिए पहले से ही तैयार करता है। कभी सभी व्यवहारों को कुछ मूल प्रवत्तियों का परिणाम माना जाता था। उस समय के मनोवैज्ञानिकों द्वारा चिह्नित कुछ मूलप्रवत्तियां हैं– झगड़ना, विकर्षण, उत्सुकता, आत्मदन्य तथा उपार्जन आदि। ऐसा समझा जाता था कि मूल प्रवत्तियां विरासत के रूप में प्राप्त होती हैं तथा आचरण को प्रभावित करती हैं, लेकिन अनुभव और ज्ञान से इनमें सुधार किया जा सकता है। अब इस शब्द का मानव व्यवहार के संबंध में ज्यादा प्रयोग नहीं होता है। कभी कभार पशुओं के व्यवहार को स्पष्ट करने के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान प्रयोगों में 'मूल प्रवत्ति' शब्द, पशुओं में पाई जाने वाली सहज प्रवत्तियों के लिए आरक्षित हो गया है।

टिप्पणी

पाठगत प्रश्न 9.2

उचित शब्दों का प्रयोग द्वारा रिक्त स्थानों का भरिए:

(क) आवश्यकता .... या .... की स्थिति है।

(ख) लक्ष्य .... अवस्था का .... प्रतिनिधित्व करता है।

(ग) प्रोत्साहन .... हैं, जो आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।

9.3 आवश्यकताओं के प्रकार

आवश्यकताओं को विभिन्न वर्गों में वर्गीकत करना कठिन है क्योंकि किसी प्रदत्त समय पर किसी व्यक्ति द्वारा किया गया व्यवहार किसी एक आवश्यकता का परिणाम नहीं हो सकता है। इसमें बहुत सारी आवश्यकताओं व अभिप्रेरकों का योगदान होता है। लेकिन मानव व्यवहार के विश्लेषण के माध्यम से प्राप्त जानकारियों के आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने मानव आवश्यकताओं को दो वहत वर्गों में वर्गीकत करने का प्रयास किया है। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया गया है ये दो वर्ग निम्नलिखित हैं– 1. प्राथमिक या शारीरिक आवश्यकताएं तथा 2. द्वितीयक या सामाजिक मनोजन्य आवश्यकताएं। प्राथमिक आवश्यकताएं शरीर के अंदर निहित होती हैं। वे सहज होती हैं इसमं शरीर की विभिन्न स्थितियां जैसे भूख, प्यास, सेक्स, बुखार, नींद व दर्द आदि शामिल हैं। ये आवश्यकताएं आवर्ती (अर्थात बार–बार आने–जाने वाली) हाती हैं क्योंकि इनकी पूर्ति केवल अल्प समय के लिए ही की जा सकती है।

द्वितीयक या सामाजिक मनोजन्य आवश्यकता मनुष्यों के लिए अनूठी है। इनमें से बहुत सी आवश्यकताएं ज्ञान से प्राप्त हैं तथा ये व्यक्ति को विशेष प्रकार का व्यवहार करने की ओर प्रवत्त करती हैं। चूंकि ये आवश्यकताएं ज्ञान प्राप्त करने से मिली हैं, इसलिए इनकी संख्या अलग–अलग व्यक्तियों में अलग–अलग होती हैं। शक्ति, सम्पर्क स्थापना करना, उपलब्धियां व अनुमोदन आदि कुछ महत्वपूर्ण सामाजिक–मनोजन्य आवश्यकताएं हैं।

इन आवश्यकताओं का मूल्यांकन करने के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अनेक मानकीकत परीक्षणों का विकास किया है। इनका मूल्यांकन परीक्षण की प्रक्रिया अपनाए बगैर भी अच्छी तरह से किया जा सकता है।

9.4 आवश्यकता-अधिक्रम

मानवतावादी मनोवैज्ञानिक अब्राहम मास्लो का तर्क था कि आवश्यकताएं सीढ़ी के डंडों की तरह क्रमिक रूप में व्यवस्थित होती हैं। उन्होंने शरीर क्रिया स्तर से लेकर आत्म

प्रागनुभव तक आवश्यकताओं को बढ़ते हुए क्रम में व्यवस्थित करने का प्रस्ताव रखा। आवश्यकताओं का क्रम जीने की मूल आवश्यकताओं या बिलकुल निचले क्रम की आवश्यकताओं से शुरू होकर आवश्यकताओं की उच्चतम अवस्था तक जाता था। एक स्तर की आवश्यकता की पूर्ति होते ही उससे उच्च स्तर की अगली आवश्यकता पैदा हो जाएगी और जीवन में घर कर लेगी। आवश्यकताओं का यह अधिक्रम चित्र 9.1 में दर्शाया गया है।

शरीरक्रियात्मक आवश्यकताएँ: शरीरक्रियात्मक आवश्यकताएं, समस्त आवश्यकताओं में सबसे प्रबल और सबसे निचले स्तर की, आवश्यकताएं हैं। इस प्रकार भूख, प्यास, सेक्स व आराम आदि की आवश्यकताएं इस सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर होती हैं। मैस्लो के अनुसार जब लम्बे समय तक इन शरीर क्रियात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती, दूसरी सभी आवश्यकताएं गायब हो जाती हैं।

जिन्दा रहने के लिए खाना जरूरी है। जीवन को चलाने वाली जैव–रासायनिक प्रक्रिया, भोजन से ही ऊर्जा व रासायनिक पदार्थ प्राप्त करती है। भोजन से वंचित रहने पर पेट में संकुचन होता है और यह व्यक्ति को भूख पीड़ा के रूप में महसूस होता है। जब ऐसा होता है तो भोजन प्राप्त करने में व्यक्ति की ऊर्जा खर्च होती है। आदतें व सामाजिक रीति–रिवाज जैसे कारक भी खाने के आदम को प्रभावित करते हैं।

भोजन के बिना तो हम हफ्तों रह सकते हैं लेकिन पानी के बिना एकाध दिनों से ज्यादा नहीं रह सकते हैं। प्राणियों का दिमाग उन्हें पानी पीने का निर्देश देता है। सेक्स की आवश्यकता भूख और प्यास से कई मायनों में अलग है। प्राणी के जिन्दा रहने के लिए सेक्स जरूरी नहीं है पर प्रजातियों के जिन्दा रहने के लिए यह अनिवार्य है।

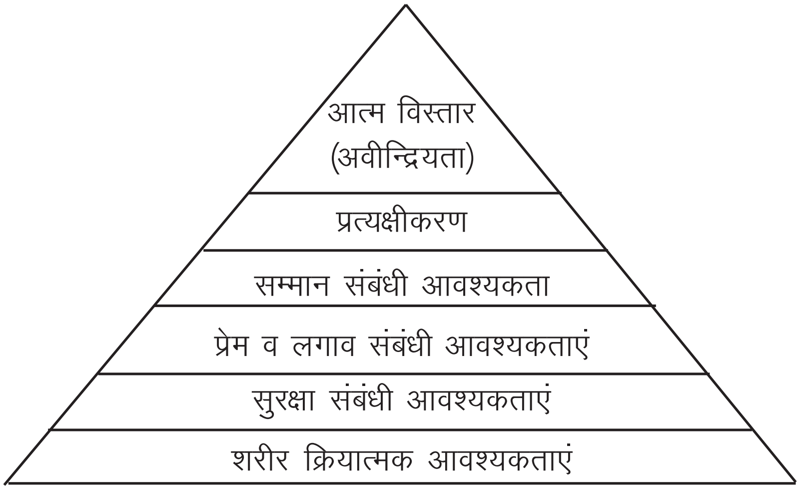

चित्र 9.1: *मास्लो का आवश्यकता अधिक्रम*

सुरक्षा संबंधी आवश्यकताएं: शरीरक्रियात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने के बाद, सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं की जीवन में प्रबल भूमिका हो जाती है। सुरक्षा संबंधी

आवश्यकताएं मुख्य रूप से व्यवस्था एवं सुरक्षा को बनाए रखने से संबंधित होती हैं ताकि व्यक्ति सुरक्षित, भयमुक्त तथा खतरों से बचा रहे।

प्रेम व लगाव संबंधी आवश्यकताएं: समाज के अन्य सदस्यों के साथ अंतरंग संबंध बनाने की आवश्यकता, प्रेम व लगाव संबंधी आवश्यकताएं हैं। लोग किसी संगठित समूह का स्वीकार्य सदस्य बनना चाहते हैं तथा एक पारिवारिक परिवेश में रहना चाहते हैं जैसे कि परिवार। ये आवश्यकताएं शरीरक्रियात्मक तथा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति व संतुष्टि पर निर्भर करती हैं।

सम्मान संबंधी आवश्यकता: प्रतिष्ठा संबंधी आवश्यकताएं निम्नलिखित दो वर्गों में विभक्त हैं–

(क) दूसरों से सम्मान प्राप्त करने से संबंधित आवश्यकता जैसे इज्जत, सामाजिक रुतबा, सामाजिक सफलता व प्रसिद्धि। ऐसे व्यक्ति जो निचले स्तर की आवश्यकताओं की पूर्ति से संतुष्ट होते हैं और आराम से रह रहे होते हैं, उनमें आत्ममूल्यांकन की आवश्यकता आ जाती है। उदाहरण के लिए, ऐसा समर्थ पेशेवर जिसने उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त की हो तथा उसे रोजगार प्राप्त करने के लिए चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं होती है। ऐसा व्यक्ति उपलब्ध रोजगारों में से रोजगार चुनने की स्थिति में हो सकता है अर्थात वह इस बात का निर्णय करने की स्थिति में हो सकता है उसे कौन सा रोजगार स्वीकार करना चाहिए और कौन सा नहीं।

(ख) आत्म प्रतिष्ठा, आत्म सम्मान एवं आत्म आदर

प्रतिष्ठा संबंधी आवश्यकताओं के अन्य प्रकारों में उपलब्धि हासिल करने की आवश्यकता समर्थ बनने की आवश्यकता, स्वीकति प्राप्त करने की आवश्यकता तथा पहचान बनाने की आवश्यकता आदि शामिल हैं। अपने को दूसरों से बेहतर समझने की आवश्यकता भी इसी वर्ग में आता है। अपनी इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए व्यक्ति अच्छी किस्म के व महंगे कपड़े खरीद सकता है।

आत्म प्रत्यक्षीकरण: आत्म सिद्धि, व्यक्ति की व्यक्तिगत क्षमताओं का उपयोग करने, उसके सामर्थ्य का पूर्णरूपेण विकास करने तथा अपने अनुकूल क्रियाकलापों में व्यक्ति के शामिल होने की इच्छा का बोध कराती है। व्यक्ति को इस बात का एहसास व संतोष होना चाहिए कि उसने अपनी क्षमता के अनुकूल उपलब्धि हासिल की है।

आत्म सिद्धि केवल तभी संभव है जबकि व्यक्ति की आवश्यकताएं उस सीमा तक पूरी हो जाएं कि व सारी उपलब्ध ऊर्जा को न तो रोके और न ही सारी ऊर्जा को खर्च कर दे। व्यक्ति, निचले स्तर की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने के बाद ही अगले उच्च स्तर की आवश्यकताओं को पूरा करने का कार्य कर सकता है।

आत्म विस्तार (अवीन्द्रियता): यह आवश्यकता का सर्वोच्च स्तर है। यहां व्यक्ति को पूर्ण यथार्थ का बोध हो जाता है। वह 'स्व' की सीमाओं से परे चला जाता है तथा समष्टि

व समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने में अपना योगदान देने लगता है। इस स्तर पर आकर व्यक्ति को सम्पूर्ण मानवता का ज्ञान हो जाता है। इस स्तर पर आध्यात्मिक कार्य महत्वपूर्ण हो जाते हैं।

इस अधिक्रम में यह माना गया है कि जब तक निचले क्रम की आवश्यकताओं की पूरी तरह से पूर्ति नहीं हो जाती ये आवश्यकताएं जीवन पर हावी रहती हैं। **मास्लो** के अनुसार सभी व्यक्ति आवश्यकताओं के पूरा करने में क्रमानुसार अनुगमन नहीं करते हैं अपवाद तो हर चीज के होते हैं। कभी–कभार व्यक्ति दूसरों को बचाने के लिए अपनी जान जोखिम में डालता है या किसी मूल्यवान वस्तु को बचाने के लिए सुरक्षा संबंधी अपनी आवश्यकताओं की तिलांजलि दे देता है (परवाह नहीं करता है)। भारतीय इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं जब महिलाओं में ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं जब महिलाओं ने अपने सम्मान की रक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि दी है। ऐसे अनेक स्वतंत्रता सेनानियों का उदाहरण भी मौजूद हैं जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देश की आजादी की लड़ाई लड़ते समय भूख–प्यास की परवाह नहीं की अर्थात भोजन–पानी त्याग दिया और इसकी वजह से मत्यु को प्राप्त हुए। यहां पर उच्चतम स्तर की आवश्यकता ने भूख और प्यास की आवश्यकता का अधिक्रमण कर लिया है। आत्महत्या करके व्यक्ति कभी कभार प्रेम, परिवार व मित्रों आदि का त्याग कर देता है। इस प्रकार यहां पर प्रेम की आवश्यकता और लगाव के भाव की उपेक्षा होती है।

यह ध्यान रखना चाहिए कि उपर्युक्त अधिक्रम का अर्थ यह नहीं है कि निचले स्तर की आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाने के बाद वे शिथिल/मंद पड़ जाती हैं तथा उच्चतम स्तर की आवश्यकताएं क्रियाशील हो जाती हैं।

9.5 उपलब्धि प्राप्ति की प्रेरणा

उपलब्धि प्राप्त करने या उत्कष्टता और उच्च स्तरीय कार्य निस्पादन की योग्यता प्राप्त करने की आवश्यकता व्यक्ति की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं में से एक है तथा यह सभी व्यक्तियों के अन्दर कुछ हद तक मौजूद रहती हैं। जिन व्यक्तियों में उपलब्धि हासिल करने की आवश्यकता प्रबल होती है, वे कठिन कार्यो को प्रमुखता देते हैं तथा अपनी कार्य निष्पादन क्षमता में सुधार लाते हैं। वे भविष्योन्मुख, बड़े लक्ष्यों हेतु इच्छुक रहते हैं तथा चुने हुए कार्य को करने के लिए दढ़ होते हैं वे कार्योन्मुख होते हैं तथा चुनौतीपूर्ण कार्यों से उनके कार्य निष्पादन का मूल्यांकन किया जा सकता है। यह मूल्यांकन, कुछ मानकों के आधार पर, व्यक्ति के कार्य निष्पादन की दूसरे व्यक्ति के कार्यनिष्पादन से तुलना करके किया जा सकता है। उपलब्धि हासिल करने की प्रेरणा, मानव प्रयास के विभिन्न क्षेत्रों जैसे रोजगार, स्कूल या खेलकूद प्रतियोगिताओं में देखी जा सकती है।

ऐसा पाया जाता है कि प्रारम्भिक जीवन में होने वाले तरह–तरह के अनुभव जीवन के अगले पड़ावों में, उपलब्धि हासिल करने की प्रेरणा को शक्ति प्रदान करते हैं। माता–पिता

द्वारा अपने बच्चों से लगाई गई उम्मीदें भी उपलब्धि हासिल करने की प्रेरणा को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जो माता–पिता अपने बच्चों से यह उम्मीद रखते हैं कि बच्चे कठिन परिश्रम करें वे माता–पिता बच्चों को प्रोत्साहित करते हैं तथा उनके कार्यों के लिए उनकी तारीफ करते हैं ऐसा करके वे बच्चों द्वारा उपलब्धि हासिल करने के लिए किए जा रहे व्यवहारों को बढ़ावा देते हैं।

उपलब्धि हासिल करने के लिए किए जा रहे व्यवहारों का स्तर अनेक कारकों पर निर्भर करता है। 'असफलता का भय' इन कारकों में से एक है। 'असफलता का भय' इन व्यवहारों की अभिव्यक्ति या प्रदर्शन को रोकता है। अर्थात उपलब्धि हासिल करने के लिए किए जा रहे अपने व्यवहारों को व्यक्ति 'असफलता के भय' से प्रकट नहीं करता है। पढ़ाई–लिखाई, खेलकूद या अन्य गतिविधियों में जब कोई सफलता हासिल करता है तो हम यही कहते हैं कि उपलब्धि हासिल करने की प्रेरणा अत्यंत प्रबल है।

9.6 आंतरिक प्रेरणा तथा बाह्य प्रेरणा

प्रेरणा के बारे में चिन्तन करते समय प्रायः हम इसके स्रोत को जानने का प्रयास करते हैं हम यह जानना चाहते हैं कि व्यक्ति में यह आंतरिक रूप से है या बाहरी रूप से। सौंपा गया कोई कार्य, पुरस्कार प्राप्त करने या किसी अन्य लाभ की प्रेरणा से भी किया जा सकता है। यह कार्य करने की बाहरी प्रेरणा है। इस प्रकार बाहरी पुरस्कार प्राप्त करने में कार्य, साधक होता है। ऐसी सभी स्थितियों में, जिस व्यक्ति को कार्य सौंपा जाता है, उस पर बाहरी स्थितियों का नियंत्रण होता है। इस तरह की स्थितियां बाह्य प्रकार की प्रेरणा का चित्रांकन करती हैं। दूसरी तरफ ऐसी भी स्थितियां होती हैं जिसमें प्रेरणा का स्रोत कार्य के अंदर ही निहित होता है। ऐसी स्थितियों में हम इसलिए कार्य करते हैं कि कार्य अपने आप में दिलचस्प होता है। तथा इसके लिए किसी बाहरी प्रेरणा की आवश्यकता नहीं होती है। यहां किसी बाहरी पुरस्कार को प्राप्त करने में कार्य साधक नहीं होता है। यहां नियंत्रण की स्थिति व्यक्ति के अंदर होती है। व्यक्ति स्वतः प्रेरणा से कार्य को करता है और कार्य व्यक्ति अपने पुरस्कार के रूप में कार्य करता है। यह स्थिति आंतरिक प्रेरणा का बोध कराती है जैसे बच्चे का खेलना, दिलचस्प उपन्यास पढ़ना या कविता–कहानी लिखना।

ऐसा पाया गया है कि आंतरिक प्रेरणा उच्च दर्जे के कार्य, चुनौतियों का समाना करने तथा उत्कष्टता की खोज की ओर ले जाती है। वस्तुतः परिणाम के प्रति आसक्ति प्रक्रिया या क्रियाकलापों को प्रायः बाधित करती है। इसीलिए भारतीय चिन्तकों ने 'अनासक्ति' के महत्व को समझा। यह एक महतवपूर्ण कार्य है जिस पर हमारा नियंत्रण होता है। इसलिए हमें कार्य के परिणाम की चिन्ता छोड़कर अधिक से अधिक ध्यान कार्य पर देना चाहिए। आधुनिक जीवन में बाहरी पुरस्कारों पर ज्यादा से ज्यादा जोर दिया जाता है तथा प्रत्येक वस्तु संविदात्मक होती जा रही है। रिश्तों का दायरा सिकुड़ता जा रहा है।

यह स्थिति लोगों की व्यक्तिगत व सामाजिक जिन्दगी में अनेक समस्याएं पैदा कर रही हैं। इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि हम अपने क्रियाकलापों की योजना इस प्रकार बनाएं तथा रिश्तों को इस प्रकार से संगठित करें कि कार्य से हितों की पूर्ति होती रहे।

पाठगत प्रश्न 9.3

1. आवश्यकता अधिक्रम के सिद्धांत का प्रतिपादन किसने किया? आवश्यकताओं को अधिक्रम में दिखलाएं।

   ____

   ____

   ____

2. आंतरिक प्रेरणा क्या है? एक उदाहरण दें।

   ____

   ____

   ____

3. बाह्य प्रेरणा क्या है? एक उदाहरण दें।

   ____

   ____

   ____

9.7 आत्मबल

किसी कार्य को करने की अपनी क्षमता के बारे में लोगों की अपनी धारणाएं होती हैं। ऐसी धारणाएं उनके कार्य निष्पादन के स्तर को प्रभावित करती हैं। आत्मबल संबंधी धारणाएं लोगों द्वारा अपने बारे में बनाए गए आत्मपरक मानदण्ड हैं। ये धारणाएं किसी विशेष लक्ष्य के निर्धारण में निर्णायक भूमिका अदा करती हैं। बण्डूरा द्वारा प्रतिपादित आत्मबल की इस अवधारणा का प्रयोग अनेक तरीकों से लोगों को प्रेरित करने के लिए किया गया है। उचित या वास्तविक आत्मबल धारणाओं का ज्ञान प्राप्त कर लेने के बाद व्यक्ति अपने व्यवहारों को नियोजित कर सकता है। तथा उसका कार्य निस्पादन काफी बेहतर हो सकता है। आत्मबल संबंधी धारणाएं सामंजस्य बिठाने व शारीरिक स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। लोगों का यह विश्वास है कि कुछ निश्चित स्थितियों

में अपनी क्षमताओं से वे अच्छा कार्य कर सकते हैं– आत्मबल की धारणा है। ये धारणाएं समयानुसार विकसित होती हैं। ये ज्ञान के उस विकास को दर्शाती हैं कि कार्यों से परिणाम उत्पन्न होते हैं तथा व्यक्ति कार्य को जन्म दे सकता है जिससे उसको परिणाम प्राप्त होते हैं। यह ध्यान रखना चाहिए कि आत्मबल की धारणाएं भी सामूहित स्तर पर कार्य करती हैं। इस प्रकार सामूहिक आत्मबल में किसी समूह की साझा धारणाएं अपनी संयुक्त क्षमता समेट उपस्थित रहती हैं ताकि निर्धारित स्तर की उपलब्धि को हासिल करने के लिए अपेक्षित कार्रवाई की दिशा तय की जा सके तथा उसे क्रियान्वित किया जा सके।

9.8 मूल्य

प्रेरणा प्रदान करने में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्हें वांछित व पोषणयोग्य लक्ष्यों के रूप में देखा जाता है जो कि मानव जीवन में पथ–प्रदर्शक सिद्धान्तों के रूप में कार्य करते हैं। मूल्य, निर्णय लेने में सहायक होते हैं। ये आवश्यकताओं को प्राथमिकता प्रदान करते हैं। मूल्यों की वजह से ही लोग बड़े और उद्देश्यपूर्ण कार्यों को करने की ओर प्रवत्त होते हैं। विशिष्ट प्रकार के व्यवहारों से जुड़े, सुख और दुख का प्रभाव अस्थायी या क्षणिक होता है। मूल्यों के विश्लेषण में नैतिक मूल्यों को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। ये मूल्य चयन व कार्य का मार्गदर्शन करते हैं। नैतिक मूल्यों को अच्छे व बुरे के बीच बांटा गया है। अनेक देशों से प्राप्त जानकारी के आधार पर हाल ही में किए गए एक अध्ययन में कुछ मूल्यों को नोट किया गया है। इन मूल्यों का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

शक्तिः इसके अन्तर्गत सामाजिक हैसियत व प्रतिष्ठा तथा लोगों व संसाधनों पर नियंत्रण व प्रभुत्व आदि आते हैं।

उपलब्धिः इसके अंतर्गत सामाजिक मानदण्डों के अनुरूप क्षमता प्रदर्शन के द्वारा व्यक्तिगत सफलता प्राप्त करना शामिल हैं।

सुखवादः इसके अन्तर्गत अपने लिए ऐन्द्रिक सुख प्राप्त करना आता है।

स्फूर्तिः इसके अन्तर्गत उत्तेजना, नवीनता और जीवन में चुनौती आते हैं

आत्म-निर्देशनः इसके अंतर्गत स्वतंत्र विचार व कार्य पसंदगी, सजन व खोज आदि शामिल हैं।

सार्वभौमवादः इसके अंतर्गत समाज के कल्याण के लिए समझ, प्रशंसा, सहनशीलता, और सुरक्षा आदि आते हैं।

परोपकारः इसके अंतर्गत उन लोगों के कल्याण का परिरक्षण व इसकी वद्धि शामिल है जिसके साथ व्यक्ति लगातार सम्पर्क में रहता है।

परम्पराः इसमें रीति–रिवाजों का सम्मान, प्रतिबद्धता व इनकी स्वीकति तथा वे विचार शामिल हैं जिन्हें पारम्परिक संस्कतियों व धर्मो में महत्व प्रदान किया गया है।

अनुपालनः इसके अंतर्गत ऐसे कार्य निग्रह, प्रवत्ति व आवेग आते हैं जिनसे दूसरों को क्षति पहुंचने या सामाजिक अपेक्षाओं या मानदण्डों का उल्लंघन होने की संभावना हो।

सुरक्षाः इसमें बचाव, समरसता, तथा समाज, संबंधों व स्वयं की स्थिरता शामिल है।

भारतीय सन्दर्भ में धर्म के ढांचे में अनेक ऐसे मूल्य उपलब्ध है जिन्हें जीवन को बनाए रखने का मूल माना गया है। इसमें सत्य, आस्तेय, धति, धी, विद्या, अक्रोध, क्षमा, शौच, इंन्द्रिय–निग्रह तथा दम शामिल हैं। ये मूल्य सामाजिक व व्यक्तिगत स्तर पर जीवन को बनाए रखने व उसे बढ़ाने के लिए आधार उपलब्ध करवाते हैं।

9.9 कुंठा व द्वन्द्व

इस तथ्य से आप अवश्य अवगत होंगे कि आवश्यकताओं की पूर्ति करना हमेशा आसान नहीं होता है। आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए जब हम प्रयास करते हैं तो हमें कुछ समस्याओं का समाना करना पड़ता है। कई बार हमें असफलता हासिल होती है। बहुत सारी बाधाएं भी हमें लक्ष्य को प्राप्त करने से रोकती हैं। आवश्यकताओं के पूरा न होने पर हम कुंठाग्रस्त हो जाते हैं।

कुंठा किसी व्यक्ति के अंदर आने वाला वह भाव होता है जिसमें वह ऐसा अनुभव करता है कि उसकी महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करने के उसके सभी प्रयास बेकार जा रहे हैं। उसे सफलता अवरुद्ध नजर आती है। कुंठा किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किए जाने वाले प्रयासों के अवरुद्ध हो जाने की स्थिति का बोध कराती है। अपेक्षित लक्ष्यों की प्राप्ति में आने वाली रुकावटों के कारण व्यक्ति एक प्रकार के विक्षुब्ध व्यवहार का प्रदर्शन करता है।

प्रेरणा के कुंठित या निरुद्ध हो जाने के कारण व्यक्ति को बेचैनी, खिन्नता/उदासी/दुख व क्रोध आदि की अनुभूति होती है। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि आप फिल्म देखने या खेलने जाना चाहते हैं परन्तु आपके माता–पिता आपको उसाकी अनुमति नहीं प्रदान करते हैं। ऐसी स्थिति में आपके व्यवहार में परेशानी गुस्से या चिड़चिड़ापन का भाव दिखलाई देता है। कुंठा प्रायः आक्रामकता को जन्म देती है। कुंठा की जड़ इस आक्रामकता के निशाने पर होती है।

सामान्यतः कुंठा के मुख्य तीन स्रोत हैं। ये तीनों स्रोत निम्नलिखित हैं–

1. **पारिवेशिक शक्तियांः** लक्ष्यों की पूर्ति को पारिवेशिक तत्व कुंठित कर सकते हैं। ये बाधाएं भौतिक हो सकती हैं जैसे धन का अभाव, रास्तों का बंद हो जाना आदि। ये सामाजिक भी हो सकती हैं। उदाहरण के लिए हो सकता है कि आपके माता–पिता, शिक्षक या सहपाठी आपको उस कार्य को करने से रोक दें, जिन्हें आप करना चाहते हों।

2. **व्यक्तिगत कारण या सीमाएं:** ये लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं होने देते जिससे कुंठा पैदा होती है। यह व्यक्तिगत अक्षमता या शारीरिक या मानसिक हो सकती है। व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषताएं जैसे उसका व्यक्तित्व या समझदारी उसी कार्य निष्पादकता को प्रभावित करते हैं। सामर्थ्य की बंदिशें व्यक्ति को कुंठित करती हैं क्योंकि इसकी वजह से व्यक्ति अति ऊचे लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर पाता है। कई बार हमारे लक्ष्य द्वन्द्वात्मक होते हैं जो कुंठा को जन्म देते हैं।

3. **द्वन्द्वः** द्वन्द्व ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति को दो या दो से अधिक विशिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु दो या उससे अधिक बेमेल असंगत या तरीकों से कार्य करना होता है। यह स्थिति तब आती है जब व्यक्ति दो या उससे अधिक लक्ष्यों के बीच चुनाव कर पाने में असमर्थ होता है।

हम सभी को जीवन के प्रत्येक चरण से किसी न किसी स्तर के द्वन्द्व से गुजरना पड़ता है। कभी कभार हमारे सामने ऐसी स्थिति आ जाती है जब हमें दो या उससे अधिक विकल्पों में से किसी एक या कुछ का चयन करना होता है। उदाहरण के लिए हमें यह निर्णय लेना पड़ सकता है कि हम पुस्तक खरीदें या उस पैसे से फिल्म देखें। एक तरफ हो सकता है कि आप खेलना चाहें व अपने दोस्त के साथ समय बिताना चाहें तथा दूसरी तरफ आपको यह लगे कि इस समय के दौरान पढ़ाई करनी चाहिए ताकि परीक्षा में सफलता प्राप्त की जा सके। यहां पर खेलने की इच्छा व दोस्त के साथ समय बिताने की इच्छा का परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के उद्देश्य के साथ द्वन्द्व चल रहा है।

द्वन्द्व के प्रकार

द्वन्द्व तीन प्रकार के होते हैं जिन्हें दष्टिकोण–दष्टिकोण द्वन्द्व, परिवर्जन–परिवर्जन द्वन्द्व, दष्टिकोण–परिवर्जन।

दष्टिकोण दष्टिकोण द्वन्द्वः यह वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति को दो अच्छे व समान रूप से आकर्षक लक्ष्यों में से एक का चयन करना होता है। यह तब घटित होता है जब दो आनन्ददायक लक्ष्य हमारी पहुंच के अंदर होते हैं। हमें इनमें से किसी एक का चयन करना होता है। इस तरह के द्वन्द्व का उदाहरण उस स्थिति में पाया जा सकता है जबकि आपको उच्च शिक्षा के लिए दो समान आकर्षक पाठ्यक्रमों में प्रवेश प्राप्त करने का प्रस्ताव एक साथ प्राप्त हो और आपको उसमें से चयन करना हो कि आप किस पाठ्यक्रम में प्रवेश लेंगे।

परिवर्जन परिवर्जन द्वन्द्वः यह दूसरे प्रकार का द्वन्द्व है, यह तब होता है जब हमें दो समान अवांछनीय व नकारात्मक लक्ष्यों में से किसी एक को चयन करना हो। उदाहरण के लिए यह द्वन्द्व आपके समक्ष तब आ सकता है जब आपको ऐसे दो लक्ष्यों में से किसी एक का चयन करना हो, जो आपको समान रूप से नापसंद हों।

दष्टिकोण परिवर्जन द्वन्द्वः इसमें हम एक ही प्रकार के लक्ष्य के प्रति आकर्षित भी होते हैं तथा विकर्षित भी। यह तब उत्पन्न हाती हैं जब किसी एक ही लक्ष्य के प्रति हमारी भावनाएं सकारात्मक भी होती हैं तथा नकारात्मक भी अर्थात हम उसे पसंद भी करते हैं और नापसंद भी। उदाहरण के लिए मान लीजिए आप किसी लड़की से शादी करना चाहते हैं क्योंकि आप उसे बेहद प्यार करते हैं लेकिन आपके माता–पिता आपकी इस इच्छा से सहमत नहीं है। वे चाहते हैं कि आप उस लड़की से शादी न करें। चूंकि आप अपने माता–पिता को दुखी नही करना चाहते हैं इसलिए आप उस लड़की से शादी नहीं कर सकते। इस तरह के द्वन्द्व से छुटकारा पाना बहुत कठिन होता है तथा इससे आप भावनात्मक रूप से बहुत परेशान होते हैं।

आपने क्या सीखा

- प्रेरणा उस संचालक व कर्षण शक्तियों का बोध कराती है जिसके परिणामस्वरूप किसी लक्ष्य के प्रति निर्देशित व्यवहार क्रमिक रूप में चलते हैं। प्राथमिक आवश्यकताओं जैसे भूख, प्यास और सेक्स की उत्पत्ति शरीर की शरीर क्रियात्मक अवस्था में होती है। भूख की उत्पत्ति, ब्लड शूगर के निर्धारित स्तर के नीचे चले जाने की वजह से हो सकती है। पानी की कमी की वजह से खून की मात्रा में आने वाली गिरावट के कारण प्यास पैदा होती है। सेक्स करने की प्रेरणा सेक्स हारमोन्स पर निर्भर होती है।

- सामाजिक–मनोजन्य लक्ष्य जैसे कि शकित प्राप्त करने की आवश्यकता, लगाव, उपलब्धि व स्वीकति ज्ञान से प्राप्त लक्ष्य हैं व इसमें अन्य लोग भी शामिल होते हैं। उपलब्धि हासिल करने की आवश्यकता, कार्यों को पूरा करने तथा कार्य करने में सफलता प्राप्त करने का लक्ष्य है। शक्ति की प्रेरणा एक सामाजिक प्रेरण है जिसमें प्रभावित करना, नियंत्रण स्थापित करना, हावी होना, नेतत्व करना, दूसरों को आकर्षित करना तथा दूसरों की नज़रों में अपनी प्रतिष्ठा को बढ़ाना –लक्ष्य होता है।

- आंतरिक प्रेरणाएं वे क्रियाकलाप हैं जिसके लिए किसी स्पष्ट पुरस्कार की आवश्यकता नहीं होती है बल्कि इन क्रियाकलापों को करने में व्यक्ति को मजा आता है तथा संतुष्टि प्राप्त होती है। सक्षमता एक आंतरिक प्रेरणा है। लोगों में विद्यमान आत्मबल, जीवन के लक्ष्य, तथा मूल्य भी प्रेरणा के स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। प्रेरण प्रायः अवरुद्ध या विफल होती हैं। इस विफलता के प्रमुख स्रोत पर्यावरणिक कारक, व्यक्तिगत कारक तथा द्वंद हैं। तीन प्रकार के द्वंद हैंः

  क) दष्टिकोण–दष्टिकोण द्वंद,

  ख) परिवर्जन–परिवर्जन द्वंद तथा

  ग) दष्टिकोण–परिवर्जन द्वंद।

पाठान्त प्रश्न

1. संक्षेप में प्रेरणा की प्रकति का उल्लेख कीजिए।
2. प्रेरणा की मूल अवधारणाओं का उल्लेख कीजिए।
3. प्राथमिक आवश्यकताओं से आप क्या समझते हैं। ये सामाजिक–मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं से कैसे भिन्न हैं?
4. स्वसामर्थ्य क्या है? व्यवहार के साथ इसके संबंध को दर्शाइए।
5. मूल्यों को परिभाषित कीजिए तथा कुछ महत्वपूर्ण मूल्यों का वर्णन कीजिए।
6. कुंठा के स्रोत क्या हैं? उद्देश्यों के द्वंद के तीन प्रकारों के नाम बताइए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

9.1

1. क. क्रिया

   ख. प्रेरणा

   ग. नहीं

   घ. व्यवहार

2. प्रेरणा एक लक्ष्य विशेष के प्रति व्यवहार को क्रियाशील बनाने, अनुरक्षण करने तथा निर्देशित करने की प्रक्रिया है।

9.2

क) हीतना की कमी   ख) अंतिम संज्ञान तथा ग) वस्तु

9.3

1. **मास्लो**! अनका आवश्यकता अधिक्रम–

   (i) शारीरिक आवश्यकताएं

   (ii) सुरक्षा आवश्यकताएं

   (iii) प्रेम व लगाव संबंधी आवश्यकताएं

(iv) सम्मान संबंधी आवश्यकताएं

(v) आत्म प्रत्यक्षीकरण

(iv) आत्म विस्तार (अतीन्द्रियता)

2. आन्तरिक प्रेरणा वह स्थिति है जब प्रेरणा स्वयं के व्यवहार के कारण संतोष से उत्पन्न होती है।

3. बाह्य प्रेरणा वह स्थिति है जब प्रेरणा बाहरी पुरस्कारों के कारण उत्पन्न होती है।

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. खण्ड 9.1 का संदर्भ लें
2. खण्ड 9.2 का संदर्भ लें
3. खण्ड 9.7 का संदर्भ लें
4. खण्ड 9.8 का संदर्भ लें
5. खण्ड 9.9 का संदर्भ लें

10

संवेग

जब हम लम्बे समय के पश्चात किसी मित्र से मिलते है तो हम खुशी का अनुभव करते है; जब एक बच्चा अपनी मां से चिपकता है तो मां उसे प्यार करती है; जब हमारे माता–पिता या अध्यापकों द्वारा हमारी प्रशंसा की जाती है तो हम गर्व का अनुभव करते हैं। इसी प्रकार, हमारे दैनिक जीवन में हम हर्ष तथा दुख, उत्तेजन तथा निराशा, स्नेह तथा भय और अनेक अन्य संवेगों का अनुभव करते हैं। इस पाठ में आप अध्ययन करेंगे कि संवेग क्या हैं, इन संवेगों की अभिव्यक्ति कैसे की जाती है तथा कैसे संवेग हमारे व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आपके लिए सम्भव होगाः

- ''संवेग क्या है'', का उल्लेख करना;
- संवेग का संज्ञान तथा प्रोत्साहन के साथ संबंध का उल्लेख करना;
- संवेगात्मक अनुभव की कायिकी का वर्णन करना;
- संवेग की विभिन्न अभिव्यक्तियों का वर्णन करना।

10.1 संवेग की प्रकति

'संवेग' शब्द लेटिन भाषा के शब्द 'ईमोवीरी' से बना है जिसका अर्थ है, उत्तेजित करना, क्षुब्ध करना, उत्साहित करना। संवेग सामान्यतः उत्तेजित करने वाली प्ररिस्थिति से

संबंधित है जो विषयगत अनुभव तथा भावात्मक प्रतिक्रियाओं में शामिल होती है। वे सुखद या दुखद हो सकते हैं। सुखद संवेग हर्ष के स्रोत होते हैं जबकि दुखद संवेग क्षुब्ध मानसिक स्थिति यथा आक्रोश, भय, दुश्चिंता आदि से संबंधित हैं। प्रत्येक संवेग के तीन मूल पहलू हैं।

(i) **संज्ञानात्मक पहलू:** इसमें विचार, विश्वास तथा उम्मीदें शामिल हैं जो तब उत्पन्न होते हैं जब हम संवेगों का अनुभव करते हैं। उदाहरण के लिए एक उपन्यास में आपका मित्र लोगों तथा स्थानों का व्यापक वर्णन पाता है जबकि आपको वह अवास्तविक सा लग सकता है।

(ii) **शारीरिक पहलू:** इसमें शारीरिक सक्रियता शामिल है। जब आप भय या क्रोध जैसे संवेगों का अनुभव करते हैं तो आप पाते हैं कि नाड़ी–गति, रक्त चाप तथा श्वसन की प्रक्रियाएं तेज हो जाती हैं। आपको पसीना भी आ सकता है।

(iii) **व्यवहारात्मक पहलू:** इसके विभिन्न प्रकार के भावात्मक अभिव्यक्तियां शामिल होती हैं। यदि आप अपनी मां या अपने पिता को क्रोध या हर्ष के समय देखें तो आप पाएंगे कि क्रोध, हर्ष तथा अन्य संवेगों के दौरान उनके चेहरे के हावभाव, शारीरिक अंगविन्यास तथा उनकी आवाज की टोन में अन्तर होगा। सूची बनाएं कि आप क्या करते हैं जब आपः–

खुश होते हैं	दुखी होते हैं	भयभीत होते हैं
––––––	–––––––	––––––––
––––––	–––––––	––––––––
––––––	–––––––	––––––––

10.2 संवेग के सिद्धान्त

मनोवैज्ञानिकों ने संवेग के सांवति को विभिन्न रूपों में उल्लेख करने का प्रयास किया है। **विलियम जेक्स** तथा कार्ल लैंगे ने कहा था कि शारीरिक परिवर्तन संवेगात्मक अनुभव को बढ़ाते हैं। उनके अनुसार पहले आप रोते हैं तब दुख का अनुभव करते हैं, पहले आप भागते हैं और तत्पश्चात आपको भय की अनुभूति होती है। इस क्रम को चित्र १०.१ में प्रस्तुत किया गया है।

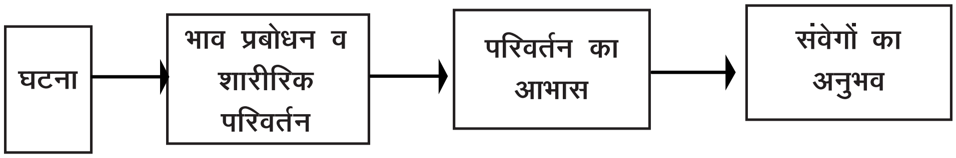

चित्र 10.1: *जेम्स–लैंगे का संवेग का सिद्धान्त*

कैनन तथा **बारड** कहते हैं कि जब हम किसी घटना के रूबरू होते हैं तो शारीरिक परिवर्तनों का अनुभव तथा संवेगों की प्रत्यक्षीकरण एक साथ करते हैं।

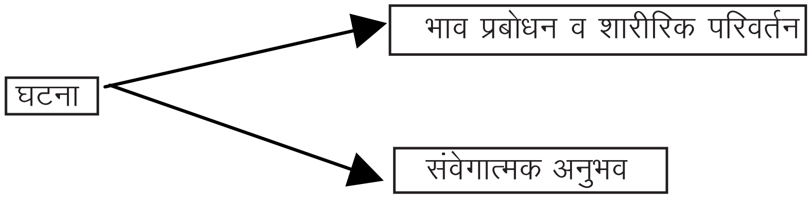

चित्र 10.2: *कैनन बेर्ड का संवेग अनुभव का सिद्धान्त*

एस ऐचटर तथा **जे. इ. सिंगर** ने सुझाया कि संवेगों की अनुभूति में संज्ञात्मक प्रक्रियाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उनके अनुसार यदि आप बाहरी उद्दीपन से भाव प्रबोधित हैं तो आप भाव प्रबोधन को नोटिस करेंगे तथा परिवेश में यह खोजने का प्रयास करेंगे कि भाव प्रबोधन क्यों उत्पन्न हुआ। उसके पश्चात आप उस संवेग को नाम दे पाएंगे जिसका आप अनुभव कर रहे थे। जैसे यदि एक कुत्ता व्यक्ति पर भौंकता है तो व्यक्ति उसे भय का नाम देता है जबकि परीक्षा में सफल होने वाला विद्यार्थी अपने संवेग को खुशी का नाम प्रदान करता है।

जब हम किसी घटना या उद्दीपन से उत्साहित होते हैं तो वह हमें संवेगात्मक अनुभव का आधार उपलब्ध कराता है। यह उत्सुकता गुणारोपण प्रक्रिया द्वारा विशिष्ट संवेग का रूप प्राप्त कर लेती है। यदि आपका हृदय तेज गति से धड़कने लगे व उंगलियां कांपने लगें तो क्या यह भय, क्रोध या हर्ष या फ्लू का अहसास होगा? यदि आपके मित्र ने आपका निरादर किया है तो आप अपनी भावनाओं को 'क्रोध' के रूप में व्यक्त करेंगे। यदि अचानक एक सांप आपके सामने आ जाता है तो आप भय का अनुभव करेंगे और तीव्र गति से दौड़ने लगेंगे किन्तु यदि आप किसी रेस में दौड़ रहे हों तो आप उत्साह का अनुभव करेंगे तथा जीतने के उद्देश्य से और तेज दौड़ेंगे। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि इन दोनों ही मामलों में आपका शरीर उत्तेजन की स्थिति में होगा तथा परिस्थिति तथा गुणारोपण के आधार पर भिन्न–भिन्न संवेगों का अनुभव किया जाता है।

10.3 संवेगों के आयाम तथा विकास

विभिन्न संस्कतियों पर किए गए हाल के अध्ययनों से पता चला है कि संवेगों को दो आयामों में रखा जा सकता है यथा भाव प्रबोधन तथा कर्षण शक्ति। इस प्रकार व्यक्ति को भाव प्रबोधन तथा सकारात्मक व नकारात्मक (यथा सुखद बनाम दुखद) संवेगात्मक अनुभव की उच्च या निम्न स्तर प्राप्त हो सकता है।

हालांकि जन्म से ही बच्चे में संवेगात्मक प्रतिक्रिया करने की सामान्य क्षमता विद्यमान होती है। संवेग परिपक्वता तथा सीखने से और विकसित होते हैं। शिशु रोन, हंसने आदि जैसे संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं को दर्शाता है। कल्पना व समझ के विकास के साथ–साथ

बच्चा परिवार के सदस्यों तथा अजनबियों के बीच अन्तर करने लगता है तथा अजनबियों के प्रति भय विकसित कर लेता है।

बच्चे अपने माता–पिता, भाई–बहनों तथा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ आत्मीयता प्राप्त करके अपने संवेगों को अभिव्यक्त करना सीख जाते हैं। उदाहरण के लिए, सामाजिक संव्यवहार में क्रोध व हर्ष की अभिव्यक्तियां व्यापक रूप से देखी जाती हैं तथा बच्चा उन्हें अभिव्यक्त करना आरम्भ कर देता है। यदि हम कुछ संस्कतियों के विचित्र संवेगात्मक अभिव्यक्तियों को देखते हैं तो संवेगात्मक विकास में सीखने की भूमिका स्पष्ट हो जाती है। उदाहरण के लिए भारतीय संस्कति में पिता खुलकर अपने बच्चों के प्रति स्नेह व्यक्त नहीं करता है क्योंकि उक्त समाज में इसे उचित नहीं समझा जाता है जबकि पश्चिमी संस्कति में ऐसी कोई अंतरावरोध नहीं है। अंधेरे, विजली कड़कने, कतिपय जानवरों या वस्तुओं के प्रति भय के अनुकूलन में सीखना जिम्मेदार है।

क्रिया

आप अपने मित्र को कहें कि वह आपका अवलोकन करे और तत्पश्चात आप अपनी जीभ उसकी ओर निकालें। आपका मित्र इसका क्या अर्थ निकालेगा? तब आप ताली बजाइए तथा उसे इसका अर्थ निकालने को कहिए। क्या आप जानते हैं कि आपके मित्र द्वारा इन क्रियाओं का निकाला गया अर्थ चीन के लोगों के अर्थ से पूर्णतः भिन्न होगा। चीनी लोग ताली तब बजाते हैं जब वे भयभीत होते हैं किन्तु हम खुशी में ताली बजाते हैं। चीनी लोग आश्चर्य की अभिव्यक्ति के लिए जीभ निकालते हैं किन्तु आप इसे चिढ़ाने के अर्थ में लेते हैं।

संवेगों की कतिपय महत्वपूर्ण विशेषताएं

(i) आप उस समय संवेग का अनुभव करते हैं जब आपकी कोई मूलभूत आवश्यकता पूरी नहीं होती है या बाधित होती है। आप अपनी आवश्यकताओं के पूरे होने पर सकारात्मक संवेग का भी अनुभव करते हैं।

(ii) संवेग के प्रभाव के अन्तर्गत आप शारीरिक परिवर्तनों यथा चेहरे में भावों, अंगविन्यास, दिल की धड़कन व रक्तचाप की गति में परिवर्तन, तथा शावस प्रतिकति में परिवर्तनों का अनुभव करते हैं।

(iii) संवेग से आपके सोचने, विवेचन, स्मति तथा अन्य मनोवैज्ञानिक क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है।

(iv) संवेगात्मक स्थिति के दौरान अत्यधिक मात्रा में उर्जा का सजन होता है जो विकट स्थितियों से निपटने में सहायक होती है। उदाहरण के लिए यदि एक कुत्ता आपके पीछे दौड़ता है तो आप अपनी सामान्य गति से अधिक तीव्र गति से दौड़ते हैं।

(v) परिपक्वता तथा अध्ययन संवेगों के विकास एवं अभिव्यक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

(vi) जब आपको सुखद संवेगों का अनुभव होता है तो आप खुश होते हैं, आपका मूड अच्छा या सकारात्मक रहता है। इसके विपरीत, दूखद संवेगात्मक अनुभव व्यक्ति को दु:ख व नकारात्मक मूड को जन्म देते हैं।

(vii) संवेग के अनुभव पहले आपके कार्यनिष्पादन की क्षमता को कुछ स्तर तक बढ़ा देते हैं किन्तु यदि ये ज्यादा बढ़ता है या लम्बे समय तक बना रहता है तो यह अपने निष्पादन के स्तर को कम कर देता है।

10.4 प्रेरणा तथा संवेग के मध्य संबंध

पूर्ववर्ती चर्चा के दौरान आप यह समझ गए होंगे कि संवेग तथा प्रेरणा के मध्य घनिष्ठ संबंध होता है, हमारे जीवन में प्रतिदिन के अनुभवों में प्रेरणा संवेग के साथ उपस्थित रहती है। जब आप अपने पीछे दौड़ रहे पागल कुत्ते से डरते हैं तो मदद के लिए चीखते हैं। इस परिस्थिति में भय एक संवेग है जो उसे व्यवहार करने (दौड़ने) के लिए निर्देश देता है और इसलिए प्रेरणा के रूप में कार्य करता है। भय का संवेग सुरक्षा की आवश्यकता का परिणाम है। कुत्ता आपकी सुरक्षा के लिए खतरा बन जाता है और डरने लगते हैं और भागना शुरू कर देते हैं। इस प्रकार प्रेरणा संवेग को जन्म देती है तथा संवेग आगे मूल प्रेरणा के साथ निरन्तर क्रिया करने के लिए प्रेरित करता है।

आप उन कार्यों को करने के लिए प्रेरित होते हैं जो आपको सुखद संवेगात्मक अनुभव प्रदान करते हैं तथा उन कार्यों को करने से बधते हैं जो आपको दुखी या उदास कर देते हैं। संवेग प्रेरणा के लिए उर्जा प्रदान करते हैं। जितना सुदढ़ संवेग होगा उतना ही प्रेरणा का स्तर ऊंचा होगा। जितनी अधिक आपको उर्जा मिलेगी आप उतना ही अधिक परिस्थिति से लड़ पाएंगे।

पाठगत प्रश्न 10.1

1. उपयुक्त शब्द से रिक्त स्थान को भरें:

   (i) संवेग व्यक्ति की स्थिति को .... करता है।

   (ii) शब्द संवेग लेटिन शब्द .... से बना है।

   (iii) ...., ... तथा .... प्रत्येक संवेग के मूलभूत घटक हैं।

   (v) संवेग प्रेरणा के लिए .... उपलब्ध कराते हैं।

   (v) .... तथा .... संवेगात्मक अनुभवों में संज्ञानात्मक प्रक्रिया के महत्व को दर्शाते हैं।

2. बताएं कि निम्नलिखित वाक्यांश सही हैं या गलतः

(क) परिपक्वन तथा अध्ययन संवेगों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

(ख) संवेगों का हमारे विचारों तथा विवेचन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

(ग) सुखद संवेगात्मक अनुभवों के कारण मूड अच्छा हो जाता है।

(घ) कैनन तथा बार्ड ने कहा कि शारीरिक परिवर्तन तथा संवेग का बोध एक साथ होता है।

10.5 संवेग एवं शरीर विज्ञान

संवेगात्मक अनुभव के दौरान अनेक शारीरिक प्रणालियां इसमें शामिल होती हैं। व्यपाक रूप से शारीरिक क्रिया स्वायत्त तंत्रिका–तंत्र के अनुकंपी तथा अर्धअनुकंपी विभागों द्वारा नियंत्रित होती हैं। इन प्रणालियों के अंतर्भावितता का ब्यौरा के लिए आप व्यवहार के जैविक आधार (पाठ ३) के पाठ का संदर्भ ले सकते हैं।

संवेगात्मक स्थिति के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तन सभी आन्तरिक अंगों तथा तंत्रिका तंत्र की क्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं। बहरहाल, संवेगात्मक अनुभवों के साथ निकट संबंध रखने वाली इंद्रियां हैं–हाइपोथेलेमस, स्वायत्त तंत्रिका–तंत्र तथा एड्रेनल ग्लैंड हैं। अब हम इनके संबंध में और अधिक अध्ययन करेंगे।

(i) अधिवक्क ग्रन्थिः ये ग्रन्थि किडनियों के समीप स्थापित होती हैं। ये एड्रिनेलिन नामक हार्मोन को स्रावित करते हैं। संवेगात्मक उत्तेजन के अन्तर्गत होने वाले विभिन्न शारीरिक परिवर्तन एड्रिनेलिन के स्रावित होने से उत्पन्न होते हैं। इनमें शामिल हैं फेफड़ों के वायु मार्ग का डाइलेशन, दिल की धड़कन तथा रक्तचाप में वद्धि, पाचन प्रक्रिया का शिथिल पड़ना आदि। जब हम संवेगों से प्रभावित होते हैं उस समय ये ग्लैंड आपातकालीन प्रतिक्रिया के लिए अवयवी को तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। अधिक मात्रा में एड्रिनेलिन निर्गम करने के लिए सिम्पेथैटिक तंत्रिका–तंत्र के माध्यम से हाइपोथैल्मस द्वारा उद्दीप्त होते हैं।

(ii) स्वायत्त तंत्रिका तंत्रः यह तंत्र अनेक तंत्रिकाओं से निर्मित है जो मस्तिष्क तथा मेरु रज्जु से शरीर के विभिन्न इंद्रियों को जाती हैं। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र के दो भाग हैं जो निम्नानुसार हैं:

अनुकंपी प्रणालीः यह प्रणाली भाव प्रबोधन स्थिति के दौरान उत्पन्न होती है तथा शरीर को विभिन्न परिस्थितियों में आवश्यक प्रतिक्रियाओं के लिए तैयार करती है। इसके परिणामस्वरूप पुतली के बड़ा होना, पसीना आना, हदय गति का बढ़ना, मुंह का सूखना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

पराअनुकंपी प्रणाली: यह प्रणाली उस समय सक्रिय होती है जब हम शांत व आराम की स्थिति में होते हैं। इस प्रणाली के सक्रिय होने से हृदय गति तथा रक्तचाप कम हो जाता है तथा पाचन क्रियाएं बढ़ जाती हैं। संवेगात्मक भाव प्रबोधन के दौरान अनुकंपी प्रणाली के कारण उत्पन्न सभी परिवर्तन इस प्रणाली से अपनी सामान्य क्रियास्थिति में वापस आ जाते हैं।

(iii) हाइपोथैल्मस: संवेग के दौरान उत्पन्न शारीरिक अभिव्यक्तियां हाइपोथैल्मस द्वारा क्रियाशील होती हैं। यह मासपेशियों तथा ग्रंथियों को आवेग भेजता है। वह व्यक्ति जिसका हाइपोथैल्मस क्षतिग्रस्त हो जाता है वह किसी भी प्रकार के संवेग का अनुभव करने में अक्षम हो जाता है।

भाव प्रबोधन: जब हम संवेगात्मक होते हैं तो हम प्रायः उत्तेजित हो जाते हैं। यह उत्तेजित स्थिति भाव प्रबोधन कहलाती है। भाव प्रबोधन के स्तर को हृदय गति, रक्त चाप, श्रावस प्रतिकति, पुतली के आकार तथा त्वचा संवाहकता से मापा जाता है।

कुछ मात्रा में भाव प्रबोधन अच्छा होता है क्योंकि यह हमें क्रियाशील व सतर्क बनाए रखता है। जब हम अत्यधिक भाव प्रबोधन (क्रोध या भय के मामले में) होते हैं तो हमारे कार्यनिष्पादन मे कमी होने लगती है। इसी प्रकार भाव प्रबोधन के अति निम्न स्तर के कारण भी हमारा कार्यनिष्पादन का स्तर गिर जाता है।

पाठगत प्रश्न 10.2

1. उपयुक्त शब्द की सहायता से रिक्त स्थानों को भरें:

   (i) .... तथा .... स्वायत्त तंत्रिका–तंत्र के दो भाग हैं।

   (ii) जब हम .... होते हैं हमारी अनुकंपी प्रणाली सक्रिय हो जाती है।

   (iii) कुछ मात्रा में भाव प्रबोधन कार्यनिष्पादन में .... करता है।

2. भाव प्रबोधन क्या है? इसे कैसे मापा जा सकता है?

   ____

   ____

   ____

   ____

क्रिया

अपने मित्र के विचारों का विरोध करके तथा उसी के सुझवों को नकार कर उसे क्षोभित करने का प्रयास करें। जब वह क्रोधित हो जाए उसका ध्यानपूर्वक अवलोकन करें। क्या आप उसके चेहरे के भावों, आवाज, चेहरे के रंग में कोई परिवर्तन पाते हैं?

अब आप उसे प्रसन्न करने का प्रयास करें पुनः उसी अभिव्यक्तियों में होने वाले परिवर्तनों का अवलोकन करें। क्या इन दो परिस्थितियों में कोई अन्तर है?

संवेगात्मक भाव प्रबोधन के दौरान जीव क्रियाकरण

शारीरिक परिवर्तन

संवेगात्मक अनुभव के दौरान चेहरे की अभिव्यक्तियों में परिवर्तन होता है। जब हम क्रोधित होते हैं तो हमारा चेहरा लाल, नासाछिद्र तथा जबड़े जकड़ जाते हैं तथा हमारी आवाज तेज, ऊंचे स्वर पर कर्कश हो जाती है। जब हम भयभीत होते हैं तो हमारी पलकें चौड़ी हो जाती हैं, चेहरा पीला पड़ने लगता है तथा पैर कांपने लगते हैं।

दैहिक परिवर्तन

जब हम संवेग का अनुभव करते हैं तो हमारे शरीर की आन्तरिक क्रियाएं भी प्रभावित होती हैं। दिल की धड़कन तथा रक्तचाप में वद्धि होती है और कभी कभी पेट में हलका दर्द भी महसूस होता है। जब हम क्रोधित या भयभीत होते हैं तो हमारी पाचन क्रियाएं रुक जाती हैं, हमारा मुंह सूखने लगता है, आंखों की पुतलियां बड़ी हो जाती हैं। पसीने की ग्रन्थियां सक्रिय हो जाती हैं। हमारी चमड़ी की चालकता विद्युतधारा के प्रति बढ़ जाती है।

मनोवैज्ञानिक परिवर्तन

क्रोध या भय जैसे कठोर संवेगों के अन्तर्गत हमारी विचारशक्ति तथा स्मति प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है। हमें अध्ययन करने में कठिनाई होती है तथा हमारी एकाग्रता खराब हो जाती है। हमारा बोध खण्डित हो जाता है तथा स्मति विकत हो जाती है। बहरहाल, यह देखा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति मं ये सभी परिवर्तन (शारीरिक, दैहिक तथा मनोवैज्ञानिक) भिन्न–भिन्न होते हैं।

10.6 संवेगों की अभिव्यक्ति

हम अनुभव किए जाने वाले अपने संवेगों को न केवल शारीरिक प्रतिक्रिया के रूप में अभिव्यक्त करते हैं बल्कि अपने व्यवहार में भी इनकी अभिव्यक्ति करते हैं। नीचे दर्शाए गए चेहरों की अभिव्यक्तियों में दिखने वाले संवेगों को पहचानने का प्रयास करें।

चित्र 10.3: *चेहरे के भाव चिड़चिड़ाहट, खुशी तथा क्रोध के संवेगात्मक स्थिति को दर्शाते हैं।*

गैर–मौखिक सम्प्रेषण के लिए चेहरे के भाव महत्वपूर्ण होते हैं। उदाहरण के लिए टकटकी लगाकर या एकटक देखकर आप आत्मीयता, अधीनता स्वीकरण या अधिपत्य के भाव का सम्प्रेषण कर सकते हैं। हम विभिन्न संवेगों का अर्थ निकालने के लिए इन गैर–मौखिक संकेतों को पढ़ने में काफी अभ्यस्त होते हैं। हममें से कुछ इन गैर–मौखिक संकेतों के प्रति अन्यों से अधिक संवेदनशील होते हैं।

भिन्न–भिन्न संस्कतियों में अंग–विन्यास भी भिन्न–भिन्न होते हैं। बहरहाल, अनुसंधानकर्ताओं ने दर्शाया है कि मूलभूत संवेगों के लिए चेहरे की भाषा लगभग समान ही होती है। भारत जैसी समष्टिवादी संस्कति में जहां आपसी–आश्रिता को महत्व दिया जाता है वहां नकारात्मक संवेगों की गहन अभिव्यक्ति कम नजर आती है। व्यक्तियों द्वारा व्यक्त की जाने वाली अभिव्यक्तियां न केवल भावों को सम्प्रेषित करती हैं बल्कि संवेगों को और अधिक तीव्र बना देती हैं। वह शरीर को वैसी ही प्रतिक्रिया करने का संकेत करती हैं। इस प्रकार संवेग संज्ञानात्मक, शरीर क्रिया, शारीरिक अभिव्यक्ति की अन्तःक्रिया का परिणाम है। भारत में पंद्रहवीं शताब्दी के दौरान भारत नामक एक मनीषी ने संवेगों की अभिव्यक्ति का सुव्यवस्थित अध्ययन किया है। नाट्यशास्त्र में उन्होंने आठ प्रमुख संवेगों का वर्णन किया है जिन्हें 'रसों' के रूप में प्रभावपूर्ण ढंग से रूपांतरित किया जा सकता

है। रस का अर्थ है सौन्दर्यपरक रस। इस पाठ के अन्त में इनमें से कुछ रसों को दर्शाया गया है। चित्र में भरतनाट्यम नत्य के दौरान चेहरे की अभिव्यक्तियों के माध्यम से विभिन्न रसों को दर्शाया गया है। इन चित्रों में दर्शाए गए रस तथा संबंधित संवेग को पहचानने का प्रयास करें।

संवेगात्मक अभिव्यक्ति के मुख्य रूपों में निम्नलिखित शामिल हैं:

(i) **चौंकाने वाली प्रतिक्रिया:** जब आपका मित्र गहरे खयालों में डूबा हुआ हो, उस समय चुपके से उसके पास जाइए और जोर से बोलिये 'बू'। आप देखेंगे कि उसकी आंखें बार बार बंद होंगी तथा उसका मुंह खुला का खुला हर जाएगा। ठोड़ी उपर को मुड़ जाएगी तथा हाथ व पैर झुक जाएंगे। यह एक स्वाभावित प्रतिक्रिया है।

(ii) **चेहरे की अभिव्यक्तियां:** प्रत्येक संवेग का अपना विशिष्ट मुख अभिव्यक्ति होती है। आंख, नाक, होठ तथा माथा हिलने व मुड़ने लगते हैं तथा विभिन्न आकार बनाते हैं। चेहरे की अभिव्यक्तियां संवेगात्मक अभिव्यक्तियों के तीन पहलुओं को दर्शाते हैं।

सुखद-दुखद: चेहरे के भाव खुद (यथा मुसकराना तथा हंसना) या दुख (उदासी) के भावनाओं का दर्शाता है।

अवधान-अस्वीकति: बड़ी खुली आंखों तथा खुले मुंह की अभिव्यक्ति द्वारा अवधान को अभिव्यक्त किया जाता है। आंखों, होठों तथा नासाछिद्रों को संकुचित करके अस्वीकति को अभिव्यक्त किया जाता है।

नींद-तनाव: जब आप सो रहे होते हैं तथा जब आप क्रोध व उत्तेजना में होते हैं तो यह आपके आराम या तनवापूर्णता या उत्सुकता के स्तर को दर्शाता है।

(iii) **मौखिक अभिव्यक्यिां:** लोग स्वर की सहायता से भी अपने संवेगों की अभिव्यक्ति करते हैं। आपने यह देखा होगा कि जब आप उदास होते हैं तो आवाज लड़खड़ाती है तथा रुक–रुक कर आती है, जब आप दर्द में होते हैं तो आपकी आवाज में कराहट होती है और जब आप क्रोध में होते हैं तो आपकी आवाज ऊंची तथा तेज स्वर में होती है।

(iv) **मुद्राएं तथा आसन:** हर्ष के दौरान आपके द्वारा दर्शाए जाने वाले आसन व मुद्राएं दुख के दौरान के आसन व मुद्राओं से भिन्न होते हैं। दुख में आप अपने चेहरे को नीचे की ओर झुका लेते हैं। हर्ष के समय आप अपने सिर को ऊंचा रखते हैं तथा अपनी आसन को सटीक बनाए रखते हैं। भय की स्थिति में आप या तो भागने लगते हैं या फिर एक ही स्थान पर जड़ हो जाते हैं। हम अपने आस–पास के लोगों से आसन व मुद्राएं सीखते हैं। इसलिए विभिन्न समाजों में संवेगों को विभिन्न प्रकारों से अभिव्यक्त किया जाता है।

पाठगत प्रश्न 10.3

1. संवेगों की स्थिति में उत्पन्न होने वाले महत्वपूर्ण परिवर्तन क्या हैं?

   ——

   ——

   ——

2. उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों को भरें:

   (i) उदासी के दौरान व्यक्ति का स्वर .... व .... है।

   (ii) गहन संवेगों के दौरान व्यक्ति के सोचने व विवेचन करने की शक्ति .... रूप से प्रभावित होती है।

3. निम्नलिखित वाक्यांश सही हैं या गलत:

   (i) हम मुद्राएं अपने समाज व संस्कति से सीखते हैं। सही/गलत

   (ii) जब आप उदास होते हैं तो आपकी आवाज का स्वर ऊंचा हो जाता है। सही/गलत

   (iii) इशारे व मुद्राएं हम अपने समाज से सीखते हैं। सही/गलत

10.7 प्रमुख संवेग

हम जब हपने परिवेश में विभिन्न लोगों तथा वस्तुओं के सम्पर्क में आते हैं तो अनेक प्रकार के संवेग विकसित कर लेते हैं। ये संवेग नकारात्मक हो सकते हैं जैसे भय व उत्तेजना या सकारात्मक हो सकते हैं जैसे हर्ष और स्नेह। अब हम विस्तार से इन संवेगों की चर्चा करेंगे।

(i) भय: भय उन परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होता है जो कि हमारे लिए शारीरिक खतरा उत्पन्न करते हैं। आयु के साथ–साथ भय उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों में भी परिवर्तन होता है। प्रारम्भिक बालावस्था में हम अनजान वस्तुओं तथा व्यक्तियों से, आश्रय के खोने, अंधेरे भूत आदि से डरते हैं। किशोरावस्था के दौरान अधिकतर भय सामाजिक प्रकति के होते हैं (यथा प्राधिकार, मातापिता द्वारा निन्दा, समायु वर्ग की अस्वीकति, विफलता आदि का भय)

परिपक्वता तथा व्यक्तिगत अनुभव भय को और अधिक विकसित करने में सहायक होते हैं। बच्चे अपने माता–पिता, तथा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ समीपता से ही संवेगात्मक प्रतिक्रियाएं सीखते हैं। यह कारण है कि एक या दो वर्ष का एक

बच्चा सांप से नहीं डरता, जबकि उससे बड़ा बच्चा सांप से डरता है। भय परिस्थितिवार भी विकसित हो सकता है। यही कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति का भय किसी न किसी रूप में अन्य व्यक्ति के भय से भिन्न होगा। उदाहरण के लिए, यदि बचपन के दौरान कोई बच्चा भीड़ में खो गया हो तो वह भीड़ के प्रति भय विकसित कर लेता है। आपने अपने मित्रों में भी इसी प्रकार के भय देखे होंगे जैसे छिपकली, अंधेरे आदि का भय। जब इस प्रकार का भय अति प्रबल हो जाता है तो उसे भीति कहते हैं। यह अदश्य भय होते हैं। सामान्यतः लोग भयपूर्ण परिस्थितियों से बचने के लिए उनसे दूर भागते हैं।

(ii) दुश्चिंताः दुश्चिंता मन की दर्दनाक असुस्थता स्थिति है। दुश्चिंता के दौरान एक अस्पष्ट भय या डर उत्पन्न होता है। यदि आपको उसका वास्तविक कारण पता नहीं है तो आप चिंतत का अनुभव करने लगते हैं। भय तथा दुश्चिंता के मध्य अन्तर प्रायः प्रस्तुत स्थिति पर निर्भर करता है। आप अपनी वर्तमान परिस्थितियों में भय के कारण को पहचान सकते हैं जबकि दुश्चिंता प्रत्याशित या काल्पनिक परिस्थिति के कारण उत्पन्न हो सकती है।

आप दुश्चिंता होते हैं जब आप किसी हानिकारक या खतरनाक घटना की प्रत्याशा करते हैं। दुश्चिंता का अहसास भय को उत्पन्न करने वाले अचेत स्मति हो सकती है। हम उस अप्रिय परिस्थिति विशेष को भूल जाते हैं जिसके कारण हमने डरना सीखा होता है। जब हम उसी प्रकार की परिस्थिति के सामने खड़े होते हैं तो हमें दुश्चिंता का आभास होता है, बिना यह जाने कि ऐसा क्यो हो रहा है। उच्च स्तर की दुश्चिंता हमारे कार्यनिष्पादन तथा स्वास्थ्य के लिए घातक होती है। दुश्चिंता के उच्चतम स्तर के मामलों में मानसिक विकति उत्पन्न हो जाती है।

(iii) हर्षः हर्ष या खुशी एक सकारात्मक संवेग है जो इसका अनुभव करने वाले व्यक्ति को संतोष प्रदान करता है। हर्ष एक आवश्यकता की पूर्ति या लक्ष्य की प्राप्ति की प्रतिक्रिया है। जब हम खुश होते हैं तो हम मुस्कराते हैं, हंसते हैं और हमारे चेहरों में संतोष की अभिव्यक्ति स्पष्ट नजर आती है। बच्चा अपने हर्ष को खिलखिलाकर अभिव्यक्त करता है। वे सामाजिक रूप से स्वीकार्य तरीकों से अपनी खुशी की अभिव्यक्ति करना सीखते हैं। लोग जीवन के विभिन्न स्तरों के दौरान विभिन्न स्रोतों से खुशी प्राप्त करते हैं। शिशु शारीरिक तन्दुरुस्ती से, गुदगुदाने से खुशी प्राप्त करते हैं जबकि व्यस्क विभिन्न परिस्थितियों में सफल होने जैसे अनुभवों से हर्ष की प्राप्ति करते हैं। जिन बच्चों के घर, स्कूल व अड़ोस–पड़ोस का वातावरण सुखद होता है वे उन बच्चों की तुलना में अधिक हर्ष का अनुभव करते हैं जिनका घर स्कूल व अड़ोस–पड़ोस का वातावरण सुखद नहीं होता है।

(iv) स्नेहः यह एक व्यक्ति, जानवर या वस्तु के प्रति होने वाली सुखद संवेगात्मक प्रतिक्रिया है। यह हर्ष के अनुभव के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। स्नेह का सबसे प्राचीन (मूल) आधार एक मां के शरीर के गर्मी तथा उसका दुलारना, बच्चे के लिपटने से संबंधित है। बच्चे द्वारा किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति स्नेह के संलग्नता

में सीखना एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। बच्चे बिना किसी भेद–भाव के परिवार के सदस्यों पालतू जानवरों तथा खिलौनों के प्रति प्यार दर्शाते हैं। किशोरावस्था की आयु पर आते–आते उनका प्यार पालतू जानवरों की तुलना में व्यक्तियों के प्रति बढ़ने लगता है। स्नेह को थपथपाने, गले से लगाने, मौखिक अभिव्यक्ति, अपने प्रियजन को संरक्षण प्रदान करने तथा सहयोग देकर व्यक्त किया जाता है।

पाठगत प्रश्न 10.4

उपयुक्त शब्द से रिक्त स्थान भरिए:

(i) भय उत्पन्न करने वाली परिस्थिति .... के साथ परिवर्तित होती है।

(ii) भय .... संवेग है जबकि प्यार .... संवेग है।

(iii) भाव प्रबोधन.................. या .... परिस्थिति के कारण उत्पन्न होती है।

(iv) दुश्चिंता का कारण हो सकता है .... भय उत्पन्न करने वाले उद्दीपन की स्मति।

संवेगात्मक सक्षमता

हाल के वर्षों में ज्ञान या तर्कता तथा संवेगों के मध्य का अन्तर कम हुआ है। यह माना गया है कि व्यक्ति के विकास के लिए संवेगात्मक सक्षमता, संवेगातमक परिपक्वता तथा संवेगात्मक बुद्धि महत्वपूर्ण हैं। इसलिए व्यक्ति को अपनी स्वयं के तथा अन्य लोगों के संवेगों को समझने तथा सामाजिक परिस्थितियों में संवेगों को व्यक्त करना, नियंत्रित करना तथा उसे व्यवस्थित करना सीखने की आवश्यकता होती है। संवेगात्मक सक्षमता का संवर्धन व्यक्ति की समग्र सक्षमता का केन्द्र माना गया है। हाल के वर्षों में अनुसंधानकर्ताओं ने संवेगात्मक बुद्धि के सुधार में रुचि दर्शाई है।

आपने क्या सीखा

- संवेग उत्तेजित करने वाली स्थिति है जो महत्वपूर्ण तरीकों से मानव व्यवहार को नियंत्रित करती है। प्रेरणा तथा संवेग एक दूसरे से गहन रूप से संबंधित हैं। स्वायत्त तंत्रिका–तंत्र तथा हाइपोथैलेमस संवेगों के अनुभव तथा अभिव्यक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।
- संवेगात्मक स्थितियों में आत्मनिष्ट, शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तन उत्पन्न होते हैं, उदाहरण के लिए दिल की धड़कन, श्वांस प्रतिकति आदि में परिवर्तन।

- संवेग तथ्य का उल्लेख करने के लिए विभिन्न सिद्धान्त हैं। जेम्स–लैंगे का सिद्धान्त सुझाता है कि संवेग कुछ शारीरिक स्थितियों में परिवर्तन का द्योतक है। कैनन–बेर्ड सिद्धान्त दर्शाता है कि उत्तेजक घटना, शारीरिक परिवर्तनों तथा संवेगों की अवधारणा दोनों को संवर्धित करते हैं। ये घटनाएं घटने के मध्य कम समय रहता है। सैक्टर–सिंगर सिद्धान्त सुझाता है कि व्यक्ति बाहरी उद्दीपन से भाव प्रबोधित होता है, परिवेश के संबंध में भाव प्रबोधित स्थिति का मूल्यांकन करता है तथा उस संवेग को नाम प्रदान करता है।
- गुणारोपण प्रक्रिया द्वारा अज्ञात भाव प्रबोधन विशिष्ट संवेगों का आकार ले लेते हें। यह तत्पश्चात विभिन्न संवेगों के अनुसार कार्य करने के लिए व्यक्ति को प्रेरित करता है।
- संवेगों की अभिव्यक्तियों को व्यक्ति के चेहरे तथा मौखिक अभिव्यक्तियों, इशारों तथा मुद्राओं का अवलोकन करके समझा जा सकता है।
- भय तथा दुश्चिंता दो महत्वपूर्ण नकारात्मक मनोभवात्मक प्रतिकति हैं जबकि दुश्चिंता काल्पनिक परिस्थिति से जन्म लेती है। एक निरन्तर गहन भय फोबिया का रूप ले सकता है। दुश्चिंता जब कम होती है तो वह अच्छी होती है किन्तु जब यह अत्यधिक होती है तो विनाशकारी बन सकती है।
- हर्ष एवं स्नेह सकारात्मक संवेगों के उदाहरण हैं। हर्ष एक उद्देश्य की पूर्ति की प्रतिक्रिया है तथा यह मुस्कराने तथा हंसने से प्रदर्शित होती है। स्नेह एक व्यक्ति, जानवर या वस्तु के प्रति सुखद अनुभवों की संवेगात्मक प्रतिक्रिया है। इसकी अभिव्यक्ति अपने प्रिय जनों का ध्यान रखकर, थपथपाकर, गले लगाकर, सुरक्षा प्रदान करके तथा मौखिक प्रशंसा करके की जाती है।
- प्रभावपूर्ण रूप से जीने तथा विकसित होने के लिए संवेगात्मक सक्षमता का विकास अनिवार्य है। व्यक्ति को स्वयं के तथा अन्य लोगों के संवेगों को समझना चाहिए तथा उन्हें उचित रूप से विनियमित करना चाहिए।

पाठान्त प्रश्न

1. संवेग क्या है? सकारात्मक व नकारात्मक संवेगों के उदाहरण प्रस्तुत कीजिए।
2. संक्षेप में संवेगों की सामान्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. उल्लेख कीजिए कि संवेग प्रेरणा से किस प्रकार से संबंधित है।
4. संवेगात्मक व्यवहारों में शारीरिक प्रक्रियाओं की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
5. संवेग में चेहरे तथा मौखिक अभिव्यक्तियों का उल्लेख कीजिए।
6. संवेगात्मक सक्षमता क्या है?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

10.1

1. (i) उत्तेजित करना (ii) इमोवेर
   (iii) संज्ञानात्मक, शारीरिक तथा व्यवहारात्मक (iv) सुखद (v) ऊर्जा
2. (क) सही (ख) गलत (ग) सही (घ) सही

10.2

1. (i) अनुकंपी प्रणाली, पराअनुकंपी प्रणाली (ii) उत्सुक (iii) बढ़ना
2. संवेगात्मक स्थिति में उत्सुकता के अहसास को भाव प्रबोधन कहते हैं। इसे व्यक्ति के दिल की धड़कन, रक्तचाप, श्वसन प्रक्रिया, आंखों की पुतली के आकार तथा चमड़ी की संचालकता से मापा जा सकता है।

10.3

1. संवेगात्मक स्थिति में होने वाले परिवर्तन हैं शारीरिक, दैहिम तथा मनोवैज्ञानिक।
2. (i) लड़खड़ाता, रुकते रुकते आना (ii) प्रतिकूल
3. (i) सही (ii) गलत (iii) सही

10.4

(i) आयु (ii) सकारात्मक व नकारात्मक
(iii) काल्पनिक या प्रत्याशित (iv) अचेत

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. खण्ड 10.1 का संदर्भ लें
2. खण्ड 10.3 का संदर्भ लें
3. खण्ड 10.4 का संदर्भ लें
4. खण्ड 10.5 का संदर्भ लें
5. खण्ड 10.6 का संदर्भ लें
6. खण्ड 10.7 का संदर्भ लें

11

विकासः स्वरूप

क्या आपने कभी सोचा है कि एक वयस्क व्यक्ति की तुलना में बच्चे का व्यवहार अलग क्यों होता है अथवा उनके शारीरिक रचना अलग क्यों होती हैं? हम सामान्यतः उस वास्तविक तथ्य को नहीं जानते हैं कि हममें निरन्तर बदलाव होता रहता है। जब एक शिशु का विकास बच्चे के रूप में होता है तो उनमें कुछ बदलाव होते हैं और तत्पश्चात वयस्क बनने पर भी बदलाव नजर आते हैं। परन्तु कुछ बदलाव जैसे भावुकता की अभिव्यक्ति में उत्तेजित हो जाना, अथवा सोचने और कारण जानने की योग्यता, व्यक्तिगत मूल्यों का गठन अथवा स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की क्षमता, हालांकि ये सब बदलाव स्पष्ट रूप से नहीं देखे जा सकते हैं, परन्तु परिपक्वता की स्थिति में बदलाव तथा व्यक्ति को सक्षम बनाने की प्रक्रिया स्वतः ही घटित होती रहती है। क्रमशः परिवर्तनों में परिपक्वता की और को लाने वाली इस श्रंखला की प्रक्रिया को ही विकास के रूप में जाना जाता है। इस पाठ से आपको विकास से संबंधित अनेक प्रश्नों को समझने तथा उनके उत्तर देने में सहायता मिलेगी।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप निम्नलिखित के लिए सक्षम होंगे:

- विकास की अवधारणा तथा प्रक्रियाओं को समझेंगे;
- विकास के सिद्धान्तों की पहचान और व्याख्या कर सकेंगे, और
- विकास अध्ययन के लिए मुख्य एप्रोच के संबंध में जानकारी प्राप्त करने एवं समझने में सक्षम होंगे;
- वद्धि एवं विकास के बीच भेद कर सकेंगे।

11.1 विकास की प्रकति

विकास के दो मुख्य पहलू हैं अर्थात् इस भाग में विकास का अर्थ और उसकी प्रक्रियाओं की व्याख्या की जा रही है।

11.1.1 विकास का क्या अर्थ है?

साधारण शब्दों में, विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति के संपूर्ण जीवनकाल में वद्धि एवं परिवर्तन होता है। इस परिवर्तन को इस रूप में भी परिभाषित किया जा सकता हैः यह परिवर्तनों की एक प्रगतिशील श्रंखला है जो कि क्रमिक रूप से होता है और यह परिपक्वता के लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है।

प्रगतिशील शब्द इंगित करता है कि परिवर्तन दिशात्मक, आगे विकास की ओर होता है तथा पीछे की ओर नहीं होता।

क्रमबद्धता तथा सुसंगतता शब्द यह स्पष्ट करता है कि विकासात्मक क्रम में विभिन्न चरणों के बीच निश्चित संबंध होता है।

प्रत्येक परिवर्तन इस बात पर निर्भर करता है कि क्या शुरू किया गया है और इसके पश्चात क्या परिणाम होगा।

विकास को सारांश रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

1. इसमें प्रगतिशीलता, सुसंगतता तथा क्रमबद्धता होती है।
2. परिवर्तन जो कि निश्चित दिशा तथा विकास की ओर अग्रसर होता है।
3. परिवर्तन जो कि अव्यवस्थित नहीं होता है परन्तु जहां पर, मौजूदा समय में क्या है और इसके पश्चात् (दूसरे चरण में) क्या होगा, के बीच निश्चित संबंध होता है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि विकास के फलस्वरूप एक व्यक्ति में नयी विशेषतायें तथा योग्यतायें आती हैं। यह कार्य के निम्नतम स्तर से उच्च स्तर की ओर अग्रसर होते हैं।

विकास के परिणाम के रूप में होने वाले सभी परिवर्तन एक समान नहीं होते। उदाहरण के लिए आकार में परिवर्तन (शारीरिक विकास), आनुपातिक रूप में परिवर्तन (बच्चे से वयस्क), अभिलक्षणों में परिवर्तन (बच्चे के दांत का लोप) तथा नए अभिलक्षणों को अर्जित करना एक अलग तरह का परिवर्तन है। इस प्रकार के परिवर्तन स्पष्ट रूप में देखे जा सकते हैं और जिसकी पहचान विशेष रूप से ग्रोथ के समय की जा सकती है। यहां वद्धि (ग्रोथ) तथा विकास ''डेवलेपमेन्ट'' के शब्दों के बीच अन्तर बताना आवश्यक हो जाता है। इनका प्रयोग पारस्परिक परिवर्तन के रूप में अक्सर किया जाता है, तथापि, ये एक दूसरे से अत्यधिक रूप से परस्प्र सम्बद्ध हैं और फिर भी इनके बीच काफी अन्तर है।

ग्रोथ (वद्धि) को स्पष्ट रूप से मापा जा सकता है अथवा विशिष्ट परिवर्तन जो कि मात्रात्मक प्रकति के होते हैं जैसे ''लम्बाई में वद्धि'' एक लड़की के बाल लम्बे और सुन्दर लगते हैं; और एक वद्ध आदमी के बाल रोएं आदि जैसे लगते हैं।

दूसरे शब्दों में, विकास उन्मीलन प्रविधि अथवा क्षमता में वद्धि के गुणात्मक परिवर्तनों को दर्शाता है। यह स्पष्ट रूप से वद्धि (ग्रोथ) के रूप में नहीं होता। विकास के उदाहरणों में टिप्पणियां इस प्रकार हैं ''वह एक सुन्दर नौजवान महिला हो गई है'', ''उन्होंने संगीत में अपनी प्रतिभा का विकास अच्छी तरह से कर लिया है'', ''अब हमारे पिताजी सामाजिक कार्य कर रहे हैं क्योंकि वे सेवानिवत्त हो गए हैं'' आदि। ये सभी दष्टांत वैयक्तिक हितों तथा योग्यताओं में परिवर्तनों के हैं। इस प्रकार ''विकास'' (डेवलपमेन्ट) एक व्यापक शब्द है तथा वद्धि ''ग्रोथ'' इसके एक अवयवों में से है।

11.2 कैसे विकास होता है?

दो मुख्य प्रक्रियाओं के माध्यम से विकास (डेवलपमेन्ट) होता हैः

(i) परिपकवता और

(ii) सीख (लर्निंग)

1. परिपक्वता एक व्यक्ति में मौजूद विशेषताओं (गुणों) अथवा संभावनाओं को प्रकट करती है अथवा उसे सामान्यतः निखारती है क्योंकि ये अनुवांशिक होते हैं। यह आनुवांशिक रूप से व्यक्ति को क्या गुण मिले हैं, का शुद्ध परिणाम है।

2. सीखने से बच्चे आस पास के माहौल में आपसी वार्तालाप करते हैं जिसके परिणामस्वरूप उनके व्यवहार में परिवर्तन होता है।

उदाहरणार्थ, जब एक बच्चे के दांत निकलने शुरू होते हैं अथवा चलना–फिरना शुरू होता है तो यह सब उसकी परिपक्वता के कारण ही होता है। परन्तु, जब एक बच्चा किसी विशेष प्रकार के नत्य को करने के लिए निपुणता हासिल करता है अथवा एक विशेष प्रकार का गाना गाता है तो यह एक सीखने का कार्य है।

परिपक्वता तथा सीख (लर्निंग) दोनों साथ–साथ चलते रहते हैं और ये एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। वस्तुतः वातावरणीय सीखना अक्सर परिपक्वता को प्रोत्साहित करते हैं। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति में ज्ञानात्मक योग्यताओं का विकास अनुभव तथा वातावरण एवं परिपक्वता द्वारा सुलभ कराये गए अवसरों पर निर्भर करता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि परिपक्वता सीखने के लिए कच्ची सामग्री सुलभ कराता है अर्थात् यदि विकास के लिए अनुवांशिक गुणों की संभावनाएं सीमित हैं तो बिना पर्याप्त प्रयास के व्यक्ति अपेक्षित परिणाम प्राप्त कर सकता है।

अतः, अकेले प्रयास से ही कोई व्यक्ति अन्तर्राष्ट्रीय धावक नहीं हो सकता जब तक कि व्यक्ति में सर्वश्रेष्ठ शारीरिक योग्यताओं के लिए आनुवांशिक गुण न हों।

मुख्य बिन्दुओं का सारांश इस प्रकार हैः

- परिपक्वता तथा सीखना दो प्रक्रियाएं हैं जिसके माध्यम से विकास होता है।
- आनुवांशिक रॉ मैटीरियल के कारण परिपक्वता आती है जो कि सभी व्यक्तियों में होती है।
- विभिन्न गतिविधियों को करने से वातावरण के साथ सीखने एवं वार्तालाप करने के परिणामस्वरूप व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्तन हो जाता है।
- परिपक्वता तथा सीखना पूरक प्रक्रियाएं हैं।

11.3 वद्धि (ग्रोथ) वक्र

आप पहले के अनुच्छेद में सीख चुके हैं कि वद्धि (ग्रोथ) को मापा जा सकता है और यह मात्रात्मक रूप में हो सकता है। आइए देखें कि संपूर्ण मानव जीवन क्रम में किस तरह की वद्धि होती है, आइए इस प्रश्न का उत्तर देने की कोशिश करेंः

(i) क्या तीव्र वद्धि (ग्रोथ) के कोई कारण हैं?

(ii) अधिकतम वद्धि कब होती है?

(iii) क्य प्रत्येक चरण पर वद्धि परिवर्तनों का तरीका बदलता रहता है?

ग्रोथ (वद्धि) वक्र इन सभी प्रश्नों के उत्तर देने में हमारी मदद करेगा। यह मूल रूप से ग्रोथ (वद्धि) की प्रतिशतता तथा उम्र (वर्ष में) के बीच सम्बद्धता को दर्शाता है।

निम्नलिखित चित्र (चित्र 11.1) से विचार अधिक स्पष्ट हो जाएगा।

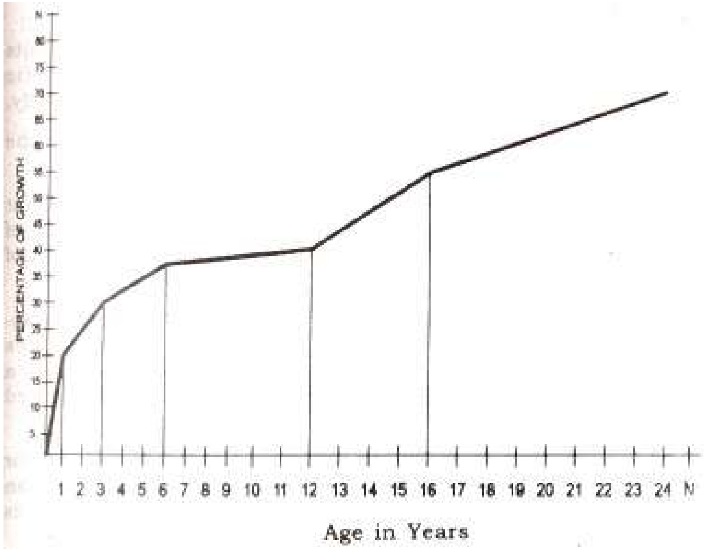

चित्र 11.1: *वद्धि वक्र*

इस चित्र में, उम्र (वर्ष में) को ग अक्ष पर तथा वद्धि (ग्रोथ) की प्रतिशतता को ल अक्ष पर दर्शाया गया है। वक्र का झुकाव प्रकति तथा वद्धि (ग्रोथ) के स्तर को इंगित करता है।

इस चित्र से यह स्पष्ट होता है कि पहले तीन वर्षों में वद्धि (ग्रोथ) बहुत तीव्र गति से हुई है और प्रथम वर्ष में अत्याधिक तेजी से वद्धि हुई है। इसके पश्चात, 5 वर्ष से लगभग 12 वर्ष के बीच वद्धि दर कम हुई है। इसे पठारीय अवस्था कहा जाता है, जिसमें बच्चा संभवतः आत्मसात करता है और पूर्व वर्षों में वद्धि के अनुभवों का अहसास करता है।

बाद में 12 से 18 वर्ष की अवधि में एक बार पुनः तीव्र वद्धि (ग्रोथ) ऊपरी चरण पर होता है जिसमें अत्यधिक तीव्र वद्धि होती है। यह अवस्था किशोरावस्था होती है तथा इस अवस्था में निरन्तर वद्धि होती रहती है, परन्तु गति धीमी होती है।

वद्धि वक्र (ग्रोथ कर्व) इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि यह बिना व्यवधान अथवा अनिरन्तरता तथा बिना आकस्मिक परिवर्तनों के वद्धि (ग्रोथ) की निरन्तर प्रक्रिया को इंगित करता है। दूसरा, यह मानव के संपूर्ण जीवन में वद्धि (ग्रोथ) की सतत् प्रक्रियवा को भी दर्शाता है।

इस प्रकार आपको वद्धि (ग्रोथ) वक्र से विभिन्न विकास के चरणों की किस्मों का पता चल गया होगाः

चरण	**उम्र**	**वद्धि दर**
शैशव काल	जन्म से 1 वर्ष तक	अत्यधिक तीव्र
बचपन से पूर्व	1-3 वर्ष	तीव्र
बचपन की मध्य अवस्था	3-5 वर्ष	कुछ तीव्र
बचपन के बाद की अवस्था	5-12 वर्ष	पठारीय अवस्था
किशोरावस्था	12-18 वर्ष	अत्यन्त तीव्र
वयस्क	18 वर्ष एवं इससे ऊपर	वद्धि धीरे–धीरे होती है

शैशव काल, बचपनावस्था तथा किशोरावस्था इन तीनों चरणों में अधिकतमक वद्धि होती है। इन चरणों के दौरान अर्जित की गई निपुणता की प्रकति से यह साबित होता है।

शैशवकाल तथा पूर्व बचपनावस्था में भाषा की पकड़ और ज्ञानात्मक निपुणता में असाधारण मनःचालित विकास होता है।

किशोरावस्था के दौरान, तीव्र गति से शारीरिक बदलाव होता है, यौन–चालक कार्य करना शुरू कर देते हैं, ज्ञानात्मक और सामाजिक निपुणता में सुधार हो जाता है और सामान्यतः सभी मानव क्षमताओं में वद्धि हो जाती है।

संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि वद्धि वक्र (ग्रोथ कर्व) विकास के विभिन्न चरणों में होने वाले परिवर्तनों को समझने तथा उनकी संभावना का अनुमाल लगाने में हमारी

सहायता करता है। इस प्रकार हम उनको अच्छी तरह समायोजित तथा अनुकूलित कर सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 11.1

1 प्रत्येक कथन के सामने सत्य और असत्य लिखेंः

(i) परिपक्वता तथा सीखना दो अलग–अलग प्रक्रियाएं हैं और इनमें आपस में कोई संबंध नहीं होता।

(ii) पूर्ण विकास की ऊपरी सीमा का निर्धारण जींस करते हैं।

(iii) सभी परिवर्तन, जो कि विकास के परिणामस्वरूप होते हैं, एक समान होते हैं।

(iv) वद्धि वक्र (ग्रोथ वर्क) के अनुसार, वद्धि एक सतत् प्रक्रिया है।

(v) पूर्व बचपनावस्था तथा किशोरावस्था दोनों काल में अधिकतम वद्धि होती है।

(vi) वयस्क अवस्था के दौरान वद्धि रुक जाती है।

2. वद्धि वक्र (ग्रोथ कर्व) क्यों महत्वपूर्ण है? दो कारण बताएं।

11.4 विकास के सिद्धान्त

बहरहाल, सभी व्यक्तियों का विकास एवं वद्धि उनके स्वयं के तौर–तरीकों तथा उनके अपने संदर्भ के आधार पर होता है। यहां पर कुछ मूल सिद्धान्त हैं जिसके कारण विकास की प्रक्रिया होती है और सभी मानव जाति में इसे देखा जा सकता है। इन्हें विकास का सिद्धान्त कहा जाता है। आइए अब हम इसका उल्लेख करें।

1. विकास पद्धति का अनुसरण

सभी मानव जाति में, विकास सुव्यवस्थित, सुसंगठित तथा प्रतिरूप तरीके के तौर पर होता है। प्रत्येक प्रजातियों की विशिष्ट पद्धति होती है जिसका कि उसके सभी सदस्य अनुसरण करते हैं। विकास का क्रम भी एक समान होता है। उदाहरणार्थ, सभी बच्चे मुड़ना, रेंगना, खड़ा होना और तत्पश्चात् चलना सीखते हैं। वे एक विशेष अवस्था में पहुंचते हैं, परन्तु उनका श्रम अथवा तरीका एक समान ही रहेगा।

व्याकरण का अध्ययन करते समय क्रिया से पहले सदैव संज्ञा के बारे में सीख जाता है। कुछ बच्चे एक–साथ सीख जाते हैं परन्तु बिना संज्ञा की जानकारी के क्रियाओं के बारे में नहीं सीखा जा सकता। भावी विकास प्रत्येक स्तर पर चरणाबद्ध श्रंखला का परिणाम होता है जिसमें एक स्थिति पूर्व में गुजर चुकी है तथा एक बाद में घटित होगी।

उदाहरणार्थ, एक बच्चा पहले बड़ा होना सीखता है, फिर वह चलने फिरने लगता है और स्थाई दांत से पहले बच्चे के दांत निकलते हैं।

क्या यह शारीरिक, व्यावहारिक अथवा वाणी संबंधी पहलू है कि विकास सुव्यवस्थित तौर पर होता है। उदाहरणार्थ, जल्दी विकास शीर्ष से आरम्भ होता है अर्थात् शीर्ष से अथवा ऊपरी क्षेत्र से निचले (पुच्छीय) अथवा टेल क्षेत्र तक। दूसरा सिद्धान्त यह है कि वद्धि (ग्रोथ) शरीर के केन्द्रीय अक्ष से बिल्कुल शीर्ष अथवा शीर्षस्थ क्षेत्र की ओर होता है। गति अथवा विकास के द्वारा सामान्य पद्धति को नहीं बदला जा सकता, सभी बच्चे लगभग एक समय पर एक समान मौलिक आधारों से गुजरते हैं।

2. सामान्य से विशेष (ग्लोबल से विश्लेषणात्मक) की ओर विकास की शुरूआत

बच्चे की प्रतिक्रियायें चाहे वह गतिवाही अथवा मानसिक हों विशिष्ट या अनेकीकत होने से पूर्व सामान्य प्रकार की होती हैं। उदाहरणार्थ, एक नवजात शिशु पहले एक समय में अपने संपूर्ण शरीर को घुमाता है और तत्पश्चात अपने शरीर के विशेष भाग को गतिमान करना सीखता है। इस प्रकार यदि एक बच्चे के पास कोई खिलौना रखते हैं तो वह अपने संपूर्ण शरीर को खिलौना लेने के लिए गतिमान करता है और उसे पकड़ता है। और बड़ा बच्चा अपने हाथ को बाहर निकालता है क्योंकि उसे पता होता है कि विशेष गति के द्वारा ही उसका उद्देश्य पूरा हो जाएगा।

बोलने में शब्द कहने से पहले बच्चा जब आवाज निकालता है तो उसे कोलाहल कहते हैं। इसी प्रकार, सभी खेलने की वस्तुएं विशेष नामों के सीखने से पहले ''खिलौने'' होती हैं। हमारे दिन प्रतिदिन की जिन्दगी में बच्चों का निरीक्षण यह दर्शाता है कि वे पहले साधारण कार्य करते हैं और कुछ समय बाद वे जटिल क्रियायें करने लगते हैं।

3. विकास से समाकलन होता है

एक बार जब बच्चा विशेष अथवा अलग–अलग प्रतिक्रियाओं को सीख लेता है, तब चूंकि विकास निरन्तर होता रहता है, वह इन विशिष्ट प्रतिक्रियाओं को संपूर्ण रूप में संश्लेषित अथवा समाकलित कर सकता है। उदाहरणार्थ, प्रारभं में एक बच्चा एक तथा छोटे–छोटे शब्दों को बोलना सीखता है। बाद में, वह भाषा के रूप में इन वाक्यों को साथ–साथ मिलाकर बोल सकता है। इसी प्रकार, एक अवयस्क बच्चे के मस्तिष्क में कार के लिए विशेष अवधारणा होती है। बाद में, जैसे–जैसे वह विकास (वद्धि) करता है तो उसकी अवधारणा व्यापक हो जाती है क्योंकि वह नए पहलुओं को आत्मसात करने में समर्थ हो जाता है।

4. विकास की निरन्तरता

शारीरिक, बौद्धित अथवा वाणी का विकास अचानक ही नहीं होता। इसका विकास धीरे–धीरे, नियमित गति से होता है। बद्धि (ग्रोथ) बच्चे के गर्भ में आने के समय से आरंभ

होती है और जोकि परिपक्वता (वयस्कता) की अवस्था तक निरन्तर चलती रहती है। शारीरिक तथा बौद्धिक गुणों का विकास निरन्तर रूप में तब तक होता रहता है जब तक कि वह वद्धि (ग्रोथ) के चरम बिन्दु तक नहीं पहुंच जाते। बद्धि तब तक लगातार चलती रही है जब तक कि उनमें ''झटके तथा रुकावटें'' नहीं आतीं। यह विकास की निरन्तरता की प्रकति है जिसके कारण एक चरण से वद्धि (ग्रोथ) शुरू होती है और अगले चरण की ओर विकास होता है। उदाहरणार्थ, यदि एक बच्चा अपनी विशिष्ट आयु सीमा में एक विशेष कार्य को करने में निपुण नहीं होता, तब यह उसके अगले चरण के विकास कार्य को प्रभावित करेगा। शैशवकाल में खराब वातावरण के कारण भावनात्मक तनाव बाद में बच्चे के व्यक्तित्व को प्रभावित कर सकता है। इसी प्रकार, शिशु अवस्था में उपयुक्त पौष्टिक भोजन देने में लापरवाही से बच्चों का शारीरिक और मनोवैज्ञानिक रूप से विकास नहीं हा पाता जिससे बाद में विकास रूक सकता है।

5. व्यक्ति विशेष पर विकास दर की विभिन्नता

बहरहाल, सभी तरह के विकास सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित रूप से होते हैं लेकिन जिस गति से विकास होता है वह व्यक्ति विशेष पर अलग–अलग होता है। उदाहरणार्थ, एक 3 वर्ष का बच्चा अंग्रेजी की वर्णमाला को पहचान सकता है जबकि दूसरा 5 वर्ष का बच्चा ऐसा करने में सक्षम नहीं हो सकता। इसका अर्थ यह है कि 3 वर्ष का बच्चा काफी तेज है अथवा 5 वर्ष का बच्चा पिछड़ा हुआ है। साधारण शब्दों में यह कह सकते हैं कि निपुणता को अर्जित करने अथवा उसमें परिपूर्णता हासिल करने की दर बच्चे–बच्चे में अलग–अलग होती है। इस वास्तविकता को प्रमाणित करने के अनुक्रम में, विकास की सीमा (रेन्ज ऑफ डेवलपमेन्ट) की अवधारणा शुरू की गई है। वर्णमाला सीखने की रेन्ज, उदाहरणार्थ, है कि बच्चा $3\text{-}5^{1/2}$ वर्षों में किसी भी समय सीख जाता है। इस आयु सीमा के भीतर आने वाले सभी बच्चे सामान्य रूप में समझे जाते हैं। विकास की दर में विभिन्नता अनेक क्षेत्रों, जैसे दांत निकलने, जिस उम्र में बच्चा बैठने, बड़ा होने, चलने–फिरने तरुण अवस्था आदि के समय, में देखा जा सकता है।

6. शरीर के विभिन्न भागों का विकास विभिन्न दरों पर होना

न तो शरीर के विभिन्न भागों का विकास एक समान दर से होता है और न ही बौद्धिक विकास एक समान दर से होता है। शारीरिक अथवा बौद्धिक विकास के विभिन्न घटकों में वद्धि विभिन्न दरों पर होता है और अलग–अलग समय पर परिपक्वता की अवस्था में पहुंचते हैं। कुछ क्षेत्रों में, शरीर का विकास त्वरित गति से होता है, जबकि दूसरे का विकास धीमी गति से होता है। इस प्रकार, शरीर के अंगों का आकार समय–समय पर बदलता रहता है और वद्धि (ग्रोथ) में इन असमानताओं के कारण शरीर वयस्क लगने लगता है।

विकास के सभी क्षेत्र आरंभिक अवस्था में सह–सम्बन्धित होते हैं। एक बच्चा जिसका बौद्धक विकास औसत से अधिक है तो वह सामान्यतः आकार में, ज्यादा सामाजिक

योग्यता तथा विशेष रुचियों में भी औसत से अधिक होता है। इससे स्पष्ट होता है कि बच्चे का बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक तथा भावनात्मक विकास एक दूसरे से जुड़े हुए होते हैं। एक शर्मीला बच्चा स्कूल की गतिविधियों में भाग लेने में समर्थ नहीं होगा। एक विकलांग बच्चे को मित्र बनाने में कठिनाई हो सकती है। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि कैसे विकास का एक घटक दूसरे को प्रभावित करता है।

क्या आप जानते हैं

विभिन्न अंगों की लम्बाई, वजन तथा विकास विभिन्न समयों पर पूर्ण रूप से होता है। उदाहरणार्थ, अनुसंधान अध्ययनों से पता चलता है किः

- लगभग छः से आठ वर्ष की आयु में मस्तिष्क परिपक्व होते हैं;
- किशोरावस्था के दौरान पैर, हाथ तथा नाक का अधिकतम विकास होता है।
- किशोरावस्था के दौरान दिल, लीवर, पाचन प्रणाली आदि का विकास होता है।

किशोरावस्था के पश्चात्, विकास का कोई भी एक क्षेत्र दूसरे को विकास की ओर ले जाता है और स्वतन्त्र रूप से विकसित होता है। वैज्ञानिकों के मामले में, उदहारणार्थ, ज्ञानात्मक विकास अन्य क्षेत्रों में पहले घटित होता है। धावक के मामले में शारीरिक विकास अन्य क्षेत्रों से पहले घटित होगा।

7. विकास अहंकेन्द्रवाद से परकेन्द्रवाद की ओर होता है

इसका अर्थ है कि प्रारंभ में बच्चा बहुत ही आत्म केन्द्रित होता है और वह दूसरे के बारे में नहीं सोचता। उसकी आवश्यकताएं और इच्छाएं उतनी ही होती हैं जितनी कि उसे जानकारी है। वह यह भी नहीं समझता कि उसके माता–पिता क्या सोचते अथवा महसूस करते हैं। उदाहरणार्थ, एक दो वर्ष का बच्चा आधी रात में चाकलेट खाने के लिये रोता व चिल्लाता है तब वह यह समझ नहीं पाता है कि उसकी मांग इसलिए पूरी नहीं की जा सकती क्योंकि इस समय बाजार बन्द है। जब वह बड़ा हो जाता है, तब, वह इस अहंकेन्द्रवाद से परकेन्द्रवाद अथवा "अन्य उन्मोषी" अथवा दूसरों के बारे में सोचने लगता है। एक दस साल के बच्चे की भी दो साल के बच्चे के समान ही इच्छा होती है परन्तु वह असंभावी मांग नहीं करता क्योंकि वह नहीं चाहेगा कि उसके माता–पिता को परेशानी हो।

8. विकास परतंत्रता से स्वतंत्रता की ओर ले जाता है

परतंत्रता का अर्थ दूसरों पर आश्रित रहने से है, जबकि स्वतंत्रता का अर्थ स्व निर्भरता से है। छोटे बच्चे अपनी देखभाल और कल्याण के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं, परन्तु

वयस्क बच्चे स्वयं की देखभाल करने में सश्रम होते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि विकास की गति परतंत्रता से स्वतंत्रता की ओर होती है।

जब एक छोटे बच्चे को भूख लगती है तो वह अपनी मां की प्रतीक्षा करता है कि वह से खाना देगी। दूसरी ओर एक किशारे (वयस्क) बच्चा स्वयं अपने लिए खाना ले सकता है।

9. विकास भविष्य सूचक (प्रेडिक्टेबल) है

जैसा कि विकास के पूर्व सिद्धान्तों में चर्चा की गई है कि प्रत्येक बच्चे के लिए विकास की दर समान रूप से स्थिर होती है। यह इंगित करता है कि इससे यह संभव होता है कि भविष्य में बच्चों के विकास के स्तर का अनुमान लगाया जा सकता है और कितने अंश पर विशेषकर लम्बाई, वजन, ज्ञानात्मक योग्यता आदि का विकास होगा।

11.4.1 विकास के सिद्धान्तों की जानकारी क्यों महत्वपूर्ण है?

1. इससे हमें यह जानने में मदद मिलती है कि क्या अपेक्षा करते हैं और कब इसकी अपेक्षा है। यह एक विशेष आयु में बच्चे की योग्यता के बारे में सटीक चित्र प्रस्तुत करता है।
2. यह हमें सूचित करता है कि बच्चे में कब विकास होगा और कब विकास नहीं होगा अर्थात यह हमें विकास के लिए अवसरों को उपलब्ध कराने अथवा परिपक्वता की प्रतीक्षा करने के लिए प्रेरित करता है।
3. यह माता–पिता, अध्यापकों तथा बच्चे के साथ कार्य करने वाले अन्य व्यक्तियों को बच्चों के व्यापक विकास से पूर्व तैयारी के लिए सहायता करता है तथा बच्चों की रुचियों एवं व्यवहारों को बदलता है। यह अध्यापकों को बताता है कि क्या पढ़ाना है, कब बढ़ाना है और कैसे पढ़ाना है।

इस प्रकार विकास के सिद्धान्त हमे विकास के विभिन्न चरणों को समझने के लिए आधार प्रदान करते हैं जो कि व्यक्तियों में अलग–अलग होता है। बहरहाल, शरीर के भीतर और बाहर कतिपय स्थितियों द्वारा विकास की पद्धति एवं दर में परिवर्तन हो सकता है। कतिपय कारक जैसे पोषण, यौन, बुद्धि, चोट तथा बीमारी, दौड़ने, संस्कति आदि भी इन विभिन्नताओं को उत्पन्न करते हैं।

पाठगत प्रश्न 11.2

कपया एक (टी/एफ) चिन्ह लगाएं और अपने उत्तर की जांच करें। यदि पांच से अधिक उत्तर गलत होते हैं तो इकाई को पुनः याद करें और उसकी पुनः जांच करें।

1. वद्धि (ग्रोथ) अनियमित तथा अव्यवस्थित तरीके से होता है।
2. एक औसत से कम बौद्धिक विकास वाला बच्चा अच्छे स्वास्थ्य, सामाजिक तथा शारीरिक संरचनाओं से युक्त होता है।

3. एक क्षेत्र में औसत से अधिक गुणों वाला बच्चा दूसरों की अपेक्षा औसत से कम होगा क्योंकि विकास परिहार का सामान्य नियम है।
4. बच्चों में विकास का प्रक्रम भली प्रकार स्थिर होता है।
5. गुणों में आयु के आधार पर विशिष्टता प्राप्त करते हैं इसलिये विकास क्रमिक होता है।
6. सामान्य विशेषताओं के विकसित होने से पहले बच्चा विशिष्ट कौशल प्रदर्शित करता हैं।
7. बच्चों का विकास होने पर वे आत्म विश्वासी हो जाते हैं।
8. एक बच्चे और वयस्क व्यक्ति के बीच मुख्य अन्तर यह है कि पहले वे आत्म केन्द्रित होते हैं और बाद में परकेन्द्रित हो जाते हैं।
9. बच्चा छोटी वस्तुओं पर ध्यान करने से पहले बड़ी वस्तुओं को देखता है।
10. विकास निरन्तर होने के कारण प्रथम चरण में जो कुछ भी घटित होता है अगले चरण तक जाता है तथा उसे प्रभावित करता है।
11. प्रत्येक व्यक्ति साधारणतः विकास के हर प्रमुख चरण से होकर गुजरता हैं।

11.5 विकास अध्ययन के लिए दष्टिकोण

विकास की प्रकति तथा प्रमुख सिद्धान्तों पर चर्चा करने के पश्चात्, हम अब कुछ दष्टिकोणों का परीक्षण करेंगे जिसमें मानव जाति के विकास के अध्ययन के लिए अनुसंधानकर्ताओं को लगाया गया है। उनकी सीमाओं तथा सुदढ़ताओं के साथ मानव जाति के विकास के अध्ययन के लिए दो मुख्य दष्टिकोण पर चर्चा की गई है। इन दष्टिकोणों को औजारी की वैरायटी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है जैसे साक्षात्कार अनुसूची, प्रश्नावलियां, निर्धारण पैमाना, उपाख्यान, आत्मकथायें आदि। विकास के दो मुख्य एप्रोचों का अध्ययन इस प्रकार है–

1. प्रतिनिध्यात्मक दष्टिकोण
2. अनुदैर्घ्य दष्टिकोण

1. प्रतिनिध्यात्मक दष्टिकोण

यह अध्ययन विभिन्न आयु वाले कुछ प्रतिनिधि बच्चों पर समान समय पर किया जाता है। सामान्यतः प्रत्येक बच्चे के लिए केवल एक निरीक्षण किया जाता है और अध्ययन में विभिन्न आयु वाले बच्चे को शामिल करके विकासात्मक परिवर्तनों की पहचान की जाती है।

उदाहरणार्थ, एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष और अधिक आयु वाले बच्चों के प्रतिनिधि के कार्य निष्पादन का तुलनात्मक अध्ययन करके उनकी बौद्धिक योग्यता में परिवर्तन की जांच की जा सकती है। इस दष्टिकोण के निम्नलिखित लाभ हैं:

- लम्बी अवधि के अध्ययनों में यह प्रतिदर्श शक्ति की हानि को रोकता है।
- यह कम खर्चीला, समय की बचत करने वाला तथा अभिलेख के रख–रखाव में सुविधाजनक है।
- यह व्यावहारिक है।

बहरहाल, इस दष्टिकोण की कतिपय हानियां भी हैं, जो कि इस प्रकार हैः

- व्यक्ति की समग्रता तथा वैयक्तिकता नहीं रहती।
- प्रतिदर्श में व्यक्ति के अध्ययन में विकासात्मक निरन्तरता की हानि होती है।

2. अनुदैर्घ्य दष्टिकोण

जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है कि पूर्वर्ती दष्टिकोण की तुलना में यह विकास का लम्बाई के आधार पर अध्ययन है। यह दष्टिकोण समान व्यक्ति के अध्ययन पर बल देता है।

इस प्रकार यदि नवजात शिशुओं का प्रतिदर्श बनाया जाता है तो वे इनफैन्सी, अर्लीचाइल्डहुड, लेट चाइल्डहुड आदि के माध्यम से देखते हैं। विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए, अनेक पद्धतियों का इस्तेमाल किया जाता है। प्याजे इतिहास विधि एक ऐसी विधि का उदाहरण है जो कि लम्बे समय तक होने वाले व्यवहार का अध्ययन करती है। अपनी पुत्री पर आंख व हाथ के समन्वय के अध्ययन की पइगेट अध्ययन अनुदैर्घ्य दष्टिकोण का एक प्रसिद्ध उदाहरण है।

अनुदैर्घ्य दष्टिकोण यह देखने का सबसे अच्छा तरीका है कि वद्धि कैसे होती है?, इसमें कुछ कमियां हैं, जो कि निम्नलिखित हैः–

- दीर्घावधि के लिए बड़े प्रतिदर्श से संपर्क बनाए रखने में कठिनाइयां आती हैं।
- इसमें ज्यादा समय लगता है और खर्चीला भी है।
- सब्जेक्ट पर परीक्षणों को बार बार सम्पादित किया जाता है जिससे अंक प्रभावित होते हैं।

पाठगत प्रश्न ११.३

दी गई समस्याओं को पढ़ें और उनके अध्ययन के लिए उपयुक्त एप्रोच का उल्लेख करें:

1. क्या गर्भस्थ शिशु में उत्साही तथा शिशु अवस्था में जिद्दी होने जैसे लक्षणें का परीक्षण किया जा सकेगा?
2. क्या विभिन्न आयुवर्ग के बच्चे भूतों वाली फिल्म देखने पर समान भावनात्मक प्रतिक्रिया करते हैं।

3. क्या विभ्निन संस्कतियों में पले–बढ़े ५ वर्ष वाले बच्चों में समान बौद्धिक योग्यताएं दिखेंगी।
4. आंख–हाथ समन्वय पद्धति के परीक्षण के लिए किस उम्र के बच्चों का परीक्षण होना चाहिए।
5. पूर्व किशोरावस्था के दौरान समायोजन माता–पिता से वंचित होने के प्रभाव का अध्ययन।
6. जन्म से पांच वर्ष की उम्र वाले बच्चों की सामाजिक प्रतिक्रिया का अध्ययन।

आपने क्या सीखा

- विकास में प्रगतिशीलता, संगतता तथा क्रमिक परिवर्तन सन्निहित होते हैं। परिवर्तन एक निश्चित दिशा से आगे की ओर होता है। होने वाले परिवर्तन प्रकति में अव्यवस्थित नहीं होते।
- विकास दो मुख्य प्रक्रियाओं जैसे परिपक्वता और सीखने की प्रवत्ति के माध्यम से होता है।
- वद्धि (ग्रोथ) वक्र विकास की अवस्था में परिवर्तनों अधिकतम वद्धि की अवधि तथा वद्धि के तरीके में परिवर्तन का पता लगाने में हमारी सहायता करता है।

विकास के सिद्धान्त निम्नलिखित हैः

  - यह (पैटर्न) पद्धति का अनुसरण करता है।
  - यह सामान्य से विशेष्ज्ञ की ओर आरंभ होता है।
  - विकास निरन्तर होता है।

- विकास की दर व्यक्तियों में अलग–अलग होती हे।
- विकास समाकलन के लिए मार्गदर्शक है।
- विकास की दरें विभिन्न व्यक्तियों में विभिन्न होती है।
- विकास के अध्ययन के दष्टिकोण निम्नलिखित हैः

  (i) प्रतिनिध्यात्मक

  (ii) अनुदैर्घ्य

पाठान्त प्रश्न

1. विकास शब्द की व्याख्या करें।
2. वे दो मुख्य प्रक्रियाएं क्या हैं जिससे विकास होता है?

3. विकास के मुख्य सिद्धान्तों को संक्षिप्त में बताएं। उनमें से किन्हीं तीन के विषय में उदाहरण सहित स्पष्ट करें।
4. विकास के सिद्धान्तों का ज्ञान कैसे सहायक होता है?
5. निम्नलिखित में अन्तर बताएं:
   (i) परिपक्वता एवं सीखना
   (ii) प्रतिनिध्यात्मक तथा अनुदैर्घ्यात्मक दृष्टिकोण
   (iii) आत्मकेन्द्रित (इगो–सेन्ट्रिज्म) तथा परकेन्द्रित
   (iv) परतन्त्रता (हीट्रोगॉमी) और स्वायत्ता (ऑटोनामी)

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

11.1	(i) असत्य	(ii) सत्य	(iii) असत्य	(iv) सत्य	
	(v) सत्य	(vi) असत्य			
11.2	1. असत्य	2. असत्य	3. असत्य	4. सत्य	5. सत्य
	6. असत्य	7. सत्य	8. सत्य	9. सत्य	10. सत्य
11.3	1. लांग 6. लांग	2. क्रास	3. क्रास	4. क्रास	5. लांग

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. अनुच्छेद 11.1.1 को देखें
2. अनुच्छेद 11.1 को देखें
3. अनुच्छेद 11.4 को देखें
4. अनुच्छेद 11.4 को देखें
5.

(i) अनुच्छेद 11.2 को देखें

(ii) अनुच्छेद 11.5 को देखें

(iii) अनुच्छेद 11.4 (5) को देखें

(iv) अनुच्छेद 11.4 (7) को देखें

12

विकास के क्षेत्र

जब हम बच्चे को देखते हैं तो हमें अक्सर अपना बचपन याद आने लगता है।

क्या आप उन दिनों तथा गतिविधियों को याद कर सकते हैं जबकि आप एक बच्चे के रूप में थे?

क्या आप वह सब कुछ पुनः स्मरण कर सकते हैं, जो आपने किया था?

हम सब बहुत ज्यादा खेले और दौड़े होंगे, जबकि, अब बड़े हो जाने पर हमारी गतिविधियों में परिपक्वता आ गई है और व्यवहार भी अलग तरीके के हो गए हैं। परिवार में हम देख सकते हैं कि हमारे माता–पिता अलग तरीके का व्यवहार करते हैं क्योंकि वे हम से अधिक परिपक्व हैं। क्योंकि यह हमारे जीवन में अलग–अलग समय में होता है जिसे चरण (स्टेज) कहते हैं। मानव जीवन विभिन्न चरणों से गुज़रता है। इस पाठ में आप मानव जीवन के विभिन्न चरणों में होने वाले विकास का अध्ययन करेंगे और उसके बारे में सीखेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप सक्षम होंगे:

- विकासात्मक कार्य क्या है का वर्णन करने में;
- मानव जीवन में विकास के चरणों की पहचान करने में;
- प्रत्येक चरण में विकास के मुख्य लक्षणों की सूची बनाने में;
- यौवनारंभ के पश्चात् बालक और बालिकाओं के बीच अन्तर की व्याख्या करने में; और
- मनःकामिक विकास संबंधी फ्रायड के सिद्धान्त की आलोचनात्मक व्याख्या करने में।

12.1 विकासात्मक कार्य

मानव जीवन चरणों में बढ़ता है। उदाहरणार्थ, बाल्यावस्था एक चरण है। कुछ अंश तक विकास होने पर बच्चा किशोरावस्था की ओर बढ़ जाता है। प्रत्येक चरण एक प्रमुख विशेषता द्वारा चित्रित किया गया है, एक विशिष्ट लक्षण जो उस अवस्था को अद्वितीयता प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, एक बच्चे से अपेक्षा की जाती है कि वह स्कूल जाए और अध्ययन करे और एक वयस्क से अपेक्षा होती है कि वह कार्य करे और परिवार का पालन करे। इन अवस्थाओं में कतिपय विशेषताएं अन्यों की अपेक्षा अत्यधिक सुस्पष्ट होती हैं और प्रत्येक अवस्था को चरण कहा जाता है। लोग अमुक चरण पर अधिक सुगमता से और सफलतापूर्वक कुछ व्यवहार–प्रतिमान तथा कुशलताएं सीख जाते हैं और जो सामाजिक अपेक्षा बन जाते हैं। उदाहरणार्थ, एक पिता से परिवार को चलाने और बच्चे से पढ़ने और स्कूल जाने की अपेक्षा की जाती है। इस प्रकार सभी व्यक्तियों की विशेष आयु में सामाजिक अपेक्षायें समान हो जाती हैं, जिसे ''विकासात्मक कार्य'' के रूप में जाना जाता है।

विकासात्मक कार्य विशेष आयु की सामाजिक अपेक्षायें हैं। हैविघर्ष्ट सर्वप्रथम विकासात्मक मनोवैज्ञानिक थे जिन्होंने विभिन्न आयु वर्गों के विकासात्मक कार्यों की पहचान की। विभिन्न चरणों मे विकासात्मक कार्य इस प्रकार हैं:

जन्म से 6 वर्ष	**6-12 वर्ष तक विकासात्मक कार्य**	**किशोरावस्था**
1. चलना–फिरना सीखना	1. साधारण खेलों के लिए शारीरिक कुशलताओं को सीखना	किशोरावस्था के विकासात्मक कार्य अध्याय 15 में दिए गए हैं।
2. ठोस भोजन लेना	अपनी उम्र के दोस्तों के साथ रहना सीखना	
3. बातचीत करना	लिंग की भूमिका के बारे में सीखना	
4. मल–मूत्र त्याग करना	पढ़ने लिखने तथा गणना करने संबंधी बेसिक कुशलताओं मे विकास	
5. लिंगों के बीच अन्तर सीखना	दैनिन्दिन जीवन के लिए आवश्यक प्रत्ययों का विकास	
6. सही और गलत के बीच अन्तर सीखना	दैनिक क्रिया–कलापों में स्वतंत्रता का विकास	
	नैतिकता तथा मूल्यों का विकास	

स्वयं प्रयास करें

अपने परिवार के सदस्यों के नाम लिखें और उनमें विभिन्न चरणों (स्टेज) की पहचान करें।

12.2 विकास के चरण

आपने पढ़ा कि विकास के दौरान विभिन्न अवधियां विभिन्न चरणों द्वारा चिन्हित होती हैं। सभी बच्चों की प्रगति इन चरणों के माध्यम से निश्चित क्रम में होती है और वे सभी समान बेसिक प्रतिमानों का अनुसरण करते हैं। विकासात्मक मनोवैज्ञानिकों द्वारा बच्चे के अनुरूप उम्र के साथ इन चरणों की पहचान इस प्रकार की गई है:

चरण	**समय सीमा**
जन्म पूर्व (गर्भस्थ)	गर्भधारण सो जन्म तक
पूर्व शैशव	0-1 वर्ष
शैशवास्था	1-3 वर्ष
पूर्व बाल्यावस्था	3-6 वर्ष
बाल्यावस्था	6-12 वर्ष
किशोरावस्था	12-20 वर्ष
युवावस्था	20-30 वर्ष
प्रौढ़ावस्था	30-50 वर्ष
परिपक्व प्रौढ़	50-65 वर्ष
आयुगत प्रौढ़	65+

1. जन्म से पूर्व की अवधि (प्रीनैटल स्टेज) गर्भस्था

गर्भ धारण के समय में जीवन शुरू हो जाता है। जब तक बच्चा मां के गर्भ में होता है तो उस विशेष अवधि को जन्म से पूर्व की अवधि (गर्भस्था) के रूप में जाना जाता है। सभी महत्वपूर्ण बाहरी तथा आन्तरिक अनुभूतियां इस अवस्था में विकसित होनी शुरू हो जाती हैं।

2. शैशव (इनफैन्सी) 0 से 3 वर्ष

जन्म से लेकर तीन वर्ष तक की अवधि को शैशव (इनफैन्सी) अवधि के रूप में जाना जाता है। पहले तीन वर्षों के दौरान बच्चों का आकार बहुत तीव्र गति से विकसित होता है। गतिक निपुणताएं जैसे चीजों को पकड़ना, रेंगना, चलना शुरू करना आदि गुण इस उम्र के बच्चों में आ जाते हैं।

3. पूर्व बाल्यावस्था (3-6 वर्ष)

इस अवस्था के दौरान लम्बाई तीव्र गति से नहीं बढ़ती जैसा कि शैशवकाल में बढ़ती है। बच्चों के आंख, हाथ तथा छोटी मांसपेशियों के समन्वय में सुधार होता है। उदाहरणार्थ वे वत्त खींच सकते हैं, वे कटोरी में तरल पदार्थ डाल सकते हैं तथा बटन लगे हुए तथा बिना बटन वाले कपड़े पहन सकते हैं तथा भाषा में त्वरित विकास होता है।

4. बाल्यावस्था (6-12 वर्ष प्राथमिक स्कूल वर्ष)

6-12 वर्ष की उम्र के बीच वाले बच्चे अधिक लम्बे और पतले दिखते हैं। इस उम्र के बच्चों की मजबूती एवं चुस्ती फुर्ती में तीव्रता से विकास होता है। वे नई गतिक–कुशलता प्राप्त करते हैं तथा उनकी सक्षमता विकास के सभी क्षेत्रों में अत्यधिक सुदढ़ होती है।

5. किशोरावस्था (12-20 वर्ष)

यह बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के बीच की अवधि होती है जिससे यौवनारंभ होता है। यह वह अवधि है जिसमें तीव्र गति से मनोवैज्ञानिक विकास होता है। इस अवधि में अनेक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होते हैं। इस अवधि में बच्चे रस्सी कूद सकते हैं, साइकिल चला सकते हैं, घुड़सवारी तथा नत्य कर सकते हैं और सभी संभव खेलों में भाग ले सकते हैं। संज्ञानात्मक रूप में वे अधिक सक्रिय होते हैं और सामाजिक सम्बन्ध महत्वपूर्ण हो जाते हैं। परन्तु इस अवस्था की सबसे प्रमुख बात "अपनी पहचान" की खोज करना है। अनेक मनोवैज्ञानिक परिवर्तन इस अवस्था में होते हैं। सेक्स रोल की अपेक्षाओं में, अच्छी लड़कियाँ अन्तवैयक्तिक संबंधों तथा परिवार को वरीयता देती हैं जबकि इस अवस्था के लड़कों का जोर अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा और कैरियर बनाने पर अधिक होता है।

6. प्रौढ़ावस्था (20-65+ वर्ष)

अधिक बेहतर तरीके से समझने के लिए प्रौढ़ता को तीन चरणों में बांटा जा सकता है। वे इस प्रकार हैं:

(अ) युवा प्रौढ़ता (20-50 वर्ष)

(ब) परिपक्व प्रौढ़ता (50-65 वर्ष)

(स) आयुगत प्रौढ़ता (65+ वर्ष)

बीस वर्ष के मध्य से, जिस समय शरीर के अधिकांश अंग पूर्ण रूप से विकसित हो जाते हैं, 50 वर्ष की आयु तक के जीवन में ताकत और ऊर्जा के लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं। इसके पश्चात् धीरे–धीरे ऊर्जा के स्तर में कमी आने लगती है। इस अवस्था का वर्णन पाठ 16 में अलग से किया जाएगा।

स्वयं प्रयास करें

आपके माता–पिता तथा दूसरे भाई और बहनें घर पर रहते हैं। उनकी उम्र का पता लगाएं तथा प्रत्येक चरण के लिए ऊपर दिए गए वर्णन के अनुसार उनका वर्गीकरण करें। उनकी विशेषताओं के संबंध में सूची बनाएं। अपने माता–पिता से बात करें तथा पता करें कि संपूर्ण अवधि में उनमें कैसे बदलाव आए हैं। इस अभ्यास से आप जीवन के विभिन्न चरणों पर व्यक्तियों में विकसित होने वाली विशेषताओं की जानकारी प्राप्त करने में सक्षम होंगे।

पाठगत प्रश्न 12.1

उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थान भरें:

1. मानव जीवन का आरंभ .... द्वारा होता है।
2. सामाजिक अपेक्षाओं को ....रूप में जाना जाता है।
3. बाल्यावस्था एक .... है।
4. .... दौरान विकास की दर सबसे अधिक होती है।
5. .... वर्ष की उम्र के पश्चात शक्ति क्षीण होने लगती है।

12.3 विकास के पक्ष अथवा क्षेत्र

प्रत्येक चरण पर, विभिन्न क्षेत्रों में विकास एक साथ होता है। विभिन्न चरणों के दौरान संबंधित क्षेत्रों में विकास की चर्चा निम्नलिखित पक्षों के अन्तर्गत की गई है:

शारीरिक : शारीरिक विकास शरीर के विकास से संबंधित होता है अर्थात् शरीर की लम्बाई तथा भार

गतिक : गतिक विकास मांसपेशियों के विकास और समन्वय से संबंधित होता है।

संज्ञानात्मक : संज्ञानात्मक विकास का अर्थ मस्तिष्क वद्धि तथा बौद्धिक विकास से है।

भाषा : भाषा विकास बच्चों के भाषा सीखने से सम्बन्धित है। तथा किस उम्र में वे भाषा के विभिन्न घटकों के बारे में ज्ञान प्राप्त करते हैं।

व्यक्तित्व विकास : इसका अर्थ व्यक्तित्व के समग्र विकास है।

मनोसामाजिक : मनोसामाजिक विकास का तात्पर्य सांस्कतिक तथा सामाजिक प्रभावों का व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ने से है।

संवेगात्मक : संवेगात्मक विकास विभिन्न संवेगों के बारे में है कि वे संपूर्ण अवधि में कैसे बढ़ते हैं।

नैतिकः इससे यह जानकारी मिलती है कि क्या सही है और क्या गलत, इस उम्र में इस ज्ञान को अर्जित करने की जरूरत होती है तथा न्याय और दण्ड के नियमों की जानकारी भी होती है। नैतिक विकास के क्षेत्र के अन्तर्गत विवेक तथा मूल्य भी आते हैं।

व्यावसायिकः यह कैरियर के चयन के बारे में होता है तथा वे जीवन में कैसे पनपते हैं तथा उन्हें कैसे प्राप्त किया जाता है।

आइए इनमें से कुछ के बारे में अध्ययन करें:

क) शारीरिक विकास

पहले तीन वर्षों में बच्चों के आकार में तीव्र गति से वद्धि होती है। यहां तक कि उनके शरीर में कई बदलाव आते हैं। अपने दूसरे वर्ष की तुलना में पहले वर्ष में बच्चे की लम्बाई दुगुनी बढ़ती है। अधिकांश बच्चे पहले वर्ष के दौरान जन्म के समय के अपने वजन से तीन गुना बढ़ जाते हैं और इसके पश्चात् दूसरे वर्ष में इसका एक चौथाई ही वजन बढ़ता है। तीसरे वर्ष के दौरान, लम्बाई और भार दोनों में कम वद्धि होती है। पहले वर्ष के दौरान एक बच्चे का मस्तिष्क का विकास प्रौढ़ावस्था के मस्तिष्क का दो–तिहाई होता है और दूसरे वर्ष की समाप्ति तक यह चार बटे पांच ही बढ़ता है।

प्री–स्कूल वर्ष (स्कूल से पूर्व की आयु): प्री–स्कूल के दौरान बच्चों की लम्बाई शिशु अवस्था की तुलना में कम गति से बढ़ती है। यह निरन्तर प्रत्येक वर्ष 2 से 3 इंच तक बढ़ता है।

मध्य/उत्तर स्कूल बाल्यावस्था: 6 से 12 वर्ष की आयु वाले बच्चे अपने प्री–स्कूल के भाइयों और बहनों से काफी अलग दिखते हैं। वे अधिक लम्बे और पतले हो जाते हैं। सामान्यतः लड़कियां, लड़कों की तुलना में मोटी लगती हैं और यह मोटापन प्रौढ़ता तक रहता है। छोटे लड़के सामान्यतः छोटी लड़कियो की अपेक्षा थोड़े वजनी (भारी) तथा लम्बे होते हैं। परन्तु लड़कियों में लड़कों से पहले यौवनारंभ हो जाता है तथा तेजी से बड़ी होने लगती हैं। किशोरावस्था का समय शैशवकाल तथा प्रौढ़ता के बीच का समय होता है। यह अवस्था बारह वर्ष से शुरू होकर बीस वर्ष के अन्त तक होती है। इसके शुरूआत का पता यौवनरंभ (रजस्वला) से लग जाता है। यह वह अवस्था है जिसमें तीव्र गति से दैहिक विकास होता है तथा उत्पादक प्रकार्य तथा प्राथमिक यौन अंग परिपक्व हो जाते हैं तथा तब द्वितीयक यौन विशेषताएं दिखाई देने लगती हैं। इस चरण पर पहुंचते–पहुंचते एक तीव्र वद्धि का अनुभव होता है।

20 से 50 वर्षों की आयु के समय में शक्ति (ताकत) और ऊर्जा अपनी चरमसीमा पर होती है और इस चरम सीमा से शक्ति और ऊर्जा में कमी इतनी धीमी होने लगती है जिसका

पता नहीं लगता है। 65 वर्ष की आयु के पश्चात वद्ध अवस्था में शारीरिक दुर्बलता तथा लचीलेपन में कमी आने लगती है।

पाठगत प्रश्न 12.2

1. रिक्त स्थानों में उपयुक्त शब्द भरें:

   (अ) दूसरे वर्ष की तुलना में पहले वर्ष की दौरान बच्चों की .... लम्बाई तेज गति से बढ़ती है।

   (ब) अधिकांश बच्चे पहले वर्ष के दौरान अपने जन्म के समय के वजन से .... में अधिक वद्धि करते हैं और उसके पश्चात दूसरे वर्ष के दौरान केवल .. .. से कम वद्धि होती है।

   (स) लड़कों की तुलना में यौवनारंभ के दौरान लड़कियों .... अत्यधिक विकास होता है।

   (द) विकास के विभिन्न क्षेत्र .... हैं।

2. यह बताएं कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य है अथवा असत्यः

   (अ) मध्य बाल्यावस्था में बच्चों का विकास तेजी से होता है। सत्य/असत्य

   (ब) 10-20 वर्ष के दौरान सुदढ़ता और ऊर्जा चरमोत्कर्ष पर होता है। सत्य/असत्य

   (स) पहले वर्ष के दौरान प्रौढ़ की तुलना में एक बच्चे का दिमाग दो–तिहाई तक विकसित हो जाता है। सत्य/असत्य

   (द) किशोरावस्था के लगभग विकास तीव्र होता है। सत्य/असत्य

(ब) गतिक विकास

गतिक कुशलता प्राप्ति के लिए एक निश्चित क्रम होता है जो साधारण से जटिल की ओर चलता है। शरीर में आनुपातिक बदलाव से बच्चों के व्यवहार पर प्रभाव पड़ता है। जब इनमें तेजी से विकास होता है तो उनका अस्थाई रूप से अपने शरीर पर नियन्त्रण कम हो जाता है। उम्र बढ़ने के साथ–साथ उनका गतिक विकास अत्यधिक नियंत्रित दिखाई देता है। वद्धि के साथ उनके समस्त शरीर के भागों पर नियंत्रण का पता चलता है। इससे बच्चे अपने हाथों तथा अंगुलियें को अच्छी तरह से नियंत्रित कर सकते हैं अर्थात् यदि एक छोटा बच्चा बिस्कुट उठाता है तो वह अपने अनेक जोड़ो यथा कंधों तथा पूरे हाथ को चलाता है। जैसे ही वह बड़ा हो जाता है, वह केवल अपनी अंगुलियों का ही प्रयोग उन बिस्कुटों को उठाने के लिए करता है। जब वे विभिन्न तरह की गतियों पर नियंत्रण कर लेते हैं तो वे इस प्रकार चलने–फिरने लगते हैं।

ये कुशलताएं एक विशेष उम्र में हासिल होती हैं और इसे विकास के पड़ाव या मील के पत्थर के नाम से जाना जाता है।

गतिक (मोटर) विकास के कुछ पड़ाव–

सिर नियंत्रण	1 माह
बिना सहारे के बैठना	7 माह
लुढ़कना	5 माह के लगभग
चलने के पूर्व की गति	लगभग 9 से 10 माह (रेंगना)
खड़ा होना	13 से 14 महीने में अकेले खड़े होने लगते हैं।
चलना–फिरना	सहारे के साथ 9-11 महीना, अकेले चलना 15 महीने में
ऊपर चढ़ना	सहारे के साथ 18 महीने में
कूदना	20 महीने में
हेरा–फेरी	15 महीने में

प्री–स्कूल वाले बच्चे: तीन वर्ष की आयु वाले बच्चे आंख, हाथ तथा छोटी मांसपेशियों में समन्वय करने लगते हैं। वे वत्त खींच सकते हैं, कटोरे में पानी डाल सकते हैं, बटन और बिना बटन वाले कपड़े पहन सकते हैं, लाइन पर कट लगा सकते हैं; डिजाइन बना सकते हैं तथा कागज को मोड़ सकते हैं। 5 वर्ष की आयु वाले बच्चे सुतली में अच्छी तरह से मोतियां डाल सकते हैं; पेन्सिल को कसकर पकड़ सकते हैं तथा उसको समुचित रूप से नियंत्रित भी कर सकते हैं; वर्गाकार आदि चित्रों की नकल कर सकते हैं।

स्कूल जाने वाले बच्चे में गतिक कुशलताएं आ जाने के कारण उनमें मजबूती, तीव्रता तथा अच्छा समन्वय दिखाई पड़ता है। वे रस्सी कूदने, साइकिल चलाने, नत्य करने तथा सभी संभव खेल खेलने में सक्षम होते हैं। इस चरण पर लड़कों तथा लड़कियों की योग्यताओं में अन्तर देखने को मिलता है। लड़कों के कार्य निष्पादन की क्षमता 5 से 17 वर्ष की आयु में सुधरती है। दूसरी ओर लड़कियों में सुधार पूर्व स्कूल अवधि में आ जाता है। लड़कियों का कार्य निष्पादन 13 वर्ष की आयु में अधिक होता है, और कुछ योग्यताएं कम होने लगती हैं अथवा स्थिर रहती हैं। क्योंकि उनमें लड़कपन चला जाता है तथा नारीत्व की लिंग–रूढ़ि प्रवत्ति आ जाती है।

युवा–प्रौढ़ावस्था (नव–वयस्कता) से मध्य की आयु में पहुंचते पहुंचते, जैविक परिवर्तन बहुत धीमे होते हैं और 50-55 वर्ष की आयु में ये परिवर्तन बहुत ही कम नजर आते हैं। इस चरण पर पहुंचते ही वे अधिक कार्य नहीं कर सकते जैसा कि वे पहले करते थे। इस आयु में संवेदनशील योग्यताओं तथा शारीरिक सुदढ़ता तथा समन्वय में भी थोड़ी कमी आने लगती है।

पाठगत प्रश्न 12.3

1. विकास में पड़ाव/मील के पत्थर क्या होते हैं?
2. बताएं कि क्या नीचे दिए गए कथन सत्य हैं अथवा असत्य हैं:

    (अ) विकास में विभेदन के बाद गति का समेकन जटिल व्यवहारों में हो जाता है। सत्य/असत्य

    (ब) 4 माह की आयु वाले बच्चे स्वतंत्र रूप से बैठना आरंभ कर देते हैं। सत्य/असत्य

    (स) 2 वर्ष की आयु वाले बच्चे चलना शुरू कर देते हैं। सत्य/असत्य

    (द) 28 सप्ताह की आयु वाले बच्चे प्रहस्तन एवं पकड़ना प्रारंभ कर देते हैं। सत्य/असत्य

    (घ) गतिक कुशलताएं निश्चित क्रम में आती हैं। सत्य/असत्य

(स) संज्ञानात्मक (मानसिक) विकास

संज्ञानात्मक विकास के अन्तर्गत मनुष्य के सोचने, तर्कक्षमता एवं संप्रत्यय निर्माण का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह मन के विकास से संबंधित होता है। एक प्रमुख मनोवैज्ञानिक ''पियाजे'' के मन मस्तिष्क की संरचना भी शरीर जैसी होती है। मन की मूल इकाई को 'स्किमा' कहा जाता है। एक स्किमा किसी वस्तु में मूल तत्व का अमूर्त प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरण के लिए शिशु का स्किमा एक अण्डाकार फ्रेम जैसा होता है जिसमें क्षेतिज वत्ताकार वस्तु (आंखें) होती हैं। ऐसा लगता है कि स्किमा किसी विशेष वस्तु अथवा घटना की वास्तविक प्रति नहीं होती है। इस जटिल अवधारणा में मानसिक संगठन (एक बच्चे के भीतर विशेष दशाओं की अवधारणा) तथा परीक्षणात्मक व्यवहार दोनों शामिल होते हैं। स्किमा को व्यवहार द्वारा जाना जा सकता है अर्थात् चूसने की स्किमा में भूख का स्किमा समाविष्ट होता है इसलिए वह चूसता है। यहां पर भूख लगना स्किमा है तथा भोजन प्राप्त करने का प्रयास अथवा चूसने की प्रक्रिया व्यवहार है जो कि अवलोकनीय होता है।

स्किमेया (स्किमा का बहुवचन) एक बौद्धिक संरचना होती है जो घटनाओं को संगठित करती है क्योंकि ये सामान्य विशेषताओं के अनुरूप समूहों में प्राणियों द्वारा प्रत्यक्ष किए जाते हैं। उदाहरणार्थ, चेहरे के स्किमा में बच्चा कुछ सामान्य विशेषता देखता है जो कि सभी मानव चेहरों में एक विशेष तरीके से व्यवस्थित होती हैं। ये बार–बार होने वाली मनोवैज्ञानिक घटनाएं हैं जिनको बच्चा स्थैर्य ढंग से उद्दीपक रूप में वर्गीकत करता है।

ज्ञानात्मक विकास दो सामान्य सिद्धान्तों द्वारा प्रभावित होता है: व्यवस्थापन तथा अनुकूलन

संगठन में सभी प्रक्रमों का एक प्रणाली में समेकन है। आरंभ में शिशु का स्किमा देखने तथा पकड़ने में बिल्कुल भिन्न होता है जिसके परिणामस्वरूप हाथ तथा आंख में दोषपूर्ण समन्वय हो जाता है। आखिरकार बच्चा इन स्किमेयों को एक ही समय पर वस्तु को पकड़ने और देखने के लिए व्यवस्थित करता है।

अनुकूलन एक दोहरी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से बच्चे अपने आस–पास के वातावरण के साथ प्रभावशाली रूप से नई संरचना का सजन करते हैं। इसमें आत्मसातकरण तथा समंजन दोनों शामिल होते हैं, जो विवेकपूर्ण व्यवहार का निचोड़ होता है।

आत्मसात्करण नई वस्तु को ग्रहण करता है, अनुभव तथा अवधारणा स्किमेय के नए रूप हैं। जब बच्चे नए उद्दीपक की प्रतिक्रिया के लिए इसका प्रयोग करते हैं वे ही आत्मसात्करण कहलाते हैं। इसमें बच्चे एक वस्तु के अर्थ को मौजूदा स्किमेय से जोड़ते हैं। उदाहरण के लिए, 8-9 महीने का एक बच्चा जो कि एक गेंद देख रहा हो वह संभवतः अपने मुंह में उस गेंद को रखने की कोशिश करेगा। पियाजे के विचार में, बच्चा गेंद को अपने चूसने के स्किमा में आत्मसात करता है।

समायोजन की प्रक्रिया में, बच्चा अपने स्किमा को परिवर्तित करता है ताकि उसकी प्रतिक्रिया उस वस्तु को अच्छे तरीके से अनुकूल कर सके। नई वस्तु तथा परिस्थितियों के साथ ताल–मेल स्थापित करने के लिए जिस प्रक्रिया के माध्यम से बच्चे अपने कार्य को बदलते हैं उसे समायोजन कहा जाता है। समायोजन का उदाहरण दूसरों के अनुकूल करना है। अनुकूलन की प्रक्रिया में बच्चा अपने पास सुलभ स्किमा को छिपा लेता है तथा नए स्केमा को बनाने का प्रयत्न करता है।

आत्मसातकरण तथा समायोजन ज्ञानात्मक वद्धि तथा विकास के लिए आवश्यक होते हैं और विश्व में बच्चों की अवधारणाओं को परिवर्तित करने के लिए निरन्तर साथ–साथ कार्य करते हैं और प्रतिक्रिया करते हैं। आत्मसातकरण तथा समायोजन के बीच सन्तुलन बनाए रखने को ही समयावस्था कहते हैं।

पाठगत प्रश्न 12.4

उपयुक्त शब्दों के साथ रिक्त स्थानों की पूर्ति करें:

1. .... दोहरी प्रक्रिया है जिससे बच्चे आस–पास के वातावरण से प्रभावशाली ढंग से तालमेल बनाए रखने के लिए नई संरचनाओं का सजन करते हैं।
2. .... नई वस्तु अथवा अनुभव अथवा अवधारणा में मौजूदा स्किमेय परिवर्तित होता है।
3. वह प्रक्रिया जिसके द्वारा बच्चे नए विषयों के साथ तालमेल बनाए रखने के लिए अपनी कार्यों को बदलते हैं उसे .... कहा जाता है।

4. आत्मसातक्रण में .... और .... दोनों शामिल होते हैं।

5. मन के मूल यूनिट अथवा संरचना को .... कहा जाता है।

6. .... में एक संपूर्ण प्रणाली में सभी प्रक्रियाओं के समन्वय शामिल रहते हैं।

मानसिक विकास के चरण

पियाजे के अनुसार, चार प्रमुख चरणों के माध्यम से संज्ञानात्मक विकास में वद्धि होती है:

(i) संवेदी गति (जन्म से 2 वर्ष): शिशुओं की प्रतिवर्त क्रिया द्वारा इसके लक्षण प्रतिबिम्बित होते हैं।

(ii) संक्रिया पूर्व (2 से 7 वर्ष)

(अ) पूर्व सम्प्रत्यय (2-4)

(ब) अन्तर्ज्ञानी (4-7)

इस अवधि के दौरान बच्चे आत्मकेन्द्रित होते हैं और उनमें वस्तु स्थायित्व की अवधारणा नहीं होती।

(iii) मूर्त संक्रिया (7 से 12 वर्ष)

इस आयु वाले बच्चे अपने आपको वातावरण से अलग करने में सक्षम होते हैं। वस्तु की उपस्थिति का ज्ञान होता है और लक्ष्य निर्देशित व्यवहार करते हैं वे चीजों और वस्तुओं को क्रम में व्यवस्थित कर सकते हैं।

(iv) औपचारिक संक्रिया (12+ वर्ष)

इस अवधि के दौरान बच्चे तर्क दे सकते हैं प्रौढ़ व्यक्ति के समान सोच–विचार करने में सक्षम होते हैं।

(द) नैतिक विकास

नैतिक विकास का संबंध नीतिशास्त्र या नीतिपरक नियमों, मूल्यों, अन्तर्विवेक तथा नैतिक कार्यों को न्यायिक ढंग से देखने की योग्यता से है। बच्चे में जब तक निर्धारित स्तर तक संज्ञानात्मक परिपक्वता नहीं आ जाती तब तक वह नैतिक निर्णय नहीं ले सकता। पियाजे के अनुसार, बच्चे नैतिक विकास के दो चरणों से होकर गुजरते हैं जिनमें एक कठोर जबकि दूसरा चरण नैतिक लचीलेपन को दर्शाता है। बच्चों की नियमों की अवधारणा, मन्तव्य, दण्ड तथा न्याय कठोर से लचीली सोच की ओर होता है। यह परिवर्तन ज्ञानात्मक विकास का प्रतीक है।

प्रथम चरण में

बच्चा, पूर्णतः सही अथवा पूर्णतः गलत के रूप में विचार करता है और सोचता है कि प्रत्येक व्यक्ति उसी तरह देखता है। वह अपने आपको दूसरों के स्थान में नहीं रख सकता। बच्चा वास्तविक भौतिक परिणामों की शर्तों के तहत निर्णय करता है और इसके पीछे उसकी कोई मंशा नहीं होती।

बच्चा नियमों का पालन करता है क्योकि वे परम पावन होते हैं तथा वे परिवर्तनीय नहीं होते।

एकतरफा सम्मान देने से यह प्रौढ़ जगत की मान्यताओं या नियमों का पालन करने में स्वयं को उपकत महसूस करता है।

बच्चे कठोर दण्ड देने के पक्ष में रहते हैं। वे महसूस करते हैं कि दण्ड ही किए गए गलत कार्यों को पारिभाषित करता है। यदि कोई क्रिया दण्ड लाती है तो वह गलत होगी।

भौतिक कानून एवं नैतिक कानून में बच्चे उलझ जाते हैं और विश्वास करते हैं कि कोई भौतिक दुर्घटना अथवा दुर्भाग्य किसी बुरे काम को परिणामस्वरूप ईश्वर अथवा किसी अन्य परमसत्ता द्वारा दिया गया दण्ड होता है।

चरण 2 में

बच्चा स्वयं को दूसरों के स्थान पर रख कर देख सकता है और दूसरों का दष्टिकोण समझ सकता है।

बच्चा किसी कार्य का निर्णय उसके पीछे छुपी मंशा से करता है उसके परिणाम से नहीं।

बच्चा समझता है कि नियम लोगों द्वारा बनाए जाते हैं और उसमें परिवर्तन किए जा सकते हैं। उनमें अधिकारी तथा समकक्ष के प्रति पारस्परिक सम्मान होता है। बच्चा कठोर दण्ड का पक्ष लेता है जो कि पीड़ित को सुधारने के लिए मार्गदर्शक होता है।

बच्चा प्राकतिक दुर्भाग्य को दण्ड नहीं मानता।

किशोर जब प्याजे की अमूर्त संक्रिया तक नहीं पहुँचते वे नैतिक विकास के उच्चतम शिखर पर नहीं पहुँच सकते। लोगों को सार्वभौम नैतिक सिद्धान्तों को समझने के लिए अमूर्त तर्क की क्षमता प्राप्त करनी होगी।

पाठगत प्रश्न 12.5

बताएं कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्य

1. बच्चे नैतिक निर्णय तब तक नहीं कर सकते जब तक कि वे संज्ञानात्मक परिपक्वता के निश्चित स्तर को प्राप्त नहीं कर लेते। सत्य/असत्य

2. पहले चरण में एक बच्चा कठोरता से नैतिक अवधारणा को लेता है जबकि दूसरे चरण में नैतिक लचीलेपन द्वारा। सत्य/असत्य
3. प्रथम चरण में, बच्चा संपूर्ण सत्य और संपूर्ण असत्य के रूप में विचार करता है और सभी उसी प्रकार देखते हैं सत्य/असत्य
4. दूसरे चरण में, बच्चा अपने आपको दूसरों के स्थान पर रख सकता है और दूसरों के दष्टिकोण को देखता है। सत्य/असत्य

(ध) भाषा विकास

बच्चे बोलने से पहले भाषा को समझना सीखते हैं। जन्म के केवल कुछ मिनट पश्चात, शिशु यह निश्चय कर सकता है कि आवाजें कहां से आ रही हैं। नवजात शिशु आवाजों में बारम्बारिता, गहनता, अवधि तथा गति के आधार पर अन्तर बता सकता है।

पहले वर्ष की समाप्ति पर, शिशु आवाजों को उनकी भाषा में स्पष्ट रूप से पहचान सकता है। वे शब्दों के जोड़े के बीच अन्तर को बता सकते हैं जो कि केवल प्रारंभिक आवाज (जैसे कैट एवं बैट) में भिन्न होते हैं।

बच्चे प्रथम वास्तविक शब्द बोलने से पहले पूर्व–भाषायी चरण का अनुसरण करते हैं जिसमें क्रमिक रूप से अभेदित रुदन, विभेदित रुदन, कूकना, बलबलाना या अपूर्ण नकल या दूसरों की ध्वनि की नकल करना, भाषा जाल की अभिव्यक्ति आते हैं।

हालांकि, वास्तविक संप्रेषण में, बोलने के गुण तथा दूसरे लोग क्या बोलते हैं को समझने की योग्यता शामिल होती है। इस प्रकार विकास कार्य के चार प्रमुख अनुक्रम हैं– बोधगम्यता, स्पष्ट उच्चारण, सुस्पष्ट शब्दावली और सार्थक वाक्य। जब शिशु पूर्ण रूप से सार्थक शब्द बोलता है तो वे पुनः उत्कष्ट चरणों से होकर जाते हैं जो कि इस प्रकार हैः

1. एक शब्दीय वाक्य : एक वर्ष की आयु में बच्चा ''बाहर'' कहने लगता है। परिस्थितियों पर निर्भर करता है कि वह क्या अर्थ लगाए ''मैं बाहर जाना चाहता हूँ'' अथवा ''मम्मी बाहर गई है''।
2. बहुशब्दीय वाक्य : लगभग दो वर्ष की आयु में वह दो अथवा उससे अधिक शब्दों के वाक्य बनाने का प्रयास करता है अर्थात् ''मैं जाऊँ''। इनमें शब्द केवल संज्ञा और क्रिया होते हैं। इस टेलीग्राफिक बोल में केवल वही शब्द होते हैं जो कि अर्थपूर्ण हों।
3. व्याकरणीय रूप से सही क्रियामूलक बोलियाँ : तीन वर्ष की आयु वाले बच्चे स्पष्ट रूप से भाषा की अभिव्यक्ति करते हैं। वे लगभग 900 शब्दों को याद रख सकते हैं, वे बड़े वाक्यों को बोल सकते हैं जिसमें वाक्य के सभी अवयव शामिल रहते हैं और उन्हें व्याकरणीय सिद्धान्तों के बारे में अच्छी जानकारी होती है। सिद्धान्तों के अपवादस्वरूप वे छोटी–छोटी घोषणाएं कर सकते हैं अर्थात हम स्टोर जा रहे हैं।

3 से 4. वर्ष की आयु के बीच वाले बच्चे 3-4 ''टेलीग्राफिक'' वाक्यों का प्रयोग कर सकते हैं जिसमें केवल अति आवश्यक शब्द शामिल रहते हैं। वे अनेक प्रश्नों को पूछ सकते हैं तथा साधारण आदेश दे सकते हैं और उसका अनुसरण भी कर सकते हैं। उन्हें लगभग 900-1200 शब्द याद रहते हैं। 4 तथा 5 वर्ष की आयु के बीच वाले बच्चे चार से पांच शब्दों के वाक्य बोल सकते हैं वे प्रीपोजीशन जैसे ओवर, अन्डर, इन, ऑन, तथा बिहाइन्ड का प्रयोग कर सकते हैं। वे संज्ञा की तुलना में क्रियाओं का प्रयोग अधिक करते हैं तथा उन्हें 1500 से 2000 शब्दों की शब्दावली स्मरण रह सकती है।

5 तथा 6 वर्ष की आयु के बीच वाले बच्चे छः से आठ शब्दों के वाक्यों को पारिभाषित करना शुरू कर देते हैं। और उन्हें कुछ विलोम शब्दों का भी ज्ञान होता है। वे प्रत्येक दिन अपनी अभिव्यक्तियों में अधिक से अधिक संयुक्ताक्षर, प्रीपोजीशन तथा आर्टिकल का प्रयोग करते हैं। व्याकरणीय दष्टि से बोली सुस्पष्ट होती है हालांकि उनमें नियमों का उतनी अच्छी तरह से ध्यान नहीं रखते। भाषा आत्मकेन्द्रित न होकर ज्यादातर सामाजिक होती है और उन्हें लगभग 2000-2500 शब्दों की शब्दावली का स्मरण रहता है।

6 तथा 7 वर्ष की बीच की आयु वाले बच्चे की बोली थोड़ी परिष्कत हो जाती है। वे इस अवस्था में मिश्रित, जटिल तथा व्याकरणीय दष्टि से सही वाक्यों को बोलते हैं। वे वाक्य के सभी भागों का प्रयोग करते हैं और उन्हें 3000-4000 शब्दों की शब्दावली का ज्ञान होता है। पियाजे के अनुसार पूर्व–स्कूल के बच्चों की बोली या तो आत्मकेन्द्रित होती है अथवा समाजीकत होती है। आत्मकेन्द्रित बोली में शब्दों और पाठ्यक्रमों का दुहराव होता है जोकि मोनालॉग (एक व्यक्ति से बात करने) तथा कलेक्टिव मोनोलॉग (दो या दो से अधिक) व्यक्तियों के आपसी वार्ता के लिए होता है। समाजीकत बोली स्पीच में दो तरफ से संप्रेषण होते हैं।

छः वर्ष की आयु के बच्चे मिश्रित व्याकरण का प्रयोग करने लगते हैं तथा उन्हें 2500 शब्दों की शब्दावाली का ज्ञान हो जाता है परन्तु वे सूक्ष्म विश्लेषण करने में निपुण नहीं होते। 4 वर्ष की आयु से बच्चे लम्बे वाक्यों को बोलने लगते हैं और अधिक जटिल व्याकरण का प्रयोग करते हैं। स्कूल के प्रारंभिक वर्षों के दौरान, वे यदा–कदा पैसिव वाक्यों अथवा क्रियाओं का प्रयोग करते हैं जिनमें हैव अथवा कंडीशनल वाक्य (यदि आप ऐसा करते, तो मैं यह कार्य कर देता) शामिल होते हैं। उनकी सिनटैक्स को स्पष्ट रूप से समझने की शक्ति तेज गति से बढ़ती है और यह संभवत: 9 वर्ष की आयु के पश्चात होता है। इस स्तर पर आत्मकेन्द्रीकरण की प्रवत्ति कम हो जाती है।

पाठगत प्रश्न 12.6

बताएं कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्य:

1. जन्म के पश्चात् शिशु को यह पता नहीं चलता कि आवाज कहां से आ रही है। सत्य/असत्य

2. विशिष्ट चरण पर बच्चे सुस्पष्ट सार्थक बोली बोल सकते हैं। सत्य/असत्य
3. 3 वर्ष की आयु के बच्चे वाक्य बोल सकते हैं। सत्य/असत्य
4. तीन से चार वर्ष के बीच की आयु वाले बच्चे तीन से चार शब्द वाले ''टेलीग्राफिक'' वाक्यों का प्रयोग कर सकते हैं। सत्य/असत्य

(न) व्यक्तित्व विकास

व्यक्तित्व विकास का संबंध व्यक्ति के शारीरिक बनावट, स्वभाव, गुण, योग्यताओं, आकांक्षाओं, रुचि आदि से है, जोकि उसका प्रतिनिधित्व करते हैं तथा उसे एक स्पष्ट पहचान दिलाते हैं।

व्यक्तित्व के संबंध में सबसे पुराना तथा अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन फ्रॉयड द्वारा किया गया। उसके अनुसार, व्यक्तित्व की संरचना के तीन भाग अर्थात् इड, इगो तथा सुपरइगो होते हैं। इगो तभी पनपता है जब तुष्टिकरण में देरी होती है; यह वास्तविकता के सिद्धान्त पर चलता है और यह तुष्टिकरण प्राप्त करने का सही और स्वीकार्य माध्यम है। सुपरइगो अथवा विवेक समाज के नैतिक कार्यों में शामिल होता है।

जन्म के समय पर ही इड होता है। शिशु आत्मकेन्द्रित होते हैं। यह तभी होता है जब तुष्टिकरण में विलम्ब होता है और वे खाने के लिए प्रतीक्षा करते हैं जिससे उनके इगो का विकास होता है और वे अपने आपको आस–पास के वातावरण से अलग समझना शुरू कर देते हैं। इस प्रकार इगो जन्म के तुरन्त पश्चात विकसित हो जाता है। सुपरइगो तब तक विकसित नहीं होता जब तक कि बच्चे की आयु 4 अथवा 5 वर्ष की न हो जाए। फ्रायड के विचार में व्यक्तित्व का विकास एक संगठन तथा मूल काम शक्ति की अभिव्यक्ति अथवा कामवासना के रूप में होता है। फ्रायड के विचार में, मानव जीव मनोकामिक विकास (ओरल, एनल, फालिक, लेटेंसी, जेनीटल) के विभिन्न चरणों से गुजरता है। फ्रायड की मान्यता थी कि शैशव तथा बाल्यकाल की घटनाएं प्रौढ़ व्यक्तित्व के निर्धारण में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। उन्होंने देखा कि पहले तीन चरण प्रौढ़ लोगों के व्यवहार के साथ तालमेल रखने के लिए विशेष महत्वपूर्ण हैं। इन चरणों के दौरान हुए अनुभव प्रौढ़ लोगों के व्यक्तित्व के गुणों तथा समायोजन के तरीकों को निर्धारित करते हैं। यदि उसकी आवश्यकताएं पूरी नहीं होती अथवा उनमें केन्द्रिकता पैदा हो जाती हैं तो व्यक्ति का व्यक्तित्व एक विशेष स्तर पर स्थिर होकर रह जाता है। स्थिरता का अर्थ मनोरोग की तरह का अपरिपक्व लगाव होता है, जो सामान्य विकास में रुकावट डालता है।

मुखीय अवस्था (जन्म से 12-18 महीने) में बच्चे किसी भी चीज को मुह में डालकर चूसते हैं और उससे अपना तुष्टिकरण करते हैं। इस अवस्था के दौरान, शिशुओं का संबंध केवल अपना तुष्टिकरण करने से है। वे पूरा इड होते हैं क्योंकि वे सुख के सिद्धान्त पर

कार्य करते हैं। यदि एक बच्चा इस अवस्था पर सन्तुष्ट महसूस नहीं करता तो वह स्थिर हो जाता है। ऐसे मामले में प्रौढ़ व्यक्तित्व मुख–चुम्बन, धूम्रपान, नाखून काटने, अधिक भोजन अथवा अधिक मदिरापान अथवा प्रिय वस्तु की दबावपूर्ण मांग अथवा बच्चों जैसी अधिक निर्भरता से अमानुपातिक सन्तुष्टि पाते हैं।

गुद काल (एनल स्टेज) (12-18 महीने से 3 वर्ष)ः इस अवस्था पर बच्चे सर्वाधिक सुख अपनी उत्सर्जन प्रक्रिया से लेते हैं या जैसे उनकी उत्सर्जन प्रक्रिया का प्रशिक्षण किया जाए। यदि स्वच्छता पर अधिक ध्यान दिया जाए तो व्यक्ति नित्य कर्मों के लिए मनोग्रस्तिज रूप से स्वच्छ अथवा अवज्ञा करके गंन्दा, दंभी, मनोग्रस्तिज रूप से निश्चित तथा जड़तापूर्वक बंध हो सकता है। गुदकाल में होने वाली समस्यायें व्यक्ति को अपनी चीजों को समेटकर रखने वाला बना सकती हैं अथवा उसे वस्तुओं को दान करने में साथ प्यार की पहचान मिलती है।

लिंगीय अवस्था (फालिक स्टेज) (पूर्व जनांगीय अवस्था)ः फ्रायड के अनुसार, मनोकामिक सुख का प्राथमिक क्षेत्र जोर 3 से 4 वर्ष की आयु पर परिवर्तित होता है, जब सुख और रुचि जनांगीय क्षेत्र में केन्द्रित हो जाते हैं। प्रीस्कूल्स लड़कियों तथा लड़कों और प्रौढ़ तथा बच्चों के बीच शारीरिक भिन्नताओं द्वारा सम्मोहित हो जाते हैं। ओडीपस ग्रन्थि (कॉम्प्लेक्स) के सिद्धान्त के अनुसार, 3-6 वर्ष का लड़का अपनी मां को अधिक प्यार करता है और इस प्रकार मां के प्यार तथा स्नेह के लिए अपने पिता के साथ द्वन्दी बनता है। नासमझी में छोटा बच्चा अपने पिता की जगह लेना चाहता है लेकिन वह पिता की शक्ति को पहचानता है। बच्चा अपने पिता के प्रति निष्कपट प्रेम, विरोधी भावना तथा विद्वेष, प्रतिद्वन्दिता तथा डर के कारण द्वन्दात्मक भावना से ग्रसित हो जाता है। यह ध्यान देते हुए कि छोटी लड़कियां भिन्न होती हैं, उनहें क्या हुआ वह आश्चर्य चकित होता है। तथा अपनी माता के प्रति भावनाओं पर अपराधबोध उसे चिन्तित करता है कि उसका पिता उसे भी लड़की बना देगा। डरते हुए वह अपनी मां के प्रति अपनी लैंगिक इच्छाओं को दबाता है, पिता के प्रति प्रतिद्वन्दिता को रोकने की कोशिश करता है तथा उनके साथ ही अपनी पहचान खोजता है।

फ्रायड के मनोलैंगिक विकास के सिद्धान्त से सहमत होते हुए भी कारेन होर्ने (1924) इस विचार को खारिज करती हैं कि किशोर युवतियां, लैंगिक अवस्था के दौरान शिशन ईर्ष्या का अनुभव करती हैं। इसके विपरीत वह गर्भस्थ ईर्ष्या की संकल्पना का आभास प्रकट करती हैं कि लड़के नारी की शारीरिक संरचना के उन भागों से घणा कर सकते हैं जो कि उसके पास नहीं हैं। वह विचार देती हैं कि किशोरियां संरचनात्मक शिशन की इच्छा नहीं करती बल्कि सामाजिक शिशन एक शक्ति तथा पहचान जो लैंगिक प्रतीति उसके नरप्रतिरूप को सुनिश्चित करती है।

इलैक्ट्रा मनोग्रन्थि इडिपस मनोग्रन्थि के समान है। एक छोटी बच्ची अपने पिता को चाहती है लेकिन अपनी माता से डरती है। इन भावनाओं को दमित करती है और अन्ततः स्वलिंगी माता–पिता के साथ पहचान बनाती है।

परम अहं (सुपर इगो) का विकास

स्वलिंगी माता–पिता के साथ पहचान बनाते हुए बच्चे वस्तुतः माता–पिता के व्यक्तित्व को अपने में अन्तःक्षेपित करते हैं। मनोविश्लेषक के विचार में यह अन्तःक्षेपण कहलाता है। वे अपनी इच्छाओं, महत्व तथा मानदण्डों का अन्तःक्षेपित करते हैं। यह परम अहं अन्तर्विवेक के समान होता है। इस अवस्था में एक बच्चे का अन्तर्विवेक अडिग होता है।

मध्य बाल्यावस्था तक, नवयुवक अपने ओडिपल द्वन्दों का समाधान करके, अपनी सैक्स भूमिका को स्वीकार करते हैं और अपनी ऊर्जा को तथ्य, कौशल तथा सांस्कतिक अभिवत्तियों को अर्जित करने में लगाते हैं।

स्कूल जाने वाले बच्चे में अहं अथवा आत्म–संप्रत्यय का विकास सभी क्षेत्रों से धमकी प्राप्त करता है। सुदढ़ता को बनाए रखने के लिए बच्चे प्रतिरक्षात्मक युक्तियों का विकास कर सकते हैं जिनमें से अनेक पूरे जीवन में बनी रहती हैं। आप इनमें से कुछ के बारे में पाठ 17 में पढ़ सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 12.7

रिक्त स्थानों की पूर्ति करोः

1. .... वास्तविकता के सिद्धान्त पर कार्य करता है तथा तुष्टिकरण प्राप्त करने के लिए स्वीकार्य तरीके का प्रयोग करता है।
2. .... अथवा अन्तर्विवेक समाज की नैतिकता को शामिल करता है, विशेषकर समान लिंगी के माता–पिता के साथ पहचान द्वारा।
3. .... अवस्था में उनका तुष्टिकरण .... मुंह में जा सकने वाली किसी भी चीज को चूसने से होता है।
4. .... अवस्था में उनके उत्सर्जन क्रिया से अत्याधिक सुखद अनुभव होता है।
5. आडीपस ग्रन्थि में बच्चे .... लिंग के प्रति प्यार दर्शाते हैं।

बताएं कि नीचे दिये गये कथन सत्य हैं अथवा असत्यः

1. इद (इड) जन्म के समय पर होता है। सत्य/असत्य
2. जन्म के तुरन्त बाद अहं (इगो) विकसित होता है। सत्य/असत्य
3. 14 अथवा 15 वर्ष की आयु से पहले अहं (इगो) विकसित नहीं होता। सत्य/असत्य
4. व्यक्तित्व विकास प्राथमिक काम ऊर्जा अथवा कामवासना का संघटक तथा अभिव्यक्ति होता है। सत्य/असत्य

5. फ्रायड के अनुसार, शिशु तथा पूर्वबाल्यावस्था की घटनाएं प्रौढ़ व्यक्तित्व को प्रभावित नहीं करती हैं। सत्य/असत्य

प) मनोसामाजिक विकास

मनोसामाजिक विकास सामाजिक संसार के लिए बच्चों की अनुक्रिया को प्रतिबिम्बित करता है। इसमें स्वबोध, दूसरों तथा अन्यों के साथ संबन्ध शामिल होता है। 2-6 वर्ष की आयु से बच्चा यह सीखता है कि कैसे सामाजिक संपर्क स्थापित किया जाए तथा वह लोगों के साथ घर से बाहर जाने लगता है। वह स्वयं को दूसरों के अनुकूल करना सीखता है तथा सामूहिक खेल में सहयोग करता है।

भ) संवेगात्मक विकास

जीवन में व्यक्तिगत समायोजन करने में सभी संवेग महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। नवजात शिशु में संवेगात्मक प्रतिक्रिया की योग्यता मौजूद होती है। अत्यधिक उत्तेजना के कारण संवेगात्मक व्यवहार का पहला चिन्ह सामान्य उत्तेजना होता है। वर्ष 1919 में मनोवैज्ञानिक ने दावा किया कि शिशुओं में जन्म के समय प्रमुख रूप से तीन संवेग निहित होते हैं– प्यार, क्रोध और भय जो कि उद्दीपकों के प्रति स्वाभाविक अनुक्रियाएं हैं। एक दशक के पश्चात यह सुझाव दिया गया कि शिशुओं में संवेगात्मक प्रवत्ति सामान्य होती है और न कि विशेष प्रकार की जैसा कि मनोवैज्ञानिकों का विश्वास था। अब इस पर विश्वास किया जाता है कि नवजात शिशु में केवल एक संवेग दिखाई देता है जो कि अस्पष्ट उत्तेजना है। नवजात शिशु की सामान्य उत्तेजना में विभेद साधारण प्रतिक्रिया में हो जाता है जो कि सुख और दु:ख है। यहां तक कि एक वर्ष की आयु में, संवेगों की संख्या बढ़ जाती है और बच्चों मे आनन्द, क्रोध, डर, ईर्ष्या, प्रसन्नता, चिन्ता, उत्सुकता तथा जलन आदि भावनाएं प्रतिबिम्बित होती हैं। जन्म के समय संवेग रहते हैं और इनका विकास बच्चे की परिपक्वता तथा सीखने के कारण होता है।

बच्चों के संवेग वयस्कता के साथ सामान्य से विशिष्ट की ओर विकसित होते हैं। जीवन के प्रथम सप्ताह से वे, भूख, सर्दी, दर्द, कपड़े न पहने होने तथा सोने में व्यवधान होने, उनको भोजन मिलने में व्यवधान होने तथा अकेले पड़े रहने के कारण रोते हैं। बच्चे की मुस्कान का अर्थ प्राथमिक सम्प्रेषण है जो संवेग का एक सुन्दर चक्र बना देता है। लगभग चार महीने का बच्चा जोर–जोर से हंसना शुरू कर देता है। वे सभी प्रकार की चीजों पर उत्तेजित तरीके से जोर से हंसते हैं। संवेगात्मक क्षेत्र में, किशोर अपने संवेगों को अमूर्त विचारों की ओर निर्देशित करने में सक्षम होते न केवल लोगों की ओर। बहुत से किशोर प्रत्येक व्यक्ति की निरन्तर संवीक्षा से अनुभव करते हैं और सोचते हैं कि दूसरे लोग उनके वैसे ही प्रशंसक या आलोचक हैं जैसे अपने प्रति वे स्वयं। वे निरन्तर काल्पनिक श्रोताओं के प्रति रचना या प्रतिक्रिया करते रहते हैं। वे घंटों शीशे के सामने खड़े होकर कल्पना करते रहते हैं कि वे दूसरों की आंखों में कैसे लग रहे होंगे।

पाठगत प्रश्न 12.8

बताएं कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्यः

1. नवजात शिशु में केवल एक संवेग दिखाई देता है – सामान्य उत्तेजना। सत्य/असत्य
2. बच्चों के संवेग अलग होते हैं क्योंकि वे प्रौढ़ता की ओर सामान्य से विशिष्ट की ओर बढ़ते हैं। सत्य/असत्य
3. संवेगात्मक क्षेत्र में, किशोरावस्था के बच्चे अपने संवेगों को अमूर्त विचारों पर प्रतिबिम्बित करने में सक्षम होते हैं और न कि केवल लोगों के प्रति। सत्य/असत्य
4. जन्म के समय ही संवेग विद्यमान रहते हैं और इनका विकास परिपक्वता तथा सीखने के कारण होता है। सत्य/असत्य

आपने क्या सीखा

- जीवन के विभिन्न चरणों में विकास होता हैः

(i) गर्भस्थ (प्री नैटल) –	जन्म से पहले	
(ii) शैशव (इनफैन्सी) –	0-3 वर्ष	
(iii) प्री–स्कूल –	3-6 वर्ष	
(iv) स्कूली बच्चे –	6-12 वर्ष	
(v) किशोर अवस्था –	12-20 वर्ष	
(vi) प्रौढ़ता –	युवा	20-50 वर्ष
	प्रौढ़	50-65 वर्ष
	आयुगत प्रौढ़	65+ वर्ष

- एक विशेष उम्र की सामाजिक जरूरतों को विकास कार्य के रूप में जाना जाता है।
- मील का पत्थर (माइल्सटोन) वह उम्र है जिसमें विशेष कुशलताओं की आवश्यकता होती है।
- विभिन्न क्षेत्रों में विकास होता है प्रत्येक के लक्षण पेज 45-46 पर दिए गए हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. विकास के विभिन्न स्तरों तथा इनसे संबंधित आयु समूहों की चर्चा करें।
2. विकासात्मक कार्य क्या हैं?
3. विकास के मुख्य क्षेत्र कौन से हैं?
4. शिशुओं तथा प्री स्कूल बच्चों के दष्टिकोण में अन्तर का वर्णन कीजिए।
5. निम्नलिखित शॉर्ट नोट बनाइए:

   (क) संज्ञानात्मक विकास

   (ख) नैतिक विकास

   (ग) व्यक्तित्व विकास

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

12.1

1. चरण   2. विकासात्मक कार्य   3. चरण   4. प्रथम तीन वर्ष   5. 50

12.2

1. क) दो बार ख) तीन; एक–चौथई   ग) चर्बी उत्तक

   घ) शारीरिक, गतिक, मानसिक, भाषा, व्यक्तित्व, मनोसामाजिक, संवेगात्मक नैतिक, व्यावसायिक

2. क) गलत   ख) गलत   ग) सही घ) सही
3. क) सही   ख) सही   ग) गलत   घ) सही

12.3

1. मील के पत्थर आयु हैं जिस पर विशिष्ट कौशलों को विकसित किया जाता है।
2. क) सही   ख) गलत   ग) गलत   घ) गलत   ङ) सही

12.4

1. क) अनुकूलन   ख) समंजन   ग) समानुकूलन

   घ) समंजन; समानुकूलन   ङ) स्किमा   च) स्किमेय

12.5

1) सही 2) सही 3) सही 4) सही

12.6

1) गलत 2) सही 3) सही 4) गलत

12.7

1. क) अहं ख) परम अहं ग) मुखीय घ) पार्यवाय

2. क) सही ख) सही ग) सही घ) सही ङ) गलत

12.8

1. सही 2. सही 3. सही 4. सही

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. खण्ड 12.2 का संदर्भ ले
2. खण्ड 12.1 का संदर्भ ले
3. खण्ड 12.3 का संदर्भ ले
4. खण्ड 12.3 (क) का संदर्भ ले
5. क) खण्ड 12.3 (ग) का संदर्भ ले
6. ख) खण्ड 12.3 (घ) का संदर्भ लें
6. ग) खण्ड 12.3 (च) का संदर्भ ले

13

किशोरावस्था

हममें से प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में एक ऐसे विशेष स्तर से गुजरता है जहां हम स्वयं को अपने शरीर में होने वाले अचानक परिवर्तनों से अनभिज्ञ होते हैं या जब हमारे बुजुर्ग यह कहने का कोई मौका नहीं छोड़ते हैं कि अब तुम बड़े हो गए हो किन्तु इतने बड़े नहीं कि अपने निर्णय स्वयं ले सको। इस प्रकार की टिप्पणियों से अब हम भली प्रकार से परिचित हो गए हैं। बचपन से वयस्क तक बढ़ने की अवधि को किशोरावस्था कहते हैं।

एक मनुष्य के जीवन चक्र में किशोरावस्था महत्वपूर्ण स्तरों में से एक है। इस स्तर में व्यक्ति में शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दष्टि से अति तीव्र परिवर्तन होते हैं। किशोरावस्था का सामान्य अर्थ 'बड़ा होना' है। इसका अर्थ अनेक विकासात्मक कार्यों को पूरा करना है। किशोर को अपने शरीर तथा व्यवहार में आए परिवर्तनों के साथ समन्वय बिठाना होता है। उसे अनुभव होने लगता है कि वह अब बच्चा/बच्ची नहीं रहा/रही किन्तु अभी वयस्क भी नहीं हुआ/हुई है। बढ़ते हुए किशोर क्या अनुभव एवं महसूस करते हैं? वे अपने शारीरिक परिवर्तनों से कैसे निपटते हैं? वे ऐसा व्यवहार क्यों करते हैं जैसा वे कर रहे होते हैं? किशोरों की कुछ मनोवैज्ञानिक विशेषताएं क्या हैं? यह कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिन्हें समझने में आपको इस पाठ से मदद मिलेगी।

उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के पश्चात आपके लिए सम्भव होगा:

- किशोरावस्था के महत्व का उल्लेख करना;
- किशोरों की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं का वर्णन करना;

- किशोरावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक व मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों को समझना;
- लड़कों व लड़कियों की गौण यौन विशेषताओं को सूचीबद्ध करना;
- किशोरों द्वारा किए जाने वाले विकासात्मक कार्यों की सूची तैयार करना;
- किशोरों के समक्ष आने वाली शारीरिक तथा आत्म संबंधी समस्याओं को सूचीबद्ध करना; तथा
- किशोरों की जोखिम उठाने वाली विशेषताओं तथा नशीली दवाइयों का सेवन, एस टी डी, एच आई वी/एड्स तथा विवाहपूर्व गर्भधारण के मध्य संबंधों को इंगित करना।

13.1 किशोरावस्था क्या है?

किशोरावस्था का स्तर मनुष्य के विकास के महत्वपूर्ण स्तरों में से एक है जो बचपन के स्तर से वयस्कावस्था तक होने वाले परिवर्तनों में सहायक होता है। यह अवस्था 12 वर्ष की आयु से आरम्भ होती है तथा 18 वर्ष की आयु तक निरन्तर रहती है। इस अवधि में बच्चे में तीव्र तथा महत्वपूर्ण शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक रूपांतरण उत्पन्न होते हैं जैसे यौन अंगों का परिपक्व होना तथा लम्बाई व भार का बढ़ना। अब हम इनके संबंध में अध्ययन करेंगे।

किशोरावस्था के दौरान शारीरिक परिवर्तनः यौवनारम्भ तथा अवस्थान्तर

किशोरावस्था के दौरान शारीरिक विकास के निम्नलिखित पांच क्षेत्रों में महत्वपूर्ण वद्धि देखी जाती हैः

1. लम्बाई
2. भार
3. कंधों की चौड़ाई
4. नितम्ब की चौड़ाई
5. मांसपेशी में सुदढ़ता

यौनारम्भ के दौरान परिवर्तन विलक्षण होते हैं। एक स्कूल जाने वाला बच्चा कुछ ही वर्षों में पूर्णतः विकसित वयस्क बन जाता है। इन परिवर्तनों का निम्नानुसार वर्गीकरण किया जा सकता है।

1. हार्मोन का परिवर्तन
2. शरीर के आकार तथा समानुपात में परिवर्तन

3. मासपेशियों का बढ़ना व अन्य आन्तरिक परिवर्तन
4. यौन परिपक्वता

लम्बाई व भार में वद्धि शरीर में चर्बी के पुनर्व्यवस्थन तथा हड्डियों तथा मासपेशियों के अनुपात में वद्धि से संबंधित है। लड़कों में सामान्यतः यह विकास लड़कियों की तुलना में दो वर्ष पहले आरम्भ हो जाता है किन्तु यह लम्बी अवधि के लिए रहता है। शारीरिक समानुपात में भी परिवर्तन होते हैं। लड़कियों में सामान्यतः नितम्बों में वद्धि होती है तथा लड़कों के कंधे चौड़े होते हैं। कमर रेखा में अनुपातिक रूप से कमी होती है।

शरीर में अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ द्वारा हार्मोन के स्राव में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं। जनन ग्रन्थि या गोनाड्स क्रियात्मक हो जाते हैं जो यौन संबंध विकास उत्पन्न करते हैं। लड़कों व लड़कियों में यौन विशेषताएं उत्पन्न हो जाती हैं जिन्हें व्यापक रूप से निम्नानुसार वर्गीकत किया जा सकता है।

1. प्राथमिक तथा
2. गौण

लड़कों में यौन विशेषताओं से संबंध पुरुष यौन अंगों यथा लिंग, वषण, मुष्क में विकास होता है। लड़कियों में प्राथमिक यौन विशेषताओं में यौन अंग यथा यूटरस, फलोपियन ट्यूब तथा वक्ष स्थल के विकास शामिल हैं। लड़कियों में अण्डमोधन तथा रजोधर्म तथा लड़कों में वीर्य की उत्पत्ति प्राथमिक यौन विकास हैं जो पुनरुत्पादन क्षमता से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित है।

13.2 किशोरावस्था के दौरान विकासात्मक कार्य

एक किशोर को वयस्क के रूप में प्रभावशाली रूप से कार्य करने के लिए विशिष्ट अभिवत्तियाँ, आदतें तथा कौशल प्राप्त करने होते हैं। इन्हें किशोरावस्था के विकासात्मक कार्य कहते हैं।

शिशु अवस्था व बचपन के दौरान, उदाहरण के लिए, विकासात्मक कार्यों में ठोस आहार को लेने का अभ्यास, मनोवैज्ञानिक स्थिरता प्राप्त करना तथा सामाजिक व शारीरिक वास्तविकताओं की सामान्य अवधारणाओं का सजन करना शामिल होता है। बचपन की मध्यवर्ती स्थिति के दौरान विकासात्मक कार्योंमें शामिल हैं खेलों के लिए आवश्यक शारीरिक कौशलों का सीखना तथा उपयुक्त यौन भूमिका को सीखना। आपने पहले ही पिछले पाठों में इन विकासात्मक मांगों के बारे में पढ़ा है।

विकासात्मक कार्य वे कार्य हैं जो कि व्यक्ति के जीवन में एक निश्चित अवधि से संबंधित होते हैं। विकासात्मक कार्यों के सफलतापूर्वक निष्पादन के परिणामस्वरूप खुशी

की प्राप्ति होती है तथा बाद के कार्यों में सफलता प्राप्त होती है, जबकि इनमें विफलता के कारण व्यक्ति में दुख की उत्पत्ति, समाज द्वारा अस्वीकति तथा बाद में कार्यों को करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

किशोरावस्था के मुख्य विकासात्मक कार्यों को निम्नानुसार सूचीबद्ध किया गया है।

- अपनी शारीरिक बनावट को वैसे ही स्वीकार करना जैसे वह है तथा अपने शरीर का प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग करना।
- दोनों लिंगों के सहपाठियों के साथ नए व अधिक परिपक्व संबंधों को स्थापित करना।
- पौरुषी या स्त्रीवाधी सामाजिक भूमिका को प्राप्त करना
- मातापिता तथा अन्य वयस्कों से भावात्मक स्वतंत्रता प्राप्त करना।
- आनन्दमयी तथा उत्पादक कैरियर के माध्यम से आर्थिक स्वतंत्रता के लिए स्वये को तैयार करना।
- विवाह तथा पारिवारिक जीवन के लिए तैयारी करना।
- मूल्यों के समुच्चय तथा नैतिक प्रणाली को प्राप्त करना तथा व्यवहार के मार्गदर्शक के रूप में एक विचारधारा को विकसित करना।

इस प्रकार एक किशोर को कौशलों व क्षमताओं की व्यापक श्रंखला को विकसित व अधिग्रहित करना होता है। ये विकास के सभी पहलुओं से संबंधित होते हैंः शारीरिक, संवेगात्मक, नैतिक तथा संज्ञानात्मक।

13.3.1 संवेगात्मक विकास

किशोरावस्था के दौरान एक व्यक्ति को व्यापक श्रंखला तथा विविध संवेगों का सामना करना पड़ता है। इनमें नकारात्मक व सकारात्मक दोनों प्रकार के संवेग शामिल हैं। प्रसन्नता का अनुभव आनन्द, ओजस्विता, प्रफुल्लिता आदि के रूप में किया जाता है तथा उदासी का अनुभव अवसाद, दुख, दुश्चिंता, भय आदि के रूप में किया जाता है। इसके अतिरिक्त क्रोध, विद्रोह तथा आक्रोश की भावना भी उत्पन्न होती है। किशोरावस्था के दौरान देश के प्रति वफादारी, देशभक्ति तथा बलिदान की भावनाएं भी उत्पन्न होती हैं

उपर्युक्त प्रत्येक संवेग की अनुभूति अत्यंत तीव्र होती है। बहरहाल, किशोरावस्था के संवेगों की सुदढ़ता तथा तीव्रता उनकी एक प्रमुख विशेषता है। किशोर हर बात को बढ़ाचढ़ा कर व्यक्त करते हैं। यह एक सामान्य बात है जब आप किशोरों द्वारा अपनी रुचि के लिए 'प्यार' शब्द का प्रयोग करते हैं जैसे मुझे आइस्क्रीम बहुत प्यारी है, मुझे केक बहुत प्यारा है इसी प्रकार अपनी नापसंद के लिए 'नफरत' शब्द का प्रयोग करते हैं– ''मुझे उस आदमी से नफरत है''। या ''मुझे फलों से नफरत है''।

मनोदशा में भी बार–बार परिवर्तन घटित होते हैं। यह भी किशोरों में एक प्रमुख प्रवत्ति है। कभी वे खुश रहते हैं, कभी वे उदास रहते हैं। कभी–कभी उनमें देशभक्ति की अति तीव्र भावना जाग्रत होती है तो कुछ क्षणों बाद ही वे भ्रमित या क्रोधित हो उठते हैं। इससे उनका व्यवहार कुछ अप्रत्याशित हो जाता है। यौन सम्बन्धी सांवेगिक अनुभव यथा वशीभूत करना तथा मोह भी इस अवधि के दौरान उत्पन्न होना आरम्भ कर देते हैं।

13.3.2 सामाजिक विकास

सामाजिक क्षेत्र में, किशोर अपने अन्तःव्यैक्तिक संबंधों में भारी परिवर्तन से गुजरते हैं तथा वे समाज को व उसके विविध प्रभावों को समझना आरम्भ कर देते हैं। बाल अवस्था के दौरान अभिभावकों पर आश्रितता में परिवर्तन होने लगता है तथा ये अपने मित्रों व सहपाठियों पर आश्रित होना आरम्भ कर देते हैं। यद्यपि, किशोरों के लिए मित्रता अत्यंत महत्वपूर्ण है तथा इनमें से अधिकांश अपना अधिक समय अपने परिवार की अपेक्षा अपने मित्रों के साथ बिताना चाहते हैं। समवयस्क समूह में एक लोकप्रिय सदस्य के रूप में पहचाना जाना किशोरों की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। किशोर कई बार अपने माता–पिता तथा बुजुर्गों से तकरार करने लगते हैं क्योंकि वे उनके नियंत्रण से बाहर जाना चाहते हैं।

विपरीत लिंग के सदस्यों के प्रति आकर्षण भी किशोरावस्था की एक प्रधान विशेषता है। यह एक प्राकतिक प्रक्रिया है तथा मुख्य रूप से किशोरों में यौन संबंधी परिपक्वता के कारण उत्पन्न होती है।

किशोर अपनी स्वयं की समझ के अनुसार अपने विश्वास, विचार, अभिरुचियों को ग्रहरण करना आरंभ कर देते हैं। इस स्तर पर मीडिया उन्हें प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण साधन बन जाता है, विशेष रूप से संगीत व टी.वी. ये किशोर के उनके आदर्श मॉडल जैसे फिल्मी हीरो, महान एथलीट आदि उपलब्ध कराते हैं जिनका वे अनुसरण करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार के मॉडल किशोरों के उनकी कल्पनाओं व सपनों से अवगत कराने में सहायक होते हैं।

किशारों में शारीरिक छवी की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। एक अच्छी फीगर (शारीरिक स्वरूप) प्राप्त करना हर किशोर का जुनून है। इसके अतिरिक्त, उनके कपड़ों, मेकअप आदि में फैशन तथा ग्लेमर प्रदर्शित होता है। एक सही हेयरस्टाइल प्राप्त करना उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये उन सामाजिक भूमिकाओं से संबंधित है जो किशोर स्वयं में विकसित तथा अनुभव करना चाहते हैं।

13.3.3 संज्ञानात्मक विकास

किशोरों के चिन्तन तथा तर्क कौशलों का व्यापक रूप से विस्तार होता है। वे अब विशेष रूप से अपनी पूरवर्ती बालावस्था की स्थिति की तुलना में अधिक सक्षम हो जाते हैं।

किशोर पिगेट के ''औपचारिक प्रचालनों'' के स्तर में प्रवेश करते हैं जिसका तात्पर्य है कि वे विखण्डित अवधारणाओं को समझने लगते हैं तथा सम्भावनाओं की दष्टि से विचार करना आरम्भ कर लेते हैं।

किशोर अनुमानात्मक तथा वियोजनात्मक दोनों प्रकार से विचार करने की क्षमता विकसित कर लेता है। ये विभिन्न दष्टिकोणों को प्रदर्शित, विश्लेषित, आकलित, अनुमानित तथा उनकी चर्चा करने में भी सक्षम हो जाते हैं। विभिन्न विषयों पर किशोरों के अपने स्वयं के विचार महत्वपूर्ण हो जाते हैं इसके कारण सामान्यतः किशोर अभिभावकों, अध्यापकों व मित्रों के साथ उग्र चर्चा में लिप्त हो जाते हैं।

किशोर एक प्रयोगवादी के समान हर तथ्य पर प्रश्न करना आरम्भ कर देता है। वे निष्कर्ष पर तभी पहुंचते हैं जब वे तथ्यों से संतुष्ट हो जाते हैं। वे अपने दष्टिकोण का बड़ी दढ़ता के साथ पक्ष लेते हैं। उनके शब्द भण्डार में अद्वितीय विकास होने लगता है। किशोर एक साथ अनेक बौद्धिक कार्यों को करने में सक्षम होने लगते हैं जो उनके इस स्तर को बौद्धिक विकास का एक महत्वपूर्ण स्तर बना देता है।

13.3.4 नैतिक विकास

नैतिकता के क्षेत्र में भी किशोर अत्यंत महत्वपूर्ण परिवर्तनों से गुजरते हैं। अब वे नैतिकता के एहसास को विकसित कर लेते हैं तथा समझने लगते हैं कि क्या सही और क्या गलत है। उनके विचार केवल इस बात पर अधारित नहीं होते कि उनके माता–पिता तथा अध्यापकों ने उन्हें क्या सिखाया बल्कि उनके स्वयं के अनुभवों पर भी आधारित होते हैं। वे समाज में विद्यमान सामाजिक तथा नैतिक आचरणों पर प्रश्न करने लगते हैं तथा केवल उन्हीं नैतिक आचारों को स्वीकार करते हैं जिनसे वे संतुष्ट होते हैं।

एक अच्छा बच्चा/अच्छी बच्ची बनने या सबको खुश रखने की उत्सुकता अब महत्वपूर्ण नहीं रहती है। इसके स्थान पर अब प्रश्न पूछने वाला मस्तिष्क तथा विषयों पर अपने विचारों को रखने वाला किशोर ले लेता है।

इस स्तर के दौरान किशोर समाज में व्यवस्था को बनाए रखने के लिए कानून के महत्व को समझने लगता है। इसके अतिरिक्त वे व्यक्तिगत मूल्यों के एक समूह का सजन करने लगते हैं जो उनके जीवन में मार्गदर्शी सिद्धान्त बन जाते हैं। गिलीगन (१९८२) के अनुसार कोहलबर्ग के नैतिकता का सजन न्याय पर बल देता है जबकि नैतिक निर्णय लेने में भावना तथा देखरेख की भूमिका की अवहेलना करता है या महत्व नहीं देता है। गिलिगन स्वयं तथा अन्य सिद्धान्तवादी तर्क देते हैं कि कोहलबर्ग के कार्य का अभिप्राय की तुलना में नैतिक विकल्प अधिक लचीले तथा जटिल प्रक्रिति के होते हैं और नैतिकता को विचारों के अनेक समुच्चयों द्वारा एक साथ निर्देशित हो सकती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि किशोरावस्था पहचान संकट की अवस्था है, जब एक व्यक्ति न तो बच्चा होता है और न ही वयस्क। शारीरिक परिवर्तन तथा साथ ही साथ

मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के कारण, व्यकित को मजबूरन यह प्रश्न उठाना पड़ता है, "मैं कौन हूँ?" इस प्रश्न का उत्तर ढूंढना आसान नहीं है। वह सम्पूर्ण किशोरावस्था में इस प्रश्न से जूझता रहता है, बहरहाल, किशोरावस्था के अन्त में व्यक्ति अपनी पहचान की भावना के साथ उभरता है।

पाठगत प्रश्न 13.1

क. उपयुक्त शब्दों की सहायता से रिक्त स्थान भरें:

1. किशोरावस्था में संवेग अत्यंत .... से उत्पन्न होते हैं।
2. किशोरावस्था के दौरान व्यक्ति का रूझान अपने माता पिता से हटकर .... की ओर होने लगता है।
3. संज्ञात्मक रूप से किशोर प्याजे के .... अवस्था पर हैं।
4. बारम्बार .... के कारण किशोर के संवेगों का पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता है।
5. नैतिक विकास के क्षेत्र में किशोर .... के एक समूह को विकसित करना प्रारंभ कर देते हैं।

ख. उस क्षेत्र का नाम बताइए जिसमें मनोवैज्ञानिक परिवर्तन होते हैं?

13.4 किशोर समस्याओं से निपटना और समायोजन

किशोरों की शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक प्रवतियां तथा विकासात्मक कार्यों की प्रकति, उन्हें लगता है कि इनका सामना उन्हें करना पड़ेगा, के कारण विकास में संकट उत्पन्न हो जाता है। मूल रूप से किशोर अपने घर, स्कूल तथा समाज से संबंधित समस्याओं का सामना करते हैं।

निम्न सूचीबद्ध समस्याएं केवल कुछ समान उदाहरणों को दर्शाते हैं। प्रत्येक किशोर की व्यक्तिगत रूप से समान प्रकार की समस्याओं का विशिष्ट संयोग या अन्य समस्याएं हो सकती हैं। इनमें अधिक गंभीर समस्याएं हैं– नशीली दवाओं का सेवन, शराब पीना, सिगरेट पीना, कर्तव्यत्याग, यौन आवेग आदि। ये समस्याएं व्यक्तिगत रूप से सभी किशोरों में नहीं पाई जाएंगी।

तालिका 13.1: *किशोरों की सामान्य समस्या*

शरीर व स्वयं से संबंधित समस्याएं	परिवार से संबंधित समस्याएं	स्कूल से संबंधित समस्याएं	समाज से संबंधित समस्याएं समस्याएं
शारीरिक छवी	माता–पिता का प्राधिकारत्व	कड़े अध्यापक	लिंग पक्षपात
मुंहासे	माता–पिता के साथ	पक्षपातपूर्ण व्यवहार	जाति संबंधी
रंग	खराब संपर्क	बंद स्कूल	समस्याएं
भोजन संबंधी बुरी आदतें	सम्प्रेषण की कमी	वातावरण	पीढ़ी अन्तर
शारीरिक परिवर्तन	निम्न सामाजिक आर्थिक	सहपाठियों द्वारा	रूढिवादी पद्धतियां
मूडी होना	पष्ठभूमि	स्वीकार न किया	दमनात्मक
भावुकता	गैर अनुकूल वातावरण	जाना	अधिक उम्मीदें
क्रोध	स्थान की तंगी	कोई सहगामी	मित्रें की कमी
अतिसंवेदनशीलता	अन्यों के साथ तुलना	भागीदारी नहीं	
विद्रोह की भावना		स्कूल के लंबे घंटे	
मोहकता			
आकर्षण			
दिन में सपने देखना			

13.5 किशोरों के समक्ष आने वाली कुछ समकालीन समस्याएं

अब तक हम जान चुके हैं कि किशोरों के अनुभव शारीरिक तथा सामाजिक कारकों का परिणाम हैं। शारीरिक परिवर्तन सार्विक हैं। व्यवहार के तरीकों, नए अन्तःवैक्तिक संबंधों को विकसित करने के संबंध में बच्चों से सामाजिक उम्मीदों के कारण अनिश्चितता की स्थिति तथा स्वयं–असमंजस की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

अब तक आपने पढ़ा कि किशोरावस्था एक व्यक्ति के लिए एक महत्वपूर्ण समक्रमण अवधि है। किशोरावस्था वह चरण है जो व्यक्ति को वयस्क जीवन के लिए तैयार करता है। व्यस्कता की अवस्था की ओर बढ़ने पर व्यक्ति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों, यथा व्यक्तिगत, सामाजिक तथा शैक्षणिक, की समस्याओं का सामना करता है।

किशोरावस्था अवधि के संबंध में रूढ़िबद्ध अवधारणाओं तथा भ्रांतियों ने किशोरों में विभिन्न समस्याओं को जन्म दिया है। कुछ गम्भीर विषय हैं गलत चीजों का सेवन, किशोरावस्था में गर्भधारण तथा यौन संक्रामक बीमारियां तथा एड्स, अब हम इन विषयों को विस्तार से समझने का प्रयास करेंगे।

क) गलत वस्तुओं का सेवनः किशोरावस्था में गलत वस्तुओं के सेवन के कारण जीवनपर्यन्त परिणाम भुगतने पड़ते हैं। रोजाना के तनावों से बचने के लिए शराब व नशीली दवाइयों पर आश्रित होने के कारण उनके उचित निर्णय लेने की क्षमता को हानि पहुंचती है। इससे अवसाद तथा असामाजिक व्यवहारों सहित गंभीर सामंजस्य संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। इन समस्याओं से बचने के लिए उचित मार्गदर्शन तथा किशोरों में ऊर्जा के सजन के लिए अनुकूल वातावरण का

निर्माण किए जाने की आवश्यकता होती है ताकि वे अपने तनावों से सफलतापूर्वक निपट सकें।

ख) यौन संक्रमित बीमारियां: हाल में विश्वभर में देखी गई एक अन्य व्यापक समस्या यौन संचारित बीमारियां हैं। किशोरों के ऐसी बीमारियों से प्रभावित होने की सर्वाधिक सम्भावना है। यह ऐसा वर्ग है जो गैर–जिम्मेदाराना यौन व्यवहार में लिप्त होता है। किशोरों मे व्याप्त यौन संबंधी गलत अवधारणाओं को समाप्त करने में सहायता की जानी चाहिए जोकि व उन्हें बड़े जोखिम में डाल देते हैं। किशोरों को प्रभावपूर्ण रूप से उचित यौन शिक्षा उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

ग) किशोरावस्था गर्भधारण: जिम्मेदार अभिभावक बनना एक चुनौतीपूर्ण तथा तनावपूर्ण अनुभव है। किशोरों के लिए यह विशेष रूप से कठिन है। बच्चे के पोषण में माता व बच्चे के लिए असीमित कठिनाइयों का सफर होता है। यह आर्थिक तनाव को भी उत्पन्न करता है।

किशोरों की अनेक समस्याओं का अध्ययन करने के पश्चात अब हम इन समस्याओं के कारणों को समझेंगे। ये कारण हैं: अध्यापकों तथा माता–पिता से उचित मार्गदर्शन की कमी, मीडिया का अनुचित प्रभाव, समआयु समूहों के साथ गलत संबंध तथा शारीरिक परिवर्तनों के प्रति आशंकाएं, यौन अवधारणाओं के प्रति त्रूटिपूर्ण धारणाएं तथा मूड में तीव्र परिवर्तन। समाज तथा परिवार इन नवयुवकों को शिक्षा, व्यवसायिक तथा रोजगार के अवसर प्रदान करके उनके प्रारम्भिक किशोरावस्था की समस्याओं से बचा सकते हैं। समाज तथा परिवार द्वारा किशोरावस्था गर्भधारण तथा उनकी समस्याओं के संबंध में किशोरों का उचित मार्गदर्शन उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

मार्गदर्शन तथा निर्देशन प्रक्रिया के माध्यम से इन समस्याओं के समाधान में किशोरों की सहायता की जा सकती है। विशेष रूप से कैरियर काऊंसलिंग तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन से विभिन्न कैरियर अवसरों तथा शैक्षिक विकल्पों से अवगत कराया जा सकता है। व्यक्तिगत तथा सामाजिक काऊसंलिग किशोरों को अपनी समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने में सहायक होंगे। इन समस्याओं के समाधान में परिवार भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अभिभावक, बुजुर्ग तथा समआयु विकासशील किशोरों के लिए उपयोगी साबित हो सकते हैं।

आपने क्या सीखा

- किशोरावस्था मानव विकास की एक महत्वपूर्ण अवस्था है। यह बालावस्था से वयस्कता में अन्तरण की अवधि है।
- इस अवधि के दौरान तीव्र शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक परिवर्तन परिलक्षित होते हैं।
- शारीरिक क्रियाओं में मुख्य परिवर्तन हैं विभिन्न ग्लैंडों द्वारा हार्मोन्स का सीक्रीशन। इस चरण के दौरान पुनुरुत्पादक क्षमता तथा यौन विशेषताएं भी विकसित होती हैं।

- वह अवधि जिसके दौरान यौन परिपक्वता को बनाने के लिए शारीरिक परिवर्तन होते हैं, उसे तारुण्या कहते हैं। तारुण्य को तीन स्तरों पर विभाजित किया जा सकता है– तारुण्यतापूर्व, तारुण्यता, तारुण्यता पश्चात।
- किशोरों के कुछ विकासात्मक कार्य हैं– सहपाठियों के साथ नए व परिपक्व संबंध प्राप्त करना, उपर्युक्त पौरूष, स्त्रित्व सामाजिक भूमिका प्राप्त करना तथा भावनात्मक स्वतंत्रता प्राप्त करना आदि।
- शारीरिक परिवर्तनों के अतिरिक्त कुछ मनोवैज्ञानिक परिवर्तन जैसे संवेगात्मक विकास, संज्ञानात्मक तथा नैतिक विकास भी प्रारंभ होते हैं।
- किशोरों में घर तथा परिवार, स्वयं, स्कूल व समाज के संबंध में सामंजस्य की कुछ सामान्य समस्याएं उत्पन्न होती हैं।
- विभिन्न जीवन कौशलों का विकास तथा मार्गदर्शन व काउंसलिंग किशोरों को वयस्कावस्था तक सुगमता से ले जाने में सहायक हो सकते हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. किशोर अपनी भावनाओं को कैसे व्यक्त करते हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
2. किशोरों में कौनसी प्रमुख सामाजिक विशेषताएं नजर आती हैं?
3. किशोर बच्चों से बोध की दृष्टि से कैसे अलग होते हैं।
4. किशोरों के कुछ विकासात्मक कार्यों की सूची तैयार कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

13.1

क. 1. तीव्रता 2. समआयु 3. औपचारिक प्रचालन 4. मूड परिवर्तन
5 व्यक्तिगत मूल्य

ख. मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के क्षेत्र हैं– संवेगात्मक, सामाजिक संज्ञानात्मक तथा नैतिक

पाठान्त प्रश्नों के लिए संकेत

1. खण्ड 13.3.1 का संदर्भ लें।
2. खण्ड 13.3.2 का संदर्भ लें।
3. खण्ड 13.3.3 का संदर्भ लें।
4. खण्ड 13.2 का संदर्भ लें।

14

प्रौढ़ावस्था एवं वद्धावस्था

'बड़े होने पर तुम क्या करोगे?'

'तुम जीवन में क्या प्राप्त करना चाहते हो?'

'तुमने अपनी वद्धावस्था के लिए क्या योजना बनाई है?'

ये और इसी प्रकार के अन्य अनेक प्रश्न प्रतिदिन हमारे दिमाग में आते हैं। हमारा जीवन दिन प्रतिदिन जटिल होता जा रहा है। हमारे पास बहुत से विकल्प उपलब्ध है। जीवन के हर पड़ाव पर, लोगों की जीवनशैली में बहुत से परिवर्तन आ रहे हैं। पूरे जीवन में प्रौढ़ावस्था ही सबसे स्थायी अवस्था होती है। प्रौढ़ व्यक्ति बाहरी दुनिया के साथ तो समायोजन बैठाता ही है साथ ही स्वयं अपने साथ भी समायोजन बनाना होता है जिसके कारण उसमें स्थायित्व आता है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जिसकी नौकरी चली जाती है, वह दूसरी नई नौकरी पाने के लिए जी–तोड़ मेहनत करता है और उसके साथ तालमेल बनाने का प्रयास करता है।

इस पाठ का प्रारंभ प्रौढ़ावस्था के कुछ महत्वपूर्ण लक्षणों की चर्चा से प्रारंभ होता है। उसके बाद, प्रौढ़ावस्था के दौरान होने वाले शारीरिक और मानसिक परिवर्तनों की बात की गई है। पाठ के अंतिम भाग में इस अवस्था के दौरान स्थितियों का सामना करने और तालमेल बैठाने सम्बन्धी समस्याओं पर चर्चा की गई है। वद्ध व्यक्तियों से जुड़ी कुछ मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का संक्षिप्त विवरण भी दिया गया है।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप सक्षम होंगे:

- प्रौढ़ावस्था के दौरान किए जाने वाले कुछ महत्वपूर्ण विकासात्मक कार्यों का विवरण देने में;

- प्रौढ़ावस्था के महत्वपूर्ण लक्षणों की व्याख्या करने में; और
- वद्धावस्था में तालमेल बैठाने संबंधी समस्याओं का विवरण करने में।

14.1 प्रौढ़ावस्था का मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य

ऐसा समझा जाता है कि किशोरावस्था पर विकास समाप्त हो जाता है। केवल बुद्धिमत्ता का विकास प्रौढ़ावस्था में होता है। फिर भी, प्रौढ़ावस्था एवं वद्धावस्था में कुछ विशिष्ट वैकासिक कार्य होते हैं जिनमें विशिष्ट विकास एवं जीवन में विशेष समायोजन के लिए वद्धजन लगे रहते हैं। इस दष्टि से हैवींघर्स्ट और लेविसन के द्वारा दिये गये परिप्रेक्ष्य अति उपयुक्त हैं।

बाक्स 14.1: हैविधर्स्ट के वैकासिक कार्य

प्रारंभिक प्रौढ़ावस्था:

जीवन साथी चुनना, विवाहित साथी के साथ रहना सीखना, एक परिवार प्रारंभ करना, बच्चे पैदा करना, एक घर की व्यवस्था करना, एक व्यवसाय में लगना, नागरिक दायित्व संभालना और एक मैत्रीपूर्ण सामाजिक समूह खोजना।

मध्य प्रौढ़ावस्था:

प्रौढ़ नागरिक एवं सामाजिक दायित्व संभालना, एक आर्थिक जीवन स्तर स्थापित करना और उसे बनाये रखना, किशोरों को एक उत्तरदायी और प्रसन्न प्रौढ़ कनने में सहायता करना, अवकाश के समय के लिये प्रोढ़ों के कार्यक्रम बनाना, अपने जीवन साथी के साथ एक व्यक्ति के नाते सम्बन्ध बनाना, मध्यावस्था के मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों को स्वीकारना और समायोजन करना तथा वद्ध माता–पिता के साथ समायोजन करना।

वद्धावस्था:

गिरती शक्ति और गिरते स्वास्थ्य के साथ समायोजन करना, सेवानिवत्ति और घटी आय के साथ समायोजन करना, जीवन साथी की मत्यु पर समायोजन करना, अपने आयु समूह के सदस्यों के साथ स्पष्ट सम्बन्ध बनाना, नागरिक एवं सामाजिक दायित्वों का निर्वाह करना, भौतिक रहन–सहन की सन्तोषजनक व्यवस्था करना।

हैविंघर्स्ट के वैकासिक कार्य जीवन की स्थितियों पर आधारित हैं। दूसरा मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य डैनियल लेविन्सन का है जिन्होंने केवल पुरुषों के नैदानिक अध्ययनों पर अपने आंकड़े निकाले। लेविन्सन द्वारा दी गई अवस्थाओं का वर्णन बाक्स 14.2 में दिया गया है।

बॉक्स 14-2: लेविन्सन की अवस्थायें

परिवार छोड़ना (20-24): किशोरावस्था से आरंभिक प्रौढ़ावस्था की ओर ले जाने वाला यह एक संक्रमण काल है जिसमें घर से बाहर निकलना और परिवार के साथ एक मनोवैज्ञानिक दूरी स्थापित करना शामिल है। यह स्थिति एटिकसन के पहचान बनाम भूमिका की विस्तार अवस्था के समान है।

प्रौढ़ों की दुनिया में प्रवेश (आरंभिक 20 से 27-29 तक): नई खोजों का समय, और व्यावसायिक तथा अन्तरवैयक्तिक क्षेत्रों में प्रौढ़ भूमिकाओं के प्रति अस्थायी संकल्पों व प्रारम्भिक ''जीवन ढांचे'' के निर्माण का समय।

स्थापित होना (आरंभिक 30 से आरंभिक 40 तक): अधिक दढ़ संकल्पों का समय, कभी–कभी इसमें युंग और क्यूलेन का विस्तार संबंधी मूलभाव भी शामिल हो जाता है।

स्वयं अपना सहायक बनना (35-39): यह प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था का उच्चतम स्तर है।

प्रौढ़ावस्था संबंधी परिवर्तन (आरंभिक 40): यह एक विकासात्मक संक्रमण/परिवर्तन काल है जिसमें व्यक्ति को अपनी घटती हुई शारीरिक क्षमता और अपनी मत्यु संबंधी सत्य का तीव्र आभास होने लगता है। साथ ही जैसा कि युग का स्वयंसिद्ध विचार है कि व्यक्ति के नारीत्व संबंधी आयाम भी एकीकत होने लगते हैं।

पुनर्स्थापन और मध्यवर्ती प्रौढ़ावस्था का आरम्भ (मध्यवर्ती 40): यह वह काल है जिसमें कुछ पुरुष तो नए रचनात्मक स्तर कायम करते हैं किन्तु अन्य अपनी जीवनी शक्ति खो देते हैं।

यदि आप विकास सम्बन्धी कार्यों और प्रौढ़ावस्था के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के लेविनसन के विश्लेषण को देखें तो आप पाएंगे कि विशिष्ट विकासात्मक कार्यों का सम्बन्ध व्यक्ति के विभिन्न जीवन स्तरों पर उसके सामने आने वाली सामाजिक मांगों से जुड़ा होता है। उदाहरण के तौर पर, आरम्भिक प्रौढ़ावस्था के दौरान किसी व्यवसाय को अपनाने अथवा वैवाहिक रिश्ते में प्रवेश करने की आवश्यकता को व्यवसायिक भूमिका अथवा विवाह के लिए उपयुक्त जीवन साथी के चुनाव के दौरान सामने आने वाले विकासात्मक कार्यों और चुनौतियों का सामना करने तथा उन पर विजय प्राप्त करने में, जोड़ा जा सकता है। जीवन के विभिन्न स्तरों पर सामाजिक मांगों और उनसे उत्पन्न विकासात्मक कार्य, समाज की प्रकति और सांस्कतिक बंधनों पर निर्भर करते हैं। उदाहरण के लिए, भारतीय संयुक्त परिवार प्रणाली में विवाह और जीवन साथी के चुनाव की प्रकति मिली है और इसी कारण इनसे जुड़े विकासात्मक कार्य भी लेविनसन या हेविंघर्स्ट द्वारा निर्दिष्ट कार्यों से अलग हैं। इसी प्रकार, घर छोड़कर जाना पश्चिमी

सभ्यता अथवा आधुनिक शहरी औद्योगिक अर्थव्यवस्था का एक सामान्य लक्षण है। इस प्रकार, प्रौढ़ावस्था और वद्धावस्था के दौरान विकास संबंधी प्रक्रिया व समस्याएं व्यक्तियों के सामाजिक परिदृश्य पर निर्भर करती हैं।

14.2 प्रौढ़ावस्था की अवधि

आरंभिक प्रौढ़ावस्थाः आरम्भिक प्रौढ़ावस्था का समय बीस वर्ष की आयु के उत्तरोत्तर आरम्भ होता है, वास्तव में यह युवाकाल है। बीस के दशक में युवाओं की प्राथमिकताएं होती हैं, स्वयं का जीवन, नौकरी और परिवार के मध्य स्थापित करना। ये नवयुवक समाज में अधिक स्वतंत्र और उत्तरदायित्वपूर्ण भूमिका के लिए खुद को तैयार करने के प्रयास में सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा प्राप्त करना चाहते हैं।

प्रौढ़ावस्थाः बीस और तीस के दशकों को पार कर व्यक्ति चालीस और पचास के दशक में प्रौढ़ावस्था में पहुंच जाता है। प्रौढ़ावस्था को योग्यता, परिपक्वता, उत्तरदायित्व भाव और स्थायित्व से लक्षित किया जाता है। प्रौढ़ावस्था में पहुंच चुके व्यक्तियों की ये महत्वपूर्ण चारित्रिक विशेषताएं होती हैं। यह वह समय होता है जब व्यक्ति कार्यक्षेत्र में मिली सफलताओं, परिवार और सामाजिक जीवन से मिलने वाली संतुष्टि का आनन्द उठाना चाहता है। व्यक्ति अपने बच्चों की सफलता की कामना करता है। पूरा ध्यान स्वास्थ्य, बच्चों के भविष्य, वद्ध होते माता–पिता, खाली समय के सदुपयोग और अपनी वद्धावस्था के लिए योजनाओं के निर्माण पर केन्द्रित हो जाता है। महिलाओं के लिए, 45 और 50 की आयु के मध्य रजोवत्ति (मेनोपॉज) की स्थिति आ जाती है। रजोवत्ति (मेनोपॉज) के साथ महिलाओं में कई बार असहज पीड़ादायी शारीरिक और मनोवैज्ञानिक लक्षण भी आ जाते हैं। इस अवधि के दौरान पुरुष अपनी सेहत, ताकत, क्षमता और यौन क्षमताओं के प्रति ज्यादा ध्यान देते हैं।

वद्धावस्थाः वद्धावस्था की शुरूआत 60 वर्ष की आयु से होती है। इस आयु पर अधिकांश व्यक्ति अपनी नौकरियों से औपचारिक रूप से सेवानिवत हो जाते हैं। उनमें अपने शारीरिक और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और कभी–कभी चिन्ता विकसित होने लगती है। हमारे समाज में, वद्धों के विषय में आमतौर पर धारणा है कि वे अशक्त, ढीले–ढाले होते हें, उनकी बौद्धिक क्षमता निरन्तर घट रही होती है और उनकी मानसिकता संकीर्ण होती है तथा वे धर्म को नई सार्थकता प्रदान करने वाले होते हैं अधिकांश वद्ध व्यक्ति अपने जीवन साथी को खो देते हैं जिसके कारण उन्हें भावनात्मक सुरक्षा का भी सामना करना पड़ता है।

'कोई व्यक्ति वद्धावस्था से नहीं मरता' यह एक सत्य कथन है। चूंकि वद्धावस्था जीवन के अंतिम बिंदु के नजदीक का पड़ाव है इसलिए मत्यु को वद्धावस्था से जोड़ दिया जाता है। वस्तुतः मत्यु बीमारी, प्रदूषण, तनाव और शरीर से संबंधित अन्य कारणों की वजह से होती है। जीव विज्ञान की दष्टि से, शरीर के कुछ अंग और प्रणालियां नष्ट हो सकती

हैं। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से, व्यक्ति की बौद्धिक और मानसिक क्षमताओं में बड़ी मात्रा में परिवर्तन आना संभव है। व्यक्ति की स्वयं के विषय में धारणा भी परिवर्तित हो जाती है।

आपने ऐसे वृद्ध व्यक्ति भी अवश्य देखें होंगे जो अपना जीवन बहुत चुस्ती से व्यतीत करते हैं और सामाजिक क्रियाकलापों में भी बढ़ चढ़कर भाग लेते हैं। ऐसे व्यक्ति रचनात्मक, स्थिर और खुश प्रतीत होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि व्यक्ति की मानसिक अथवा शारीरिक क्षमताओं में कमी आए। व्यक्ति अस्सी के दशक के उत्तरार्द्ध अथवा नब्बे के दशक तक भी हष्ट–पुष्ट, चुस्त और सम्माननीय बना रह सकता है। वस्तुतः वृद्ध व्यक्तियों के पास अथाह ज्ञान, अनुभव और बुद्धि का भंडार होता है जिनका लाभ समाज उठा सकता है। व्यक्ति की अपेक्षित आयु में वृद्धि के कारण समाज का एक बड़ा भाग, वृद्ध व्यक्तियों के समूह में परिवर्तित हो रहा है। अतः यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय योजनाओं के निर्माण में इन पर अधिक ध्यान दिया जाए तथा उन्हें यह अहसास दिलाया जाए कि वे समाज का ही एक भाग हैं।

14.3 प्रौढ़ावस्था और बढ़ती उम्र में होने वाले शारीरिक और बौद्धिक परिवर्तन

सामान्यतः व्यक्ति वृद्धावस्था को शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में ह्रास का काल मानते हैं। इस भाग में हम बढ़ती उम्र के शारीरिक और मनोवैज्ञानिक आयामों पर चर्चा करेंगे। बढ़ती उम्र के साथ, कुछ अनिवार्य तथा सभी के साथ होने वाले परिवर्तन घटित होते हैं यथा ऊतकों में रासायनिक परिवर्तन अथवा एडॉपटिव रिजर्व क्षमता का धीरे–धीरे ह्रास। मध्य प्रौढ़ावस्था के उत्तरोत्तर में कुछ बौद्धिक परिवर्तन भी होने लगते हैं। ये परिवर्तन धीरे धीरे और क्रमिक रूप से होते हैं। वृद्ध व्यक्तियों में ये ज्यादा स्पष्ट नजर आने लगते हैं।

(क) शारीरिक परिवर्तन

यह देखा गया है कि 30 वर्ष की आयु के पश्चात् अधिकांश की क्रियात्मक क्षमता प्रतिवर्ष 0.8 से 1 प्रतिशत तक की दर से घटती है। कुछ में यह कमी सामान्य होती है, कुछ रोग जनित और कुछ अन्य कारणों यथा तनाव, व्यवसायिक परिस्थितियां, पोषण स्तर और विभिन्न पर्यावरणीय धटकों, से उत्पन्न होती हैं।

बढ़ती उम्र के साथ होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन इस प्रकार हैं।

1. बाह्य परिवर्तन
2. आंतरिक परिवर्तन और
3. ऐन्द्रिक क्षमताओं में परिवर्तन

1. बाह्य परिवर्तन

बाह्य परिवर्तनों से अर्थ है–बढ़ती उम्र के बाह्य लक्षण। त्वचा, बाल, दांत और सामान्य शारीरिक अवस्था से जुड़े परिवर्तन प्रमुखतः नजर आते हैं। त्वचा में अंतर आता है। सर्वप्रमुख है झुर्रियां पड़ना। झुर्रियां पड़ने की प्रक्रिया प्रौढ़ावस्था से आरम्भ हो जाती है। त्वचा मोटी, सख्त और कम लचीली हो जाती है। यह सूखी और ओजहीन व भंगुर हो जाती है। उम्र बढ़ने के साथ, व्यक्ति के बाल सफेद होने लगते हैं और उनकी चमक नष्ट होने लगती है। वे पतले होते जाते हैं। 55 वर्ष की आयु के आसपास, लगभग 65 प्रतिशत पुरुष गंजे हो जाते हैं।

एक अनुमान के अनुसार, 65 वर्ष की आयु तक 50 प्रतिशत व्यक्तियों के सारे दांत गिर जाते हैं अनेक व्यक्तियों के लिए, नकली दांत उनकी जीवन शैली का अंग बन जाते हैं। समय के साथ–साथ, लार का बनना कम हो जाता है। जिसके कारण दांत गिरने का खतरा बढ़ जाता है।

शारीरिक क्षमताः 30 वर्ष की आयु से 80 वर्ष तक और उत्तरोत्तर घटती है। अधिकांश कमजोरी पीठ और पांव की मांसपेशियों में आती है, हाथ की मांसपेशियों पर अपेक्षाकत कम असर पड़ता है। ऊर्जा उत्पादन में उत्तरोत्तर कमी आती है। हड्डियां नाजुक व भुरभुरी होती चली जाती हैं और आसानी से टूट जाती हैं। उम्र के साथ साथ केल्शियम डिपोजिट और जोड़ों की समस्याएं भी बढ़ जाती हैं। मांसपेशियों के ऊतकों के आकार व क्षमता में कमी आती है। मांसपेशियों के तन्तुओं में चर्बी की मात्रा बढ़ने से उम्र के साथ मांसपेशियों को स्वस्थ बनाए रखना और कठिन हो जाता है। इसका एक कारण समाज द्वारा वद्धों को अपेक्षाकत कम चुस्त भूमिका में ढकेलना भी है। व्यायाम के माध्यम से ताकत बनाए रखना संभव है और कई बार तो इसके माध्यम से प्रयोग में न आने वाली मांसपेशियां पुनः सक्षम बन जाती हैं। वद्धावस्था में सामान्य शारीरिक भंगिमा में परिवर्तन अधिक नजर आते हैं। दांत गिरना, गंजापन और बाल सफेद होना, त्वचा पर झुर्रियां पड़ना, तथा शारीरिक क्षमता मे कमी, इन सभी का एक सम्मिलित नकारात्मक प्रभाव व्यक्ति के स्वाभिमान और आत्मविश्वास पर पड़ता है।

2. आंतरिक परिवर्तन

आंतरिक परिवर्तन से अभिप्राय बढ़ती उम्र के उन लक्षणों से है जो नजर नहीं आते या स्पष्ट नहीं होते। हमें बढ़ती उम्र के साथ श्वसन प्रणाली, जठरांत्र प्रणाली, हदय प्रणाली और केन्द्रीय तंत्रिका प्रणाली में होने वाले परिवर्तनों की जांच करनी चाहिए।

श्वसन प्रणालीः उम्र बढ़ने पर श्वास लेने की क्षमता में कमी आती है। वायु अंदर लेने के लिए वद्ध व्यक्ति के फेफड़े युवा व्यक्ति की तुलना में कम विस्तत होते हैं ऑक्सीजन की कमी के कारण वद्ध व्यक्ति सुस्त, कम जागरूक और कम क्षमतावान हो जाता हैं यह ह्रास सामान्य वद्धावस्था की प्रक्रिया का भाग है।

जठरांत्र प्रणाली: आयु बढ़ने पर काटने और चबाने की क्षमता घटती है, पाचन एंजाइम का उत्पादन कम होता है, आमाशीय और आंतों की गतिशीलता घट जाती है व भूख कम हो जाती है।

हदाहिका प्रणाली: हदय संबंधित प्रणाली, जिसमें हदय और रक्तवाहिकाएं सम्मिलित हैं, पर सामान्य बढ़ती उम्र का प्रभाव अपेक्षतया धीरे पता चलता है। उम्र बढ़ने के साथ–साथ रक्तवाहिकाओं का लचीलापन और रक्त ऊतकों का उत्पादन कम हो जाता है। हदय को आराम की स्थिति में वापस आने में लगने वाला समय बढ़ जाता है और रक्त के प्रवाह में धमनीय व्यवधान भी देखा जाता है। अनेक वद्ध व्यक्तियों को उच्च रक्तचाप की समस्या होती है। हालांकि, स्वस्थ वद्ध व्यक्तियों का रक्तचाप, स्वस्थ युवा व्यक्तियों के समान ही देखा गया है।

केन्द्रीय तंत्रिका प्रणाली: केन्द्रीय तंत्रिका प्रणाली में, उम्र के साथ सभी व्यक्तियों में आने वाले कुछ परिवर्तन दिखाई देते हैं। धमनीय और शिराओं के प्रवाह की दर में कमी आती है। 60 वर्ष की आयु के आसपास, प्रमस्तिष्कीय रक्त प्रवाह में भी कमी आनी आरम्भ हो जाती है। आक्सीजन और ग्लूकोस उपभोग में भी कमी आती है। कोशिकाओं की संख्या और कोशिकान्त (सेल एंडिग) में भी कमी आती है। सबसे स्पष्ट परिवर्तन अनुक्रियाओं का धीमा होना है।

3. ऐन्द्रिक क्षमताओं में परिवर्तन

बढ़ती उम्र के साथ, ऐन्द्रिक क्षमताओं का क्रमिक ह्रास होता है। हम बाहरी दुनिया के साथ अपनी इन्द्रियों के माध्यम से ही सम्पर्क साधते हैं। किसी भी इन्द्रिय क्षमता का नुकसान गहन मनोवैज्ञानिक प्रभाव डाल सकता है।

दष्टि: बढ़ती उम्र दष्टि सम्बन्धी अनेक समस्याएं साथ लाती है। आंखों के लैंस का लचीलापन निरन्तर कम होता जाता है। पुतलियां छोटी हो जाती हैं और उनका आकार भी बिगड़ जाता है। पलकें शिथिल झुकी हुई हो जाती हैं। रंगों की पहचान कम होने लगती है। मोतियाबिंद और नजर कमजोर होना, वद्धों में सामान्यत: पाया जाता है। मोतियाबिंद से ग्रस्त व्यक्तियों को धुधंला नजर आता है। इसके कारण भी सामान्य दष्टि कमजोर पड़ती है।

श्रवण/सुनना: बीस वर्ष की आयु के आस–पास व्यक्ति के सुनने की क्षमता सर्वाधिक होती है। उसके बाद इसमें कमी आने लगती है। कम होती श्रवण क्षमता पर अक्सर ध्यान नहीं जाता। हालांकि सुनने की समस्या का समाधान हेयरिंग ऐड है।

अन्य इन्द्रियां: स्वाद और सूंघने की इन्द्रियां बढ़ती उम्र के साथ शिथिल पड़ जाती हैं। इसकी वजह से वद्ध व्यक्ति की भूख और पोषक तत्वों की आवश्यकता में कमी आती है। आपने अक्सर देखा होगा कि अनेक वद्ध व्यक्ति अत्याधिक मीठे या मसालेदार भोजन की मांग करते हैं। इसका कारण यह है कि हमारे चार आधारभूत स्वाद मीठा, कड़वा,

खट्टा और नमकीन, सामान्यतः इनकी संवेदनशीलता न्यून हो जाती है। स्पर्श संबंधी संवेदना जन्म से लेकर 45 वर्ष की आयु तक बढ़ती है और तत्पश्चात् तेजी से घटती है।

14.4 प्रौढ़ावस्था और बढ़ती उम्र के दौरान होने वाले संज्ञानात्मक परिवर्तन

'संज्ञान' शब्द से अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से सूचना एकत्रित, संग्रहीत और उपयोग की जाती है। इस भाग में, संज्ञान के चार प्रमुख आयामों– स्मरण शक्ति, ज्ञान अर्जन, एकाग्रता और बुद्धि की प्रौढ़ावस्था और बढ़ती उम्र के संबंध में चर्चा की जाएगी।

(क) स्मरण शक्ति

स्मरणशीलता संज्ञान के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्षों में से एक है। स्मरणशीलता से अभिप्राय 'सूचनाओं को बाद में प्रयोग के लिए संग्रहीत करने और ऐसी सूचनाओं को पुनः प्रयुक्त करने की प्रक्रिया समझा जाता है।

(ख) वद्धों की स्मरण शक्ति

बढ़ती उम्र के साथ स्मरण क्षमता पर अनेक कारणों से प्रभाव पड़ता है। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण कारक निम्नलिखित हैं:

(1) स्मरण क्षमता के संबंध में धारणा

अपनी स्मरण क्षमता के प्रति वद्ध व्यक्तियों की धारणा और रुख का उनकी स्मरण शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। विभिन्न अनुसंधानों द्वारा स्मरण क्षमता पर विश्वास, समझ, धारणा और ज्ञान के प्रभाव का पता चलता है। प्रश्नकर्ता अक्सर प्रतिवादियों से पूछता है कि वह कितनी बार नाम और घटनाएं भूल जाते हैं, भूलने के प्रति वे कितने चिंतित हैं, स्मरण शक्ति बढ़ाने के विषय में वे क्या जानते हैं और याद करने के दौरान वे क्या नीतियां अपनाते हैं। वद्ध व्यक्तियों को युवाओं की अपेक्षा स्मरण शक्ति से जुड़ी ज्यादा समस्या होती है। वद्धों में एक सामान्य भाव पाया जाता है कि "मैं बूढ़ा हो रहा हूँ।" वद्ध व्यक्ति अक्सर बातें भूल जाने की शिकायत करते हैं।

(2) स्मरण संबंधी नीतियों का प्रयोग

अच्छी स्मरण शक्ति के लिए नीतियों के प्रयोग की आवश्यकता होती है। स्मरण संबंधी नीतियों के सही प्रयोग से व्यक्ति अपनी स्मरण क्षमता बढ़ा सकता है। स्मरण नीति का एक उदाहरण है जिन चीजों को आप खरीदना चाहते हैं उनसे संबंधित किसी जानी पहचानी चीज को स्वयं के साथ दोहराते रहना। मान लीजिए, यदि आप किसी व्यक्ति का नाम याद करना चाहते हैं, तो आप उस व्यक्ति को किसी चर्चित आकति/व्यक्ति से

टिप्पणी

जोड़कर याद रख सकते हैं। आप स्मरण सहायकों का भी प्रयोग कर सकते हैं जैसे डायरी, परचून की दुकान से खरीददारी के लिए वस्तुओं की सूची। हम अक्सर ऐसी किसी न किसी नीति का जब तब प्रयोग करते रहते हैं किन्तु इस तथ्य से अज्ञात होते हैं। अपने दैनिक जीवन में, वद्ध व्यक्ति दोहराने या संबंध जोड़ने की नीति की अपेक्षा डायरियों और खरीददारी की सूची आदि का अधिक प्रयोग करते हैं।

(3) वद्धों की जीवन शैलियां

वद्ध व्यक्ति प्रतिदिन जिस प्रकार के कार्य कलाप करते हैं, उनका भी स्मरण शक्ति पर प्रभाव पड़ता है। जो वद्ध व्यक्ति शतरंज या ताश खेलने जैसी दैनिक गतिविधियों में व्यस्त रहते हैं वे स्मरण शक्ति और तर्क संगत कार्य क्षमता से जुड़े कुछ कार्य अन्य न खेलने वाले वद्धों की अपेक्षा बेहतर ढंग से करते हैं। संज्ञान प्रदर्शन क्षमता पर प्रभाव डालने वाली जीवन शैली का एक अन्य आयाम है रोजमर्रा के जीवन में नियमितता होना। सोने का निर्धारित समय, नियमित व्यायाम, दिन प्रतिदिन के कार्यों की एक नियमित समय सारणी के माध्यम से व्यक्ति की बौद्धिक क्रियाविधि बनाए रखने में सहायता मिलती है।

(ग) ज्ञान अर्जन

ज्ञान अर्जन में नए संबंधों का निर्माण सम्मिलित है। जिसका अर्थ है विश्व के संबंध में सामान्य नियमों और ज्ञान का अर्जन करना। यह माना जाता है कि ज्ञान अर्जित करने की क्षमता प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था की अपेक्षा मध्य प्रौढ़ावस्था में ज्यादा खराब होती है। क्या वद्ध व्यक्ति नई सूचनाएं और कला कौशल अर्जित कर सकते हैं? क्या वे नए व्यवसाय अपनाने का प्रयास कर सकते हैं? ऐसे प्रश्नों का उत्तर देना कठिन है। हमें यह ज्ञात होना चाहिए कि वद्धों की ज्ञान अर्जन की क्षमता में कोई कमी नहीं आती। अन्य कारणों जैसे उत्साह वर्द्धन की कमी, आत्मविश्वास की कमी, परीक्षा संबंधी चिंता, व्यग्रता आदि की वजह से ज्ञान अर्जन संबंधी विभिन्न कार्य वे कम बेहतर ढंग से प्रतिपादित करते हैं।

यदि वद्ध व्यक्तियों को अधिक समय मिले या वे परीक्षाओं की समय सीमा स्वयं निर्धारित कर सकें तो वे युवा व्यक्तियों के लगभग ही ज्ञान अर्जन क्षमता का प्रदर्शन कर सकते हैं। जब उनके समक्ष समय सीमा का दबाव नहीं होता और प्रश्न स्पष्ट व सहज रूप में रखे जाते हैं तो वे बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

(घ) एकाग्रता

एकाग्रता शब्द उस प्रक्रिया को संबोधित करता है जिस प्रकार हम किए जाने वाले कार्य पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। अलग–अलग व्यक्तियों का एकाग्रता फलक भिन्न होता है। यदि एकाग्रता फलक बहुत छोटा है तो बहुत सारी सूचनाएं छूट जाती हैं। एकाग्रता फलक की दष्टि से संभव है कि वद्ध व्यक्तियों और युवाओं में ज्यादा अंतर न हो। किन्तु, वद्धों का ध्यान भंग किसी भी प्रकार के हस्तक्षेप के कारण आसानी से हो जाता है। प्रशिक्षण के माध्यम से, एकाग्रता में सुधार संभव है।

(च) बुद्धि

जैसा कि पहले भी कई बार बताया जा चुका है कि वद्धावस्था से जुड़ी अनेक धारणाएं आधे–अधूरी जानकारियां या गलत अवधारणाओं के कारण जन्म लेती हैं। बुद्धि परीक्षण में वद्ध व्यक्ति कैसा प्रदर्शन करते हैं? अधिकांश बुद्धि परीक्षणों में प्रदर्शन की तीव्र गति की आवश्यकता होती है। हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि वद्ध व्यक्ति प्रतिक्रिया करने में अधिक समय लगाते हैं। इस प्रकार बौद्धिक परीक्षणों में कम बेहतर प्रदर्शन का कारण धीमी प्रतिक्रिया है न कि कमतर बौद्धिक क्षमता। आयु के साथ सामान्य ज्ञान में कमी नहीं आती। वद्धों में अक्सर जटिल निर्णय लेने की क्षमता में कमी और कार्य निष्पादन की धीमी गति देखी जाती है। वद्ध व्यक्तियों में शायद ही कभी वाक् चातुर्य, सामाजिक जागरूकता और अनुभव के प्रयोग संबंधी कोई कमी देखी गई है।

प्रौढ़ावस्था और बढ़ती उम्र में बुद्धि का संबंध विभिन्न प्रकार की चुनौतियों से परिपूर्ण दिनप्रतिदिन के कार्यों और घटनाओं से जूझने की व्यक्ति की क्षमता से जोड़ा जाता है। वद्ध व्यक्तियों के सामान्य बुद्धि कौशल को जांचने के लिए मानचित्रों को समझना, स्तरों को समझना, फार्म भरना, चार्ट, संवाद, टी.वी. कार्यक्रमों को समझना, खरीददारी करना, भीड़–भाड़ के दौरान वाहन चलाना और अन्य अनेक दैनिक कार्यों को आधार बनाया जा सकता है।

आपको याद होगा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं कि वद्ध व्यक्ति दबाव के अभाव में बेहतर प्रदर्शन करते हैं। व्यक्ति के स्वास्थ्य को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। स्वस्थ व्यक्ति और खुशहाल व चुस्त जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्तियों में वद्धावस्था में शून्य या बहुत कम बौद्धिक क्षमता का ह्रास होता है।

पाठगत प्रश्न 14.1

1. वद्ध व्यक्तियों की स्मरण क्षमता प्रभावित करने वाले कारकों की सूची बनाइए।

   ———————————————————————————————

   ———————————————————————————————

2. वद्ध व्यक्तियों की दैनिक बौद्धिक क्षमता का पता कैसे लगाया जा सकता है?

   ———————————————————————————————

   ———————————————————————————————

14.5 वद्ध अवस्था में समायोजन की समस्याएं

उम्र बढ़ने की प्रक्रिया के साथ व्यक्ति कैसे समायोजन करता है? अपनी वर्तमान जीवन परिस्थितियों का सामना करने के लिए विभिन्न व्यक्ति विभिन्न नीतियां अपनाते हैं कुछ

वद्ध व्यक्ति स्वयं को चुस्त दुरुस्त बनाए रखने के लिए सामाजिक भूमिकाओं का निर्वाह करते हैं। अन्तरवैयक्तिक सम्बन्धों का आनन्द उठाते हैं और प्रसन्नतापूर्वक विशिष्ट व्यवसायिक गतिविधियों में भाग लेते हैं जबकि कुछ समाज से अलग–अलग, कटे हुए रहते हैं। सक्रियता के स्तर और कार्यकलापों की प्रकति का निर्धारण वद्धों के स्वास्थ्य, सामाजिक–आर्थिक स्तर और पारिवारिक स्तर द्वारा होता है। आइए, इसी से जुड़ी कुछ समस्याओं का अध्ययन करें।

(क) वद्ध व्यक्तियों की खराब छवि संबंधी समस्याएं

सामान्यतः वद्ध व्यक्ति स्वयं को उतना पसंद नहीं करे जितना कि युवा व्यक्ति करते हैं। वद्ध पुरुषों में वद्ध महिलाओं की तुलना में आत्म विश्वास की कमी ज्यादा होती है। इसका कारण यह समझा जा सकता है कि पुरुषों का आत्मविश्वास उनकी व्यवसायिक उपलब्धियों से जुड़ा होता है जबकि महिलाएं अपनी पारिवारिक परिस्थितियों से ही आत्म सम्मान का भाव अर्जित करती हैं। अतः जब बद्धावस्था में पुरुष सेवानिवत हो जाते हैं या फिर उनका व्यवसाय छूट जाता है, उनका आत्म सम्मान गिर जाता है। जबकि दूसरी तरफ महिलाएं अपने पारिवारिक क्रियाकलापों के माध्यम से आत्म सन्तुष्टि प्राप्त करती रहती हैं।

(ख) प्रसन्नता

जब पूछा जाता है ''क्या आपका जीवन रोमांचक है?'' अधिकांश वद्ध पुरुष और महिलाएं कहती हैं कि उनके जीवन में रोमांच जैसे भाव न के बराबर हैं और उनका जीवन बेहद नीरस है जिसमें कुछ भी नया होने की संभावना नहीं है। हालांकि यह निर्णय लेने से पूर्व कि उम्र बढ़ने के साथ जीवन नीरस होता जाता है, हमें अन्य अनेक तथ्यों पर भी ध्यान देना होगा जैसे कि एक वद्ध के रूप में व्यक्ति स्वयं के विषय में क्या सोचता है और उसे जीवन से किस प्रकार की आशाएं हैं।

(ग) आर्थिक समस्याएं

अपना व्यवसाय चलाने वाले व्यक्ति या फिर वे जिनके अपने पारिवारिक व्यवसाय हैं, वे अंतिम समय तक अथवा अक्षम होने तक काम करते रहते हैं। जो और लोगों के लिए काम करते हैं वे एक निश्चित आयु के पश्चात सेवा निवत हो जाते हैं। सेवानिवति के प्रति व्यक्ति के नजरिए पर अनेक कारकों का प्रभाव पड़ता है जैसे, आय, शैक्षणिक स्तर और व्यावसायिक स्तर।

व्यक्तियों के लिए सेवानिवत्ति के साथ समायोजन करना अक्सर कठिन होता है। सेवानिवति के कारण एक नई जीवन शैली के साथ समायोजन करना होता है जिसमें कम आय, कम गतिविधियां और ज्यादा खाली समय होता है। सेवानिवत्ति के कारण पुरुषों में अत्याधिक तनाव पैदा हो जाता है क्योंकि हमारे समाज में पुरुषों की पहचान मुख्यतः उनकी नौकरियों से जुड़ी होती है। नौकरी के चले जाने पर आत्म–सम्मान और

आत्म–मूल्य में कमी आती है। सेवानिवत्त व्यक्तियों को आर्थिक समस्याओं रोग, और अकेलेपन के भाव के कारण सेवानिवत्ति के साथ समायोजन करने में कठिनाई आती है। सेवानिवत्त व्यक्तियों को उनकी भूमिकाओं, व्यैक्तिक और सामाजिक संबंधों, उपलब्धि में आए अनेक परिवर्तनों के साथ समन्वय करना पड़ता है। फिर भी, इसका अर्थ यह नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति पर सेवानिवत्ति का नकारात्मक प्रभाव ही पड़ता है। कुछ मामलों में, संभव है कि इसका व्यक्ति के आत्मसम्मान और जीवन संतुष्टि भाव पर कोई भी बुरा प्रभाव न पड़े। कुछ व्यक्तियों का स्वास्थ्य सेवानिवत्ति के पश्चात सुधर सकता है। सेवानिवत्त व्यक्तियों के पास सामाजिक और अपनी अभिरुचि सम्बन्धी गतिविधियों के लिए ज्यादा समय होता है बशर्ते उनेक पास पर्याप्त आर्थिक साधन हो और उनका स्वास्थ्य भी इन कार्यों के अनुकूल हों।

(घ) मत्यु

वैसे तो वद्ध व्यक्तियों को मत्यु से डर नहीं लगता। लेकिन, उन्हें मरने की प्रक्रिया–दर्द के साथ मत्यु या अकेले मरना–से बहुत ज्यादा डर लगता है। मत्यु से जुड़ी उनकी भावनाएं जीवन की विशिष्ट घटनाओं का परिणाम भी हो सकती हैं जैसे घर से नर्सिंग होम जाना, गिरता स्वास्थ्य, या जीवन साथी का चले जाना। अतः मत्यु से जुड़े डर को वर्तमान जीवन परिस्थितियों, व्यक्ति की अपनी मूल्य प्रणाली और मत्यु के प्रति उसकी सोच, इन सभी रोशनी में देखना चाहिए।

(च) अवसाद (डिप्रेशन)

वद्ध व्यक्तियों में अवसाद के दो प्रमुख लक्षण देखे जाते हैंः अवसाद (उदासी, अपराध बोध, निराशा, असहाय भाव) और संबंधित व्यवहार (हार मान लेना, भावशून्यता)। अनेक वद्ध अपने अवसाद को कथित समस्याओं के माध्यम से दर्शाते हैं (भूख कम लगना, नींद न आना)। जैविक कारणों (बायोकैमिकल गड़बड़ियां) और सामाजिक/सांस्कतिक कारणों (वद्ध व्यक्तियों की उपयोगिता के संबंध में सांस्कतिक दष्टिकोण, अकेलापन, सेवानिवत्ति, संस्थानों में भेज देना) दोनों ही कारणों से वद्धों में अवसाद उत्पन्न होता है। अन्य कारणों यथा कामुकता, भौतिक सम्पदाओं में कमी, हार, आदि का भी अवसाद में योगदान होता है।

14.6 समस्याओं का सामना करना

बढ़ती उम्र का सामना कैसे करें? अपने जीवन की चुनौतियों का सामना करने के लिए विभिन्न व्यक्ति विभिन्न नीतियां अपनाते हैं। कुछ प्रभावशाली नीतियां इस प्रकार हैं–

1. वद्धों के व्यवहार में लचीलापन विकसित करना होगा ताकि वे जीवन के दबावों और वद्धावस्ध्था की समस्याओं का सामना कर सकें।
2. उन्हें यह समझना होगा कि उन्हें अपने जीवन का सामना करने के लिए नए तरीके तलाशने होंगे।

3. वद्ध व्यक्तियों को अधिक से अधिक सूचनाएं एकत्र करने और समस्या सुलझाने का प्रयास करना चाहिए न कि अकेले में सबसे कट कर रहना चाहिए।

4. आत्मविश्वास, आत्म निर्भरता बढ़ाना, अपनी क्षमताओं और कमजोरियों के प्रति स्वस्थ सोच विकसित करना, सामना करने के प्रभावी कला–कौशल को सीखना और उसका अभ्यास करना तथा वातावरण के प्रति सचेत रुख अपनाना ये कुछ महत्वपूर्ण तरीके हैं जिनके द्वारा वद्धावस्था में स्वस्थ समायोजन किया जा सकता है।

5. जीवन की समस्याओं से जूझने का एक अन्य तरीका है सामाजिक दायरा बढ़ाना। विभिन्न सामूहिक गतिविधियों में भाग लेने से जैसे क्लबों और विशिष्ट संगठनों से जुड़ना ताकि अनौपचारिक सामाजिक सम्पर्क कायम हो, ये सब भी वद्धों के लिए सहायक सिद्ध होते हैं। अपने आस–पड़ोस या कहीं और अपनी ही आयु के लोगों का एक सामाजिक तानाबाना स्थापित करने से वद्ध व्यक्ति अपनी जीवन परिस्थितियां अन्य के साथ बांट सकते हैं और अपनी समस्याओं को भावुकतापूर्ण अभिव्यक्ति दे सकते हैं। ऐसे सामाजिक तानाबाना के माध्यम से, व्यक्ति को बिना किसी शर्त के अनुमोदन भाव प्राप्त होता है। वह गुप्त बातें बांट सकता है। नए अनुभव प्राप्त कर सकता है और विश्वासपूर्ण संबंध कायम कर सकता है।

6. अपने नाती–पोतों के साथ घुलने–मिलने से अनेक वद्ध व्यक्तियों की व्यैक्तिक तथा भावनात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। दादा–दादी महत्वपूर्ण आदर्श व्यक्तियों की भूमिका निभा सकते हैं। वद्ध व्यक्ति इन भूमिकाओं के माध्यम से भावनात्मक परिपूर्णता का अनुभव करते हैं और अपने नाती–पोतों की उपलब्धियों से आत्म सन्तुष्ट होते हैं।

14.7 वद्धों के लिए मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप

हम सभी को अत्यधिक तनाव की स्थिति में दूसरों (मित्र, रिश्तेदार, सहयोगी) की मदद की आवश्यकता होती है। इस भाग में हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि वद्धों की समस्याओं से निपटने और उन्हें जीवन का सामना करने योग्य बनाने के लिए किस प्रकार की मनोवैज्ञानिक सहायता आवश्यक है।

वद्धों के प्रति हमारा मुख्य लक्ष्य है कि उनके जीवन को बेहतर बनाया जाना है। इसके लिए उपयुक्त स्रोतों की रचना के लिए प्रयास करने होंगे। मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेप के महत्वपूर्ण उद्देश्य हैं:–

1. व्यक्ति के व्यवहार को समझना
2. दुश्चिंता या अवसाद से छुटकारा दिलाना
3. वर्तमान परिस्थिति को स्वीकार करना

4. स्वयं की देखभाल के गुण बढ़ाना
5. चुस्त जीवनशैली को बढ़ावा देना
6. आत्मनिर्भरता विकसित करना
7. व्यक्ति की कमजोरियों और समस्याओं को स्वीकार करना
8. अन्तरवैयक्तिक संबंध सुधारना

ऐसे बहुत से मनोवैज्ञानिक तरीके हैं जिनकी आवश्यकता वद्ध व्यक्तियों के लिए होती है और वे उपयोगी भी सिद्ध हुए हैं। उनमें से कुछ का विवरण नीचे दिया जा रहा हैः

(क) वद्ध व्यक्तियों की वैयक्तिक या सामाजिक समस्याएं हल करने के लिए उन्हें पेशेवरों या परिवार, मित्रों या पड़ोसियों से सहायता मिल सकती है उनकी अनेक समस्याएं तो संयुक्त परिवार के सदस्यों द्वारा ही सुलझ सकती हैं। अपने संसाधनों के अनुरूप, वद्ध व्यक्ति अपने निजी और पारिवारिक मसलों पर पेशेवर व्यक्तियों की मदद ले सकते हैं। मनोवैज्ञानिकों के साथ काउंसलिंग के द्वारा व्यक्ति जीवन के तनावपूर्ण अवसरों यथा सेवानिवत्ति, जीवनसाथी की मत्यु, और आर्थिक असुरक्षा के लिए खुद को तैयार कर सकता है। उन्हें स्वयं के प्रति व दुनिया के प्रति उत्साहपूर्ण रुख अपनाने तथा सभी विकल्प खुले रखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

(ख) संज्ञानात्मक व्यवहार संबंधी सहायता

वद्ध व्यक्तियों को दूसरों से स्वयं के विषय में वास्तविक प्रतिपुष्टि कम मिलती है जिसके कारण 'सोच संबंधी विकार' जन्म लेते हैं। स्वयं को असहाय समझने का भाव डर, गुस्सा, झुंझलाहट और अवसाद पैदा करता है। संज्ञान चिकित्सा के द्वारा तर्कहीन विचारों के स्थान पर तर्कपूर्ण विचारों को स्थापित करना संभव है। शांत होने के प्रशिक्षण से दुष्चिंता और तनाव के भाव कम होते हैं। संज्ञान–व्यवहार संबंधी हस्तक्षेपों से वद्धों में अवसाद, दुष्चिंता, याददाश्त की कमी, व प्रतिक्रिया देने की गति जैसी समस्याओं को हल करने में काफी मदद मिलती है।

(ग) व्यवहार संबंधी हस्तक्षेप

व्यवहारिक हस्तक्षेप सकारात्मक और नकारात्मक प्रोत्साहनों पर आधारित हैं। उदाहरण के लिए, वद्धों को अपेक्षित स्वयं की देखभाल के व्यवहार के सकारात्मक प्रोत्साहन जैसे मौखिक या वस्तु रूप में पुरुस्कार दिया जाए जबकि अनपेक्षित उग्र व्यवहार के लिए नकारात्मक प्रोत्साहन (पुरुस्कारों से वंचित करना) दिया जाए। यह अपेक्षाकत आसान और कम खर्चीला तरीका है लेकिन इसे सही ढंग से प्रयोग करने के लिए अत्यधिक निपुणता आवश्यक है।

(घ) परिवार चिकित्सा

परिवार चिकित्सा जीवन की विभिन्न समस्याओं, यथा सेवानिवत्ति, दादी–दादा बनना, वयस्कों और वद्धों के मध्य पारिवारिक झगड़े, वद्धों की बीमारियों में देखभाल, और वद्धों

को संस्थान भेजने संबंधी पारिवारिक निर्णय; समायोजन में सहायता करती है। यदि सही तरीका अपनाया जाए तो परिवार चिकित्सा, प्रेम, अपनापन और एक–दूसरे पर निर्भरता जैसी भावनाओं को और मजबूत बनाती है।

(च) सामाजिक हस्तक्षेप

व्यक्ति को बदलने के साथ हमें उसके आस–पास के माहौल को भी बदलने की आवश्यकता है। व्यक्ति के पारिवारिक माहौल, दैनिक क्रियाकलापों, आस–पड़ोस और समुदाय पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। सामाजिक हस्तक्षेप के द्वारा वद्धों के प्रति व्यक्तियों की सोच में अंतर लाया जाता है और समुदाय, परिवार तथा मित्रों पर उनके भरोसे को बढ़ाया जाता है।

पाठगत प्रश्न 14.2

1. वद्ध अवस्था में अवसाद (डिप्रेशन) के क्या कारण हैं?

   ____

   ____

2. तीन मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेपों/सहायताओं के नाम बताओ।

   ____

   ____

आपने क्या सीखा

- आयु उन प्रमुख श्रेणियों में से एक है जिनके आधार पर व्यक्तियों को बांटा जाता है। वयस्कता के हर स्तर पर विशिष्ट आवश्यकताएं और मांगें होती हैं जिन्हें पूरा करने पर जीवन का स्वस्थ संतुलन बना रहता है। युवावस्था के दौरान, एक अच्छी नौकरी और परिवार की सुरक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है। अधेड़ावस्था के दौरान, व्यक्ति एक सफल नौकरी और पारिवारिक जीवन से संतुष्टि प्राप्त करने का प्रयास करता है। वद्धावस्था में, व्यक्ति का ध्यान शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य, तथा भावनात्मक व आर्थिक सुरक्षा की ओर अधिक होता है।
- बढ़ती उम्र के साथ व्यक्ति के मस्तिष्क और शरीर में आने वाले परिवर्तन प्रति व्यक्ति भिन्न होते हैं। अनेक तथ्य जैसे आहार, धूम्रपान, अधिक शराब का सेवन, तनाव, ये सब व्यक्ति के स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। वद्धावस्था संबंधी समाज की अनेक मिथ्या धारणाएं गलत सूचनाओं या पूर्वाग्रहों पर आधारित होती हैं।

हालांकि बढ़ती उम्र के साथ व्यक्ति का क्रमिक ह्रास होता है किन्तु यह जरूरी नहीं है कि इसके कारण वह शारीरिक या मानिसक रूप से अक्षम और अयोग्य हो जाए। साथ ही, मनुष्य की उम्र बढ़ने संबंधी प्रारम्भिक अध्ययन अस्पतालों या मानसिक रोगियों पर किए गये थे। कुछेक अध्ययन ही ऐसे थे जो सामान्य जीवन व्यतीत करने वाले चुस्त दुरुस्त वद्ध व्यक्तियों पर किए गए थे। यह समझना आवश्यक है कि कौन से शारीरिक परिवर्तन उम्र बढ़ने के कारण होते हैं और कौन से पर्यावरणीय तत्वों यथा बीमारी, आहार, कम सक्रिय जीवन या कम व्यायाम के कारण उत्पन्न हुए हैं। अधिकांश वद्ध व्यक्तियों में रोजमर्रा के जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त क्रमिक क्षमताएं होती हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि प्रौढ़ावस्था से ही व्यक्ति अपने स्वास्थ्य के प्रति सकारात्मक रवैया विकसित करे।

- उम्र के साथ इन्द्रियों की क्षमताएं घट जाती हैं इन्द्रियों की कम क्षमता के कारण वद्ध व्यक्ति अनेक सामाजिक गतिविधियों में भाग नहीं ले पाता। परिणामस्वरूप, धीरे–धीरे वे अपनी निजी रुचियों से भी मुंह मोड़ने लगते हैं और अकेलापन महसूस करने लगते हैं

- बढ़ती उम्र के साथ, संभव है कि कुछ मानसिक क्षमताओं में भी कमी आए जैसे प्रतिक्रिया समय, जटिल निर्णय लेना और पुरानी बातों को याद करना। बौद्धिक क्षमता लगभग समान रहती है। यदि अधिक समय दिया जाए और स्वयं नियंत्रित किया जाए तो वद्ध व्यक्ति समयबद्ध परिस्थितियों की तुलना में बेहतर प्रदर्शन करते हैं।

- स्वाभिमान या व्यक्ति स्वयं को कितना पसंद करता है यह इस पर निर्भर करता है कि उसकी व्यक्तियों के विषय में सोच क्या है।

- महिलाएं पारिवारिक परिस्थितियों से और पुरुष व्यवसायिक परिस्थितियों से आत्म सम्मान के भाव प्राप्त करते हैं।

- उम्र के साथ प्रसन्नता या उत्साह भाव घट जाता है। हालांकि अन्य तथ्य जैसे स्वास्थ्य, स्वयं के प्रति व्यक्ति का नजरिया, जीवन परिस्थितियां भी प्रसन्नता भाव निर्धारित करने में महत्वपूर्ण होते हैं।

- अधिकांश व्यक्तियों के लिए, सेवानिवत्ति एक कठिन और तनावपूर्ण अवसर होता है। जबकि कुछ, सेवानिवत्ति को भी सकारात्मक ढंग से अपनाते हैं क्योंकि अब वे अपनी अभिरुचियों और खाली समय की अन्य गतिविधियों के लिए ज्यादा समय प्रदान कर सकते हैं।

- जीवन साथी की मत्यु होने पर वद्ध व्यक्ति अवसाद, सामाजिक समर्थन की कमी और शारीरिक समस्याओं का सामना करते हैं। अकेलापन ऐसे लोगों की प्रमुख समस्या है।

- वद्ध व्यक्ति बायोकैमिकल परिवर्तनों, वैयक्तिक अक्षमताओं और सामाजिक/सांस्कतिक कारणों से भी अवसाद का शिकार होते हैं। उनका अवसाद शारीरिक लक्षणों से भी प्रकट होती है।
- बढ़ती उम्र के साथ, लोग परिस्थितियों का सामना करने का कौशल विकसित कर लेते हैं जिसके माध्यम से वे वद्धावस्था का सामना ठीक प्रकार कर पाते हैं। वद्ध व्यक्ति युवाओं की अपेक्षा तनाव का सामना अधिक धैर्य के साथ करते हैं।
- विभिन्न स्तरों–व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेपों से वद्ध व्यक्ति दैनिक जीवन से जुड़ी चुनौतियों का सामना बेहतर ढंग से करते हैं। ये हस्तक्षेप वद्धों के व्यक्तिगत विकास और उनके जीवन की गुणवत्ता सुधारने में सहायक होते हैं। वद्ध व्यक्ति स्वयं की और परिवार के अन्य सदस्यों की तनाव, विचारों के टकराव, दुश्चिंता, अवसाद और स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना बेहतर ढंग से करते हैं। मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेपों का प्रयोग वद्धों की आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं और जीवन के उद्देश्यों के प्रति किया जाना चाहिए।

पाठांत प्रश्न

1. प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए प्रमुख विकासात्मक कार्य कौन से हैं?
2. बढ़ती उम्र के साथ आने वाले कुछ बाहरी परिवर्तनों का विवरण दें।
3. वद्धावस्था में हदाहिका प्रणाली पर क्या प्रभाव पड़ता है?
4. वद्धावस्था में कौन सी आर्थिक समस्याएं आती हैं।
5. मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेपों के प्रमुख उद्देश्य क्या है?
6. संक्षित टिप्पणियां लिखें:

   (i) जीवन साथी से विछोह

   (ii) वद्धों के लिए सामाजिक हस्तक्षेप

   (iii) वद्धावस्ध्था में अवसाद/डिप्रेशन

   (iv) आयु के साथ होने वाले केन्द्रीय तंत्रिका प्रणाली परिवर्तन

   (v) परिवार चिकित्सा

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

14.1

1. (क) समस्या शक्ति संबंधी विश्वास (ख) स्मरण नीतियों का प्रयोग

   (ग) वद्धों की जीवन शैलियां

2. इसका अनुमान उनकी सड़क मानचित्रों को पढ़ने, स्तर समझने, फार्म भरने, संवाद समझने, खरीददारी करने और रोजमर्रा के काम करने की क्षमता से लगाया जा सकता है।

14.2

1. जैविक कारण जैसे बायोकैमिकल असंतुलन और सामाजिक सांस्कतिक कारण जैसे सेवानिवत्ति, अकेलापन आदि के कारण वद्धावस्था में अवसाद आ जाता है।

2. (i) मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं से सहायता लेना

   (ii) पविार चिकित्सा

   (iii) सामाजिक हस्तक्षेप

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. भाग 14.1 और 14.2 देखें
2. भाग 14.3 देखें
3. भाग 14.3 देखें
4. भाग 14.6 देखें
5. भाग 14.8 देखें
6. (i) भाग 14.6 देखें

   (ii) भाग 14.8 देखें

   (iii) भाग 14.6 देखें

   (iv) भाग 14.5 देखें

   (v) भाग 14.6 देखें

15

वैयक्तिक भिन्नताओं को समझना: बुद्धि का प्रकरण

अपने आस–पास के लोगों की किसी भी चारित्रिक विशेषता के विषय में विचार करो और आप तुरन्त यह समझ जाएंगे कि वे एक दूसरे से अलग हैं। उनकी केवल शारीरिक विशेषताओं जैसे कद, रंग, वजन, देखने व सुनने की क्षमता आदि में ही अंतर नहीं होता बल्कि उनकी मनोवैज्ञानिक क्षमताओं में भी अंतर होता है। अपने रोजमर्रा के जीवन में हम देखते हैं कि लोगों की सोच, अभिप्रेरणा, समस्याओं के प्रति नजरिया, रुचि और सीखने की क्षमता एक दूसरे से अलग होती है। इस प्रकार की वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन करना मनोविज्ञान का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के माध्यम से बुद्धि, व्यक्तित्व, रुचि, रचनात्मकता और अन्य पहलुओं की जाँच करना प्रस्थापित अभ्यास बन गया है। नौकरियों के लिए उम्मीदवारों का चयन करते समय, मानसिक विक्लांगता का निदान करने और मनोवैज्ञानिक विकास के आकलन आदि ने विभिन्न आयु वर्गों (जैसे बच्चे, प्रौढ़, शिक्षित, अनपढ़) के लिए विभिन्न परीक्षणों के निर्माण के लिए प्रेरित किया है। बुद्धि लब्धि ('आई. क्यू.') शब्द अब एक प्रचलित शब्द बन गया है और अक्सर लोग अपने आई. क्यू. तथा व्यक्तित्व के विषय में जानना चाहते हैं। इस पाठ के माध्यम से आपको मनोवैज्ञानिक मापन के मूलभूत लक्षणों के विषय में जानने तथा बौद्धिक क्षमता के मापन और प्रकति को समझने में सहायता मिलेगी।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के बाद, आप :

- मनोवैज्ञानिक मापन का अर्थ समझ सकेंगे;
- मापन के लिए प्रयोग होने वाले मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के मूलभूत लक्षणों का विवरण दे सकेंगे;

- बुद्धि सम्बन्धी संप्रत्यय की व्याख्या कर सकेंगे;
- बुद्धि सम्बन्धी परीक्षणों की चर्चा कर सकंगे और
- मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के विभिन्न उपयोगों की जानकारी दे सकेंगे।

15.1 मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन की प्रकति

मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन से अभिप्राय उन विशिष्ट प्रविधियों से है जिनके द्वारा किसी व्यक्ति की निजी विशेषताओं, व्यवहार और क्षमताओं का पता लगाया जाता है। इन प्रविधियों के माध्यम से व्यक्ति के विषय में स्पष्ट विवरण दिया जाता है कि वह किस प्रकार अन्य व्यक्तियों से भिन्न या उनके समान हैं। इस प्रकार के मूल्यांकन हम अक्सर करते हैं, जब भी हम किसी के विषय में यह धारणा बनाते हैं कि वह, 'अच्छा', 'शालीन', 'बुरा', 'आकर्षक', 'भद्दा', 'बुद्धिमान' या 'मूर्ख' है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इस प्रकार की धाराणाएं अक्सर भ्रमात्मक होती हैं। विज्ञान सम्मत मनोविज्ञान के द्वारा इन प्रविधियों को क्रमिक बनाया जाता है ताकि इन मूल्यांकनों में कम से कम गलती हो। मनोवैज्ञानिक इन प्रविधियों को अक्सर 'परीक्षण' कहते हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षण एक संरचित तकनीक है जिसके द्वारा सावधानी चुना गया व्यवहार संबंधी प्रतिदर्श प्राप्त किया जाता है।

जिस व्यक्ति का परीक्षण किया जा रहा है उसके विषय में सही अनुमान लगाया जा सके, इसके लिए आवश्यक है कि ये परीक्षण, विश्वसनीय, वैध और मानकीकत हों। आइए अब इन शब्दों का अर्थ समझें। कोई भी परीक्षण तभी विश्वसनीय होता है जब वह स्थिरतापूर्वक मापन करे। उदाहरण के लिए यदि आप किसी चीज का अलग–अलग अवसरों पर मूल्यांकन कर रहे हैं तो प्राप्त अंक समान होने चाहिए। यदि कोई मापक, एक ही वस्तु की दो बार जांच करने पर अलग–अलग परिणाम दे तो उसे अविश्वसनीय कहा जाएगा। बुद्धि परीक्षण का कोई भी परीक्षण तभी विश्वसनीय कहा जाएगा यदि वह एक ही व्यक्ति को बार बार मूल्यांकित करने पर समान परीणाम प्रस्तुत करे।

किसी परीक्षण की वैधता से अभिप्राय उस स्तर से है जिस स्तर तक यह संबंधित वस्तु को माप सकता है। व्यक्तित्व संबंधी कोई भी वैध परीक्षण व्यक्ति के व्यक्तित्व की जांच करता है और व्यक्तित्व के वे आयाम जिन परिस्थितियों में महत्वपूर्ण होते हैं उन परिस्थितियों में अमुक व्यक्तित्व के व्यवहार की भविष्यवाणियां भी करता है।

कोई भी मूल्यांकन उपकरण तभी उपयोगी सिद्ध होता है जब वह मानकीकत हो। मानकीकरण से अर्थ है कि समान परिस्थितियों में वह परीक्षण सभी व्यक्तियों पर एक ही ढंग से लागू किया जाए। इसके अन्तर्गत कुछ सिद्धान्त भी स्थापित किए जाते हैं ताकि व्यक्ति द्वारा अर्जित अंकों को अर्थ प्रदान किए जा सकें। सिद्धान्तों के तहत एक व्यक्ति द्वारा अर्जित अंकों को उसी श्रेणी के अन्य व्यक्तियों के अंकों से तुलना की जाती है। मानकीकरण द्वारा प्रक्रिया के उद्देश्यों और प्रक्रिया लागू करने की परिस्थितियों में

एकरूपता सुनिश्चित की जाती है। इस प्रकार परीक्षण के परिणामों की व्याख्या करना संभव हो पाता है।

मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न मानवीय लक्षणों की जांच करने के लिए विभिन्न परीक्षण विकसित किए हैं। स्कूलों में हम वर्ष के अंत में परीक्षण का प्रयोग करते हैं ताकि जान सकें कि विद्यार्थियों ने कितना ज्ञान अर्जित किया। मनोवैज्ञानिक अक्सर क्षमता और व्यक्तित्व के परीक्षणों का प्रयोग करते हैं। योग्यता संबंधी परीक्षण से पता चलता है कि कोई व्यक्ति अपनी सर्वोत्तम परिस्थितियों में क्या कर सकता है। इन परीक्षणों में व्यक्ति की क्षमता की जांच उपलब्धि की अपेक्षा संभावना के रूप में की जाती है। बुद्धि परीक्षण और अभिक्षमता परीक्षण इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। अभिक्षमता से अर्थ है कि व्यक्ति विशिष्ट परिस्थिति में आवश्यक विशिष्ट प्रकार के कौशल को सीखने की कितनी योग्यता रखता है। आई आई टी या पी एम टी की प्रवेश परीक्षाएं अभिक्षमता परीक्षण ही हैं। व्यक्तित्व परीक्षणों द्वारा सोच विचार, भावनाओं और व्यवहार के विशिष्ट लक्षणों की परख होती है।

15.2 बुद्धि का संप्रत्यय

ऐसी बहुत कम बातें हैं जो बुद्धि की भांति ही बहुत स्पष्ट एवं भ्रामक हैं। बौद्धिक उपलब्धियों का अंतर कार्य निष्पादन के द्वारा स्पष्ट नजर आता है। उदाहरण के लिए यदि हम दसवीं कक्षा के छात्रों की स्कूल परीक्षाओं के अंकों को देखें तो यह साफ नजर आता है कि अधिकांश छात्र औसत प्रदर्शन करते हैं और बहुत ही कम छात्र नितान्त भिन्न प्रदर्शन करते हैं या तो बेहद उच्च या बेहद निम्न। यही तथ्य बुद्धि के संप्रत्यय पर भी लागू होता है। आकति 15.1 के द्वारा यह वितरण दर्शाया गया है। हम देख सकते हैं कि बुद्धि सूचकांक के रूप में प्रयुक्त बुद्धि लब्धि (आई क्यू) का स्तर भिन्न भिन्न है और बहुत ही कम वयक्तियों का बौद्धिक स्तर नितांन्त भिन्न है। इसी प्रकार, बहुत कम लोग अति विद्वान और अति मंद बुद्धि श्रेणियों में आते हैं।

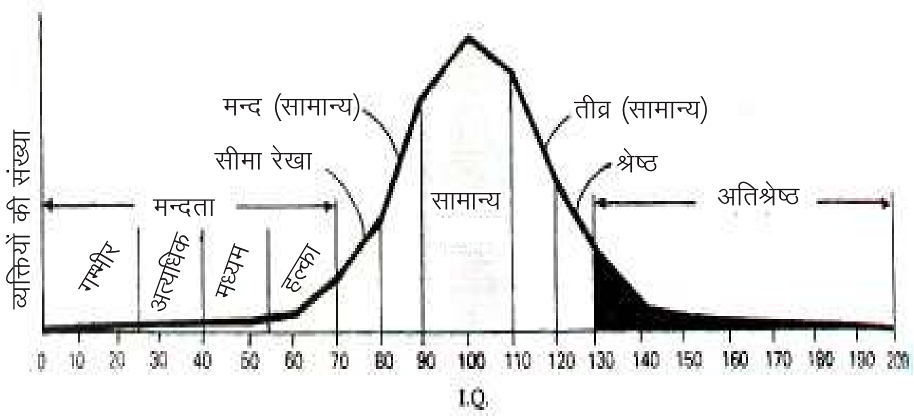

आकति 15.1:

हालांकि, जब हम बुद्धि की परिभाषा देने और उसे मापने का प्रयास करते हैं तो यह एक टेढ़ी खीर सिद्ध होता है। बुद्धि एक अमूर्त संप्रत्यय है। इसी कारण बुद्धि को मापने के लिए हम अपने ही सैद्धान्तिक दष्टिकोण की मदद लेते हैं। अपने सैद्धान्तिक या संप्रत्ययात्मक प्रतिरूपों के बिना हम इस तक नहीं पहुंच सकते। आजकल मनोवैज्ञानिकों के पास ऐसे अनेक प्रतिदर्श उपलब्ध हैं जो बुद्धि संबंधी विभिन्न विचार प्रस्तुत करते हैं। बुद्धि को इतने भिन्न भिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है कि अनेक मनोवैज्ञानिकों ने इसे ''बुद्धि परीक्षणों द्वारा क्या मापा जाता है?'' के रूप में ही परिभाषित किया है। यह जटिलता इस कारण भी है क्योंकि अनेक बुद्धि परीक्षणों का विकास बुद्धि को परिभाषित करने से पूर्व ही कर लिया गया। इस संबंध में सर्वप्रथम प्रकाशित बुद्धि परीक्षण की कहानी याद करना उचित रहेगा। वर्ष 1905 में बिने और साइमन से फ्रांस के लोक शिक्षण मंत्री ने कहा कि वे मानसिक रूप से विकलांग बच्चों को पढ़ाने में मदद करें। इन मनोवैज्ञानिकों ने यह आवश्यक समझा कि इन मानसिक विकलांग बच्चों की बुद्धि परीक्षा ली जाए। उन्होंने इन बच्चों की परीक्षा ली और उनके अंकों की तुलना, समान आयु के सामान्य बच्चों से की। जो बच्चे अपनी उम्र के सामान्य बच्चों से मानसिक रूप से दो वर्ष पीछे थे उन्हें मन्द बुद्धि माना गया। बिने के बुद्धि संबंधी प्रथम परीक्षण के प्रकाशन के बाद से दुनिया भर में बुद्धि संबंधी असंख्य अनुसंधान हुए हैं। जिसके कारण अनेक सैद्धान्तिक विचारधाराएं सामने आईं। इससे पहले कि हम ऐसी ही कुछ विचारधाराओं की चर्चा करें, यह जान लेना उचित होगा कि अधिकांश अनुसंधानों में बुद्धि को मोटे तौर पर निम्नलिखित योग्यताओं से जोड़ कर देखा गया:

(क) नई परिस्थितियों और बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप खुद को ढालना।

(ख) अनुभवों या परीक्षणों से सीखना या लाभ उठाना और

(ग) चिह्नों और संप्रत्ययों के प्रयोग द्वारा अमूर्त रूप से सोचना।

यहां यह स्पष्ट करना होगा कि 'योग्यता' शब्द से अभिप्राय किसी कार्य को करने की वर्तमान उपलब्ध शक्ति से है। बुद्धि संबंधी विभिन्न विचारधाराओं को दो मुख्य श्रेणियों मनोमितीय या कारक सिद्धान्तों और प्रक्रिया आधारित विचारों में बांटा जा सकता है। कारक सिद्धान्तों में बुद्धि का निर्माण करने वाले कारक (एस) की पहचान की जाती है और प्रक्रिया सिद्धान्त, बुद्धि को ऐसे विशिष्ट कार्यों, प्रक्रियाओं या बौद्धिक प्रकार्यों संबंधी संक्रियाओं के प्रकाश में परिभाषित करते हैं जिनके लिए लौकिक क्षमताएं आवश्यक हैं। आइए बुद्धि संबंधी कुछ प्रमुख दष्टिकोणों की चर्चा करें।

15.3 बुद्धि का कारक दष्टिकोण

बुद्धि का संघटन चाहे वह एकात्मक हो या बहु अवयवीय, सदैव ही उत्सुकता का विषय रहा है। अन्तर्सम्बंधी तकनीक जिसे कारक विश्लेषण कहते हैं, के प्रयोग के माध्यम से अनेक अनुसंधानों ने बुद्धि की रचना को समझने का प्रयास किया है।

सामान्य (जी) कारक के रूप में बुद्धि

स्पीयरमैन ने यह प्रस्ताव रखा कि हमारे पास एक सामान्य बुद्धि कारक (g) होता है और अनेक विशिष्ट कारक (S) होते हैं जिनका संबंध विशिष्ट योग्यताओं से होता है। यह (जी) कारक सभी प्रकार की क्षमताओं में काम आता है। अमूर्त संबंधों को समझने की योग्यता के रूप में यह प्रकट होता है। यह विचार आकति 15.2 में दर्शाया गया है।

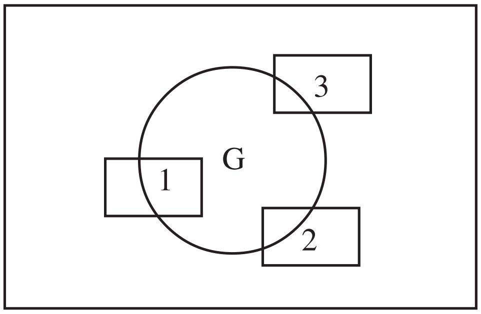

चित्र 15.2:

बुद्धि की कारकीय दष्टि

थर्सटोन का प्रस्ताव था कि बुद्धि सात तत्वों से मिलकर बनती है जो है, मौखिक बोधन, शब्दों का पठन प्रवाह, संख्या, स्थान, सहचर्य स्मति, प्रत्यक्ष गति और प्रवर्तन (या सामान्य तर्कशक्ति)। उसने इन तत्वों की जांच के लिए प्राथमिक मानसिक योग्यताओं (पी. एम. ए.) का एक परीक्षण विकसित किया।

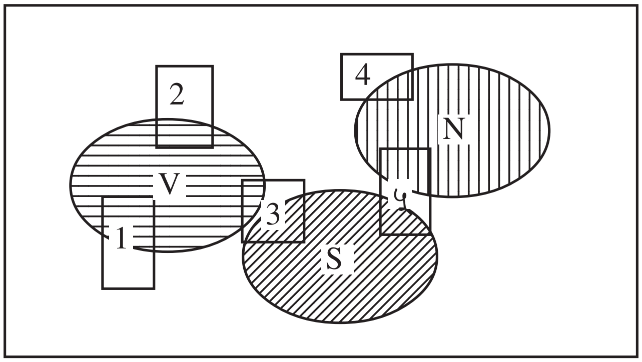

चित्र 15.3:

15.4 बुद्धि की संरचना/बनावट

बुद्धि का एक समन्वित रूप प्रस्तुत करने के उद्देश्य से गिलफोर्ड ने एक अन्य विचार प्रस्तुत किया। उसने इसे बुद्धि की संरचना (SI) प्रतिरूप नाम दिया। इस प्रतिरूप में बुद्धि के प्रमुख लक्षणों को तीन मुख्य आयामों में विभाजित किया जाता है।

संक्रियायें: व्यक्ति क्या करता है? संक्रिया में संज्ञान, स्मति अंकन, स्मति धारणा, विभिन्न उत्पादन (रचनात्मकता), एक अभिसारी उत्पादन और मूल्यांकन शामिल हैं।

अन्तर्वस्तु: इससे अभिप्राय, जिस समाग्री या सूचना के आधार पर कार्य निष्पादित किया जाता है, उसकी प्रकति से है। इसमें दश्य, श्रव्य, प्रतीकात्मक (जैसे शब्द, अंक) अर्थ विषयक (जैसेः शब्द) और व्यवहारात्मक (व्यक्ति के व्यवहार, अवधारणा, आवश्यकताएं आदि के विषय में सूचना) सामग्री या सूचनाएं शामिल हैं।

उत्पाद: इससे अभिप्राय है कि व्यक्ति सूचना का प्रयोग किस रूप में करता है। उत्पादों को इकाइयों, वर्गों, संबंधों, रूपान्तरणों और आशयों में विभाजित किया जाता है।

अतः स्पष्ट है कि कारकीय विचारधारा बुद्धि के विचार को लक्षण संगठन के रूप में प्रस्तुत करती है। अतः इस प्रकार चिन्हित लक्षणों की विभिन्नता भ्रामक मानी गई है। यहां पाठक यह याद रखें कि कारक विश्लेषण की तकनीक के माध्यम से चिन्हित लक्षण, व्यवहारात्मक पैमानों के मध्य संबंधों के स्तर को ही प्रकट करते हैं।

ये वर्णनात्मक श्रेणियां हैं। लक्षण संगठन, कार्य निष्पादित करने वाले व्यक्तियों के अनुभव की पष्ठभूमि से प्रभावित होता है। विभिन्न वर्गों, सामाजिक–आर्थिक स्तरों और लक्षण संगठन में विद्यालयी पाठयक्रम के प्रकारों में पाए जाने वाले अंतर इस विचार को समर्थित करते हैं। कारक विश्लेषण पर आधारित अतिप्रचुर अनुसंधानों को देखते हुए अनास्तासी ने निष्कर्ष रूप में सही कहा है कि ''यह संज्ञानात्मक कौशलों और अपेक्षित व पोषित ज्ञान का सम्मिलित रूप है जिसे व्यक्ति की निजी कार्यप्रणाली के अनुभवात्मक परिदश्य का संबल प्राप्त होता है।''

15.5 एक प्रक्रिया के रूप में बुद्धि

यह विचारधारा संज्ञान विज्ञान परम्परा से सम्बन्धित है। विशेषतः सूचना प्रयोग प्रक्रिया प्रतिदर्श इसके काफी नजदीक है। इसके अन्तर्गत बौद्धिक गतिविधियां सम्पन्न करने के लिए सूचनाओं के एकत्रीकरण, प्रतिनिधित्व और उपयोग की प्रक्रियाओं की पहचान की जाती है। आईए, कुछ ऐसे प्रतिदर्शों की चर्चा करें जो बुद्धि सम्बन्धी प्रक्रिया विचार पर बल देते हैं।

ट्री आर्किक सिद्धान्त

कारकीय या मनोभितीय को नकारने के पश्चात **रॉबर्ट स्टेनबर्ग** ने बुद्धि का विश्लेषण तीन आयामों घटकीय, अनुभवात्मक और प्रकरणात्मक, के आधार पर किया। घटकीय आयाम में वे प्रक्रियाएं शामिल होती हैं जिनका प्रयोग परीक्षण देने वाला व्यक्ति मानक बुद्धि परीक्षणों के प्रश्नों का उत्तर देने में करता है। इसके मूल तत्वों में इतर घटक या उच्चतर श्रेणी की नियंत्रण प्रक्रियाएं, निष्पादन घटक, अर्जन घटक और स्थानान्तरण

घटक सम्मिलित हैं। अनुभवात्मक नामक दूसरे आयाम में यह देखा जाता है कि व्यक्ति के अपने मनोजगत और बाहरी संसार के मध्य आपस में कैसा संबंध है। यह बुद्धि के प्रत्यय के साथ रचनात्मकता को जोड़ देता है। वस्तुतः व्यक्ति की बुद्धि ही उसके अनुभवों को आकार प्रदान करती है। साथ ही, यह भी देखा जाता है कि किन अनुभवों ने व्यक्ति की बुद्धि को प्रभावित किया है। बुद्धि का तीसरा आयाम है प्रकरणात्मक। इसके अन्तर्गत देखा जाता है कि व्यक्ति अपने आस–पास के वातावरण को क्या रूप प्रदान करता है, उसे स्वीकार करता है और उपलब्ध संसाधनों से अधिकतम लाभ पाने का प्रयत्न करता है। इसे व्यवहारिक बुद्धि भी कहा जाता है।

बहुपक्षीय बुद्धि सिद्धान्त

हावर्ड गार्डनर ने विचार रखा कि बुद्धि के बहुपक्षीय रूप उपलब्ध होते हैं। उसने कहा कि बुद्धि केवल एकरूप नहीं है अपितु अनेक प्रकार की बुद्धियों का अस्तित्व है और प्रत्येक एक दूसरे से भिन्न है। उसने बुद्धि के आठ रूपों की पहचान की: भाषा–विज्ञानी, तर्क सम्मत, गणित सम्मत, स्थान संबंधी, संगीत संबंधी, दैहिक गतिसंवेदी अंतरवैयक्तिक, आन्तरक और प्राकतिक।

व्यक्ति जिस संस्कति में रहता है उसके साथ सम्मति के अनुरूप ही इन प्रकारों की महत्ता निर्धारित होती है। अलग–अलग संस्कतियों में बुद्धि के प्रत्येक प्रकार की अलग अलग महत्ता होती है।

पाठगत प्रश्न 15.1

सही उत्तर चुनोः

1. व्यक्तियों के बड़े समूह पर किए गए बुद्धि परीक्षण के अंक व्यक्तियों का ऐसा वर्गीकरण दर्शाएंगे जिसमें अधिकांश ने प्राप्त किए होंगे।

   (क) कम अंक

   (ख) औसत अंक

   (ग) उच्च अंक

   (घ) अत्यधिक उच्च अंक

2. बुद्धि का पहला परीक्षण संबंधित हैः

   (क) बीनेट

   (ख) स्पीयरमैन

   (ग) टर्मेन

   (घ) रैवेन

3. किसने कहा था कि बुद्धि का निर्माण अनेक कारकों से होता है?
   (क) थर्स्टोन
   (ख) गिलफोर्ड
   (ग) वर्नन
   (घ) स्टर्नबर्ग
4. वह विचारधारा जिसमें बुद्धि का संप्रत्यय संक्रिया, अन्तर्वस्तु और उत्पाद के रूप में की गई है:
   (क) व्यवस्था प्रतिदर्श
   (ख) बुद्धि की संरचना
   (ग) श्रेणिक प्रतिदर्श
   (घ) जी कारक प्रतिदर्श

15.6 गैर संज्ञानात्मक क्षेत्रों में बुद्धि

अभी तक किए गए विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि बुद्धि संबंधी अनुसंधानों का प्रमुख केन्द्र तर्क और संज्ञान क्षेत्र ही रहे हैं। हाल ही के कुछ वर्षों में अन्य पहलुओं पर भी गौर किया गया है। उनमें से कुछ का संक्षिप्त विवरण करना रोचक होगा। ऐसा ही एक विचार है– विवेक। यह संज्ञान, अन्तरवैयक्तिक, सामाजिक और व्यक्तित्व संबंधी विशेषताओं का अनोखा मेल है। निराशा और अखंडता के मध्य परस्पर विरोधों के साथ सफल संतुलन बनाने के परिणामस्वरूप विवेक प्राप्त होता है या स्वयं की क्षमताओं से आगे बढ़ने पर विवेक उत्पन्न होता है। ज्ञान के द्वारा संवेगात्मक और संज्ञानात्मक तत्वों का सफल एकीकरण किया जाता है। अन्य संबंधित विचार है ''व्यवहारिक बुद्धि'' की दूरदर्शिता। यह निजी लक्ष्यों, योजनाओं और उद्देश्यों की व्यवहारिक उपलब्धि पर यह विचार जोर देता है।

सामाजिक बुद्धि ने भी अनुसंधाकर्ताओं का ध्यान आकर्षित किया। इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले कार्यों, और दैनिक जीवन की समस्याओं को सुलझाने के लिए व्यक्ति जो प्रयास करता है, यह विचार उन्हीं का प्रतिनिधित्व करता है। अंततः सबसे नया विचार है संवेगात्मक बुद्धि। स्वयं और दूसरों की भावनाओं को समझने, उनके मध्य अंतर को पहचानने और इस सूचना का प्रयोग अपनी विचारधारा व कार्यप्रणाली निर्धारित करने की योग्यताओं के रूप में संवेगात्मक बुद्धि को परिभाषित किया गया है। जिन लोगों की संवेगात्मक बुद्धि का स्तर उच्च होता है वे स्वयं के प्रति अधिक संवेगात्मक जागरूक होते हैं, संवेगों को भली–भांति संभालते हैं, संवेगों का उचित प्रयोग करते हैं,

टिप्पणी

संबंधों का अच्छी तरह निर्वाह करते हैं और सहानुभूमि सम्पन्न करते हैं। यह देखा गया है कि नौकरियों और जीवन के अन्य क्षेत्रों में सफलता बुद्धिलब्धि की अपेक्षा संवेगात्मक बुद्धि पर अधिक निर्भर करती है। किसी भी व्यक्ति की संवेगात्मक बुद्धि उसके जन्म से ही सुनिश्चित नहीं होती, बचपन इसके विकास का सबसे महत्वपूर्ण समय होता है। युवावस्था के दौरान इसे और विकसित किया जा सकता है।

15.7 बुद्धि परीक्षण

आइए कुछ बुद्धि परीक्षणों को समझने का प्रयास करें। इन परीक्षणों को मौखिक और अमौखिक (निष्पादन) तथा व्यक्तिगत और सामूहिक परीक्षणों में वर्गीकत किया जा सकता है। निरक्षर अथवा विकलांग व्यक्तियों की क्षमता जांचने के लिए निष्पादन परीक्षण किए जाते हैं। एक समय में एक ही व्यक्ति पर किए जाने वाला परीक्षण व्यक्तिगत परीक्षण होता है और एक साथ अनेक व्यक्तियों पर सम्पन्न होने वाला परीक्षण सामूहिक परीक्षण कहलाता है। कुछ महत्वपूर्ण बुद्धि परीक्षणों के विषय में चर्चा आगे की गई है।

1. स्टेनफोर्ड - बीने बुद्धि मापक

फ्रैंच विद्यालयों में छात्रों के लिए जो परीक्षण बीने और साइमन ने विकसित किया उसे टर्मेन तथा स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के उनके सहयोगियों ने संशाधित किया और वर्ष १९१६ में यह प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात् यह व्यक्तिगत परीक्षण कई बार संशोधित किया जा चुका है। आज हमारे पास स्टेनफोर्ड–बीने (L-B IV) मापक का चौथा अंक उपलब्ध ा है। इसमें चार प्रमुख संज्ञान क्षेत्रोंः मौखिक तार्किकता, अमूर्त/दश्य तार्किकता, परिमाण संबंधी तर्क और अल्पकालिक स्मति का प्रतिनिधित्व करने वाले 15 परीक्षण संकलित हैं। ये परीक्षण मिश्रित क्रम में संकलित हैं। इसके अन्तर्गत 2 वर्ष की आयु से 18 वर्ष की आयु तक के लोगों को लक्षित किया गया है। इसे दो चरणों में लागू किया जाता है। पहले चरण में प्रश्नकर्ता शब्द कोष संबंधी परीक्षण करता है जिसकी वजह से बचे हुए परीक्षणों के लिए प्रारम्भिक स्तर तय करने में सहायता मिलती है।

दूसरे चरण में, प्रश्नकर्ता प्रत्येक परीक्षण में वास्तविक प्रदर्शन के संबंध में आधार स्तर और उच्च स्तर स्थापित करता है। दो क्रमिक स्तरों पर चार प्रश्नों को पास करने पर आधार स्तर प्राप्त होता है। यदि यह प्रारंभिक स्तर पर प्राप्त नहीं होता तो लगातार निम्नतम क्रम में परीक्षण किया जाता है जब तक आधार स्तर प्राप्त नहीं हो जाता। उच्चतम स्तर तब प्राप्त होता है जब दो क्रमिक स्तरों पर चार में से तीन या चारों ही प्रश्न असफल हो जाते हैं। इस स्तर पर पहुंच कर व्यक्ति का वह विशिष्ट परीक्षण रोक दिया जाता है।

इस परीक्षण के पहले संस्करण में अंकों की बुद्धि लब्धि (आई क्यू) के रूप में व्याख्या करने के लिए निम्नलिखित फार्मूला प्रयुक्त होता थाः–

$$\text{बुद्धि लब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{क्रमिक आयु}} \times 100$$

यहां एम ए से अभिप्राय मानसिक आयु और सीए से अभिप्राय क्रमिक आयु है। बुद्धि सूचकांक के रूप में आई क्यू का विचार बहुत चर्चित रहा। किन्तु पिछले कुछ वर्षों में इसकी आलोचना भी की गई। अब बुद्धि के अन्य सूचकांकों को विकसित करने और प्रयोग करने का प्रयास किया जा रहा है।

टेस्ट के नए संस्करण में सभी 15 परीक्षणों के लिए मानक आयु अंक (एस ए एस) दिए गए हैं। टेस्ट की रिकॉर्ड बुकलेट में एक चार्ट दिया गया है जिसमें दिए गए प्रत्येक टेस्ट के दौरान व्यक्ति के एस ए एस प्रदर्शन का ब्यौरा लिखा जाता है। आई क्यू शब्द के प्रयोग पर अब पूरी तरह रोक है। इस टेस्ट के द्वारा निरीक्षक विभिन्न परीक्षण उद्देश्यों के लिए उपयोगी अलग अलग योग्यताओं की जांच कर सकता है।

2. वेस्लर मापक (स्केल)

इन मापकों को मूल रूप से डेविड वेस्लर ने विकसित किया था। ये मापक वयस्कों, स्कूली बच्चों और उनसे भी छोटे बच्चों के समूहों से संबंधित है। इनका प्रयोग सामान्य बुद्धि के मापकों के रूप में तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं में संभव सहायकों के रूप में होता है। टेस्ट के वर्तमान संस्करण में वेस्लर एडल्ट इंटेलीजेंस स्केल–रीवाइजड शामिल है जो 16 से 74 वर्ष की आयु वर्ग पर लागू होता है। वेस्लर इंटेलीजेंस स्केल फोर चिल्ड्रन– ततीय संस्करण 6 वर्ष से 16 वर्ष व 11 माह के बच्चों के लिए बना है तथा वेस्लर प्री स्कूल एण्ड प्राइमरी स्कूल ऑफ इंटलीजेंस – रीवाइज़ड तीन माह तक के बच्चों पर लागू होता है। ये सभी वर्तमान संस्कण में शामिल हैं। विभिन्न प्रकार के 17 उप परीक्षणों में से 8 सभी तीन स्केलों में समान है (5 मौखिक और 3 प्रदर्शन उप परीक्षण)। सूचना उप परीक्षण है जो सभी तीन स्केलों में लागू होता है। इन स्केलों के निष्पादन उप परीक्षणों में विशेष रूप से विभिन्न वस्तुओं संबंधी कुशलता की आवश्यकता होती है जैसे पहेलियां और ब्लॉक्स अथवा छपी हुई सामग्री की विजुअल स्केनिंग जैसे प्रतीक। कुछ अनुसंधान कर्ताओं ने इन स्केलों के लघु रूप प्रस्तुत किए हैं। प्रत्येक उप परीक्षण के अंकों को 10 के मान और 3 के एस डी के माध्यम से मानक अंकों में परिवर्तित कर दिया जाता है। इस प्रकार सभी उप परीक्षण अंकों को तुलनीय इकाइयों में अभिव्यक्त किया जाता है। परीक्षार्थी के निष्पादन का मूल्यांकन उपयुक्त आयु नियमों के अनुरूप किया जाता है।

3. रावेन का प्रोगेसिव मैट्रिक्स (आर पी एम)

यह निष्पादन परीक्षण 'जी कारक' या सामान्य बुद्धि को मापने के लिए बनाया गया है। परीक्षण में मैट्रिक्स के सेट या पंक्तियों और कॉलमों में डिजाइन की बनावट होती है,

जिसमें प्रत्येक में से एक भाग निकाल दिया गया होता है। परीक्षार्थी को दिए गए विकल्पों में से निकाले गए भाग के रूप में सही विकल्प का चुनाव करना होता है।

आसान प्रश्नों में बारीकी से अन्तर पहचानने की आवश्यकता होती है। कठिन प्रश्नों में सदश्यता, पैट्रन के क्रम संचयों और अदला बदली तथा अन्य तार्किक संबंधों का प्रयोग होता है। कठिनता के स्तर में भिन्नता के आधार पर यह तीन रूपों में उपलब्ध हैः–

(i) स्टैन्डर्ड प्रोग्रेसिव मैट्रिक्स (एस पी एम) 6 वर्ष से 80 वर्ष तक के व्यक्तियों के लिए उपयोगी है।

(ii) कलर्ड प्रोग्रसिव मैट्रिक्स (सी पी एम) छोटे बच्चों और विशिष्ट समूहों के लिए है।

(iii) एडवांस प्रोग्रसिव मैट्रिक्स (ए पी एम) किशारों और युवाओं के लिए है।

4. ड्रा-ए-मैन टेस्ट

गुड इनफ द्वारा विकसित इस अमौखिक टेस्ट में व्यक्ति को एक पुरुष का चित्र बनाना होता है। व्यक्तिगत शारीरिक अंगों, कपड़ों, अनुपात, तथा अन्य ऐसे लक्षणों को शामिल करने के लिए प्रशंसा की गई है इस टेस्ट के प्रति औसत विश्वसनीयता और मान्यता दर्शाई गई है। भारत में प्रमिला पाटक ने इस टेस्ट के नियम विकसित किए।

15.8 बुद्धि परीक्षणों का उपयोग

क्योंकि इन परीक्षणों का उपयोग नौकरी, प्रमोशन, स्कूल या कालेज में प्रवेश आदि महत्वपूर्ण निर्णय लेने में किया जाता है इसलिए इनसे जुड़ी अनेक नैतिक व प्रक्रियागत समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। अतः इन परीक्षणों पर नियंत्रण रखना आवश्यक होता है। यह सुझाव दिया जाता है कि केवल प्रशिक्षित व्यक्ति ही इन परीक्षणों का आयोजन करें। साथ ही, अंकों का भी प्रयोग ठीक तरह से हो। टेस्ट के प्रश्न आम न हों, ऐसे प्रयास किए जायं। अन्यथा टेस्ट के परिणाम मान्य नहीं रहेंगे। प्रक्रिया में समानता बनाए रखने के लिए प्रश्नकर्ताओं को पहले से ही तैयारी करनी होती है। टेस्ट लेने के दौरान परिस्थितियां भी अनुकूल हों। प्रश्नकर्ता के लिए आवश्यक होता है कि वह परीक्षणाधीन व्यक्ति की टेस्ट में रुचि जागत करे, उन्हें सहयोग देने के लिए प्रेरित करे और उनसे उचित ढंग से प्रतिक्रियाएं प्राप्त करने का प्रयास करे।

फिलहाल, बुद्धि परीक्षणों का प्रयोग अनेक रूपों में किया जा रहा है जिसका लाभ अनेक गतिविधियों में मिलता है जैसे विभिन्न नौकरियों के लिए लोगों का चयन, मानसिक विकलांगता का पता लगाना, मार्गदर्शन और कांउसंलिग तथा बौद्धिक विकास के क्षेत्र में अनुसंधान। इन सभी प्रकार के उपयोगों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैः

व्यक्तियों का चयन

यह एक सामान्य तथ्य है कि व्यक्तियों की कुशलता, क्षमता और रुचियों में अंतर होता है। नौकरी में सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि व्यक्ति किस नौकरी के लिए आवेदन कर रहा है उसमें उस विशिष्ट कार्य की निर्वाह की क्षमता है या नहीं। इस प्रकार चयन प्रक्रिया के दौरान आवेदन के गुणों और कार्य संबंधी आवश्यकताओं में मिलान किया जाता है। बुद्धि को सभी प्रकार के कार्यों में सफलता का आधार माना जाता है। इसी कारण व्यक्तियों के चयन प्रक्रियाओं में बुद्धि परीक्षण एक प्रमुख आधार होता है। बुद्धि परीक्षणों की सहायता से आवेदक की बुद्धि का स्तर मापा जाता है और संबंधित परिणामों का प्रयोग नौकरी प्रदाता आवेदक के संबंध में निर्णय लेते समय करता है।

मानसिक विकलांगता चिह्नित करना

व्यक्तियों की बौद्धिक क्षमताओं में अंतर होता है, जिन व्यक्तियों का बौद्धिक स्तर बहुत निम्न होता है उन्हें मानसिक रूप से विकलांग माना जाता है। ऐसे लोगों को बाहरी दुनिया की चुनौतियों के साथ तालमेल बनाने में बहुत कठिनाई होती है। उन्हें विशिष्ट देखभाल और प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। वस्तुतः ऐसे अनेक व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति भी नहीं कर पाते और उन्हें स्वयं की देखभाल में भी कठिनाई होती है। अन्य अनेक सूचकांकों सहित बद्धि परीक्षण की सहायता से मानसिक विकलांगता का स्तर मापा जाता है।

मार्गदर्शन और काउंसलिंग

शिक्षा के संबंध में व्यावसायिक मार्गदर्शक का पेशा अब अहम होता जा रहा है। हमारे देश का शैक्षिक स्वरूप जिस प्रकार विस्तत और भिन्नतापूर्ण होता जा रहा है, छात्रों के लिए विषय और व्यवसाय का चयन करना कठिन हो गया है। अध्यापकों ओर अभिभावकों को भी इसमें कठिनाई अनुभव होती है। इस संबंध में, मनोवैज्ञानिक व्यक्तियों की योग्यताओं का पता लगाने के लिए बुद्धि परीक्षणों का सहारा लेते हैं तथा उनसे प्राप्त सूचनाओं का प्रयोग व्यवसाय चुनाव में करते हैं।

15.9 मानवीय बुद्धि में भिन्नताओं की व्याख्या

हालांकि बुद्धि में अंतर होना स्वाभाविक है किन्तु इस अंतर के कारणों पर आज भी बहस जारी है। अनुसंधाकर्ताओं ने विशेष रूप से आनुवंशिक या वंशानुगत और पर्यावरणीय कारकों का आई क्यू की भिन्नता में योगदान का पता लगाने का प्रयास किया है। अध्ययनों से पता चलता है कि निकट संबंधी व्यक्तियों के अंक लगभग समान होते हैं। खासतौर पर, गोद लिए गए बच्चों और ऐसे जुड़वा बच्चे जो शुरुआती जीवन में ही अलग हो गए तथा उनका पालन–पोषण अलग परिवारों में हुआ, उनके अध्ययन से इस प्रकार

की प्रवत्ति प्रकट होती है। पर्यावरणीय भिन्नता और समद्धताओं के अध्ययन में पर्यावरणीय कारकों के आई क्यू पर प्रभाव का पता चलता है। रोचक तथ्य यह है कि मुखीय योग्यताओं में पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं अधिक अंक अर्जित करती हैं जबकि पुरुष दश्य–स्थान संबंधी क्षमताओं में बेहतर प्रदर्शन करते हैं। ऐसे अंतर मानव प्रजाति के विकास का इतिहास दर्शाते हैं।

सामूहिक भिन्नताओं का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष बुद्धि परीक्षणों के सांस्कतिक पक्ष से जुड़ा है। यह अक्सर कहा जाता है कि अधिकांश टेस्ट पश्चिमी संस्कति के संबंध में विकसित किए गए हैं। परिणामस्वरूप जो बच्चे पश्चिमी संस्कति से परिचित होते हैं वे बेहतर प्रदर्शन करते हैं और अपरिचित बच्चों का दर्शन कमतर होता है। इसी कारण कल्चर फेयर टेस्ट विकसित करने के प्रयास किए गए जैसे कि कैटल्स कल्चर फेयर टेस्ट आफ इन्टेलीजेन्स।

पाठगत प्रश्न 15.2

उचित पर्याय चुनें:

1. इनमें से किसका संबंध बुद्धि के गैर संज्ञानात्मक पक्ष से नहीं है:

   (क) व्यवहारिक बुद्धि

   (ख) सामाजिक बुद्धि

   (ग) संवेगात्मक बुद्धि

   (घ) बुद्धि का प्रोसेस/प्रक्रिया प्रतिदर्श

2. बुद्धि लब्धि (आई क्यू) को किस फार्मूला से प्राप्त किया जाता है:

   (क) MA/CA + 100

   (ख) MA/CA × 100

   (ग) सीए/एम ए × 100

   (घ) सीए/एम ए + 100

3. वेस्लर टेस्ट किसे मापता है:

   (क) विशिष्ट योग्यताएं

   (ख) मौखिक योग्यता

   (ग) बुद्धि की प्रक्रिया

   (घ) सामान्य योग्यता

4. एक बुद्धि परीक्षण में इसका होना आवश्यक हैः

   (क) नियम

   (ख) वैधता

   (ग) विश्वसनीयता

   (घ) उपरोक्त सभी

5. बुद्धि परीक्षण किसमें सहायता नहीं करताः

   (क) मार्ग दर्शन

   (ख) व्यक्ति चयन

   (ग) ज्ञान अर्जन का स्तर मापना

   (घ) समस्या सुलझाने की क्षमता मापना

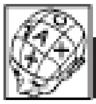

आपने क्या सीखा

- मनोवैज्ञानिक विशिष्टताएं सामान्य रूप से व्यक्तियों में वितरित होती हैं। इसी कारण अधिकांश लोग औसत रूप से बुद्धिमान होते हैं और बहुत कम व्यक्तियों में बुद्धि का बहुत निम्न या बहुत उच्च स्तर पाया जाता है।
- वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन महतवपूर्ण है। विभिन्न सैद्धान्तिक विचारधाराओं के अनुसार बुद्धि को अनेक रूपों में देखा जाता है। कुछ मनोवैज्ञानिक इसे एक लक्षण मानते हैं जबकि कुछ इसे प्रक्रिया कहते हैं।
- लक्षण मानने वाली विचारधारा के भी अनेक रूप हैं। इसी कारण हमारे पास एकरूपा (सामान्य) कारक, बहुरूपी कारक, और वंशानुगत विचार उपलब्ध हैं। सार रूप में, बुद्धि संज्ञानात्मक कौशल और ज्ञान का सम्मिलित रूप प्रतीत होती है।
- बुद्धि संबंधी प्रक्रिया विचार इसे विभिन्न संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के रूप में देखता है। साथ ही, बुद्धि को विभिन्न प्रकारों वाली भी माना गया है। सामाजिक और संवेगात्मक बुद्धि के विचार ने अनुसंधान के नए क्षेत्र खोले हैं।
- बुद्धि की जांच मनोवैज्ञानिक टेस्टों की सहायता से की जाती है। ये टेस्ट व्यवहार के नमूनों की जांच के भरोसेमंद और मान्य उपकरण हैं। बुद्धि का पहला टेस्ट बीनेट ने विकसित किया जिसे तत्पश्चात् स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी में मानक रूप प्रदान किया गया। ये टेस्ट मौखिक या कार्य निष्पादन के रूप में हो सकते हैं और इन्हें एक व्यक्ति या समूह पर लागू किया जा सकता है।

- बच्चों और विकलांग व्यक्तियों के लिए विशिष्ट टेस्ट विकसित किए गए हैं। इन परीक्षणों का प्रयोग अक्सर व्यक्तियों के चयन, मार्गदर्शन, मानसिक विकलांगता चिह्नित करना और अनुसंधान में किया जाता है।
- भरतीय मनोवैज्ञानिकों ने अनेक परीक्षणें को अपनाया है जिनका प्रयोग व्यक्ति चयन, मार्गदर्शन, मानसिक विकलांगता चिह्नित करने और अनुसंधानों में किया जाता है। हालांकि भारतीय मनोवैज्ञानिकों ने अनेक परीक्षण अपनाए हैं किन्तु अभी और भी अपेक्षित हैं।
- मनोवैज्ञानिकों ने उपलब्धियों, व्यवहार और व्यक्तित्व व कौशल सीखने की योग्यताओं को मापने के लिए भी टेस्ट विकसित किए हैं।

पाठांत प्रश्न

1. मनोवैज्ञानिक जिन विभिन्न प्रकारों से बुद्धि के विचार को प्रकट करते हैं उनके विषय में बताओ।
2. बुद्धि को मापने में प्रयुक्त होने वाले मनोवैज्ञानिक टेस्ट की विशिष्टताएं बताएं।
3. किसी एक बुद्धि परीक्षण की व्याख्या करें तथा उसके संभावित उपयोगों की चर्चा करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

15.1

1. ख   2. क   3. क   4. ख

15.2

1. घ   2. ख   3. घ   4. घ   5. ग

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. भाग 15.3 देखें।
2. भाग 15.4 देखें।
3. भाग 15.4 और 15.5 देखें।

16

आत्म क्या है?

आत्म हमारे दैनन्दिन व्यवहार का केंद्र बिंदु है और हम सभी अपने बारे में प्रत्यक्षीकरण एवं विश्वासों का एक समुच्चय रखते हैं। यह आत्म संप्रव्यय व्यवहार के संयोजन और अभिप्रेरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह जीवन के प्रारंभ में विकसित होने लगता है। विकसित होने के साथ ही हम में आत्मसजगता का बोध आने लगता है। वास्तव में, हम सभी अनुभवों में व्यवस्त होते हैं जो हमारे आत्म बोध को बढ़ाते हैं। रोजर्स के अनुसार हम लोगों से सकारात्मक सम्मान चाहते हैं। दूसरे शब्दों में दूसरे लोगों द्वारा प्रेम और सम्मान पाने की प्रबल इच्छा होती है। आत्म का अध्ययन और इसका कार्य करना एक आकर्षित करने वाला विषय है। इस पाठ में आप जान पाएंगे कि किस प्रकार आत्म का संप्रव्यय निर्माण होता है और आत्म के विभिन्न आयाम मानव व्यवहार से संबंधित हैं।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आप कर सकेंगे :

- आत्म के सम्प्रव्यय की व्याख्या;
- भारतीय दष्टि से कल्पित आत्म के विभिन्न स्तरों की व्याख्या;
- आत्म के विभिन्न पक्षों का वर्णन;
- आत्म सजगता के मूल्य को समझना; और
- आत्म का अन्य प्रक्रियाओं से संबंध का वर्णन।

16.1 आत्म का संप्रत्यय

यदि कोई पूछता है : आप कौन हैं? हम बहुधा शारीरिक आकति, विशेषक गुणों, लक्ष्यों और अभिप्रेरकों आदि का वर्णन कर देते हैं। आत्म संप्रव्यय विविध सूचनाओं का संग्रह है। यह मनोवैज्ञानिक कार्यो के केंद्रीय पक्ष को बनाता है। तथापि इसकी परिभाषा अनेक दष्टिकोणों से दी गई है। इन दष्टियों की गहन जांच से पता चलता है कि आत्म एक कर्ता के साथ–साथ वस्तु है। आत्म के अन्तर्गत व्यक्ति का चिंतन, अनुभूति और कार्य के कर्ता का रूप आता है। इस प्रकार जब मैं क्रोध का अनुभव करता हूँ या स्वतंत्रता के विचार के बारे में सोचता हूँ, वह "मैं" है आत्म कर्तारूप में। दूसरी ओर आत्म कारक के रूप में आत्म के बारे में दूसरे व्यक्ति का दष्टिकोण या "मुझे" है। हाल के वर्षो में शोधकर्ताओं ने आत्म की अभिव्यक्तियाँ या मानसिक प्रतिमानों को समझने का प्रयास किया है।

आत्म का अनुभव अति सामान्य किंतु जटिल दश्य घटना है। इसकी संरचना और विषयवस्तु समाज और संस्कति, जिसमें लोग रहते हैं, द्वारा निर्मित होती है। सांस्कतिक संदर्भ पर आधारित लोग विश्व का विभाजन "आत्म" और "अनात्म" श्रेणियों में करते हैं। व्यक्तिवादी संस्कतियों में लोग स्वतंत्र आत्म प्रत्यय को वरीयता देते हैं जबकि समूहवादी संस्कतियों में आत्मप्रत्यय के अंतनिर्भर को वरीयता देते हैं। स्वतंत्र आत्म प्रत्यय आत्म को सीमित, अलग और व्यक्तिक इकाई मानता है जो व्यक्ति की समस्त क्रियाओं के केंद्र में होता है। इसके विपरीत अंतर निर्भर आत्म प्रत्यय जुड़ाव, अंतर निर्भरता और सहभागिता पर बल देता है। इस अर्थ में आत्म और अनात्म की सीमायें कुछ अंश तक एक दूसरे को ढंक लेती हैं। फिर भी यह देखा जा सकता है कि आत्म प्रत्यय की दो विधियाँ विस्तत दष्टिकोण और किसी–किसी संस्कति में लोग दोनों प्रत्ययों को विभिन्न अंशों में प्रयोग करते हैं।

कुछ शोधकर्ता सोचते हैं कि आत्म का विचार सामाजिक अंतःक्रिया में उदित होता है। विशेष रूप से जब किसी बच्चे को कोई संबोधित करता है तब वह आत्म के बारे में सोचने लगता है। इस तरह आत्म सामाजिक अनुभव में जन्म लेता है। धीरे–धीरे लोग आत्म के विशिष्ट दष्टिकोण का आंतरीकरण कर लेता है जो व्यवहार को प्रभावित करने का एक सशक्त साधन बन जाता है। हमारे आत्म का कुछ भाग व्यक्तिगत होता है जिसके बारे में केवल हम जानते हैं। दूसरा भाग सार्वजनिक होता है जिसे दूसरे लोग जानते हैं। आत्म का एक भाग और भी है जो एक समूह की हमारी सदस्यता से आता है। इस आत्म को समूहगत आत्म या सामाजिक पहचान कहा जाता है।

16.2 आत्म के स्तर

आत्म विभिन्न स्तरों पर अनुभव किया जाता है, विलियम जेम्स, जिसने आत्म का गंभीर अध्ययन प्रारंभ किया, भौतिक आत्म, सामाजिक आत्म और आध्यात्मिक आत्म के बारे में

बताता है। नइसर पर्यावरणीय आत्म की बात करता है। आइये इन प्रकारों के बारे में और अधिक जानकारी प्राप्त करें। पर्यावरणीय आत्म उस आत्म की ओर संकेत करता है जो देश–काल में भौतिक रूप से पहचान में सम्मिलित होता है। अंतर–वैयक्तिक आत्म में वह आत्म सम्मिलित होता है जो सामाजिक संबंधों में विद्यमान रहता है जब हम दूसरे के साथ अंतःक्रिया करते हैं। व्यापक आत्म वह आत्म है जो हमारी स्मति में रहता है। यह वैयक्तिक और व्यक्तिगत है। अंत में संप्रत्यात्मक आत्म वह विचार है जो एक व्यक्ति के मन में रहता है। हम सभी विचारों का एक समूह बना लेते हैं। आत्म के वर्ग में क्या सम्मिलित किया जा सकता है। इस प्रकार संप्रत्यय करना प्रत्येक संस्कति में एक निश्चित ढंग से पोषित होता है। यह आत्म के संबंध में विचारों का एक व्यापक जाल है। इस बिंदु को स्पष्ट करने के लिए हम भारत में विकसत पंचकोश के प्रत्यय पर विचार कर सकते हैं। यहाँ पर कोश का तात्पर्य प्याज की परतों की भाँति परतों या स्तरों से है। जीव ऐसे पाँच कोशों से बना है और आत्म का विचार पदानुक्रम में संगठित बहुस्तरीय रचना के रूप में होता है। इन कोशों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है :

1. **अन्नमय कोश :** इसके अंतर्गत भौतिक शरीर आता है। यह अस्तित्व की सबसे बाहरी परत है। इसे अन्नमय इसलिए कहते हैं क्योंकि यह हम जो अन्न खाते हैं उससे बनता है।

2. **प्राणमय कोश :** यह परत जीवन (प्राण) से संबंधित है और यह श्वासक्रिया तथा ऊर्जा उत्पन्न करने वाली प्रक्रिया द्वारा निरूपित होता है। पांच प्रभावक भी इसी में सम्मिलित होते हैं।

3. **मनोमय कोश :** यह ज्ञानेंद्रियों से बना हुआ है। यह अहं की जगह है और यह व्यक्तिगत संलग्नता की ओर ले जाता है जो लोगों को इच्छाओं और कर्मों के बंधन में डालता है।

4. **विज्ञानमय कोश :** यह पाँच ज्ञानेंद्रियों एवं बुद्धि से बना है यह सांसारिक जीवन को व्यवस्थित करता है। इसमें विद्यमान "मैं–पन" का भाव जीव को पूर्व कर्मों से जोड़ता है। अहंकार की भावनायें भी उत्पन्न होती हैं।

5. **आनंदमय कोश :** यह आनंद की परत है। आनंद की अनुभूति का आध्यात्मिक आधार भी होता है। इच्छित वस्तु की प्राप्ति से मिला सुख भी इसी का भाग है।

पाठगत प्रश्न 16.1

उपयुक्त शब्दों से रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

1. वैयक्तिक संस्कति में लोग–––––––––––––– को वरीयता देते हैं जबकि समूहगत संस्कति में वे ––––––––––– को वरीयता देते हैं।

2. ———————————— ने भौतिक आत्म, सामाजिक आत्म और आध्यात्मिक आत्म की बात कही है।

3. भारतीय विचारों में वर्णित पंचकोशीय सिद्धांत के अनुसार अन्नमय कोष में ———————————— सम्मिलित होता है।

16.3 आत्म के पक्ष

आत्म के मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में शोधकर्ताओं ने आत्म के अनेक पक्ष खोज निकाले हैं। इनके अनुसार आत्म बहुमुखी है। जैसा कि आप अग्रलिखित वर्णन में पायेंगे, आत्म के बारे में हमारे विचार, इनका मूल्यांकन, इसका प्रस्तुतीकरण और इसका लोगों के बीच विभिन्न निरीक्षण और महत्वपूर्ण तरीकों से व्यवहार के रूप प्रदान करना है। वास्तव में लोगों द्वारा आत्म के बारे में रक्खे विचार व्यक्तिगत जीवन को रूप प्रदान करते हैं और संगठित करते हैं और सामूहिक जीवन में भाग लेने का अवसर देते हैं।

आत्म सम्मान

यह आत्म संप्रत्यय का मूल्यांकन करने वाला घटक है। यह मूल रूप से आंतरीकत सामाजिक निर्णयों से और वैयक्तिक गुण कितने सार्थक हैं, के विचारों से संबद्ध है। आत्म सम्मान किसी के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य में एक महत्वपूर्ण कारक है। लोग जो अपने बारे में अच्छा अनुभव करते हैं या उच्च आत्म सम्मान रखते हैं, वे उन लोगों की अपेक्षा जो निम्न आत्म सम्मान वाले होते हैं अधिक क्रियाशील, अभिप्रेरित, आग्रही और प्रसन्न होते हैं। यह देखा गया है कि अप्रसन्नता और निराशा निम्न आत्म सम्मान से संबंधित होते हैं। इस प्रकार हमारा अपने भावात्मक मूल्यांकन, सकारात्मक और नकारात्मक दोनों का उस व्यवहार के लिए जो हम भविष्य में करने जा रहे हैं, के महत्वपूर्ण परिणाम होते हैं। शोधों ने दर्शाया है कि निम्न आत्म सम्मान का संबंध अवसाद और आत्म संशय से है।

आत्म सामर्थ्य

आत्म सामर्थ्य हमारे उस विश्वास की ओर संकेत करती है हम जिसे प्राप्त करने योग्य हैं। दूसरे शब्दों में इसका संकेत किसी व्यक्ति की प्रत्यक्ष योग्यता की ओर है। आत्म–सामार्थ्य निश्चित करते हैं कि हम पर्यावरण और दूसरे लोगों के साथ कैसे अंतःक्रिया करते हैं। निम्न आत्म सामर्थ्य वाले बच्चों की अपेक्षा उच्च आत्म सामर्थ्य वाले बच्चे समस्याओं का शीघ्र समाधान कर लेते हैं। बन्दुरा के अनुसार आत्म सामर्थ्य विश्वास में निम्नांकित चार मुख्य प्रभावों की शक्ति होती है –

(क) **संज्ञानात्मक :** यह विचार प्रतिकतियों पर प्रभाव की ओर संकेत करता है। आत्म सामर्थ्य योग्यता के मूल्यांकन और प्रयास करने की तैयारी को प्रभावित करती है।

(ख) **अभिप्रेरणात्मक :** यह प्रभावित करती है कि हम कब तक प्रयास करते रहेंगे।

(ग) **भावात्मक :** यह तनाव, चिंता और नियंत्रण की भावना से संबंध रखती है।

(घ) **चयन :** इसके अंतर्गत चुनौतीपूर्ण क्रियाओं का चुनाव आता है।

आत्म प्रस्तुतीकरण

यह व्यवहारात्मक आत्म अभिव्यक्ति से संबंध रखता है। हम बहुधा उन प्रतिमाओं से संबंधित होते हैं जिन्हें हम दूसरे के सामने प्रस्तुत करते हैं। प्रसाधनों और फैशन उद्योग का बढ़ता महत्व हमारे अपने शारीरिक रूप के बारे में चिंता की सीमा को स्पष्टतः प्रदर्शित करता है। हम अक्सर अपने उन प्रभावों से संबद्ध रहते हैं जो हम सार्वजनिक क्षेत्र में प्रेषित करते हैं। तकनीकी रूप में आत्मप्रस्तुतीकरण शब्द का अर्थ वे उपाय हैं जो लोग अपने को दूसरों की सोच के अनुसार ढालने के लिए प्रयोग करते हैं। यदि जीवन एक नाटक है तो हम पटकथा से ली गई किसी पंक्ति को अभिनीत करते हैं। शोधकर्ताओं ने उस प्रक्रिया को अध्ययन करने का प्रयास किया है जिसके द्वारा हम दूसरों की सोच के अनुसार स्वयं को ढालने का प्रयास करते हैं। आत्मप्रस्तुतीकरण के अनेक रूप हो सकते हैं। यह चेतन या अचेतन, सही या गलत धारणा देने वाली और वास्तविक दर्शकों या स्वयं के लिये हो सकती है। सामान्य रूप से आत्मप्रस्तुतीकरण के लिए दो मुख्य अभिप्रेरकों की पहचान की गई है। इसमें रणनीतात्मक आत्मप्रस्तुतीकरण और आत्म–सत्यापन आते हैं। रणनीतात्मक प्रस्तुतीकरण शक्ति, प्रभाव और सहानुभूति प्राप्त करने के लिए दूसरों पर प्रभाव बनाने का प्रयास करना है। अपना निजी लाभ और आत्म प्रोन्नति अक्सर हमें दूसरों की दष्टि में सम्मानित और अच्छा बना देते हैं। आत्म सत्यापन लोगों को अपने आत्म संप्रत्यय को दढ़ करने में सहायता करता है।

आत्म निरीक्षण

आत्म निरीक्षण का अर्थ उस सीमा से है जहाँ तक बाह्य परिस्थिति और दूसरों की प्रतिक्रिया व्यक्ति को व्यवहार को नियमित करने में सहायता करती है। राजनीतिज्ञ, बिक्री कार्यकर्ता, और कलाकार उच्च आत्म निरीक्षण करने वाले व्यक्ति हैं। निम्न आत्मनिरीक्षण वाले व्यक्ति अपने व्यवहार को विश्वास, धारणा अभिरूचि जैसे कारणों के आधार पर नियमित करते हैं। यह देखा गया है कि उच्च आत्म निरीक्षण वाले लोग दूसरों की ओर अधिक ध्यान देते हैं जबकि निम्न आत्म निरीक्षण वाले लोग स्वयं पर अधिक ध्यान देते हैं। उच्च आत्म निरीक्षण वाले व्यक्ति मित्र बनाने के लिए व्यक्ति के कार्य संपादन पर ध्यान देते हैं जब कि निम्न आत्म निरीक्षण वाले मित्र बनाने में अपनी पसंद को वरीयता देते हैं। वे, जिन का आत्मनिरीक्षण उच्च श्रेणी का है, अपनी संपूर्ण योग्यता, जिसका उपयोग कर सकते हैं, का आकलन रखते हैं। वे रणनीतात्मक आत्मप्रस्तुतीकरण के संबंध में बहुत भावुक होते हैं।

आत्मचेतना

यदि हम अपने दैनिक जीवन की जांच करते हैं तो हम अपने को बहुत सी क्रियाओं में व्यस्त पाते हैं। इन क्रियाओं के बीच कभी–कभी हम अपने आप से दूर होते हैं। अपने बारे में हम बहुत कम सोचते हैं। दूसरे शब्दों में हम हमेशा आत्म–केंद्रित नहीं होते। फिर भी कुछ घटनायें हम को स्वयं की ओर लौटने को मजबूर कर देती है। इस तरह हम जब शीशा देखते हैं, स्वयं से बात करते हैं, श्रोताओं या कैमरे के समुख या किसी समूह में एक महत्वपूर्ण स्थिति में होते हैं हम आत्म सजग हो जाते हैं। जब हम आत्म सजग होते हैं हम अपने आंतरिक मानक से अपने व्यवहार की तुलना करने लगते हैं। इस तुलना से नकारात्मक अंतर मिलता है। ऐसी परिस्थितियों में हमारा आत्मसम्मान घटने लगता है। इस स्थिति से निपटने के लिए हमें आत्म अंतर को कम करना चाहिए या आत्म सजगता को स्थिति से स्वयं को हटा लेना चाहिए। यह देखा गया है कि कुछ लोगों का स्वभाव अपने विचारों और भावनाओं का आत्मनिरीक्षण (व्यक्तिगत आत्मचेतना) का होता है है जब दूसरों का स्वभाव बाहरी सार्वजनिक धारणा (सार्वजनिक आत्म चेतना) के प्रति सजग होना होता है।

16.6 आत्म की सजगता : आत्म को आँकने में हम कितने सही होते हैं ?

कभी–कभी यह मान लिया जाता है कि हम अपने बारे में बहुत अच्छी तरह जानते हैं। किंतु वास्तव में यह सही नहीं है। अध्ययनों से पता चलता है कि अपने आत्म संप्रत्यय के बारे में ऐसे बहुत से पक्ष हैं जो हम जानते हैं और उनके बारे में दूसरे लोग भी जानते हैं। दूसरे शब्दों में यह सार्वजनिक है। किंतु निम्नांकित तीन और भी संभावनायें हैं :

1. आत्म के कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जो वही व्यक्ति जानता है और दूसरे उनसे अनभिज्ञ होते हैं।
2. आत्म के कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जो व्यक्ति स्वयं नहीं जानता अपितु दूसरे लोग जानते हैं।
3. आत्म की कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जो व्यक्ति न स्वयं जानता है और न दूसरे ही जानते हैं।

आप सुविधा से ऐसी परिस्थितियों की कल्पना कर सकते हैं जहाँ व्यक्ति की जानकारी में और दूसरों की जानकारी में या अनजाने में विशेषताओं में किसी प्रकार की असंगति हो। स्वस्थ जीवन जीने के लिए व्यक्ति की विशेषताओं की उचित प्रशंसा होनी चाहिए। यह आकलन सत्य पर आधारित होना चाहिए। यह किसी की शक्तियों और दुर्बलताओं के निष्पक्ष ज्ञान और समझ पर आधारित है, जिससे उचित कार्य विधि की योजना की जा सके।

जब हम आत्म की चर्चा कर रहे हों इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बहुधा लोग स्वयं के प्रति पूर्वाग्रह रखते हैं। इससे लगता है कि अपने को बचाने की चेष्टा करते हैं और चीजों को इस तरह देखते हैं कि आत्म की सकारात्मक विशेषताओं में वद्धि हो गई है। उदाहरण के लिए किसी कार्य में सफलता के लिए अपनी योग्यता, प्रयास और विशेषताओं को सराहते हैं और सफलता के लिए अवसर या भाग्य जैसे कारकों की बात करते हैं। हर व्यक्ति दूसरों से अपने लिये सकारात्मक प्रशंसा चाहता है चाहे वह सही हो या गलत। यह स्वयं के प्रति गलत धारणा के निर्माण और इससे संबंधित अनेक समस्याओं की ओर ले जाता है।

पाठगत प्रश्न 16.2

कालम में दिये गये शब्दों से कालम ब के वर्णन का मिलान कीजिये :

कालम अ	कालम ब
क. आत्म सम्मान	(1) आत्म की व्यवहार परक अभिव्यक्ति
ख. आत्म सामर्थ्य	(2) वह सीमा जहाँ तक बाह्य परिस्थिति और दूसरों की प्रतिक्रियायें व्यक्ति के व्यवहार को नियमित करने में सहायता कर सकती हैं।
ग. आत्म प्रस्तुतीकरण	(3) आत्म संप्रत्यय का मूल्यांकन–घटक
घ. आत्म निरीक्षण	(4) स्वयं के बारे में सोचना
ड. आत्म चेतना	(5) अपनी योग्यता पर विश्वास

16.7 आत्म का अन्य प्रक्रियाओं से संबंध

एक क्षण का चिंतन यह स्पष्ट कर देगा कि आत्म लगभग सभी प्रकार के मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में संलग्न है। हमारा सीखना, प्रत्यक्षीकरण, अभिप्रेरण, स्मति, सभी आत्म की स्थिति और प्रकति से आकार पाते हैं। व्यक्ति को इस तथ्य को पहचान लेना चाहिए कि ये सभी और अन्य मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें यांत्रिक नहीं हैं। ये आत्म की क्रियायें या कार्य हैं। उदाहरण के लिए जब कोई अपने को दाँव पर लगा हुआ पाता है तब वह इससे निपटने का अधिकतम प्रयास करता है। इसी तरह हम वस्तुओं को देखते और प्रत्यक्ष करते हैं और लोग उस तरीके से काम करते हैं जो उनके अनुकूल होता है।

हाल के वर्षों में शोधकर्ता आत्म प्रत्यय या आत्म के संबंध में उनके विचारों को विभिन्न मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं से संबंधित करने में रूचि लेने लगे हैं।

ऐसा पाया गया है स्वतंत्र आत्म प्रत्यय वाले लोग अपनी आंतरिक विशेषताओं और महत्वपूर्ण लक्षणों पर जोर देते हैं। इसके विपरीत अंतर्निर्भर आत्म वाले लोग संबंधों और संदर्भों के बारे में ज्यादा सोचते हैं। इसी तरह दूसरे लोगों के व्यवहार की व्याख्या करते समय अंतर्निर्भर आत्म वाले लोग परिस्थितिजन्य कारकों के महत्व को पहचानते हैं। शोध ने दर्शाया है कि परिस्थितिजन्य और संदर्भ पर निर्भर व्याख्यायें अधिकतर अमरीकियों की तुलना में भारतीय लोगों द्वारा प्रयोग किये जाते हैं।

इस संबंध में आत्म संप्रत्यय में सांस्कतिक विभेदों और विभिन्न प्रक्रियाओं के लिए इसके परिणामों पर ध्यान दिया गया है। एक पूर्व के अनुभाग में इस ओर संकेत किया गया था कि आत्म संप्रत्यय के ये दो प्रकार हैं स्वतंत्र और अंतर्निर्भर। आइये हम जांच लें कि संप्रत्यय के ये दोनों प्रकार संज्ञान, अभिप्रेरण और संवेग से किस प्रकार संबंधित हैं।

आत्म और संज्ञान

आत्म संप्रत्यय के संज्ञान पर प्रभाव विभिन्न तरीकों से पाये जाते हैं। यह पाया जाता है कि स्वतंत्र आत्म–प्रत्यय वाले व्यक्ति अपने आंतरिक गुणों को महत्वपूर्ण मारते हैं। जबकि इसके विपरीत अंतः निर्भर प्रत्यय वाले व्यक्ति समाज एवं संदर्भ पर ज्यादा निर्भर होते हैं।

आत्म और संवेग

कुछ संवेग आंतरिक विशेषताओं पर जोर देते हैं। उदाहरण के लिए अहंकार या श्रेष्ठता की भावना बहुधा तब पाई जाती है जब व्यक्ति कोई कार्य पूर्ण कर लेता है। इसी तरह जब व्यक्तिगत उद्देश्य या इच्छायें (आंतरिक विशेषतायें) अपूर्ण रह जाती हैं तो भग्नाशा होती है। इन परिस्थितियों में संवेगात्मक अनुभव आत्म को सामाजिक संबंधों से अलग कर देते हैं। दूसरी ओर कुछ सकारात्मक संवेग होते हैं जैसे मित्रता की भावना या कत्यज्ञता या सम्मान की भावना। ऐसे संवेग तभी घटित होते हैं जब व्यक्ति दूसरों के निकट या रूचि के अनुकूल संबंध में होता है। ऐसे संवेगों की अनुभूति अंतरवैयक्तिक जुड़ाव को उन्नत बनाते हैं। यह बात नकारात्मक संवेगों के लिए भी सच है जैसे ऋणी होने या अपराध की भावना। यह इसलिये होती है क्योंकि दूसरों से संबंध बने नहीं रहते। संवेगों का यह वर्ग सामाजिक संलग्न संवेग दर्शाते हैं। ऐसा पाया जाता है कि अंतर्निर्भर आत्म संप्रत्यय वाले व्यक्ति स्वतंत्र आत्म संप्रत्यय वाले व्यक्तियों की अपेक्षा सामाजिक संलग्न संवेग का अनुभव अक्सर करते हैं।

आत्म और अभिप्रेरण

प्रायः ऐसा सोचा गया है कि अभिप्रेरण का मुद्दा व्यक्ति की आंतरिक प्रक्रियाओं से संबंधित है। आवश्यकताओं और अभिप्रेरकों के विचार इन्हीं प्रक्रियाओं से संबंधित है। यह दष्टिकोण स्वतंत्र आत्म संप्रत्यय के बहुत निकट है। ये सभी व्यक्ति या 'मुझ' से जुड़ी

अभिप्रेरण की ओर संकेत करते हैं। आत्मनिर्भर आत्म के बारे में यह देखा गया है कि व्यवहार महत्वपूर्ण दूसरों जैसे माता–पिता, शिक्षक, अन्य पारिवारिक सदस्य दूसरों के प्रति दायित्वों और कर्तव्यों की अपेक्षाओं द्वारा निर्देशित होते हैं। इस संदर्भ में उपलब्धि अभिप्रेरक को अध्ययनों से उपयोगी उदाहरण मिलते हैं।

उपलब्धि अभिप्रेरक "श्रेष्ठ बनने की इच्छा" से संबंधित। यह इच्छा सभी संस्कतियों में मिलती है। उन संस्कतियों में जिनमें स्वतंत्रा आत्म प्रभावी होता है यह आवश्यकता व्यक्तिगत होती है, जबकि उन संस्कतियों में जहाँ अंतर्निर्भर आत्म का प्रभाव होता है यह आवश्यकता अंतर्वैयक्तिक और सामाजिक रूप से निर्मित होती है। भारत के संदर्भ में जहाँ सामाजिकता और अंतर्निर्भर आत्म का प्रभाव होता है सामाजिक दिलचस्पी उपलब्धि के बारे में चिंतन का महत्वपूर्ण पक्ष उभर कर आती है।

पाठांत अभ्यास

1. आत्म के संप्रत्यय का वर्णन कीजिए।
2. भारतीय दर्शन में वर्णित पाँच कोशों के नाम बताइये।
3. आत्म मूल्यांकन की संभव विधियों का वर्णन कीजिये।
4. आत्म संप्रत्यय संवेग और अभिप्रेरण से संबंध की चर्चा कीजिए

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

16.1

1. स्वतंत्र, अंतर्निर्भर
2. विलियम जेम्स
3. भौतिक शरीर

16.2

(क) 3

(ख) 5

(ग) 1

(घ) 2

(ङ.) 4

पाठांत अभ्यास के लिए संकेत

1. संदर्भ अनुभाग 16.1
2. संदर्भ अनुभाग 16.2
3. संदर्भ अनुभाग 16.4
4. संदर्भ अनुभाग 16.5

17

आत्म और मनोवैज्ञानिक प्रक्रम

जैसे–जैसे लोग बड़े होते हैं वे अपने आत्म का अपना संप्रत्यय विकसित कर लेते हैं जो यह निश्चित करता है कि वे दूसरों से कैसे सम्बन्ध बनाते हैं ओर विभिन्न क्रियायें सम्पादित करते हैं। यद्यपि कि हमारा आत्म संप्रत्यय स्थिर नहीं रहता, अपितु जीवन को विभिन्न अवस्थाओं में बदलता रहता है। हम दूसरों को व्यक्ति के रूप में प्रत्यक्षीकत करते हैं, उनसे सम्बन्ध बनाते हैं और मैत्री और अन्य प्रकार के निकट के सम्बन्ध विकसित करते हैं। हम आत्म संयम भी विकसित करते हैं और नैतिक रूप से विकसित होते हैं। इस प्रकार आत्म केवल व्यैक्तिक कार्यों से सम्बन्धित अपना गुण नहीं रहता। यह उसके पार जाता है और जिस सामाजिक संसार में हम रहते हैं से सम्बन्धित करता है। वास्तव में, यह, आत्म सामाजिक संसार से परस्पर आदान–प्रदान के रूप में जोड़ता है। यह सामाजिक संसार के साथ हमारी अन्तःक्रियाओं को प्रभावित करता है और उससे प्रभावित होता है। इस प्रक्रम में आत्म भी सामाजिक संसार से प्रभावित होता है। इस पाठ में आप कार्यरूप में आत्म के बारे में पढ़ने जा रहे हैं और देखेंगे कि हम दूसरों के साथ कैसे दिखते और और अन्तःक्रिया करते हैं।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे:

- सम्पूर्ण जीवन विस्तार में आत्म का विकास स्पष्ट करने में;
- आत्म संयम के अर्थ को समझने में;
- नैतिक विकास की अवस्थाओं को स्पष्ट करने में; और
- सामाजिक पक्ष के व्यवहार के विकास की अवस्थाओं का वर्णन करने में।

17.1 जीवन विस्तार के परिप्रेक्ष्य में आत्म

हम में से अधिकांश इस बात से सहमत हैं कि मानव प्राणी का आत्म होता है। इसे एक भिन्न स्वतंत्र अस्तित्व स्वयं के गुणों और कार्यों वाला माना जाता है। बहुधा इसे हमारे जीवन के अनुभवों का स्वाभाविक पक्ष समझा जाता है। यद्यपि यह मान्यता आधारहीन लगती है जब हम बच्चों के जीवन को समझने का प्रयास करते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि प्रथम वर्ष के मध्य में आत्म पहचान का कुछ अपरिष्कत विचार पाया जाता है। इसी काल में बच्चे दूसरे शिशुओं के आवाजों और मुखाकति की प्रतिमाये बनाने लगते हैं। कभी–कभी इसे आत्म–अन्य भेद के आरंभ का संकेत व्याख्यायित किया जाता है।

शैशव: शीशे का प्रयोग करते समय यह पाया गया है कि विभिन्न आयु समूहों के बच्चे देखी गई प्रतिमाओं के प्रति भिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया करते हैं। 15 से 24 मास के मध्य शिशु दश्यगत आत्म संप्रत्यय बनाते पाये जाते हैं। वीडियो टेप का प्रयोग करके देखा गया है कि तीन वर्ष के बच्चे को स्पष्ट आत्मज्ञान नहीं होता। चार और पाँच वर्ष के बच्चे अपना प्रतिनिधित्व अच्छी तरह कर पाते हैं। नये चलने वाले बच्चे दूसरे बच्चों को आयु और लिंग के आधार पर बांटने लगते हैं। बचपन से संवर्ग मूर्तरूप रहते हैं (जैसे स्वामित्व, जो कार्य वे कर सकते हैं)।

बचपन और किशोरावस्था: प्रारंभिक बचपन में बच्चे स्वयं को मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर स्पष्ट समझ शुरू करता है। वे अभिवत्तियों के बारे में सोचने लगते हैं। किशोरावस्था में आत्म का प्रतिनिधित्व और स्पष्ट और सूक्ष्म हो जाता है। वे अनुभव करते हैं कि वे सबके साथ और हर परिस्थिति में एक से व्यक्ति नहीं हैं। एरिकस्न के अनुसार पहचान किशोरावस्था में विकास का महत्वपूर्ण बिदु है। पहचान से एक स्थायी बोध आता है कि वह व्यक्ति कौन है और उसके मूल्य और आदर्श क्या हैं। बहुत से किशोर पहचान का संकट अनुभव करते हैं आत्म का एक तर्क संगत और बने रहने वाला बोध पाने में असफल रहते हैं। उन्हें अपनी भूमिका, मूल्य और व्यावसायिक चुनावों के प्रति वचनबद्ध रहने में कठिनाई अनुभव होती है। कुछ किशोर पर्याप्त आत्म खोज और अन्तर दर्शन के बारे में अपनी पहचान बनाते हैं। दूसरे बिना अधिक खोजबीन किये ही वचनबद्ध हो जाते हैं। इससे पहचान का विकास अवरुद्ध हो जाता है।

प्रारंभिक प्रौढ़ता: विकास की इस अवस्था में निकटता बनाम एकान्त के विरोध की चुनौती का सामना करना पड़ता है। निकटता का आशय है वचनबद्ध और टिकाऊ सम्बन्ध बनाना है। इसमें रोमांचकारी और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध आते हैं। विकासक्रम में व्यक्ति को माता/पिता, चाचा/चाची जैसा अपनी भूमिका को पुनःस्पष्ट करने की आवश्यकता होती है।

मध्य अवस्था: इस अवस्था में लोग अगली पीढ़ी से सम्बन्ध और समाज के प्रति अपने योगदान की चिन्ता करने लगते हैं। इस अवस्था में व्यक्ति उत्पत्ति बनाम ठहराव के संकट का सामना करता है। लोगों से अधिक से अधिक उत्पादक क्रियाओं में संलग्न

रहने की अपेक्षा की जाती है। वास्तव में 'मध्य जीवन संकट' एक विख्यात पदबन्ध हो गया है। यह जीवन की सामान्य लय में बाधा उत्पन्न कर देता है। कुछ लोगों के लिये परिवर्तन धीमी गति से होते हैं और दूसरों के लिये इनका रूप उग्र होता है।

वद्धावस्थाः आयु संभाविता में बढ़ोत्तरी के साथ ही वद्ध लोगों की आबादी में बढ़ोत्तरी हुई है। वद्ध लोगों के सामने सम्पूर्णता बनाम निराशा की बहुत बड़ी चुनौती है। शारीरिक स्वास्थ्य में कमी, सहयोग में कमी और शारीरिक रोग वद्ध लोगों के जीवन को कष्टप्रद बना देते हैं। सामाजिक गतिशीलता और परम्परागत निम्नस्तरीय आत्म संप्रत्यय से पीड़ित रहते हैं। फिर भी जो अपने पिछले जीवन को यह सोचकर कि उन्होंने अच्छा जीवन जिया है, सन्तोष का अनुभव करते हैं, उन्हें सम्पूर्णता की अनुभूति होती है। दूसरों को पछतावा और निराशा हो सकती है।

इस प्रकार हम पाते हैं कि आत्म की धारणा जीवन यात्रा के बीच विभिन्न रूप ग्रहण करती है और महत्वपूर्ण परिवर्तनों के मध्य से गुजरती है। यह लोगों के अनुभवात्मक संसार में परिवर्तनों को व्यक्त करती है। फिर भी, लोगों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। यह एक शक्तिशाली बल के रूप में कार्य करती है जो व्यवहार को निर्देशित करती है और सामाजिक परिस्थितियों में अन्तःक्रियाओं को ढालती है। आत्म का रूपान्तरण होता है और व्यक्ति आत्म संरचना में बहुत से तत्व जुड़ते और निकलते हैं। अक्सर लोग आदर्श आत्मक के लिये प्रयास करते हैं। उनसे अपने समाज के स्वस्थ विकास में योगदान करने की अपेक्षा की जाती है।

महात्मा गांधी और मदर टेरेसा जैसे लोग मनोवैज्ञानिक दष्टि से बहुत सशक्त थे और उन्होंने समाज में अत्याधिक योगदान किया है। उत्तम रीति से विकसित विवेक उनका सबसे बड़ा गुण था। उनके विचार , वाणी और कार्य एक साथ होते थे। गांधी जी का विचार था कि सत्य की सदा विजय होती है इसलिये वे केवल सत्य की बोलते थे। वे जो कहते थे करते भी थे। मदर टेरेसा गरीबों और रोगियों के बारे में चिन्ता करती थी। वे उनके कल्याण के लिये कहती थी और इसी उद्देश्य के लिये उन्होंने सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। इसी प्रकार विश्व के बहुत प्रसिद्ध लोगों ने समाज के कल्याण के लिये बहुत योगदान किया है। ये सभी अपनी सत्यनिष्ठा के लिये जाने जाते हैं। भली प्रकार समन्वित लोग केवल अपने व्यक्तिगत विकास में ही नहीं किन्तु समाज के विकास में भी योगदान करते हैं। ऐसी सम्पूर्णता को प्राप्त करने के लिये प्रत्येक वयक्ति को अपनी संभाव्य कुशलताओं को विकसित करना चाहिये, आगे चलकर ये लोग मनोवैज्ञानिक और सामाजिक दष्टि से सक्षम हो जाते हैं और एक स्वस्थ जीवन जीते हैं। सामाजिक क्षमता प्राप्त करके और समाज को योगदान करके, ये लोगों का सम्मान प्राप्त करते हैं।

17.2 आत्म-संयम और इसका विकास

आत्म संयम अपने व्यवहार को अधिकतम संतुष्ट और पुरस्कत करने वाले व्यवहार को सीखने और नियमित करने का उपक्रम है। इस उद्देश्य के लिये लोग आत्म संयम के

लिये अनेक रणनीतियों का प्रयोग करते हैं। उदाहरण के लिये, एक मोटा व्यक्ति अपना वजन कम करने के लिए, एक लगातार धूम्रपान करने वाले को धूम्रपान कम करने और एक अत्याधिक तनावयुक्त व्यक्ति को तनाव कम करने के लिस आत्म संयम के तरीके सिखाये जाते हैं।

आत्म संयम के चरण: आत्म संयम के विकास में निम्नांकित महत्वपूर्ण चरण हैं:

1. **नियत कार्य का निष्पादन करना:** यह एक विशेष समस्या के समाधान के लिये किये गये कार्य की ओर संकेत करता है।
2. **निष्पादन और परिणाम का स्व-निरीक्षण करना:** इसका अर्थ है वास्तविक प्रेक्षण और किये गये कार्य का लेखा रखना।
3. **आत्म मूल्यांकन:** इसके अन्तर्गत स्वयं की क्षमता के बारे में अपने विश्वासों में संशोधन करना।
4. **आत्म-पुनर्बलन:** इसका अर्थ है उपलब्धि को स्वीकारना और सहमति देना है जो वास्तविक पुरस्कार या रचनात्मक आत्म कथन की ओर ले जा सकता है।

निम्नांकित उदाहरण में एक बच्चे को शान्त रहना और कठिन परिस्थिति पर नियंत्रण करना और प्रतिक्रिया के लिये उत्तेजित न होना सिखाया जाता है।

1. **उत्तेजना के प्रति तैयार करना:** बच्चे को कठिन परिस्थिति की प्रत्याशा करना सिखायें और उसे बताइये कि वह उत्तेजित न हो।
2. **कठिनाई का सामना करना:** कल्पना द्वारा अभिनय या अभ्यास, बच्चे को उत्तेजना का सामना करना सिखाया जाता है किन्तु उसी समय नियंत्रण में रहना जिससे वांछित अनुक्रिया हो सके।
3. **उत्तेजना से सफलतापूर्वक निपटना:** मांशपेशियों का कसाव, भय या क्रोध का आने पर बच्चे को शारीरिक अनुक्रिया के प्रति सजग किया जाता है और इनसे सफलतापूर्वक निपटने का कौशल सिखाना।
4. **परिणामों के बारे में सोचना:** बच्चे को उत्तेजना– सकारात्मक या निषेधात्मक से निपटने के परिणाम के बारे में सोचना सिखाया जाता है। बच्चे को स्वयं के बारे में, दूसरों की अनुक्रियाओं तथा अन्य परिणामों के बारे में अधिक सोचने को प्रोत्साहित भी किया जाता है। इसके लिये एक डायरी रखना, मित्रों से बात करना, माता–पिता से बात करना और सामान्यतः संभावनाओं के बारे में अधिक सजग होना हो सकता है।

आत्म निर्देशात्मक प्रशिक्षण (एस.आई.टी.): इस प्रकार का निर्देशन 'आत्म–वार्ता' अनुक्रियाओं पर जोर देकर कुशलता के मुख्य क्षेत्रों के विकास पर बल देता है। आत्म–निर्देशन के निम्नांकित चरण हैं:

1. समस्या को पहचानने का प्रशिक्षण
2. आत्म–प्रश्न विषयक कौशल का शिक्षण
3. अवधान का शिक्षण– उपयुक्त कौशलों पर जोर देना और प्रतिक्रिया करना

4. आत्म–पुनर्बलन कौशल का शिक्षण करना जिससे बच्चे अपनी अनुक्रियाओं का मूल्यांकन कर सकें और ग्रहण करने वाली अनुक्रियाओं को पुरस्कत कर सकें।
5. आत्म सुधार और सुफलतापूर्वक निपटने के विकल्प बच्चों को अपने व्यवहार का निरीक्षण करने, विकल्पों का मूल्यांकन करने और वैकल्पिक समाधान और पहुंचने के योग्य बनाते हैं।

बॉक्स 17.1: *आत्म निर्देशन एक उदाहरण*

1. समस्या की पहचानः आप लम्बे समय तक पढ़ने के लिए नहीं बैठ सकते।
2. प्रश्न वाचक कौशलः आपको यह कठिनाई कब से है? दिन के किस समय आपके साथ ऐसा होता है? क्या यह किसी विषय से सम्बन्धित है?
3. अवधानः (क) एक साथ केवल तीस मिनट तक बैठिये; (ख) पांच मिनट के लिए विश्राम लीजिये, पुस्तकों को हटाकर वह कीजिए जो आपको अच्छा लगता है (जैसे अपनी मां से गप–शप करना, रेडियो सुनना इत्यादि); (ग) पढ़ाई पर वापस आइये और स्वेच्छा से अपने अवधान को पढ़ाई की तरफ लाइये।
4. आत्म पुनर्बलनः (क) जब आपने कुछ समय के लिए अबाधित पढ़ाई कर ली है, आप अपने को यह कहकर पुरस्कत करें मैं इस काम को दस मिनट तक कर लिया है। अब मैं इसे बीस मिनट तक कर सकता हूँ, या जब आप कुछ दिनों बाद अपने उद्देश्य को पा लेते हैं तो आप वह काम करें जिसे करना आपको सबसे अच्छा लगता है, अपने को पुरस्कत करें। दूसरी ओर यदि आप अपने प्रयासों से बाधित होते हैं तो आप स्वयं को अपनी सबसे अधिक पसन्द के काम को छोड़कर दण्डित करें। (जैसे अपने प्रिय टी.वी. सीरियल को देखना)।
5. आत्म सुधार और सफलतापूर्वक निपटने का विकल्पः जब आप अनपेक्षित कार्य करें तो अपने को सुधारें। इसमें जब आप बाधित हों तो फिर से अपने कार्य पर ध्यान दें। बाधा से सफलतापूर्वक निपटने के लिये अपने पढ़ाई के स्थान में परिवर्तन कर सकते हैं जैसे पुस्तकालय जैसे शान्त स्थान पर चले जायें।

इस प्रकार आत्मोन्नति के लिये आत्म–नियंत्रण के तरीकों का प्रयोग किया जा सकता है।

पाठगत प्रश्न 17.1

1. आत्म–नियंत्रण से आप क्या समझते हैं?
2. संक्षेप में किन्हीं दो स्थितियों का वर्णन करें जिनमें आत्म नियंत्रण प्रभावी हो सकता है।

17.3 नैतिक विकास

''सही'' और ''गलत'' की धारणाओं का विकास सामाजिक विकास का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। ये धारणायें व्यक्ति को अपनी अभिरुचियों के सन्तुलन तथा दूसरों के होने में सहायता करती हैं। अन्य शब्दों में ऐसे नियमों को ग्रहण करना नैतिकता को सुगम बनाते हैं या नियामक स्तर जो लोगों के सामाजिक जीवन को संगठित करने में सहायक होते हैं। नैतिकता का विकास अवस्थाओं से होता है। दूसरे व्यक्तियों के विचार का विकास और परिप्रेक्ष्य लेना इसके विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। शैशवकाल में बच्चे सामाजिक अन्तःक्रिया को एक पारस्परिक प्रक्रम के रूप में पहचानना प्रारंभ करते हैं। लोगों के कार्य स्वयं अपने पर ही निर्भर करते हैं यह अनुभव करना एक बड़ी उपलब्धि है। प्रारंभ में आठ वर्ष की आयु तक बच्चे सीधी और मूर्तरूप लक्षणों की ओर ध्यान देते हैं और दूसरों की प्रशंसा करने में कठिनाई अनुभव करते हैं। धीरे–धीरे वे दूसरों के दष्टिकोण को समझना सीखते हैं। यह योग्यता बचपन से प्रारंभ होकर किशोरावस्था तक चलती है।

संज्ञानात्मक विकास की प्रतिकति को स्पष्ट करने का प्रयास करने वाले शोधकर्ताओं ने यह देखने का प्रयास किया है कि नैतिक तार्किकता कैसे विकसित होती है। पियाजे ने पाया कि नौ से दस वर्ष तक के बच्चे दबाव की नैतिकता दर्शाते हैं।

इस अवस्था में बच्चे सामाजिक नियमों की अनुरूपता को सोचते हैं। ऐसे नियम घटना के एक पक्ष पर ध्यान देते हैं और दूसरे को अनदेखा करते हैं। उदाहरण के लिए यदि बच्चे को यह तय करने को कहा जाय कि दण्ड का भागी कौन है, एक बच्चा जो अपनी प्रिय डिश चुराने के लिये रसोई में जाता है और उस जार तक पहुंचने में, जिसमें उसकी प्रिय डिश रखी है, कप तोड़ देता है, या दूसरा बच्चा जो नहीं जानता और अचानक दरवाजा खोल देता है और पांच कप तोड़ देता है जो दरवाजे के पास रखे थे।

छोटे बच्चे ने पहले बच्चे की अपेक्षा दूसरे वाले बच्चे को जिसने पांच कप तोड़े थे अधिक दण्ड प्रस्तावित करता है। बड़े बच्चों ने दूसरा तर्क अपनाया। वे व्यक्ति के इरादे के बारे में सोचते हैं और नियमों को अपरिवर्तनीय नहीं मानते। आवश्यकता पड़ने पर नैतिक नियम बदले जा सकते हैं। यह सहयोग की नैतिकता मानी जाती है। यदि हम बच्चों के तर्क की तुलना करें तो छोटे बच्चों की नैतिकता स्वाभाविक है।

सामाजीकरण के प्रक्रम में नैतिक विश्वास आत्मसात किये जाते हैं और वे नैतिक विकास का आधार बनाते हैं। नैतिक संप्रत्यय बच्चे में अति प्रारंभिक आयु से विकसित होने लगते हैं। प्रथम अवस्था में नैतिकता परिणामों पर आधारित होती है, अर्थात् लगभग सात वर्ष की आयु के पूर्व कार्यों को श्रेणीबद्ध रूप में देखते हैं, जो कार्य 'सकारात्मक' परिणाम दर्शाते हैं वे ''अच्छे'' और जो नकारात्मक परिणाम लाते हैं वे 'बुरे''। यह प्रतिकति वस्तुगत नैतिक रुझान कहलाती है। सात वर्ष की अवस्था के बाद हम विभिन्न कार्यों के पीछे की मंशा पर ध्यान देते हैं। इसे व्यक्तिगत नैतिक रुझान कहा जाता है और यह दस वर्ष की आयु के आस–पास विकसित होता है।

नैतिक तर्क तीन विभिन्न स्तरों से गुजरते हैं– पूर्व पारंपरिक अवस्था, पारंपरिक अवस्था और उत्तर पारंपरिक अवस्था।

पूर्व–पारंपरिक अवस्था में तर्क बहुत कुछ आत्म केन्द्रित होता है और व्यक्ति के व्यवहार के परिणामों पर ध्यान देता है। पारंपरिक अवस्था में तर्क मान्य नैतिक नियमों पर ध्यान देता है। बाद में किशोरावस्था में व्यक्ति पश्चात् पारंपरिक अवस्था में प्रवेश करते हैं जिसमें वे अमूर्त सिद्धान्तों पर निर्भर करते हैं। कोलबर्ग द्वारा नैतिक विकास की कल्पित अवस्थाओं का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जा रहा है।

पूर्व-पारंपरिक स्तर

प्रथम अवस्था: नैतिक निर्णय आज्ञाकारिता और दण्ड पर निर्भर करता है जो कार्य अधिकारी के प्रति आज्ञाकारिता दर्शाते हैं और व्यक्ति को दण्ड से बचने की अनुमति देते हैं, उन्हें ''अच्छा'' कहा जाता है।

दूसरी अवस्था: वे कार्य जो कि व्यक्ति की आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करते हैं ''अच्छे'' माने जाते हैं जो नहीं करते वे ''बुरे''।

पारंपरिक स्तर

तीसरी अवस्था: जो कार्य दूसरों के द्वारा अनुमोदित होते हैं वे ''अच्छे'' माने जाते हैं और जो अनुमोदित नहीं होते ''बुरे'' माने जाते हैं।

चौथी अवस्था: जिन कार्यों के द्वारा व्यक्ति ''अपना कर्तव्य पालन'' करता है या जो कानून और अधिकारी के प्रति सम्मान दर्शाते हैं ''अच्छे'' माने जाते हैं। जो कार्य इस कर्तव्य भाव का उल्लंघन करते हैं ''बुरे'' माने जाते हैं।

उत्तर पारंपरिक स्तर

पांचवी अवस्था: वे कार्य जो समुदाय की भलाई के अनुरूप होते हैं उन्हें ''अच्छा'' माना जाता है। जो कार्य समुदाय के कानूनों का पालन नहीं करते ''बुरे'' कहे जाते हैं।

छटी अवस्था: वे कार्य जो व्यक्ति के स्वचयनित न्याय के मानकों के अनुरूप होते हैं ''अच्छे'' कहे जाते हैं जो कार्य इन मानकों के अनुरूप नहीं होते ''बुरे'' कहे जाते हैं।

पाठगत प्रश्न 17.2

1. नैतिक रुझान को दिशानिर्देशन के वैकासिक स्वरूप की रूपरेखा प्रस्तुत कीजिए।

   ....

2. कोलबर्ग के अनुसार नैतिक तर्क कितने स्तरों से गुजरता है?

   ....

बाक्स 17.2

स्वयं प्रयास कीजिये

देखिये क्या आपने परवर्ती बचपन और किशोरावस्था के मध्य नैतिकता के प्रति अपनी अवधारणा में परिवर्तन अनुभव किये। आपने कबसे यह जानना शुरू किया कुछ बातें बुरी होने के कारण योग्य नहीं हैं जबकि अच्छी बातों को दुहराया जाता है।

उन लोगों की सूची बनाओ जो आपके नैतिक विकास के लिए उत्तरदायी हैं।

कोलबर्ग कुछ परिस्थितियों का प्रयोग करते थे जिनमें नैतिक दुविधा प्रस्तुत की जाती है और व्यक्ति का काम उस दुविधा का समाधान खोजना है। समाधान व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त नैतिक तर्क की अवस्था की ओर संकेत करता है। सामान्य रूप से नैतिक ढंग से कार्य करने में नैतिक तर्क की उच्च अवस्था के विचार की आवश्यकता है। अध्ययनों से पता चलता है कि जोखिम का प्रत्यक्ष स्वरूचि और सामाजिक परम्पराओं जैसे कारकों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अध्ययनों ने यह भी बताया है कि बच्चों का नैतिक व्यवहार भिन्न परिस्थितियों में भिन्न प्रकार का होता है। उदाहरण के लिये एक स्थिति (घर) में धोखा देना हो सकता है किन्तु स्कूल में नहीं। संकेत मिलता है कि परिस्थिति जन्य कारकों की अहं भूमिका होती है।

17.4 परिवार की भूमिका

हाल के अध्ययनों ने नैतिक विकास में परिवार की भूमिका को दर्शाया है। सही और गलत के सम्बन्ध में पारिवारिक आदान–प्रदान और माता–पिता के द्वारा नियमों की अभिव्यक्ति नैतिकता के विकास में योगदान करते हैं। उचित व्यवहार का विचार दो वर्ष की अवस्था में प्रारंभिक रूप से विकसित होने लगता है। माता–पिता के द्वार ग्राह्य व्यवहार पर बल नैतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवार के बाहर स्कूल, मित्र और पड़ोस भी नैतिकता के विकास में योगदान करते हैं।

गिलिगन का कहना है कि लड़के स्वतंत्र और उपलब्धि केन्द्रित सामाजिक होते हैं जबकि लड़कियां देख–भाल और उत्तरदायित्व का भाव रखते हुये सामाजिक होती हैं। नारीत्व को बहुधा आत्मत्याग और दूसरों की चिन्ता करने से जोड़ा जाता है।

यह भी ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि नैतिकता के प्रश्न विभिन्न संस्कतियों में भिन्न तरीकों से लिये जाते हैं। उदाहरण के लिये पाश्चात्य समाज में प्रचलित दष्टिकोण पाश्चात्य संस्कति से भिन्न अन्य संस्कतियों में उपयुक्त न समझे जा सकते हों। उदाहरण के लिये भारतीय संदर्भ में असंबद्ध वस्तुगत मूल्य महत्वपूर्ण हैं। ऐसे मूल्य मानवीय और आध्यात्मिक प्रतिष्ठा पर आधारित हैं।

17.5 सामाजिक वयवहार का पक्ष और विरोध

समाज के पक्ष में व्यवहार दूसरों को लाभ पहुंचाते हैं। इनमें दूसरों की परेशानियों में सहयोग, मदद करना और दुःख बांटना आते हैं। बच्चे सहानुभूति के विकास में चार

संभावित अवस्थाओं से गुजरते हैं जो उनके व्यवहार को समाज के पक्ष में संभव बनाते हैं।

प्रथम अवस्था में शिशुओं को आत्म और दूसरों में भेद करने में कठिनाई होती है। वे रोते हैं जब दूसरे रोते हैं और वे दूसरों के हंसने पर हंसते हैं। एक वर्ष बाद धीरे–धीरे उनमें दूसरों से भिन्न आत्म का बोध विकसित होने लगता है और यहां पर वे दूसरी अवस्था में प्रवेश करते हैं जिसे अहं केन्द्रित सोच कहा जाता है। वे दूसरों की उसी तरह मदद करते हैं जैसी वे अपने लिये दूसरों से चाहते हैं। इसके बाद तीसरी अवस्था आती है जिसमें वे बच्चे परिस्थिति विशेष सहानुभूति दर्शाते हैं। अन्त में जब वे चौथी अवस्था में पहुंचते हैं तब वे अपनी दुःख की अभिव्यक्ति दूसरों के दुःख के साथ करते हैं। वास्तव में चौथी अवस्था में सहानुभूति का केवल उपयुक्त प्रदर्शन ही दर्शाया जाता है, अर्थात् दूसरे लोग, उनसे जो उपयुह्म सहानुभूति युक्त प्रतिक्रिया दिखाते हैं, केवल संवेगात्मक समर्थन पाते हैं।

बच्चे सहायतापूर्ण व्यवहार परिचित लोगों के अनुकरण करके सीख सकते हैं। उत्तरदायित्व लेने, भूमिका निभाने, वांछित व्यवहार जब भी घटित होता है के पुनर्बलन के अवसर पुरोसामाजिक व्यवहार के विकास को मजबूत करेंगे।

समाज विरोधी व्यवहार के अन्तर्गत भगोड़ापन, अपचार, चोरी, विध्वंसक वत्ति और मान्य सामाजिक नियमों और रीतियों का उल्लंघन करने के अन्य रूप आते हैं। समाज विरोधी व्यवहार के कुछ मामलों के कारक तत्व पर्यावरणीय के बजाय व्यक्तिगत अधिक हो सकते हैं, जबकि अन्य मामलों में इसका उल्टा हो सकता है। फिर भी, ज्यादातर व्यक्तिगत और पर्यावरणीय प्रभावों का भिन्न अनुपात में सम्मिश्रण होता है, जो अपचारी व्यवहारों की ओर ले जाता है।

समाज विरोधी मनोवैज्ञानिक प्रबन्धन के अन्तर्गत सामाजिक रचनात्मक व्यवहार के लिए परामर्श और निर्देशन आत्मविश्वास प्रशिक्षण या सामाजिक कौशल प्रशिक्षण आते हैं जो उन्हें आक्रमक व्यवहार छोड़ने या आक्रमक व्यवहार को कुछ रचनात्मक व्यवहार में बदलने योग्य बना देंगे। यह विकासोन्मुख बच्चे के लिये तथा साथ ही समाज के लिये लाभप्रद होगा।

पाठगत प्रश्न 17.3

1. पुरोसामाजिक व्यवहार के दो उदाहरण दीजिये।
2. किन्हीं दो तकनीकों का उल्लेख कीजिए जो पुरोसामाजिक व्यवहार को मजबूत कर सकते हैं।
3. समाज विरोधी व्यवहार के कोई तीन उदाहरण दीजिये।

आपने क्या सीखा

- आत्म नियंत्रण एक प्रक्रम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार को इस तरह नियमित करना सीखता है जिससे उसे अधिकतम सन्तोष प्राप्त हो सके।
- लगातार धूम्रपान करना, भूख से ज्यादा खाना, अनियंत्रित व्यवहार कुछ ऐसी अनुक्रियायें हैं जिन्हें आत्म नियंत्रण द्वारा सुधारा जा सकता है।
- आत्म निर्देशन प्रशिक्षण आत्म नियंत्रण का एक तरीका है। यह आत्मवार्ता पर बल देता है।
- नैतिक विकास की आधारशिला उस समय रखी जाती है जब नैतिक विश्वास आत्मसात कर लिये जाते हैं। जीन पियाजे और कोलबर्ग विख्यात सिद्धान्तवादी हैं जिन्होंने नैतिक विकास पर अपने विचार रखे।
- पुरोसामाजिक व्यवहार एक अनुक्रिया है जो समाज के सदस्यों को उनके विकास में लाभ पहुंचाती है जो बदले में समाज को सकारात्मक दिशाओं में बढ़ने और विकसित होने योग्य बनाता है। असामाजिक व्यवहार वह है जो समाज कल्याण एवं विकास को बाधित करता है।

पाठान्त प्रश्न

1. किसी समस्या की स्थिति में आप आत्म नियंत्रण करने की प्रक्रिया को किस प्रकार लागू करेंगे? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिये।
2. नैतिकता कैसे विकसित होती है।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

17.1

1. आत्म नियंत्रण एक प्रक्रम है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने व्यवहार को इस तरह नियमित करना सीखता है जिससे उसे आत्म सन्तोष प्राप्त हो सके।
2. नैतिक विकास की अवस्थाओं की चर्चा कीजिये।

17.2 1. आंतरिक द्वन्दों का समाधान 2. तीन मुख्य स्तर

17.3 1. सहयोग 2. भूमिका निभाना और स्वयं को तदीनुरूप ढालना 3. चोरी करना, व्यभिचार, अपचार

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. सन्दर्भ 17.2 2. सन्दर्भ 17.3

18

व्यक्तित्व के सिद्धान्त

हम में से हर एक व्यक्ति अनेक वस्तुओं को दूसरों के साथ बांटता है। बहरहाल, समानताओं के अतिरिक्त हम देखते हैं कि लोग दिखने में तथा व्यवहार में अलग–अलग होते हैं। व्यक्तित्व का अध्ययन मानव की व्यक्तित्वता के अध्ययन से संबंधित है। इस विषय ने एक सामान्य व्यक्ति के साथ–साथ शैक्षिक मनोवैज्ञानिकों का ध्यान भी आकर्षित किया है।

मानव के रूप में हममें से प्रत्येक व्यक्ति सोचने, महसूस करने तथा क्रिया करने की कतिपय विशिष्ट प्रतिमानों को दर्शाता है। ये प्रतिमान दर्शाते हैं कि हम कौन हैं तथा अन्य व्यक्तियों के साथ हमारे संव्यवहार के लिए आधार उपलब्ध कराता है। दिन–प्रति–दिन के जीवन में प्रायः हम ऐसे लोगों से मिलते हैं जिन्हें 'आक्रामक', 'मजाकिया', खुशमिजाज़ और इसी प्रकार कहा जा सकता है।

ये लोगों के प्रभाव होते हैं जो कि हमारे साथ रहते हैं और इसका प्रयोग उनसे बातचीत करते समय करते हैं। इसका अर्थ यह है कि ''व्यक्तित्व'' शब्द का प्रयोग हम बार–बार करते हैं। व्यक्तित्व का अध्ययन मनोवैज्ञानिक का ध्यान भी आकष्ट करता है और उन्होंने व्यक्तित्व के विभिन्न सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं। लोगों के व्यक्तित्व का आंकलन करने के लिए उन्होंने कतिपय तरीके भी विकसित किए हैं। व्यक्तित्व से संबंधित सूचना का प्रयोग विभिन्न नौकरियों में लोगों का चयन करने में, मनोवैज्ञानिक सहायता से जरूरतमन्द लोगों को मार्गदर्शन करने तथा उनकी संभाव्यता की मैपिंग करने में किया जाता है। इस प्रकार व्यक्तित्व का अध्ययन मानव व्यवहार के विभिन्न क्षेत्रों में योगदान करता है। यह अध्याय व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं को सीखने में आपकी सहायता करेगा।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप निम्नलिखित कार्य को करने में सक्षम होंगे:

- व्यक्तित्व की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे;
- मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, इसके क्षेत्र, सामाजिक ज्ञान तथा व्यक्तित्व के मानवीय सिद्धान्तों की व्याख्या कर सकेंगे;
- व्यक्तित्व मूल्यांकन के तरीकों के साथ त्रयगुन संप्रत्य की अवधारणा की व्याख्या करने; और
- व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करने वाले कारकों की व्याख्या करने में।

18.1 व्यक्तित्व की अवधारणा

व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग अनेक क्षेत्रों में किया जाता है जिसमें व्यक्ति के स्पष्ट विशेषताएं शामिल होती हैं। बहरहाल, मनोवैज्ञानिक इसका प्रयोग सोचने के विभिन्न लक्षण, फिलिंग (अनुभूति) तथा क्रिया–कलाप का अवलोकन करने के लिए करते हैं। लाक्षणिक पद्धति से हम सुसंगत तथा सुस्पष्ट विचारों, अनुभवों तथा कार्यों को सुव्यवस्थित करते हैं।

जब हम व्यक्तित्व के बारे में बात करते हैं तो हम सामान्यतः समग्रता अथवा संपूर्ण व्यक्ति का अवलोकन करते हैं। इस प्रकार, विभिन्न स्थितियों में व्यक्ति द्वारा दिखाई गई सहनशीलता व्यक्तित्व का प्रमाण चिन्ह है। व्यक्तित्व के सिद्धान्तों की रोचकता ''व्यक्तित्व'' के शाब्दिक अर्थ से परे है जिसका प्रयोग प्राचीन ग्रीक ड्रामा में एक्टरों द्वारा प्रचुरता से किया जाता था। इसके प्रतिकूल व्यक्तित्व सिद्धान्तवादियों के विचार में ''व्यक्तित्व'' व्यक्ति के यथार्थ के रूप में है। यह एक व्यक्ति के ''सत्य'' आन्तरिक प्रकति में होता है। इसका सही अर्थ यह है कि समझदार व्यक्तित्व में एक व्यक्ति दूसरे पर बराबर महत्व रखता है। बहरहाल, व्यक्तित्व की अवधारणा को मनोवैज्ञानिकों द्वारा अनेक तरीके से पारिभाषित किया गया है और यह सैद्धान्तिक पहलू अथवा स्थिति है जो कि हमारा ध्यान व्यक्तित्व के विशेष पहलुओं की ओर आकष्ट करता है।

समझदार व्यक्तित्व कठिन तथा चुनौतीपूर्ण कार्य को निष्पादित करता है। यह अत्याधिक मिश्रित होता है तथा समग्र व्यक्तित्व की व्याख्या करने के लिए एकल सिद्धान्त समर्थ नहीं है। विभिन्न सिद्धान्तों के दष्टिगत व्यक्तित्व की संरचना तथा कार्य कलाप विभिन्न स्थितियों से होता है। यहां व्यक्तित्व के अनेक सिद्धान्त बताए गए हैं। प्रत्येक सिद्धान्त व्यक्तित्व के कार्यकलाप के बारे में अलग–अलग विवेचना देते हैं। विशेष रूप से, वे सचेतन और अचेतन कारकों कार्य में प्रतिबद्धता/स्वतंत्रत भूमिका/आनुवशिकी कारकों की भूमिका, अद्वितीयता/सर्वत्रता आदि की भूमिका के बारे में अलग–अलग व्याख्या करते हैं। पूर्व अनुभव की इस पाठ में आप व्यक्तित्व के चार प्रमुख सैद्धान्तिक परिदश्य के बारे में सीखेंगे। इनमें मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, क्षेत्र, मानवीयता तथा सामाजिक ज्ञानात्मक परिदश्य शामिल हैं।

18.2 मनोवैज्ञानिक विश्लेषण परिदृश्य

इसके प्रतिपादक सिगमण्ड फ्रायड हैं, यह सिद्धान्त एक व्यक्ति में अचेतन के प्रभाव, कामुक एवं आक्रमण मूलवत्ति तथा पूर्व बचपन के अनुभव के प्रभाव पर बल देता है। यह सिद्धान्त न केवल मनोविज्ञान में बल्कि साहित्यिक क्षेत्र, कला, साइकेट्री तथा फिल्मों के क्षेत्र में बहुत ही प्रभावशाली है। फ्रायड के अधिकांश विचार दिन प्रतिदिन के प्रयोग में बहुत ही उपयोगी साबित हुए हैं। फ्रायड ने अपने कैरियर की शुरूआत न्यूरोलॉजिस्ट के रूप में की। अपने सिद्धान्त का विकास उन्होंने अपने मरीज के परीक्षणों तथा स्वयं के विश्लेषणों के आधार पर किया है। उन्होंने अपने मरीजों को भूली जा चुकी याददाश्त को पुनः स्मरण करने के लिए निःशुल्क सहायता की है।

फ्रायूड ने इस बात की खोज की कि मस्तिष्क एक शैलचट्टान के समान है और हमारी सचेतन जागरूकता सीमित होती है।

फ्रायड मानते हैं कि मनोवैज्ञानिक शक्तियां जागरूकता के तीन स्तरों पर होती हैंः

सचेतन स्तरः विचार, अनुभव तथा संवेदनशीलता इनमें से एक हर क्षण मौजूद रहती है।

पूर्व सचेतन स्तरः यह सूचना एकत्रित करता है जिसमें से एक को मौजूदा जानकारी नहीं होती। बहरहाल, वे आसानी से सचेतन मस्तिष्क में प्रवेश कर सकते हैं।

अचेतन स्तरः इसके विचार, अनुभव, इच्छाएं, अर्न्तजोद आदि होते हैं जिसका हमें पता नहीं होता। बहरहाल, यह हमारी गतिविधि के सचेतन स्तर (लेवल) को प्रभावित करता है।

फ्रायड का मत है कि अचेतन सामग्री अक्सर प्रच्छन्न तरीके से चेतना स्तर में प्रविष्ट करता है। यह विकत तरीके में हो सकता है अथवा यह प्रतीकात्मक रूप में हो सकता है। सपने तथा मुक्त साहचर्य का अर्थ का प्रयोग जागरूकता के तीन स्तरों के विश्लेषण में किया जाता था।

व्यक्तित्व संरचना

फ्रायड का विश्वास है कि व्यक्तित्व का आविर्भाव हमारे आक्रामक प्रवत्ति तथा सुखद जैवकीय आवेग तथा आंतीकरण सामाजिक प्रतिबर्धा के बीच विवाद के कारण होता है। इस प्रकार, व्यक्तित्व उस स्थिति में उत्पन्न होता है जब हमारा प्रयास विवादों को सुलझाने का रहता है। अन्ततः वह तीन संरचनाएं प्रस्तुत करता है जो कि एक दूसरे से संबंधित होते हैंः इद, अहं (स्वाभिमान) और सुपर इगो (अत्यधिक स्वाभिमान)। आइए हम इन संरचनाओं के बारे में सीखेंः

इदः यह व्यक्तित्व का अचेतन, विवेकहीन भाग होता है। यह नैतिकता का प्रतिरक्षित हिस्सा है और बाहरी देश की मांग है। यह सुख सिद्धान्त पर कार्य करता है। यह शीघ्र सन्तुष्टि की कोशिश करता है।

अहं (इगो) स्वाभिमान: यह वास्तविक संसार के साथ विद्यमान रहता है। यह वास्तविकता के सिद्धान्त पर कार्य करता है। यह व्यक्तित्व का सचेतन तथा विवेकपूर्ण हिस्सा होता है जो कि विचारों तथा व्यवहारों को विनियमित करता है। यह व्यक्ति को बाहरी देश के सन्तुलित मांग तथा व्यक्ति की आवश्यकताओं के बारे में बताता है।

अत्यधिक अहं: यह पैतक तथा सामाजिक मूल्यों का आन्तरिक प्रतिनिधित्व करता है। यह सचेतन की आवाज के रूप में कार्य करता है जो कि न केवल वास्तविक बल्कि आदर्शवाद पर विचार के लिए दबाव डालता है। यह व्यक्तियों के व्यवहारों का सही अथवा गलत, अच्छा और खराब के रूप में बताता है। एक व्यक्ति में नैतिकता तथा आदर्शवाद के अभाव होने पर वह शर्म, दोषी, कुन्ठा, निकष्टता तथा चिन्ता महसूस करता है।

व्यक्तित्व विकास

मरीज के केस–हिस्ट्री के आधार पर, फ्रायड इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि व्यक्तित्व विकास मनोलैंगिक चरणों के क्रम में होता है। इन चरणों में सुख की मानसिकता का अनुभव शरीर के विभिन्न क्षेत्रों पर होता है। टेबल 18.1 इन चरणों (स्तरों) को दर्शाता है।

टेबल 18.1: *मनोलैंगिक अवस्था के विकास के चरण*

चरण	गतिवितध का संकेन्द्रण
मुखीय 6-18 माह	सकिंग तथा बाइटिंग आदि गतिविधियों से सुखद अनुभूति होती है।
गुदीय 18-36 माह	बोवेल तथा ब्लैडर के एलीमिनेशन पर सुखद अनुभूति
फालिक 4-6 वर्ष	सुखद अनुभूति केन्द्र जननांग है। जननांगों को छूना तथा फाण्डलिंग से सुखद अनुभव होता है।
सुसुप्ता अवस्था 7-11 वर्ष	बच्चे अपनी कामुकता इच्छाओं को दमित करते हैं तथा उन्हें सामाजिक रूप से स्वीकार्य गतिविधियों जैसे खेलों, कलाओं में परिवर्तित करते हैं।
जेनिटल	सुखद अनुभूति क्षेत्र जेनिटल है। इस आयु में कामुकता रुचि परिपक्व हो जाती है।

रक्षात्मक प्रतिक्रिया

अहं (इगो) इद की स्वाभाविक मांगों तथा अत्याधिक स्वाभिमान (सुपर इगो) के नैतिकता के बीच ताल–मेल बनाए रखने का कठिन कार्य करता है। ईगो समस्या को सुलझाने का प्रयास करता है और यदि वास्तविक समाधान अथवा समझौता संभव नहीं होता तो विचारों को तोड़ मरोड़कर सन्तुष्ट करना अथवा कतिपय प्रक्रियाओं के माध्यम से

वास्तविकता की अनुभूति को रक्षात्मक प्रतिक्रिया कहा जाता है। स्वयं की प्रतिरक्षा अथवा बचाव के लिए हम जिस तकनीक का प्रयोग करते हैं उसे रक्षात्मक प्रतिक्रिया कहते हैं। इन्हें समायोजन प्रतिक्रिया भी कहा जाता है। कुछ महत्वपूर्ण प्रतिक्रियाएं नीचे दी जा रही हैं:

प्रतिक्रिया	**विवरण**
प्रतिवाद	मौजूदा दुर्घटना/सूचना को याद न करा पाना अथवा उसकी जानकारी न होना जैसे मैं नहीं जानता, मैंने इसे नहीं देखा आदि।
विस्थापन	भावनात्मक प्रेरणाएं कुछ अन्य लोगों अर्थात् स्थानापन्न व्यक्ति/वस्तु को पुनः निर्देशित करती हैं।
आरोपण	स्वयं की गलतियों को दूसरे के ऊपर आरोपित करना है।
वास्तविकता (युक्तिकरण)	सामाजिक स्वीकार्यता स्पष्टीकरणों के माध्यम से हमारे कार्यों अथवा भावनाओं का युक्तीकरण करता है।
अवनति (रिग्रेशन)	पहले चरण के विकास के व्यवहारिक लक्षणों पर बल देता है।
रोकना (दमन करना)	सचेतना से चिन्ताग्रस्त विचारों, अनुभवों अथवा प्रेरणाओं का निष्कासन।
चरम (उत्कष्टता)	कामुक उत्तेजना (प्रवत्ति) को सकारात्मक कार्यों में व्यस्त करना।
प्रतिक्रिया निर्माण	ठीक विपरीत दिशा में कार्य करना। जैसे प्रेम को घणा में बदलना अथवा इसका उलटा।

फ्रायड के विचार विवादास्पद रहे हैं नियो फ्रायड के विचार अनेक विषयों पर फ्रायड के विचार से भिन्न हैं। कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तविदों, जो कि इस श्रेणी में शामिल रहे हैं, की सूची इस प्रकार है।

कार्ल जंगः सामूहिक अचेतना

जंग ने मानव जीवन में काम तथा आक्रामकता की मुख्य भूमिका का विरोध किया है। इसके अतिरिक्त उनका मानना है कि अत्यधिक सामान्य मनोवैज्ञानिकी ऊर्जा के द्वारा लोग प्रोत्साहित होते हैं। उन्होंने बताया कि व्यक्ति में सबसे महत्वपूर्ण भाग सामूहिक अचेतना होती है। यह हमारे परिवार तथा मानव जाति से प्रभावित होती है। सामूहिक अचेतना में आदिम किस्म के गुण विद्यमान होते हैं जो कि विशेष व्यक्ति में मानसिक प्रतिमा के रूप में होते हैं। अभिनेता, शक्तिशाली पिता, ईमानदार बच्चा, पालन पोषण करने वाली मां आदिम किस्म के उदाहरण हैं।

कारेन हॉर्नीः मूल चिंता

हॉर्नी ने व्यक्तित्व के विकास में सामाजिक संबंधों की महत्ता पर बल दिया है। मूल चिंता की भावना अलग–अलग और असहाय बच्चों में दिखाई पड़ती है।

अल्फ्रेड एडलरः निकृष्टता तथा उत्कष्ठता का अनुभव

एडलर का मत है कि मानव का मुख्य मकसद उत्कष्टता के लिए प्रयास करना है। यह निकष्टता के अनुभव से उत्पन्न होता है जो कि प्रारंभिक अवस्था तथा शैशव अवस्था के समय परिलक्षित होता है। इस अवधि के दौरान बच्चे असहाय होते हैं तथा दूसरे की सहायता और सहारे पर आश्रित रहते हैं।

मनोवैज्ञानिक विश्लेषणात्मक विचारों की आलोचना इस आधार पर की गई है कि इस सिद्धान्त के समर्थन के लिए अपर्याप्त सबूत हैं।

पाठगत प्रश्न 18.1

रिक्त स्थान में उपयुक्त शब्द भरें:

1. फ्रायड द्वारा मस्तिष्क की तुलना .... की गई है।
2. मनोवैज्ञानिक विश्लेषण सिद्धान्त में व्यक्तित्व की तीन संरचनाएं हैं जिनके नाम .. .. और .... हैं
3. बच्चे अपने सैक्सुअल आवेश को .... चरण के दौरान रोकते हैं।

18.3 शीलगुण सिद्धांत

शीलगुण, लाक्षणिक प्रवत्ति तथा सचेतना के प्रेरक होते हैं। वे अपेक्षाकत सही तरीके का बर्ताव करने के लिए स्थिर तथा सहनशील होते हैं। लोगों के वर्णन (प्रतिपादन) में शीलगुणों का प्रयोग बार–बार किया जाता है। शीलगुण सिद्धान्त का महत्वपूर्ण केंद्र बिंदु सामान्य होता है व्यक्तिगत लक्षणों की गणना सूची में शामिल होता है। वैयक्तिक पहचान का शीलगुण सिद्धान्त व्यक्तिगत विभिन्नता का वर्णन और मापन करता है। स्पष्ट गुणों को सतही गुण (अर्थात् प्रसन्न, विनम्र) कहा जाता है। इसके विपरीत कतिपय मूल गुण होते हैं। रेमण्ड कैट्टेल गुण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसमें 16 मूल गुण हैं। वे उन्हें व्यक्तित्व कारक कहते हैं। उनमें से कुछ हैं: आरक्षित– बहिर्गमन, गंभीर–प्रसन्नता, व्यवहारिक कल्पनाः तथा आराम– तनावग्रस्तता।

आइसेन्क ने एक सिद्धान्त प्रस्तुत किया है जिसमें लोगों को चार किस्मों में वर्गीकत किया हैः अन्तर्मुखी–न्यूरोटिक, अन्तर्ममुखी–स्थायित्व, बहिर्मुखी–न्यूरोटिक तथा बहिर्मुखी स्थायित्व।

इसके पश्चात आईसेन्क ने साइकोटिसिजम को व्यक्तित्व के दूसरे आयाम के रूप में प्रस्तुत किया।

हाल ही में मैक्रे तथा कोस्टा ने पांच फैक्टर मॉडल प्रस्तुत किया जिसमें न्यूरोटिजम, एक्स्ट्रा वर्जन, अनुभव के लिए खुली विचारधारा, सहमतिपूर्ण तथा कर्तव्यपरायणता। गुणों का प्रयोग व्यवहार का उल्लेख करने तथा पूर्वानुमान करने के लिए किया जाता है। बहरहाल, मानव व्यवहार गुणों तथा परिस्थितियों के बीच एक परिणाम है। अतः परिस्थितियों की प्रतिक्रिया में पारस्परिक क्रिया का स्थितियों का चुनाव और अनुकूलता शीलगुण के मूल को इंगित करता है। यह कहा जाता है कि शीलगुण सिद्धान्त व्यक्ति के व्यक्तित्व की व्याख्या नहीं करता। वे कुछ हद तक व्यक्तिगत विभिन्नता के कारण को बतलाता है तथा गयात्मक प्रक्रियाओं की उपेक्षा करता है।

18.4 सामाजिक (ज्ञानात्मक अनुभूति बोधगम्यता) संज्ञानात्मक सिद्धान्त

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अल्बर्ट बन्डूरा द्वारा किया गया। इनके विचार में व्यक्तियों तथा सामाजिक संदर्भ के बीच पारस्परिक क्रिया द्वारा व्यवहार प्रभावित होता है। उनका विचार है कि हमारी विचारधारा तथा कार्यवाहियाँ सामाजिक वातावरण में उत्पन्न होती है, परन्तु यह ध्यान देना आवश्यक है कि मानव जातियों में स्व–विनियमन की क्षमता होती है और सक्रिय संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं में संलिप्त रहते हैं। उनकी पारस्परिक सम्बद्धता चित्र 18.1 में दर्शाया गया है।

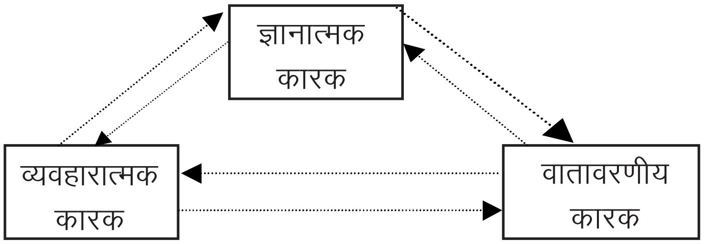

चित्र 18.1: *व्यवहारों, बौद्धिक तथा वातावरण की पारस्परिक प्रतिबद्धता*

बन्डूरा ने स्व–क्षमता की अवधारणा का विकास किया जिसमें व्यक्ति का संज्ञानात्मक बोध, योग्यताएं तथा व्यवहार शामिल हैं इनमें से एक स्व–प्रणाली के रूप में है।

स्व–क्षमता एक अवस्था को इंगित करता है जिनमें से एक योग्यताओं को स्वीकार करता है तथा विशेष परिस्थिति की मांगों को पूरा करने में प्रभावशाली होता है। यह सिद्धान्त प्रयोगशाला अनुसंधान पर आधारित है। बहरहाल, यह सिद्धान्त अचेतन कारकों की उपेक्षा करता है जिसे व्यवहार प्रभावित हो सकता है। यह सिद्धान्त जीवन के विवेकपूर्ण पहलू पर भी बल देता है जब भावनात्मक पहलू की उपेक्षा होती है।

संज्ञानात्मक सामाजिक सिद्धान्त व्यक्तित्व में विचारधारा तथा याददाश्त की भूमिका पर ध्यान केन्द्रित करता है। हम अक्सर पाते हैं कि लोगों की अपेक्षाएं और कुशलताएं व्यवहार के निर्धारण में बहुत महत्वपूर्ण होती हैं।

पाठगत प्रश्न 18.2

कालम ए में दिए गए नामों को कालम बी में दी गई अवधारणा के साथ मैच करें।

कालम ए	कालम बी
(ए) फ्रायड	(i) अन्तर्मुखी स्टेबल
(बी) यंग	(ii) क्रमबद्धता की आवश्यकता
(सी) आईसेन्क	(iii) उत्कष्टता
(डी) बन्डूरा	(iv) सामूहिक अचेतना
(ई) मास्लो	(v) स्व–क्षमता

18.5 मानवीयता सिद्धान्त

इन सिद्धान्तों में यह प्रस्तुत किया गया है कि प्रत्येक व्यक्ति के भीतर सक्रिय सर्जनात्मक शक्ति होती है उसे ''आत्म'' कहा जाता है यह शक्ति अभिव्यक्ति की जांच करता है। यह विकास और वद्धि करता है। इस अनुभूति को तीसरी शक्ति के रूप में भी जाना जाता है जो कि मानव संभाव्यता तथा लाक्षणिक प्रवत्ति, स्वजागरूकता तथा स्वतन्त्र इच्छा पर बल देता है। इसके विचार में मानव जाति जन्मजात अच्छा होता है। सचेतना तथा स्व विषयगत अनुभूति बहुत महत्वपूर्ण है। कार्ल रोजर्स और अब्राहम मास्लो मानवीय अनुभूति के मुख्य प्रस्तावक हैं।

अब्राहम मास्लो ने स्व–यथार्थवादी लोगों के विचार को प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया कि मानव उद्देश्य आवश्यकताओं के अनुक्रम में व्यवस्थित होती है। जैसा चित्र १८.२ में दर्शाया गया है कि स्व–अनुभवातीत के लिए मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं से मानव की आवश्यकताएं व्यवस्थित होती हैं।

मास्लो ने बताया कि स्व–यथार्थवादी लागों में, वास्तविकता की अनुभूमि अर्थात स्वैच्छिक, स्वयं तथा दूसरों को सहज स्वीकार्य, सजनात्मक तथा जीवन के सकारात्मक पहलू आनन्द और सराहना विद्यमान होती हैं जैसे निजी व्यवहार और आत्मनिर्भरता

कार्ल रोजर्स का मानना है कि मानव की मूल मंशा यथार्थवादी प्रवत्ति है। यह मानव शरीर का अनुरक्षण तथा विकास करता है। रोजर का मानना है कि व्यक्ति अपनी स्वयं की विचारधारा के अनुसार कार्य करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। वे अनुभवों का खण्डन

करते हैं जो कि अपनी स्व–अवधारणा के प्रतिकूल होते हैं। विकास के लिए आदर्श परिस्थिति बिना शर्त सकारात्मक संबंध रखना है। व्यक्ति के पूर्णतः कार्यशील के संबंध में उनकी धारणा है कि स्व–अवधारणा लचीला तथा विकासात्मक है। यह मानव जाति के आशावादी विचार को प्रतिपादित करता है।

चित्र 18.2: *मास्लो की आवश्यकताओं का अनुक्रम*

18.6 गुणों की अवधारणा

व्यक्तित्व के लिए भारतीय दष्टिकोण तीन गुणों के सम्मिश्रण पर बल देता है जिनके नाम सत्व, राजस, तथा तमस। इन गुनाज को सामख्या सिद्धान्त में विस्तत रूप से विचार किया गया है। इन गुनों के कारण को भगवतगीता में स्पष्ट किया गया है। ये गुन विभिन्न स्तरों में तथा किसी भी समय विद्यमान रहते हैं। एक व्यक्ति का व्यवहार गुन पर निर्भर करता है जो कि किसी भी समय व्यक्ति को ऊपर उठा सकता है। इन गुनों के बारे में सारांश नीचे दिया गया है।

सत्व गुणः मुख्य विशेषताएं जो कि सत्व गुण को प्रतिपादित करती हैं वह सत्य, गंभीरता, कर्तव्य, अनुशासन, अनाशक्ति, स्वच्छता, मानसिक सन्तुलन, संवेदना का नियन्त्रण, प्रतिबद्धता तथा कुशाग्र बुद्धि है।

राजस गुणः राजस गुण वाले व्यक्ति की विशेषताओं में प्रभावशाली क्रियाकलाप, संवेदना के तुष्टिकरण की इच्छा, असन्तुष्टता, ईर्ष्या तथा मौतिकवादी विचारधारा शामिल है।

तमस गुणः इनमें क्रोध, अहंकार, मानसिक असन्तुलन, उदासी, आलस्य (सुस्ती), लिम्बकारी तथा असहाय का अनुभव शामिल है। भगवतगीता में आदिप्ररूप (मेटाटाइपकल) में तीन गुण पाये जाते हैं जो कि हमारे खाने में, मानसिकता (बुद्धि), चैरिटी दान आदि की गुणों अथवा विशेषताओं के तीन प्रकारों में वर्गीकत किया जा सकता है।

18.7 मानव व्यक्तित्व का मूल्यांकन

इस तथ्य के विचार में व्यक्तित्व के बारे में ज्ञान का प्रयोग अनेक अनुसंधानकर्ताओं द्वारा उसके मूल्यांकन के लिए अनेक उपस्करों को विकसित करने में किया जाता है। इन

उपस्करों को तीन किस्मों में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है जो कि नामतः पर्यवेक्षणात्मक, स्व–रिपोर्ट तथा प्रोजेक्टिव हैं।

पर्यवेक्षणात्मक उपस्कर का प्रयोग साक्षात्कार, एक या अनेक परिस्थितियों में व्यक्तियों की रेटिंग में किया जाता है।

प्रोजेक्टिव परीक्षण एक विशेष प्रकार का परीक्षण होता है जिसमें अनेकार्य सामग्री का प्रयोग किया जाता है और जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व का परीक्षण किया जा रहा है वह अपने अथवा उसके विचारों को प्रकट करता है। दो प्रसिद्ध थीमेटिक एप्रीसेप्शन टेस्ट (टी.ए.टी.) हैं। इंकब्लोट टेस्ट में एक व्यक्ति 1. सिमेट्रीकल इंकब्लोट को दर्शाता है और उससे यह बताने के लिए कहा जाता है कि वह उन सभी में क्या देखता है। उसके द्वारा दिए गए जबाव का मनोवैज्ञानिक व्याख्या करता है। टी.ए.टी. में कुछ फोटोग्राफ दिखाये जाते हैं और वह व्यक्ति अपने पूर्व के, वर्तमान तथा भविष्य की स्थिति के संबंध में कहानी बताता है। व्यक्ति द्वारा बताई गयी कहानी का मनोवैज्ञानिक द्वारा कोड किया जाता है और उसका विश्लेषण किया जाता है ।

यह नोट किया गया है कि व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए विभिन्न व्यक्तित्व परीक्षा का प्रयोग और व्याख्या आवश्यक है।

पाठगत प्रश्न 18.3

बताएं कि क्या निम्नलिखित कथन सत्य हैं अथवा असत्यः

1. मौजूदा दुःखद घटना संबंधी सूचना के ज्ञान के लिए प्रोजेक्शन असफल रहता है। सत्य/असत्य
2. सजनात्मक गैर कामुक क्रियाकलापों में कामुक उत्तेजना को मिला लेना ही उत्कष्टता है। सत्य/असत्य
3. राजर्स ने स्व–क्षमता की अवधारणा का प्रतिपादन किया है। सत्य/असत्य
4. मानवीय अनुभूति को मनोवैज्ञान में तीसरी शक्ति भी कहा जाता है। सत्य/असत्य

18.8 व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करने वाले कारक

सामाजिक सांस्कतिक परिवेश में व्यक्तित्व का विकास व्यक्तिगत रूप में होता है। एक विशेष संभाव्यता जिसमें बच्चे का जन्म होता है और विकसित होता है अथवा विकास रूक जाता है। यह व्यक्ति के परिपक्वता की स्थिति तथा उसके द्वारा अर्जित किए गए अनुभव के प्रकार पर निर्भर करता है। वद्धि एवं विकास की प्रक्रिया में लोगों में अच्छे गुणों का विकास होता है जो कि व्यक्तियों में विभिन्नता पैदा करता है। इस तरह से यह पता

चलता है कि व्यक्तित्व का निर्माण एक जटिल प्रक्रिया है जो कि एक तरह से व्यक्ति के सामान्य तथा उत्कष्ट अनुभवों पर और दूसरी तरह अनुवांशिक कारकों पर निर्भर करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यह एक स्थाई तरीका है जिसमें विचारक की विशेष पद्धति, अनुभव तथा व्यवहार की विशेष स्थिति उत्पन्न होती है।

1. **आनुवांशिक कारकः** अधिकांशतः सभी सिद्धान्तविदों का मत है कि व्यक्तित्व के निर्धारण में आनुवांशिकता की प्रमुख भूमिका होती है। जैसे फ्रायड के विचार में व्यक्तित्व विशुद्ध रूप से जैवकीय है। बहरहाल, सामाजिक तथा सांस्कतिक के मूल्य को दूसरे पहचान करते हैं। वास्तव में, दोनों में से एक अथवा दोनों तरीके से इस प्रश्न पर विचार करना गलत होगा और आनुवांशिकी अथवा वातावारण पर अधिक जोर दिया गया है। आनुवांशिक व्यवहार का अध्ययन बताता है कि अधिकतर व्यक्तित्व पर आनुवांशिक गुणो का 15 से 50 प्रतिशत तक प्रभाव पड़ता है।

2. **पूर्व अनुभवः** व्यक्तित्व पर विचार व्यक्त करने वाले अधिकांश सिद्धान्तविदों का मत है कि व्यक्तित्व का विकास एक सतत प्रक्रिया है। आरंभिक वर्षों में खेलना व्यक्तित्व को निखारने में अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। बहरहाल, आस–पास का परिवेश तथा अनुभव भी व्यक्तित्व के विकास में अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं।

3. **प्राथमिक समूहः** व्यक्तित्व के विकास की व्याख्या करते समय परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। परिवार के सदस्यों के साथ जल्दी संबंध जोड़ना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। फ्रायड का मत है कि वयस्कता के दौरान बहुत सी समस्याएं गलत ढंग से पालन–पोषण के कारण उत्पन्न होती हैं जो कि भावनात्मक अड़चनें हो जाती हैं। पहचान करने की संवेदना तथा उपयुक्त मॉडलिंग की प्रासंगिकता पर बल दिया गया है।

4. **संस्कतिः** एक संस्कति में रहने वाले लोग अक्सर समान प्रवत्ति के होते हैं। संस्कति द्वारा स्वीकार्य पद्धति के अन्तर्गत बच्चा व्यवहार को सीखता है। उदाहरणार्थ लड़कों तथा लड़कियों में व्यक्तित्व के लक्षण अलग–अलग दिखाई देते हैं। विभिन्न व्यावसायिक कार्य भी संस्कति द्वारा तैयार किए जाते हैं। बहरहाल, उस संस्कति में रहने वाले प्रत्येक बच्चे पर संस्कति के प्रभाव में समरूपता नहीं हो सकती क्योंकि वे विभिन्न तरीकों तथा व्यक्तियों के माध्यम से संचारित होती हैं और लोगों में उत्कष्ट अनुभव भी होते हैं।

पाठगत प्रश्न 18.4

1. भारतीय दष्टिकोण में व्यक्तित्व के उल्लिखित गुणों के नाम बताएं।
2. व्यक्तित्व के मूल्यांकन की तीन श्रेणियों के नाम बताएं।
3. व्यक्तित्व के दो महत्वपूर्ण प्रोजेक्टिव परीक्षणों के नाम बताएं।
4. व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कौन से कारक हैं?

पाठांत प्रश्न

1. व्यक्तित्व की अवधारणा का उल्लेख करें।
2. व्यक्तित्व के समझने के लिए चार मुख्य अनुभूतियां कौन सी हैं?
3. सचेतन तथा पूर्व सचेतन मस्तिष्क के बीच क्या अन्तर है?
4. मनोलैंगिक विकास के विभिन्न चरणों के नाम बताएं।
5. श्रेणीबद्धता की आवश्यकता का क्या अर्थ है? इन आवश्यकताओं की सूची तैयार करें।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

18.1

1. आइसबर्ग   2. इड, इगो, सुपर ईगो   3. अन्तर्हित (लैटैन्सी)

18.2

कालम ए	कालम बी
(ए)	(iii)
(बी)	(iv)
(सी)	(i)
(डी)	(v)
(ई)	(ii)

18.3 1. असत्य   2. सत्य   3. सत्य   4. असत्य   5. सत्य

18.4 1. सत्व, राजस, तामस   2. (ए) पर्यवेक्षात्मक (बी) स्व रिपोर्ट (सी) प्रोजेक्टिव
3. इंकब्लाट; टी. ए. टी. 4. आनुवांशिक कारक, पूर्व अनुभव; प्राइमरी ग्रुप, संस्कति

पाठांत प्रश्नों के लिए संकेत

1. अनुच्छेद 18.1 को देखें
2. अनुच्छेद 18.2, 18.3, 18.4 तथा 18.5 को देखें
3. अनुच्छेद 18.2 को देखें
4. अनुच्छेद 18.2 को देखें
5 अनुच्छेद 18.5 को देखें

19
व्यक्तित्व का मूल्यांकन

पिछले पाठ में आपने व्यक्तित्व के विभिन्न सिद्धांतों के बारे में पढ़ा है। ये थे मनोविश्लेषक, गुणात्मक, सामाजिक–संज्ञानात्मक, मानवतावादी और भारतीय दष्टिकोण, गुणाधारित। यदि हम किसी एक विशेष सिद्धांत पर आधारित किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के विशिष्ट पक्षों को निश्चित करना चाहते हैं, तो उन्हें मापने के लिए विशिष्ट तकनीकें हैं। उदाहरण के लिए, यदि आप किसी व्यक्ति में प्रभावी गुणों को जानना चाहते हैं जैसे क्या वह बहिर्मुखी या अंतर्मुखी है, तो इस जानकारी को पाने के लिए विशेष मनोवैज्ञानिक विधियाँ विकसित की गई हैं। इसी प्रकार यदि हम किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के अचेतन पक्ष को जानना चाहें तो उसे मापने के लिए हमें मनोविश्लेषक विधि का प्रयोग करना होगा। इस पाठ में आप व्यक्तित्व को मापने की विभिन्न विधियों के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- विभिन्न सैद्धांतिक तरीकों पर आधारित व्यक्तित्व का मापन करने में।

19.1 व्यक्तित्व के विशेषकों का मूल्यांकन

व्यक्तित्व के विशेषकों को मापने के दो तरीके हैं। एक तरीके में कुछ प्रश्न पूछे जाते हैं जिनके उत्तर में व्यक्ति को अपने विचारों, भावनाओं और कार्यों के बारे में बताना होता है। इस उद्देश्य के लिए एक व्यक्तित्व मापनी का प्रयोग किया जाता है। दूसरे तरीके में कोई दूसरा व्यक्ति किसी व्यक्ति के विशेषकों का मापन करता है जो उस व्यक्ति के बारे में पूर्व ज्ञान या प्रत्यक्ष प्रेक्षण पर आधारित होता है। इसे रेटिंग–स्केल विधि कहते हैं।

व्यक्तित्व मापनी प्रश्नावलियाँ हैं वहाँ विभिन्न परिस्थितियों में अपनी प्रतिक्रिया के बारे में विभिन्न प्रश्नों के उत्तर देने होते हैं। एक व्यक्तित्व मापनी की ऐसी रूपरेखा बनाई जा सकती है जो एक ही विशेषक जैसे बहिर्दर्शन, अंतर्दर्शन या अनेक विशेषकों की माप कर सकती है। उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति इस प्रश्न, "क्या आप सामाजिक परिस्थितियों में पार्श्व में रहते हैं" यह अंतर्दर्शन का संकेत है। वास्तव में, मापन विभिन्न परिस्थितियों से संबंधित अनेक प्रश्नों पर आधारित होगा, न कि केवल एक प्रश्न पर। सोलह कारक व्यक्तित्व प्रश्नावली (The sixteen factor personality questionnaire) (16PF) और मिनीसोटा बहुआयामी व्यक्तित्व मापनी ¼Minnesota multiphasic personality inventory (MMPI) ये दो बहुत प्रसिद्ध मापिनी हैं जो व्यक्ति के विशेषकों के बारे में जानकारी प्राप्त करने में उपयोगी हैं।

मापिनी बहुत उपयोगी होती है, किंतु जब व्यक्ति अपनी प्रतिक्रियाओं के बारे में बताता है, कभी–कभी वह अपनी स्वयं की विशेषताओं के बारे में आग्रही हो जाता है। इस समस्या से निपटने के लिए व्यक्तित्व के विशेषकों के मूल्यांकन के लिए निर्धारण मापनी पर आधारित दूसरे तरीके का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति को दूसरे के आत्म–विश्वास के स्तर का वर्णन प्वाइंट स्केल के प्रयोग से न्यूनतम (1)* से अधिकतम (7)* करने को कहा जा सकता है।

निर्धारण के उपयोगी एवं वैध होने के लिए निर्धारक के लिए कुछ शर्तें हैं जिनका उसे पालन करना चाहिए। निर्धारकों को (क) मापनी को समझने योग्य होना चाहिए (ख) उस व्यक्ति को जिसके लिये मापनी तैयार करनी है, अच्छी तरह से जानना और (ग) अपने निर्णयों में व्यक्ति के प्रति पक्ष या विपक्ष में पक्षपात न करना, होना चाहिए।

19.2 मनोविश्लेषक दष्टिकोण में मूल्यांकन

आप को पिछले पाठ से याद आयेगा, मनोविश्लेषक दष्टिकोण व्यक्ति के अचेतन अंतर्द्वंद्वों एवं अभिप्रेरणों पर बल देता है। किंतु व्यक्ति के व्यक्तित्व का अचेतन भाग (इस विचार में मुख भाग) आत्म सजगता से छुपा होता है। इसलिए मनोविश्लेषक को उसकी अप्रत्यक्ष सांकेतिक सूचना का प्रयोग करना पड़ता है। और अचेतन अंतर्द्वंद्वों और अभिप्रेरकों के रहस्य को खोलने के लिए व्याख्या करनी पड़ती है।

इस विधि में, यदि मनोविश्लेषक किसी व्यक्ति के अचेतन मन की प्रक्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है तो वह अनेकार्थक सामग्री प्रस्तुत करता है और व्यक्ति से कहता है कि जो दिखाई दे रहा है उसका वर्णन करो। यह अनेकार्थक सामग्री इंक–ब्लाट या कोई चित्र हो सकता है जिसे व्यक्ति अपने अनुभव या कल्पना के आधार पर पढ़ता है या अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार व्यक्ति के अचेतन मन को टेप कर लिया जाता है और उसके बारे में कुछ रहस्य खोला जाता है। 'रोशा टेस्ट' और 'थिमेटिक एपर्शेप्शन टेस्ट (टी.ए.टी.) दो प्रसिद्ध प्रक्षेपक परीक्षण हैं। पहला इंकब्लाट पर तथा दूसरा मानव–चित्रों पर आधारित है। उदाहरण के लिए एक टी.ए.टी चित्र किसी बच्चे की पीठ की तरह का हो सकता है, जो सूर्य की तरफ देख रहा है। यह पूछने पर कि बच्चा क्या

देखता है, कोई व्यक्ति कह सकता है "बच्चा सोच रहा है कि वह जीवन में बहुत कुछ प्राप्त करेगा। इस प्रकार व्यक्ति ने स्वयं के जीवन में बड़ी चीजें प्राप्त करने की बात को प्रक्षेपित कर सकता है।

पाठगत प्रश्न 19.1

उपयुक्त श्ब्दों से रिक्त स्थान भरिये :

1. ———————————— में एक व्यक्ति को विभिन्न परिस्थितियों में अपनी प्रतिक्रिया के संबंध में अनेक प्रश्नों के उत्तर देने हैं।
2. पूर्व ज्ञान पर आधारित किसी व्यक्ति के विशेषकों के वर्णन को ——————— विधि कहते हैं।
3. —————————— सांकेतिक अर्थों का प्रयोग करता है मनोविश्लेषक द्वारा इसकी व्याख्या अचेतन अंतर्द्वंद्वों के रहस्य खोलने के लिए की जाती है।
4. ————————————— परीक्षण में मानव आकतियाँ शामिल होती हैं जिसके बारे में व्यक्ति को एक संक्षिप्त कहानी बतानी पड़ती है।

19.3 मानवतावादी परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन

आपने पिछले पाठ में पढ़ा है कि व्यक्तित्व को मानवतावादी उपागम का ध्यान व्यक्ति के अपने संसार के अनुभव पर केंद्रित है। इसलिए यहाँ मूल्यांकन का संबंध व्यक्ति की अपने जीवन की परिस्थितियों और अनुभवों के बारे में प्रत्यक्षीकरण को समझने से है। व्यक्ति के आत्म संप्रत्यय को मापने के बहुत सी विधियाँ विकसित की गई हैं। एक उपागम उस व्यक्ति पर आधारित होता है जो बहुत से वर्णनात्मक वाक्यों में ऐसे वाक्यों को चुनता है जो उसका बहुत सही ढंग से वर्णन करते हैं। "मैं एक आत्मविश्वासी व्यक्ति हूँ", "मैं अक्सर आशंकित होता हूँ", "मैं एक निष्कपट और परिश्रमी छात्र हूँ" आदि। दूसरा उपागम उस व्यक्ति पर ध्यान देता है जो अपने आंतरिक स्वभाव या आत्म को दूसरों पर व्यक्त करने को इच्छुक रहता है। यह उपागम इस समझ पर आधारित है कि आत्म–प्रकटीकरण के अधिक उच्च या अधिक निम्नस्तर दोनों ही सांवेगिक अपरिपक्वता की ओर संकेत करते हैं।

19.4 गुणों का मूल्यांकन

पिछले पाठ में आपने व्यक्तित्व के बारे में भारतीय उपागम के बारे में भी पढ़ा जो तीन गुणों पर बल देता है : सत्व, रज और तम। इस धारणा पर आधारित व्यक्ति के स्वभाव का मूल्यांकन करने के लिए हमें यह समझने की आवश्यकता है कि कौन सा गुण कम प्रभावी है और अंततः बहुत कम है। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति जो अत्याधिक सत्यनिष्ठ, विरक्त, और सहयोगी है वह सत्व प्रधान है। किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व में कौन से गुण प्रबल हैं का मूल्यांकन करने के लिए प्रश्नावली, प्रेक्षण आदि का प्रयोग करके

हमें सम्मिलित सूचना प्राप्त करनी होगी। कुछ ऐसी मापनी विकसित की गई है जो हमें यह जानकारी देती हैं कि व्यक्ति के व्यक्तित्व में कौन से गुण क्रियाशील हैं।

पाठगत प्रश्न 19.2

रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए :

1. —————————— उपागम में मूल्यांकन व्यक्ति के अपने संसार में कैसे प्रत्यक्ष करता है, पर बल दिया जाता है।
2. एक व्यक्ति अपने आंतरिक स्वभाव या आत्म को दूसरों के सामने व्यक्त करने की इच्छा को —————————— की प्रवत्ति कहते हैं।
3. भारतीय गुणों के मूल्यांकन का उपागम व्यक्ति के व्यक्तित्व में कौन सा गुण —————————— है, जानने का प्रयास करता है।
4. —————————— विधि जो विशेषक उपागम में प्रयोग होता है गुणों के परिप्रेक्ष्य में भी प्रयोग किया जाता है।

आपने क्या सीखा

- व्यक्तित्व मूल्यांकन व्यक्तित्व के सिद्धांत से संबंधित है जिसके द्वारा हम व्यक्ति को समझना चाहते हैं।
- मूल्यांकन का विशेषक उपागम व्यक्तित्व मापनी और निर्धारण मापनी का प्रयोग करता है।
- मूल्यांकन का मनोविश्लेषक उपागम प्रक्षेपक तकनीक का प्रयोग करता है जिसमें व्यक्ति अनेकार्थक सामग्री जैसे इंक ब्लाट का प्रयोग किया जाता है।
- व्यक्तित्व मूल्यांकन का मानवतावादी उपागम यह पता लगाने का प्रयास करता है कि व्यक्ति अपने संसार का प्रत्यक्ष कैसे करता है।
- मूल्यांकन का गुण उपागम बहुविध तरीकों पर विश्वास करता है जिसमें मापनी (विस्तत सूची) आती है।

पाठांत अभ्यास

संक्षेप में लिखिये कि व्यक्तित्व मूल्यांकन निम्नांकित उपागमों में कैसे किया जाता है :

1. विशेषक उपागम
2. मनोविश्लेषक उपागम
3. मानवतावादी उपागम
4. गुण उपागम

20

मनोवैज्ञानिक विकार

प्रसन्नता अनुभव करना या मनोव्यथा में रोना, सामान्य क्रियायें हैं जो कभी न कभी हम सभी करते हैं। अधिकांश समय हम वही करते हैं जो परिस्थिति की मांग होती है, अर्थात् हम अपने संवेगों और व्यवहार को समाज में प्रचलित मापदंडों के अनुरूप नियंत्रित करते हैं। परंतु यदि व्यवहार बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के या संदर्भ के विरुद्ध होता है तो आप उसका मूल्यांकन कैसे करेंगे? यह सामान्य व्यवहार नहीं कहा जायेगा। दूसरे शब्दों में यह असामान्य व्यवहार कहा जायेगा। परंतु जीवन में किसी समय हममें से बहुत लोग अतार्किक रूप से या असामान्य व्यवहार करते हैं। क्या इसका मतलब यह है कि हम असामान्य हो गये हैं? संभवतः नहीं।

इसलिए असामान्य व्यवहार की क्या परिभाषा है, वे कौन से कारक हैं जो असामान्य व्यवहार पैदा करते हैं, ऐसे ही अनेक प्रश्न हमारे मन में उत्पन्न होते हैं। इस पाठ में ऐसे ही प्रश्नों के उत्तर और व्याख्या देने का प्रयास किया गया है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे :

- मनोवैज्ञानिक विकार की व्याख्या करने में।
- असामान्यता के प्रमुख प्रकार सूचीबद्ध और व्याख्या करने में।
- चिंता, कायिक रूप, मनःस्थिति, मनोविदलन जैसे मनोवैज्ञानिक विकारों के लक्षणों और विभिन्न प्रकारों का वर्णन करने में।

20.1 मनोवैज्ञानिक विकार

शब्द से ही स्पष्ट है कि कोई भी विकार जो व्यक्ति को सामाजिक क्षेत्र में अप्रभावी ढंग से कार्य के लिए प्रस्तुत करता है, मनोवैज्ञानिक विकार के रूप में जाना जाता है। मनोवैज्ञानिक विकारों को व्यवहारात्मक या मनोवैज्ञानिक लक्षणों की प्रतिकति के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो अत्यधिक पीड़ा पैदा करते हैं और कार्य करने की योग्यता को जीवन के एक या अनेक क्षेत्रों में दूषित कर देते हैं। महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि जो लक्षण व्यक्ति प्रदर्शित करता है निश्चित रूप से प्रचलित सामाजिक और सांस्कतिक मानदण्डों से गंभीर विचलन दर्शाते हैं। यहाँ पर सामाजिक और सांस्कतिक मानकों पर इसलिए बल दिया जा रहा है क्योंकि प्रत्येक संस्कति एक दूसरे से भिन्न होती है। एक संस्कति में कुछ कार्य उसका अनिवार्य भाग होते हैं जो दूसरी संस्कति में गंभीर व्यवधान हो सकते हैं। उदाहरण के लिए जनजातीय समाज में बिलकुल भिन्न मानदण्ड और संस्कति होती है। उनका रहन सहन और आदतें *नगरीय* संदर्भ में असामान्य मानी जायेंगी।

सामान्य से विलग व्यवहार को निश्चित करने के निम्नांकित सात मापदण्ड माने जाते हैं:

1. पीड़ा की अनुभूति : अपने जीवन में अत्यधिक पीड़ा और असुविधा अनुभव करना।
2. कुअनुकूलनशीलता : ऐसी व्यवहार या विचार प्रतिकति जो जीवन को अधिक दुष्कर बना देती है।
3. अतार्किकता : दूसरों के साथ तार्किक ढंग से बातचीत करने में असमर्थता
4. अनिश्चितता : पूर्णतः अनापेक्षित ढंग से कार्य करना
5. स्पष्टता और गहनता : दूसरों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट और गहन रूप से संवेदना अनुभव करना।
6. प्रेक्षक की असुविधा : ऐसे ढंग से व्यवहार करना जो दूसरों के लिए उलझन पैदा करता है।
7. नैतिक और आदर्श मानकों का उल्लंघन : आदतन मानदण्डों को तोड़ना।

जैसा कि हमने पहले पढ़ा है कि असामान्यता और सामान्यता बड़े रूढ़ संप्रत्यय नहीं हैं। मन की अवस्थाओं की तरह, वे निरंतरता में रहते हैं और हममें से बहुत लोग जीवन के विभिन्न चरणों में उनका अनुभव करते हैं।

यह कहा जा सकता है कि असामान्यता मात्रा का विषय है जिसमें एक व्यक्ति का व्यवहार समाज के मान्य मापदण्डों के विपरीत अनुचित माना जाता है और जो व्यक्ति के सामाजिक कार्य करने में और समायोजन में समस्या पैदा करते हैं। आइये अब हम असामान्य व्यवहार के कारणों का अध्ययन करें।

टिप्पणी

20.2 असामान्य व्यवहार के कारण

बहुत से कारक हैं जो असामान्य व्यवहार के कारणों में योगदान करते हैं। उनमें से कुछ हैं:

क. जैविक कारक : व्यवहार को प्रभावित करने वाले जैविक कारणों के अंतर्गत अनुवांशिक कारक, गुणसूत्रों की अक्रिया, मस्तिष्क या अंतःस्रावी ग्रंथियों की अक्रिया जो असामान्य व्यवहार का कारण बनते हैं।

ख. मनोवैज्ञानिक कारक : असामान्य व्यवहार उत्पन्न करने वाले मनोवैज्ञानिक कारकों को पहचानना और मापना कठिन है क्योंकि वे अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करते हैं। इनका प्रभाव संदिग्ध रहता है किंतु यदि कोई बचपन में अपनाई गई प्रक्रियाओं का विश्लेषण करे जैसे अति–सुरक्षा, अतिभोज, असंगत दण्ड एवं पुरस्कार, ये कारक महत्वपूर्ण ढंग से कुअनुकूलनशील व्यवहार के विकास में योगदान करते हैं।

पाठगत प्रश्न 20.1

क. असामान्य व्यवहार के एक तत्व के रूप में अतार्किकता की व्याख्या कीजिए।

____

____

ख. असामान्य व्यवहार के क्या कारण हैं?

____

____

20.3 विकारों के प्रकार

अब तक इस पाठ में हमने असामान्य व्यवहार और उसके कारणों के बारे में पढ़ा है। आइये अब कुछ मनोवैज्ञानिक विकारों के बारे में विस्तार से पढ़ें। कुछ मुख्य मनोवैज्ञानिक विकार निम्नांकित हैं–

1. चिंता विकार
2. मनोदशा विकार
3. मनोविदलन विकार
4. द्रव्यसंबंधी विकार

20.3.1 चिंता विकार

हम में से सभी ने जीवन में चिंता का किसी न किसी रूप में अनुभव किया है। चाहे वह परीक्षाकाल के मध्य हो या साक्षात्कार के परिणाम की प्रतीक्षा हो, या प्रियजन की मत्यु के कारण हो, हम चिंता अनुभव करते हैं। हम इससे अपने ढंग से सुलझाने का प्रयास भी करते हैं, किंतु यदि समय के अंदर उचित ढंग से उसका समाधान नहीं होता तो वह विकार का रूप ले सकती है। चिंता विकार वे विकार हैं जो व्यक्ति के कार्य निष्पादन या सामाजिक कार्यों में अतिचिंता के कारण कमी ला देते हैं। चिंता विकार अनेक प्रकार के हो सकते हैं। जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

1. सामान्यीकत चिंता विकार
2. आतंकित विकार
3. (फोबिया) दुर्भीति
4. मनोग्रस्तात्मक – बाध्य विकार
5. कायजन्य चिंता
6. अभिधातोत्तर तनाव

आइये हम इन विकारों की विशेषताओं पर दष्टिपात करें :

1. **सामान्यीकत विकार :** यह अति सामान्य प्रकार का चिंता विकार है। अयथार्थ या अधिक चिंता इस विकार का मुख्य लक्षण है। आशंका, चक्कर आना, पसीना आना, कंपन, खिंचाव, एकाग्रता में कठिनाई आदि इस विकार के अनेक लक्षण हैं।

2. **आतंकित विकार :** बढ़ी हुई धड़कन, सांस लेने में कठिनाई और असहाय होने का भाव आदि स्पष्ट शरीर क्रियात्मक लक्षणों के साथ गहन चिंता आतंक विकार के मामले में देखे जाते हैं। चिंता के पहले और चिंता समाप्त होने के बाद शांति छा जाती है। इस विकार से पीड़ित व्यक्ति हमेशा चिंतित नहीं रह सकता।

3. **(फोबिया) दुर्भीतिः** दुर्भीति किसी वस्तु या परिस्थिति का अतार्किक भय है। हम सभी को किसी न किसी वस्तु से भय होता है किंतु जब यह भय एक ऐसे स्तर पर पहुँच जाता है यहाँ यह सामान्य क्रियाकलाप को बाधित कर देता है तब इसको दुर्भीति (फोबिया) कहते हैं। सामाजिक भय एक प्रकार की दुर्भीति मानी जाती है – जब कोई मंच पर भाषण देने या अजनबी से बात करने से डरे और कुछ विशिष्ट प्रकार के दुर्भीति जैसे चूहे या बिल्ली का डर।

4. **मनोग्रस्तात्मक - बाध्यविकार :** आग्रही विचार या इच्छायें जो किसी की चेतना में अनजाने ही प्रवेश कर जाते हैं और रोके नहीं जा पाते मनोग्रस्ति कहे जाते हैं। बाध्यता एक क्रिया है जिसे व्यक्ति करते रहने को बाध्य अनुभव करता है यह जानते

हुये भी कि वह अनावश्यक है। आग्रही चिंतन अनेक बार बाध्य क्रियाओं की ओर ले जाता है।

5. **कायजन्य चिंता :** कायजन्य चिंता शारीरिक समस्याओं की ओर संकेत करती है जिनका कोई आंगिक आधार नहीं होता, उदाहरण के लिए थकान, सिरदर्द अस्पष्ट शरीर पीड़ा आदि। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति लक्षणों में ही ग्रसित रहते हैं।

पाठगत प्रश्न 20.2

1. चिंता विकार क्या है?

   ____

2. किन्हीं दो चिंता विकारों को सूचीबद्ध कीजिए।

   ____

20.3.2 मनोदशा विकार

मनोदशा विकार संवेगों के विकार हैं। संवेग की बढ़ी हुई तीव्रता और अवधि को तुरंत मनोवैज्ञानिक और चिकित्सकीय ध्यान की आवश्यकता है। इस विकार से पीड़ित व्यक्ति को सांवेगिक अशांत व्यक्ति कहते हैं। तीन प्रकार के मनोदशा विकार चरित्रांकित किये गये हैं। जैसे अवसादी विकार, द्विध्रुवीय विकार और अन्य विकार। मनोदशा विकार के अंतर्गत अत्यंत कष्टदायक लक्षण जैसे असंतोष और चिंता, भूख में परिवर्तन, निद्रा में विघ्न, मनोप्रेरक कार्य, अचानक वजन घटना, स्पष्ट सोचने में असमर्थता और मत्यु और आत्महत्या का विचार।

कुछ विचारों में जैविक कारक सम्मिलित होते हैं। भेषज चिकित्सा और जैव चिकित्सा इसके लिए अति प्रभावी पाई गई है।

20.3.3 द्रव्य संबंधी विकार

ऐसा पाया गया है कि जब लोग अधिक समय तक दर्द और तनाव से पीड़ित रहते हैं तो नशे जैसे शराब का सहारा लेते हैं। नशा, जैसे शराब, हमारे विचारों, कार्यों और क्रिया कलापों को नकारात्मक ढंग से प्रभावित करता है। ये नशीले पदार्थ लंबे समय तक लिये जाने के कारण अवधान, अभिप्रेरण और गत्यात्मक–समन्वय में गिरावट आ जाती है। नशीले पदार्थों के सेवन से लोग व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में बहुत कुछ खोते हैं। द्रव्य संबंधी विकार केवल शराब के सेवन तक ही नहीं सीमित है किंतु यह पान मसाला, तम्बाकू, अफीम, मारीजुआना आदि से भी संबंधित हैं। इस विकार से पीड़ित व्यक्ति की सहायता के लिए निम्नांकित बातें आवश्यक हैं:

1. निर्विषीकरण
2. पीछे हटने के लक्षणों को सरल बनाने के लिए भेषज प्रयोग
3. प्रतिकूल अनुकूलन
4. सामाजिक सहायता
5. मनोचिकित्सा
6. पुनर्वास
7. रोकथाम और अनुसरण करना

20.3.4 मनोविदलन विकार

विशेषज्ञों का मानना है कि मनोविदलन सर्वाधिक विनाशक मानसिक विकार है। इसको विकारों के समूह के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसको मूलभूत मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं जैसे अवधान, प्रत्यक्षीकरण, विचार, संवेग और व्यवहार के विखंडन द्वारा चिंत्रांकित किया जा सकता है। यह विखंडन गंभीर कुसमंजन की ओर ले जाता है। मनोविदलन का रोगी अपने आस–पास घटने वाली घटनाओं को सही ढंग से नहीं देख पाता और वे अक्सर वह सुनते और देखते हैं जो वहाँ नहीं होता। उनके सोचने का ढंग अस्त–व्यस्त और असंगठित होता है और वे दूसरों से सही ढंग से बातचीत करने में असफल रहते हैं।

मनोविदलन का चित्रांकन नीचे की सारिणी में दिया जा रहा है :

प्रकार	लक्षण
1. कैटाटोनिया	गत्यात्मक क्रिया के अस्वाभाविक ढंग, बोलने में व्यवधान, जैसे बात का दोहराना या कठोर आसन।
2. असंगठित	मौखिक असमानता, कमजोर विकसित विचार
3. व्यामोही	एक या अधिक विचारों के समूह में तल्लीन
4. अंतरन रहित	मतिभ्रम, असंगत
5. अवशिष्ट	विनिवर्तन, अभिप्रेरण का अभाव आदि

मनोविदलन के मूल लक्षण हैं विचारों की बाधा, प्रत्यक्षीकरण की बाधा, सांवेगिक अभिव्यक्ति में बाधा, बोलने में बाधा, सामाजिक विनिवर्तन, निम्न अभिप्रेरण।

20.3.5 व्यक्तित्व विकार

राममोहन एक कंपनी में लिपिक है। एक लिपिक के नाते दिये गये कार्य को करने योग्य है। किंतु जब कोई परिस्थिति सामने आती है और उसे निर्णय लेना होता है तो ऐसा करने

में वह समर्थ नहीं होता। उसका अपने वरिष्ठ लोगों के साथ अच्छा संबंध है क्योंकि वह अत्यंत विनम्र है, किंतु जब उसकी प्रोन्नति का प्रश्न आता है तो उस पद के लिए उसके अधिकारी उसकी क्षमता के बारे में आश्वस्त नहीं होते।

यह आश्रित व्यक्तित्व विकार का एक प्रचंड मामला है जहाँ व्यक्ति सदैव अपनी चिंता किये जाने की आवश्यकता दर्शाता है और कोई भी निर्णय लेने की क्षमता प्रदर्शित करने की क्षमता नहीं दर्शा पाता। व्यक्तित्व विकार का दूसरा रूप समाज विरोधी व्यक्तित्व विकार है जिसमें व्यक्ति अनुत्तरदायित्वपूर्ण तथा समाज को तोड़ने वाला व्यवहार जैसे संपत्ति नष्ट करना, चोरी करना, आदि करता है।

व्यक्तित्व विकार सोचने, अनुभव करने और व्यवहार करने की कुअनुकूलन शैली द्वारा चरित्रांकित किया जाता है जो व्यक्ति के सामान्य रूप से कार्य करने में बाधा डालता है।

पाठगत प्रश्न 20.3

1. द्रव्य संबंधी विकार ग्रस्त व्यक्ति की मदद में उठाये जाने वाले पगों की सूची बनाइये।

   ____

   ____

2. मनोविदलन विकार के कोई दो लक्षण बताइये।

   ____

   ____

आपने क्या सीखा

- कोई विकार जो व्यक्ति को समाज में प्रभावी ढंग से कार्य करने से रोकता है मनोवैज्ञानिक विकार माना जाता है।
- व्यवहार में प्रचलित सामाजिक एवं सांस्कतिक मानदंडों से गंभीर विचलन दिखाई पड़ना चाहिए।
- किसी व्यवहार को असामान्य निश्चित करने के लिए कुछ विचार योग्य बातें मापदण्ड के रूप में प्रयोग की जाती हैं – कुअनुकूलन, चिड़चिड़ापन, संदिग्ध स्पष्टता, प्रेक्षक की असुविधा और नैतिक मानदण्डों का उल्लंघन।

टिप्पणी

- असामान्य व्यवहार का कारण जैविक या मनोवैज्ञानिक हो सकता है।
- कुछ प्रमुख मनोवैज्ञानिक विकार, चिंता, मनोदशा, द्रव्य संबंधी, मनोविदलन आदि हैं।
- चिंता विकार व्यक्ति के कार्य संपादन को शिथिल कर देता है।
- चिंता विकार के विभिन्न प्रकार – कायजन्य चिंता, सामान्यीकत, आतंकित, दुर्भीति (फोबिया), मनोग्रस्तात्मक बाध्य विकार हैं।
- मनोविदलन अत्यंत कष्टकारक मनोवैज्ञानिक विकार है। मनोविदलन में मूल मनोवैज्ञानिक प्रक्रियायें खण्ड–खण्ड हो जाती हैं। मनोविदलन के विभिन्न प्रकार – कैटाटोनिया, असंगठित, व्यामोही, अंतर रहित, अवशिष्ट।

21

समूह प्रक्रम

मानव जीवन मुख्यतः विभिन्न प्रकार के समूहों पर निर्भर करता है। हम जन्म लेने के बाद विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए साथी मनुष्यों पर निर्भर रहते हैं। हम अधिक समय तक लोगों के साथ परस्पर क्रिया करते हैं। एक बच्चा एक परिवार में जन्म लेता है, स्कूल जाता है और मित्र बनाता है। एक प्रौढ़ व्यक्ति किसी संगठन में कार्य करता है, परिवार के सदस्यों की आवश्यकताओं की देखभाल करता है, और दूसरे लोगों के साथ विभिन्न क्रिया–कलापों में संलग्न रहता है। उसका विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ कार्य करना बहुत कुछ समूह के प्रकार और उस परिस्थिति के संदर्भ में जिसमें वह कार्य करता है से निश्चित होता है। इस पाठ में आप समूह के स्वरूप, समूह निर्माण की प्रक्रिया और एक समूह का सदस्य होने के लाभ और हानि आदि के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- समूह के संप्रत्यय का वर्णन करने में,
- समूह में कार्य करने के ढंग को समझने में,
- समूह प्रक्रियाओं के स्वरूप को स्पष्ट करने में,
- समूह निर्माण में विभिन्न अवस्थाओं की चर्चा करने में,
- समूह के प्रकारों का वर्णन करने में,
- व्यक्ति के व्यवहार पर समूह के प्रभाव की चर्चा करने में।

21.1 समूह का स्वरूप

जब दो या अधिक लोग आपस में अन्तःक्रिया करते हैं हम कहते हैं कि समूह अस्तित्व में आ गया है। परस्पर अन्तःक्रिया करने और सामाजिक संबंध बनाने के बहुत से कारण हैं। उदाहरण के लिए विद्यार्थी कक्षा के बाहर अध्ययन में एक दूसरे के सहयोग हेतु परस्पर अन्तःक्रिया करते हैं। दूसरे परस्पर अन्तःक्रिया कर सकते हैं क्योंकि वे एक स्थान पर रहते हैं और उनका समान लक्ष्य होता है। वे साथ–साथ खेलना चाह सकते हैं और अपनी मैत्री की आवश्यकता पूरी कर सकते हैं। कुछ लोग अचानक मिलते हैं किंतु परस्पर अन्तःक्रिया करते रहते हैं क्योंकि उनको एक दूसरे का साथ संतोषजनक लगता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रत्येक समूह एक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष करता है। लक्ष्य जितना अधिक स्पष्ट होता है, समूह के सदस्यों में परस्पर अन्तःक्रिया और सहयोग उतना ही अधिक होता है। समूह के सदस्यों के मध्य संबंध कुछ समय (मास या वर्ष) के लिए स्थायी रहते हैं। समूह की एक रचना होती है और लोग सोचते हैं कि वे समूह का एक अंग है या उनमें अपनेपन की अनुभूति होती है।

भौतिक स्तर पर किसी उद्देश्य के लिए सामूहिकता को समूह कह सकते हैं। पाँचवी कक्षा के बच्चों का एक समूह होता है, बैंक अधिकारियों की एक समिति एक समूह है, एक ओर से बड़े लट्ठे को काटने वाले दो बढ़ई एक समूह का निर्माण करते हैं, फुटबाल खेलने वाली एक टीम भी समूह है आदि–आदि। इन सारे समूहों का अस्तित्व केवल भौतिक स्तर पर होता है और ये सीधा आमने–सामने की परस्पर अन्तःक्रिया करते हैं। इन समूहों में समूह के सदस्यों के मध्य सीधी और तुरंत बातचीत संभव होती है और ऐसा सामान्यतः होता रहता है।

वे लोग जिनमें कतिपय समान विशेषतायें होती हैं, वे सभी समूह बनाते हैं। उदाहरण के लिए एक कक्षा के सभी सिक्ख विद्यार्थी एक समूह कहे जा सकते हैं, एक छोटी कक्षा में सभी बायें हाथ से कार्य करने वाले विद्यार्थी एक दूसरा समुच्चय है, समुच्चय के सभी सदस्यों में कम से कम एक विशेषता समान है जो दूसरों में नहीं हो सकती। ऐसे समुच्चय के सदस्यों के मध्य कोई आमने–सामने बातचीत होना आवश्यक नहीं है। एक सदस्य दूसरे सदस्य को नहीं भी जानता हो सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि एक समूह दो या अधिक व्यक्ति से बनता है जिनमें अंतःक्रिया होती है और लक्ष्य समान होते हैं। उनके संबंधों में स्थायित्व होता है, और एक दूसरे पर निर्भर करते हैं और अपने को उस सामूहिकता का अंग मानते हैं।

एक समूह की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता परस्पर निर्भरता है। यह व्यवहार परिणामों और कार्यों से संबंधित हो सकती है। आइये हम परस्पर निर्भरता के तीन प्रकारों की जांच करें:

1. व्यवहार की परस्पर निर्भरता का संकेत इस तथ्य की ओर है कि एक सदस्य का व्यवहार दूसरे सदस्य के व्यवहार को उभारता है जो परिणामस्वरूप संपूर्ण समूह के कार्य करने को प्रभावित करता है।

2. परिणाम की परस्पर निर्भरता का संकेत इस तथ्य की ओर है कि प्रत्येक व्यक्ति की उपलब्धि (पुरस्कार की प्राप्ति) केवल उसी के व्यवहार का परिणाम नहीं है अपितु समूह के दूसरे सदस्यों के व्यवहार पर भी निर्भर करता है। उदाहरण के लिए आप सड़क पर चल रहे हैं आप तब तक सुरक्षित हैं जब तक कोई दूसरा व्यक्ति सामने या पीछे से नहीं टकरा जाता। इसका दूसरा अर्थ भाग्य की सहभागिता है, तात्पर्य किसी घटना का परिणाम समूह के प्रत्येक सदस्य को कम या अधिक प्रभावित करता है।

3. कार्य परस्पर निर्भरता का संकेत इस तथ्य की ओर है कि किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए समूह के सदस्यों को अपनी क्रियाओं में सामंजस्य लाने की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, फुटबाल या क्रिकेट खेलने के लिए खेल में जीत के लिए विभिन्न खिलाड़ियों की क्रियाओं में सामंजस्य नितांत आवश्यक है। वे आज्ञा–पालन के सिद्धांत के आधार पर कार्य करते हैं।

पाठगत प्रश्न 21.1

1. एक समूह की परिभाषा कीजिए।
2. एक समूह की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता क्या है?

21.2 समूह कैसे कार्य करता है?

जब भी एक समूह बनता है या संगठित होता है वह कतिपय मानदण्डों के आधार पर कार्य करता है। समूह के सदस्य भी विभिन्न भूमिकायें अदा करते हैं। वे प्रस्थिति में भी भिन्न होते हैं। अंततः एक समूह उच्च कोटि से समन्वित हो सकता है और सदस्य गण संसक्ति में सहभागी हो सकते हैं या नहीं। अच्छा होगा यदि हम समूह के कार्यों के विभिन्न आयामों के बारे में स्पष्ट हो लें।

क. भूमिकायें : एक समूह में विभिन्न सदस्यों से विभिन्न भूमिकायें अदा करने की अपेक्षा होती है। आप को याद होगा कि अनेक समितियों में हम देखते हैं कि लोग अध्यक्ष, मंत्री, कोषाध्यक्ष आदि की भूमिका में रहते हैं। ये सभी विभिन्न भूमिकायें अदा करते हैं जो समूह के लक्ष्य प्राप्त करने में सहायक होते हैं।

ख. मानदण्ड : प्रत्येक समूह कतिपय नियमों के अनुसार कार्य करता है। ये नियम ही मानदण्ड बनाते हैं। वे सुस्पष्ट या अव्यक्त हो सकते हैं और समूह के सदस्यों के व्यवहार को चालित करते हैं। यह अपेक्षा की जाती है कि सदस्य मानदण्डों को स्वीकार करें।

ग. प्रस्थितिः विभिन्न भूमिकाओं के साथ विशेष प्रकार की दर्जा या समूह में स्थिति होती है। यह स्थिति दिये गये कार्य की प्रकति और निर्णय लेने को प्रभावित करने

वाली शक्ति से संबंधित होती है। इस प्रकार समूह में स्थिति भिन्नता दष्टिगोचर होती है।

21.3 समूह की प्रक्रियाओं की प्रकति

समूह की प्रकति जानने के बाद आप की रूचि यह जानने में होगी कि लोग समूह के सदस्य क्यों बनते हैं, समूहों का निर्माण कैसे होता है, और समूह के सदस्य के क्या अनुभव होते हैं। आइये हम इन प्रश्नों की विस्तत जाँच करें।

समूह का सदस्य बनने के कारण

लोग किसी समूह का सदस्य मुख्यतः इसलिए बनते हैं क्योंकि उन्हें उससे कुछ लाभ मिलता है या आवश्यकतायें संतुष्ट होती हैं। ये कभी–कभी कतिपय इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने के अवसर प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए एक फुटबाल का खिलाड़ी फुटबाल टीम का सदस्य बनना पसंद करेगा क्योंकि यह उसे फुटबाल खेलने योग्य बनायेगा। एक समूह व्यक्ति के लिए कम से कम चार तरीके से सहयोग करता है :

1. लोग समूह का सदस्य इसलिए बनना चाहते हैं क्योंकि समूह उन लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता करते हैं जो कोई व्यक्तिगत रूप से नहीं प्राप्त कर सकता। उदाहरण के लिए आप किसी समूह के सदस्य इसलिए बनते हैं क्योंकि आपका मित्र या शिक्षक उस समूह का सदस्य है।
2. आप किसी समूह के सदस्य इसलिए बनते हैं क्योंकि आपको लगता है कि समूह के सदस्य संसाधनों (आर्थिक या अन्य) से युक्त हैं जो किसी समय आपकी भी मदद कर सकते हैं।
3. कभी–कभी लोग सुरक्षा की आवश्यकता पूरी करने के लिए किसी समूह का सदस्य बनते हैं। लोग सुरक्षा पा जाते हैं जब वे एक निश्चित समूह के सदस्य बन जाते हैं।
4. समूह अपने सदस्यों को एक सामाजिक सकारात्मक पहचान प्रदान करते हैं। लोग जो विभिन्न समूहों के सदस्य होते हैं उनमें अमुक समूह का सदस्य होने के नाते सकारात्मक अनुभूति और सकारात्मक आत्म प्रशंसा पैदा होती है।

सारांश में लोग समूह का सदस्य इसलिए बनते हैं क्योंकि समूह लक्ष्य प्राप्ति में सहयोग करते हैं, संसाधनयुक्त होते हैं, सुरक्षा की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं और सामाजिक पहचान प्रदान करते हैं।

समूह अनुभवों का परिणामः संसक्ति

जब लोग काफी समय तक एक साथ रहते हैं तो बहुत से परिणाम सामने आते हैं। उदाहरण के लिए किसी समूह का सदस्य होना समूह के सदस्यों को संतोष देता है।

हम सभी भारतीय होने पर या किसी विशेष स्कूल में अध्ययन करने पर, या किसी विशेष संस्था में काम करने पर गर्व अनुभव करते हैं। इस प्रकार, संतोष की अनुभूति समूह को संसक्ति की ओर ले जाती है। एक संसक्त समूह में उच्च कोटि की एकात्मकता और सर्वसम्मति होती है। समूह की संरचना में शक्तियाँ होती हैं जो सदस्यों पर समूह में बने रहने के लिए कार्य करती है।

21.4 समूह निर्माण की अवस्थायें

समूह का निर्माण चार अवस्थाओं से गुजरता है। यह हैं :

क. दिशा दर्शन ख. क्रिया विधि

ग. नियम–कानून ग. नियमितीकरण

आइये हम समूह निर्माण के चरणों की महत्वपूर्ण विशेषताओं के बारे में जानकारी लें :

प्रथम अवस्थाः दिशा दर्शन

समूह निर्माण के प्रारंभिक चरण में संभावित सदस्य कुछ समय तक एक साथ काम करते रहने के लाभ–हानि को आँकने का प्रयास करते हैं। इस चरण पर लोग समूह के लक्ष्यों और अपनी संभावनाओं का आकलन करते हैं। वे अमुक समूह का सदस्य बनने के पहले अपने लाभ–हानि की अधिक चिंता करते हैं। लोग एक दूसरे की रूचियों, योग्यताओं और ज्ञान आदि के बारे में सवाल–जवाब करने में अधिक समय लगाते हैं।

दूसरा चरणः क्रिया विधि

जब कोई व्यक्ति यह तय कर लेता है कि एक विशिष्ट लक्ष्य प्राप्त करने के लिए समूह का निर्माण उसके हित में है, तो उसका ध्यान लक्ष्य प्राप्त करने के साधनों पर केंद्रित हो जाता है। अब तक सदस्य गण, समूह के लक्ष्य को प्राप्त करने में अपने योगदान, अन्य उपलब्ध संसाधनों और समूह के सदस्यों के मिलने वाले लाभों के बारे में स्पष्ट हो चुके होते हैं।

तीसरा चरणः नियम-कानून

लंबे समय तक परस्पर अंतःक्रिया करते–करते समूह के सदस्यों के सामाजिक आदान–प्रदान का स्वरूप उभर आता है। प्रत्येक की भूमिका और उसके कार्य भी स्पष्ट हो जाते हैं। इसी चरण पर एक सदस्य समूह का नेतत्व संभाल लेता है और समूह की क्रियाओं को रूप प्रदान करने में निर्णायक भूमिका अदा करने लगता है। अन्य सदस्य उस नेता से मार्गदर्शन प्राप्त करने लगते हैं।

चौथा चरणः नियमितीकरण

इस चरण पर मानदण्ड और भूमिकायें जो तीसरे चरण पर उभरकर आती हैं, नियमिती हो जाती हैं। समूह के सदस्य लिखित या मौखिक रूप से इन नियमों को स्वीकार कर लेते हैं और उनके पालन की अपनी इच्छा प्रकट करते हैं।

पाठगत प्रश्न 21.2

1. लोग समूह के सदस्य क्यों बनते हैं?
2. समूह निर्माण के चार चरणों का उल्लेख कीजिये।

21.5 समूह के प्रकार

सामान्य रूप से समूह दो प्रकार के होते हैं :

1. प्राथमिक समूह
2. गौण समूह

प्राथमिक समूह में विशेषकर निरंतर, निकट का और प्रत्यक्ष साहचर्य और सहयोग मिलता है। प्राथमिक समूह सबसे अच्छा उदाहरण परिवार है, जहाँ परस्पर निकटता और प्रत्यक्ष अंतःक्रिया देखी जा सकती है। प्राथमिक समूह के सदस्यों का समान भाग्य होता है। प्राथमिक समूह सभी सामाजिक संगठनों का केंद्रक होता है। ऐसे समूह बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में बहुत अधिक प्रभाव डालते हैं।

इसके विपरीत गौण समूह विशेष रूचि समूह होते हैं। उदाहरण के लिए इन समूहों की सदस्यता ऐच्छिक होती है। कोई किसी व्यावसायिक समूह का सदस्य हो सकता है जैसे डाक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, कलाकार, आदि–आदि। इन समूहों के सदस्यों के मध्य अनिवार्य रूप से प्रत्यक्ष अंतःक्रिया नहीं होती फिर भी वे सीधे संपर्क में आ सकते हैं।

लोग अपनी प्रतिष्ठा, मैत्री आदि मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए गौण समूह का सदस्य बनते हैं। जब उनकी आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं तो वे गौण समूहों के बारे में अपनी धारणा बदल भी सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 21.3

1. दो प्रकार के कौन से समूह होते हैं?
2. गौण समूह का कोई उदाहरण दीजिये।

21.6 व्यक्ति के व्यवहार पर समूह के प्रभाव

एक व्यक्ति के किसी समूह का सदस्य बनने पर उसका व्यवहार अनेक प्रकार से प्रभावित होता है। आइये हम कुछ महत्वपूर्ण प्रभावों को विस्तत रूप से जाँच लें :

निर्णय लेना

देखा गया है कि अकेला होने पर व्यक्ति निर्णय लेते समय कम जोखिम लेता है। दूसरी ओर एक समूह में रहने पर यह दिखाई पड़ता है कि व्यक्ति अधिक जोखिम लेने को

तत्पर हो जाता है। एक पूरा समूह व्यक्ति की अपेक्षा अधिक जोखिम लेता है। यह घटनाक्रम जोखिम बदलाव जाना जाता है।

प्रश्न यह उठता है कि व्यक्ति की अपेक्षा समूह अधिक जोखिम क्यों उठाता है? विश्वास किया जाता है कि उत्तरदायित्वों के विस्तार के कारण ऐसा होता है। असफलता की स्थिति में दूसरे लोग भी भागीदार होते हैं और हर व्यक्ति के प्रति आक्षेप को कर देता है और जोखिम के लिये समझाने–बुझाने वाली बात समाप्त हो जाती है। यदि समूह के अधिकांश सदस्य विचाराधीन समस्या की प्रतिक्रिया स्वरूप जोखिम को ही उचित मानते हैं तो अधिकांश कारण और औचित्य चर्चा में आने पर जोखिम का ही समर्थन करेंगे।

सामाजिक सुविधा

सामाजिक सुविधा उस प्रभाव की ओर इंगित करती है जो दूसरों की उपस्थिति से किसी व्यक्ति के कार्यनिष्पादन पर पड़ता है। अपने व्यवहार का स्मरण करें। जब आप कोई सरल कार्य संपादित कर रहे हैं या कोई ऐसी चीज जिसे आप अच्छी तरह जानते हैं, ऐसे में एक संभावना होती है कि समूह के दूसरे सदस्य जैसे माता–पिता या शिक्षक आपके कार्य का मूल्यांकन करेंगे और आप अपना सर्वोत्तम कार्य निष्पादन दिखाने का प्रयास करते हैं। दूसरी ओर, ऐसी सजगता आपके कार्य निष्पादन की योग्यता में व्यवधान डालती है जबकि कार्य जटिल है और आपका निष्पादन कम हो जाता है।

पाठगत प्रश्न 21.4

1. एक समूह व्यक्ति की अपेक्षा अधिक जोखिम क्यों लेता है?
2. सामाजिक सुविधा का क्या प्रभाव होता है।

आपने क्या सीखा

- एक लक्ष्य के साथ कुछ समान विशेषतायें रखने वाले व्यक्ति एक समूह का निर्माण करते हैं।
- एक समूह बड़ी जनसंख्या के अंदर उपजनसंख्या है जिससे व्यक्तियों को उसमें और उसका होने की पहचान मिल सकती है।
- परस्पर निर्भरता एक समूह की महत्वपूर्ण विशेषता है। तात्पर्य है कि एक सदस्य का व्यवहार दूसरे सदस्य के व्यवहार को उभारता है, परिणामस्वरूप समूह को अमुक तरीके से कार्य करने को प्रभावित करता है।
- लोग विभिन्न कारणों से समूह के सदस्य बनते हैं क्योंकि समूह लाभदायक है और समूह के सदस्य संसाधनों और उत्तरदायित्वों वाले होते हैं जिनमें सहभागिता मिल सकती है।
- संसिक्तता लोगों के विश्वास की ओर इंगित करती है कि किसी एक समूह का सदस्य होने के नाते वह पुरस्कत होगा।

- समूह का निर्माण चार चरणों पर होता है वे हैं : 1. दिशादर्शन, 2. क्रिया विधि, 3. नियम–कानून, 4. नियमितीकरण।
- समूह दो प्रकार के होते हैं : प्राथमिक और गौण।
- समूह निर्माण व्यक्ति के व्यवहार को दो प्रकार से प्रभावित करता है : 1. निर्णय लेना, 2. कार्य संपादन।

पाठांत अभ्यास

1. एक समूह को परिभाषित कीजिये।
2. एक समूह की विशेषताओं को सूचीबद्ध कीजिये।
3. समूह के विकास के चार चरणों का वर्णन कीजिये।
4. किसी समूह का अंग होना व्यक्ति के व्यवहार को कैसे प्रभावित करता है।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

21.1 1. जब दो या अधिक लोग समान लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अंतःक्रिया करते हैं तो एक समूह अस्तित्व में आता है।

2. परस्पर निर्भरता।

21.2

1. लोग समूह का सदस्य बनते हैं क्योंकि समूह :

लक्ष्य प्राप्ति में सहायता करता है: • संसाधनयुक्त होता है

• सुरक्षा की आवश्यकता की पूर्ति करता है • सामाजिक पहचान प्रदान करता है।

2. दिशा दर्शन, क्रिया विधि, नियम–कानून, नियमितीकरण

21.3

1. प्राथमिक और गौण समूह   2. शिक्षकों की समिति

21.4

1. क्योंकि असफलता की स्थिति में दूसरे लोग भी आक्षेप में भागीदार होते हैं।
2. जब एक व्यक्ति के कार्य निष्पादन में दूसरे लोगों के कारण सुधार आता है तो इसे सामाजिक सुविधा कहा जाता है।

पाठांत अभ्यास के संकेत

1. संदर्भ 21.1   2. संदर्भ 21.1

3. संदर्भ 21.4   4. संदर्भ 21.6

22

व्यक्ति प्रत्यक्षीकरण और अन्तर्वैयक्तिक आकर्षण

हम पहले ही देख चुके हैं कि आत्म की अनुभूति की प्राप्ति एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। एक नवजात आत्म और दूसरों में अंतर करने के योग्य नहीं हो सकता है। हमारा आत्म ज्ञान इस अर्थ में विचित्र है कि हम इस बात के लिए जागरूक हैं कि हमारा एक आत्म है। इस प्रकार की आत्म चेतना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

इस बात का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है कि आत्म के ज्ञान के लिए कुछ प्रकार के सामाजिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। प्रारंभ में शिशु को बालक और बालिका के संसार जिसमें अन्य लोग आते हैं में भेद का अभाव होता है। बच्चा सामाजिक वातावरण में निमग्न होता है। वहीं से धीरे–धीरे बच्चा आत्म की सजगता प्राप्त करता है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगे :

- आत्म की अभिवद्धि और विकास के लिए सामाजिक वातावरण के महत्व को समझने में।
- अंत:वैयक्तिक आकर्षण को निर्धारित करने वाले कारकों की पहचान करने में और
- आत्म–प्रत्यक्षीकरण में महत्वपूर्ण दूसरों के साथ अंत:क्रिया की भूमिका को समझने में।

22.1 दूसरों का प्रत्यक्षीकरण

शैशव के अंतिम चरण पर बच्चे आत्म के प्रतिनिधित्व की रचना एक वस्तुगत इकाई के रूप में प्रारंभ कर देते हैं। संज्ञानात्मक और भाषायिक विकास दूसरों के अंतःक्रिया को सरल बना देता है। दूसरे हमारी विशेषताओं को स्पष्ट करने में सहायता करते हैं। हम उनकी अपेक्षा के अनुकूल अपने व्यवहार को समायोजित कर लेते हैं। भाषा पर कुछ अधिकार के साथ बच्चे अपने आत्म ज्ञान को व्यवस्थित कर लेते हैं। पहचानना या निश्चित करना कि कोई वस्तु 'मेरी' है अन्य सभी वस्तुओं से 'मुझे' के कुछ पूर्व कल्पित अंतर को देखा जा सकता है। तीसरे वर्ष तक बच्चे में कुछ विशेषतायें प्रदर्शित करने की रूझान होती है। वे आंतरिक प्रक्रियाओं, धारणा, इच्छाशक्ति के अस्तित्व की ओर संकेत करने लगते हैं। जैसे–जैसे बच्चों का आत्म संप्रत्यय बढ़ता है अंतर और अधिक स्पष्ट हो जाता है। यह देखा जा सकता है कि आत्मसंप्रत्यय मूलरूप से एक सामाजिक क्रिया है। परिवेश में अन्य लोग उन्हें संदर्भ और मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए सामान्य रूप से पाया जाता है कि माता–पिता बच्चों के कार्यों को स्वीकार या अस्वीकार करते हैं। वे लक्ष्य सुझाते हैं और आकांक्षाओं को प्रोत्साहित करते हैं। वे बच्चों को परिवेश में अनेक घटनाओं की बातें करते हैं। ये समस्त स्थितियाँ बच्चों को आत्म के बारे में सीखने में सहायक होती हैं। विशेषकर बच्चे संवेगात्मक नियमन के बारे में सीखते हैं।

फिर भी आत्म को मात्र दूसरों के द्वारा आकार देने वाली वस्तु समझना गलत है। यह एक जटिल सामाजिक उत्पाद है जिसमें बच्चे के अपने अनुभवों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

आत्म के बारे में सीखते समय बच्चों में यह समझ भी विकसित होती है कि लोग अन्य वस्तुओं से भिन्न होते हैं, उनकी कतिपय विशेषतायें होती हैं और वे स्वतंत्र मनोवैज्ञानिक अस्तित्व रखते हैं। शिशु दूसरे व्यक्तियों में अधिक रूचि लेते हैं। वे वस्तुओं और व्यक्तियों में अंतर के बारे में जागरूक होते हैं। यह पाया गया है कि दूसरों के बारे में समझ आत्म की समझ से संबंधित होती है। बच्चे दूसरों की आंतरिक प्रक्रियाओं जैसे अनुभूति, विचार और अभिप्राय के प्रति जागरूकता की प्रारंभिक अवस्था में होते हैं आयु के बढ़ने के साथ ही उनकी जागरूकता बढ़ती और विस्तत होती जाती है। स्कूल जाने वाले बच्चे दूसरों का जटिल और विस्तत वर्णन करते हैं। बच्चे सक्रिय रूप से एक सामाजिक समझ बना लेते हैं। इसमें बच्चों की स्वयं अपनी और दूसरों की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं में समानता खोजना भी शामिल होता है।

22.2 धारणा निर्माण

दूसरों का प्रत्यक्षीकरण करना हमारे दैनिक जीवन का महत्वपूर्ण कार्य है। जब आप किसी व्यक्ति से मिलते हैं तो उसके प्रति एक धारणा बना लेते हैं। इसके लिए उसे देखना और उसके द्वारा बोले गये कुछ शब्द ही पर्याप्त होते हैं। जब हम दूसरों को देखते हैं हम केवल कुछ छोटी–छोटी सूचनायें नहीं जोड़ते। बल्कि हम दूसरों के कुछ गुणों को

देखते हैं। हम एक गत्यात्मक पूर्ण बनाते हैं। हम पूर्ण व्यक्ति के प्रति एक धारणा बना लेते हैं। गुण कहीं शून्य में नहीं रहते वे एक दूसरे से अंतःक्रिया करते हैं और एक नया पूर्ण निर्मित कर लेते हैं।

धारणा बनाते समय अपने विश्वस्त या प्रशंसित स्रोतों पर अधिक महत्व के साथ निर्भर करते हैं। इस तरह कभी–कभी हम नकारात्मक सूचना पर बल देते हैं। हम असाधारण सूचना को भी महत्व देते हैं। अंततः प्रथम धारणाओं पर बाद की सूचना की अपेक्षा अधिक बल दिया जाता है। ऐसा पाया गया है कि दूसरों के बारे में कोई निर्णय करते समय उनके व्यवहार के उदाहरण याद करते हैं और उन्हीं पर अपना निर्णय आधारित करते हैं। धारणा बनाते और निर्णय लेते समय हम पूर्ववर्ती सारांश को भी मन में रखते हैं।

पाठगत प्रश्न 22.1

सत्य और असत्य बताइये :

1. प्रारंभ में बच्चा आत्म और दूसरों में अंतर नहीं कर सकता। (सत्य/असत्य)
2. बच्चे के बढ़ने के साथ उसका आत्म संप्रत्यय निश्चित हो जाता है। (सत्य असत्य)
3. विकसित होते हुए व्यक्ति को परिवेश के लोग आवश्यक संदर्भ और मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। (सत्य असत्य)
4. धारणा निर्माण करते समय हम विश्वस्त स्रोतों पर निर्भर करते हैं (सत्य असत्य)
5. प्रारंभिक अवस्था से ही बच्चे दूसरों की भावनाओं के प्रति अतिसंवेदनशील होते हैं। (सत्य असत्य)

22.3 सामाजिक जगत के प्रति व्यवहार

अन्तरवैयक्तिक आकर्षण

हम उस सामाजिक जगत में रहते हैं जिस में और लोग भी रहते हैं। हम प्रायः उनसे परिवार, स्कूल, बाजार, लगभग हर जगह में अंतःक्रिया करते हैं। दूसरों के संपर्क में आकर व्यक्ति आत्म की अनुभूति करता है। इस प्रकार व्यक्तियों के मध्य होने वाली प्रक्रियायें या तकनीकी रूप से अंतःवैयक्तिक प्रक्रियायें हमारे जीवन का केंद्र बन जाती हैं। समाज मनोवैज्ञानिकों ने विस्तार से इन विभिन्न प्रक्रियाओं की खोज की है। यहाँ हम दो प्रक्रियाओं के बारे में जानेंगे – आकर्षण और दीर्घकालीन संबंध।

शारीरिक आकर्षण : सामान्यतः पाया गया है कि शारीरिक दष्टि से आकर्षक लोगों के प्रति हम अधिक सकारात्मक प्रतिक्रिया करते हैं। हम बहुधा आकर्षक व्यक्तियों के प्रति अधिक सुखद प्रतिक्रिया करते हैं।

समानता और पूरकता : हम अपने से समान लोगों को पसंद करते हैं। कहा जाता है समान उड़ान वाले पंछी एक साथ उड़ते हैं। दूसरे शब्दों में एक सी अभिवति और विचार रखने वाले लोगों को हम अधिक पसंद करते हैं। पूरकता वह स्थिति है जिसमें भिन्न होते हुये भी लोग एक दूसरे के पूरक होते हैं। और वे एक दूसरे से अंतःक्रिया करना पसंद करते हैं। ऐसा आकर्षण अमीर और गरीब के बीच भी हो सकता है।

अंतरंगता और निकटता : निकटता का तात्पर्य शारीरिक समीपता से है। पाया गया है कि मित्रता अक्सर उन लोगों के मध्य विकसित होती है जिन्हें हम बराबर देखते रहते हैं। इस प्रकार अंतरंगता और निकटता दूसरे व्यक्तियों के प्रति आकर्षण पैदा करती है। बार–बार अंतरवैयक्तिक संपर्क अंतरवैयक्तिक आकर्षण की ओर ले जाता है।

पारस्परिक पसंद : हम किसी व्यक्ति को पसंद करते हैं या नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि दूसरा हमें पसंद करता है या नहीं। अक्सर हम उन लोगों से बचना चाहते हैं जो हमारे प्रति नकारात्मक धारणा रखते हैं और उन लोगों का साथ चाहते हैं जो हमें पसंद करते हैं।

अनुरागः अनुराग उन भावनाओं और संवेगों की ओर संकेत करते हैं जो गहनता और दिशा में भिन्न होते हैं। इस प्रकार हमारी भावनायें अति गहन या कम गहन और सकारात्मक या नकारात्मक हो सकती हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि कोई व्यक्ति कुछ ऐसा करता है जिससे सकारात्मक या नकारात्मक भाव उभरते हैं उसे हम पसंद या नापसंद करते हैं। यदि कोई व्यक्ति सकारात्मक या नकारात्मक भावों से मात्र जुड़ा भी होता है तो उसे हम पसंद या नापसंद करते हैं।

सम्बद्धता की आवश्यकता : हम अपने अवकाश का अधिकांश समय दूसरों के साथ अंतःक्रिया में लगाते हैं क्योंकि सम्बद्धता अस्तित्व में बने रहने के अवसर बढ़ाती है। इसने स्थायी सम्बन्ध के गुण या आवश्यकता की दिशा दिखाई है। स्थितिजन्य विशेषतायें भी इस आवश्यकता को उभार सकती हैं।

स्थायी संबंध : हमारे बहुत से संबंध बड़े लंबे समय तक चलते रहते हैं। वे आजीवन हो सकते हैं जैसे मित्रता, विवाह आदि। संबंध बहुत प्रकार के हो सकते हैं। उदाहरण के लिए उनमें आत्मीयता, वचनबद्धता और गुण की मात्रा में अंतर हो सकता है।

बहुत से लोग संबंध को एक प्रकार का सामाजिक अनुबंध मानते हैं। हम संबंधों को पुरस्कार स्वरूप मानते हैं जो हमें संबंध स्थापित होने पर मिलता है। जिन क्षेत्रों में हममें कुछ कमी होती है उनमें मिलने वाला पुरस्कार अधिक मूल्यवान होता है। फिर भी सभी प्रकार के निकट संबंधों में परस्पर निर्भरता सबसे महत्व का समानतत्व है। व्यक्ति के रूप में बच्चे माँ के द्वारा विभिन्न प्रकार के लगाव के साथ पाले जाते हैं।

यह सुरक्षित, दूर–दूर और उभयमुखी हो सकते हैं। मनोवैज्ञानिक सोचते हैं कि शिशु दूसरे व्यक्ति पर विश्वास और प्रेम करना, अविश्वास करना और दूर रहना या अपने लगाव के आधार पर दोनों का मिला–जुला रूप सीखते हैं। ऐसा पाया गया है कि माँ का शिशु से संपर्क और बच्चों की आवश्यकताओं के प्रति उसकी जागरूकता एवं अनुकूलन सुरक्षित लगाव की ओर ले जाता है।

बच्चों को अपने माता–पिता तथा भाई–बहनों के साथ अंतःक्रिया की प्रतिकति बच्चों में स्नेह और प्रेम के गुण की रचना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। माता–पिता के लिए उनका प्रेम माता–पिता के प्रति उनके आकर्षण और वैयक्तिक सद्गुणों से निर्धारित होता है। भारतीय समाज द्वारा जिन कुछ सद्गुणों पर बल दिया जाता है वे इस प्रकार हैं।

दान : माता–पिता की सहायता करना, क्षमा करना और सहन करना।

न्याय : माता–पिता के प्रति कर्तव्य तथा उनके अधिकारों का सम्मान करना।

विवेकशीलता : उनके लाभ के लिए तर्क का प्रयोग करना।

धैर्य : उनके लाभ के लिए कष्ट सहन करना।

संयम : विध्वंसक संवेगों पर नियंत्रण करना और आत्मानुशासन का अभ्यास करना।

घनिष्ट मित्रता

जब मित्र एक साथ काफी समय तक रह लेते हैं, विभिन्न स्थितियों में अंतःक्रिया करते हैं और एक दूसरे को सांवेगिक सहायता प्रदान करते हैं तब घनिष्ट मित्रता दिखाई देती है। बचपन में बच्चे मित्रों के साथ विभिन्न क्रिया कलापों में भाग लेने के इच्छुक रहते हैं तथा दोनों पक्ष उसमें आनंद लेते हैं। लगाव की उपरवर्णित शैली बच्चों की अंतःक्रिया को प्रभावित करती है और बदले में उनके संबंधों पर गुणात्मक प्रभाव डालती है। किशोरावस्था और पूर्व प्रौढ़ावस्था में मित्रता और प्रगाढ़ हो जाती है। यह देखा गया है कि महिलायें पुरुषों की अपेक्षा अधिक घनिष्ठ मित्र बनाती हैं। घनिष्ठ संबंधों की अभिव्यक्ति विभिन्न प्रकार के व्यवहारों में दिखाई देती है। जिसके अंतर्गत आत्म रहस्य खोलने वाला व्यवहार, संवेगात्मक अभिव्यक्ति, सहायता लेना और देना, विश्वास अनुभव करना, एक दूसरे के साथ होने पर सुख अनुभव करना आदि आते हैं। कुछ लोग घनिष्ठ मित्रता बनाने में असफल रह जाते हैं और अकेलापन अनुभव करते हैं।

पाठगत प्रश्न 22.2

सही विकल्प चुनियेः

1. हम समानता और परस्पर आकर्षण कब अनुभव करते हैं :
   क. जब अपने से मिलती अभिवत्तियों और विचारों वाले लोगों को पसंद करते हैं।
   ख. हम उन लोगों को पसंद करते हैं जिनकी अभिवत्तियाँ और विचार समान होते हैं।
   ग. हम आकर्षक लोगों को पसंद करते हैं।
2. हम दीर्घकालीन संबंध पसंद करते हैं :
   क. क्योंकि संबंधों का मूल्य हम जानते हैं।
   ख. क्योंकि परस्पर निर्भरता संबंधों का एक सामान्य तत्व है।
   ग. क्योंकि हम अपने प्रियजनों से लगाव रखते हैं।
   घ. ऊपर के सभी।

आपने क्या सीखा

- आत्म प्रत्यक्षीकरण एक जटिल सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें बच्चे के अपने अनुभवों और समाज दोनों की अहम भूमिका होती है।
- बच्चा दूसरों से अंतर करना सीखता है और एक स्वतंत्र मनोवैज्ञानिक आस्तित्व रखता है।
- हम सारी जानकारी के आधार पर दूसरों के प्रति राय बनाते हैं।
- पारस्परिक आकर्षण का निर्धारण अनेक कारकों के आधार पर होता है – शारीरिक आकर्षण, परिचय, समानता आदि।
- महत्वपूर्ण दूसरे – माता–पिता, भाई–बहन, मित्र आदि आत्म–प्रत्यक्षीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- दीर्घकालीन संबंध व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक और संवेगात्मक सहायता प्रदान करता है।

पाठांत अभ्यास

1. आत्म विकास में दूसरों के प्रत्यक्षीकरण की भूमिका की चर्चा कीजिये।
2. पारस्परिक आकर्षण में विभिन्न कारकों की भूमिका स्पष्ट कीजिये।
3. दीर्घकालीन संबंधों के लिए अपनी दष्टि से महत्वपूर्ण कारकों की पहचान कीजिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

22.1

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य 4. सत्य 5. सत्य

22.2

1. (ख) 2. (घ)

पाठांत अभ्यास के संकेत

1. संदर्भ 22.1
2. संदर्भ 22.3
3. संदर्भ 22.3

23

मनुष्य-पर्यावरण अंतःक्रिया

पर्यावरण एक विशाल संप्रत्यय है। वह सब कुछ जो हमारे जीवन को प्रभावित करता है संपूर्णता में पर्यावरण जाना जाता है। मानव प्राणी के नाते बहुधा हम अपने चारों ओर की परिस्थितियों के मनुष्यों और अन्य प्राणियों पर प्रभाव के प्रति चिंतित होते हैं। आज समस्त विश्व में पर्यावरण के गुणात्मक ह्रास के प्रति चिंता व्याप्त है और पर्यावरण की विस्तत क्षति को रोकने और उसकी गुणात्मक उन्नति के प्रयास किये जा रहे हैं।

पर्यावरण के प्रति चिंता के परिणामस्वरूप विश्व के समस्त राष्ट्राध्यक्षों की प्रथम बैठक 'अर्थसमिट' पर (औपचारिक रूप से 'यूनाइटेड नेशंस कांफ्रेंस ऑन एनवाइरनमेंट एण्ड डेवलपमेंट (यू.एन.सी.ई.डी) नाम से प्रचलित 1992 में रिओडिजैनेरिओ में संपनन हुई थी। इस बैठक में अपने पर्यावरण के प्रति विश्वव्यापी चिंता व्यक्त की गई। अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम इसी 1992 के सम्मेलन के परिणाम की उपलब्धि है और समाज के सभी वर्ग के लोगों को पर्यावरणीय चिंता के बारे में विश्वव्यापी शिक्षण के प्रयास किये जा रहे हैं। हम जिस पर्यावरण में रहते और कार्य करते हैं वह हमारे विचारों, भावनाओं और व्यवहार को प्रभावित करता है। मनुष्य और पर्यावरण का संबंध द्विपक्षीय है। अर्थात् मनुष्य पर्यावरण से प्रभावित होते हैं और वे भी पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। पर्यावरण मनोविज्ञान का अध्ययन इसी अंतःक्रिया पर बल देता है। इस पाठ में हम मनुष्य और पर्यावरण की अंतःक्रिया के विभिन्न पक्षों के बारे में पढ़ेंगे।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप समर्थ होंगेः
- पर्यावरण के संप्रत्यय को स्पष्ट करने में,
- मनुष्य और पर्यावरण की अंतःक्रिया के विभिन्न पक्षों का वर्णन करने में,

- मनुष्य पर पर्यावरण के प्रभाव को स्पष्ट करने में,
- मनुष्य के व्यवहार का पर्यावरण पर प्रभाव बताने में, और
- पर्यावरण पर भावी खतरों का वर्णन करने में।

23.1 मनुष्य-पर्यावरण अंत:क्रिया

हम जानते हैं कि भौतिक पर्यावरण हमारे व्यवहार को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए, ऐसा देखा गया है कि ठंडे मौसम की अपेक्षा गर्म और उमस भरे मौसम में लोग चिड़चिड़े और आक्रमक हो जाते हैं। गर्मी के महीनों में मार्ग हिंसा के बारे मैं दैनिक समाचार पत्रों में आपने अवश्य पढ़ा होगा। पर्यावरण की ऐसी परिवर्तनशीलता में हमारी रूचि ने पर्यावरण मनोविज्ञान के क्षेत्र का विकास किया।

मनोविज्ञान को यह क्षेत्र मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं और भौतिक पर्यावरण—दोनों प्राकतिक एवं मानवकत—के मध्य परस्परिक संबंधों के अध्ययन के लिए समर्पित है। पारस्परिक संबंध द्विमार्गी प्रक्रिया से कार्य करता है जिसमें पर्यावरण मानव व्यवहार पर प्रभाव डालता है और मनुष्य पर्यावरण को प्रभावित करता है। इस अंत:क्रिया के विभिन्न पक्षों को समझने के लिए पर्यावरण के विभिन्न प्रकारों, जिनका हम सामना करते हैं; को समझना उपयोगी होगा। पर्यावरण के विभिन्न प्रकारों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है:

भौतिक पर्यावरण : इसके अंतर्गत भौतिक यथार्थ और समाज—सांस्कतिक परिदश्य, जो हमारे चारों ओर रहता है, आते हैं। शोरगुल, तापक्रम, जल और वायु के गुण और विभिन्न पदार्थ और वस्तुयें हमें चारों ओर से घेरने वाला भौतिक जगत बनाते हैं।

सामाजिक एवं सांस्कतिक पर्यावरण : इसके अंतर्गत सामाजिक अंत:क्रिया के पक्ष और उनके उत्पाद आते हैं जैसे विश्वास, धारणायें, रूढ़ियाँ इत्यादि। इसमें पर्यावरण के भौतिक और अभौतिक पक्ष शामिल रहते हैं।

मनोवैज्ञानिक पर्यावरण : इसके अंतर्गत पर्यावरण के किसी समुच्चय से संबंधित प्रत्यक्षीकरण और अनुभव आते हैं। कुछ पर्यावरण उत्तेजक हो सकते हैं जबकि दूसरे शिथिल और उबाऊ। मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति बहुधा संगठनात्मक संदर्भ में प्रयोग होती है।

पर्यावरण का विषय अन्य अनेक विषयों के लिए प्रासंगिक है, जैसे भूगोल, वास्तुशिल्प, नगरीय नियोजन आदि। वास्तव में इसकी प्रकति बहुविषयक है। इसे पर्यावरण विज्ञान के रूप में जाना जाता है।

मनुष्य—पर्यावरण अंत:क्रिया के पाँच प्रमुख अवयव हैं। इन अवयवों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है:

1. **भौतिक पर्यावरण:** इसमें प्राकतिक पर्यावरण के पक्ष आते हैं, जैसे जलवायु, भूभाग की विशेषतायें, तापमान, वर्षा, वनस्पति, पशु—पक्षी आदि।

2. **सामाजिक एवं सांस्कतिक पर्यावरणः** इसके अंतर्गत सांस्कतिक पर्यावरण के सभी पक्ष आते हैं जैसे, मानबिंदु, रीति–रिवाज, समाजीकरण की प्रक्रिया आदि। इसमें दूसरे लोगों से संपर्क और उनकी कतियाँ आते हैं।

3. **पर्यावरणीय दिशा-निर्देशनः** यह अपने पर्यावरण के बारे में लोगों के विश्वास का संकेत करता है। उदाहरण के लिए कुछ लोग पर्यावरण को भगवान के समान मानते हैं और इसीलिए वे इसके हर पक्ष को बड़े ही सम्मान से देखते हैं और उसे पूर्णरूप से बनाये रखने का प्रयास करते हैं तथा उसे प्रदूषित नहीं होने देते।

4. **पर्यावरणीय व्यवहारः** यह लोगों की सामाजिक अंतःक्रिया के दौरान पर्यावरण के प्रयोग की ओर संकेत करता है। उदाहरण के लिए व्यक्ति जब अपनी पहचान पर्यावरण से करता है तो पर्यावरण को व्यक्तिगत स्थान मानता है।

5. **व्यवहार के उत्पादः** इसमें लोगों के कार्यों के परिणाम आते हैं जैसे घर, नगर, बाँध, स्कूल आदि। इस प्रकार ये पर्यावरण के साथ व्यवहार के उत्पाद या परिणाम हैं।

पर्यावरण के उपर्युक्त सभी पक्ष पर्यावरण और मनुष्य के मध्य अंतःक्रिया के अध्ययन के महत्वपूर्ण अवयवों को चित्रित करते हैं। यह जानना बहुत महत्वपूर्ण है कि मनुष्य पर्यावरण का एक अंग है और पर्यावरण को प्रदूषित करने का परिणाम मनुष्य और अन्य प्राणियों का लुप्त होना होगा। इसीलिए पर्यावरण को सुव्यवस्थित रखना मनुष्य का मुख्य दायित्व है क्योंकि इसके विनाश का अर्थ मानव जीवन का विनाश है।

पाठगत प्रश्न 23.1

निम्नलिखित वाक्यों को एक शब्द दीजिये :

1. सामाजिक अंतःक्रिया के दौरान लोगों द्वारा पर्यावरण का प्रयोग————————।
2. लोगों के कार्यों का परिणाम जैसे बाँध, स्कूल और मकान ————————।
3. पर्यावरण के बारे में लोगों का विश्वास ————————।
4. संस्कति के सभी पक्ष ——————————।
5. प्राकतिक पर्यावरण के पक्ष ——————————।

23.2 भौतिक बनाम मनोवैज्ञानिक पर्यावरण

भौतिक और मनोवैज्ञानिक पर्यावरण के बीच के अंतर को समझना महत्वपूर्ण है। भौतिक वातावरण वह है जो बाहर भौतिक रूप से दिखाई देता है, जैसे मकान, पेड़, पहाड़ आदि।

दूसरी ओर मनोवैज्ञानिक पर्यावरण वह है जो लोगों के मन में रहता है। भौतिक पर्यावरण से इसका कुछ संबंध हो सकता है और नहीं भी हो सकता है। उदाहरण के लिए आप सागर तट पर बैठे हैं, जहाँ भौतिक रूप से जहाज, नौकायें, खाड़ी और सागर की लहरें (ये सभी भौतिक पर्यावरण बनाती हैं) आदि आपके सामने हैं; फिर भी वहाँ बैठे होने पर भी जो कुछ आपके सामने है उसके बारे में आप सचेत न हों और आप कुछ और सोच रहे हों। उपस्थित भौतिक पर्यावरण आपको प्रभावित नहीं कर रहा है। यही वह मनोवैज्ञानिक पर्यावरण है।

कुर्ट लिवीन, एक जर्मन मनोवैज्ञानिक ने भौतिक और मनोवैज्ञानिक पर्यावरण में अंतर किया। लिवीन ने व्यक्ति और पर्यावरण के मध्य संबंध को स्पष्ट करने के लिए 'लाइफ स्पेस' का संप्रत्यय प्रस्तुत किया। लिवीन के अनुसार, लाइफ स्पेस संपूर्ण मनोवैज्ञानिक यथार्थ है जो एक व्यक्ति के व्यवहार को निश्चित करता है। लाइफ स्पेस के अंतर्गत पर्यावरण में उपस्थित प्रत्येक वस्तु आती है जो व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करती है। पर्यावरण व्यक्ति के बाहर की हर वस्तु को समाहित करता है। जिसमें भौतिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक पक्ष आते हैं। लिवीन पर्यावरण में व्यक्ति को लाइफ स्पेस कहता है। गणितीय ढंग से लाइफ स्पेस को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है: (B= Behaviour व्यवहार; f=Foreign hull भौतिक पर्यावरण जो प्रत्यक्ष रूप से व्यवहार को प्रभावित नहीं करता; L= Life Space लाइफ स्पेश; P = person व्यक्ति; E= Environment पर्यावरण)

$$B = f(L) = f(P.E.)$$

इसका आशय है कि एक निश्चित समय पर किसी व्यक्ति का व्यवहार लाइफ स्पेस का एक कार्य है। इसके अंतर्गत व्यक्ति और पर्यावरण, लाइफ स्पेस में पर्यावरण व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है और दूसरा भौतिक पर्यावरण जो व्यवहार को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं करता उसे फारेन हल (Foreign hull) कहते हैं। किसी दूसरे समय पर, घटनायें या पदार्थ व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित कर सकते हैं, उस स्थिति में व्यवहार को प्रभावित करने वाला फारेन हल का भाग पर्यावरण का भाग हो जाता है और पर्यावरण विस्तत होकर फारेन हल के कुछ भाग को समाहित कर लेता है।

23.3 मनुष्य के व्यवहार पर पर्यावरण के प्रभाव

हम पहले चर्चा कर चुके हैं कि पर्यावरण मनुष्य के व्यवहार को प्रभावित करता है और मनुष्य का व्यवहार पर्यावरण को प्रभावित करता है। पर्यावरण मानव प्राणियों पर पोषक एवं विनाशक दोनों प्रकार का प्रभाव डालता है।

संपूर्ण मानव इतिहास में लोग बाढ़, भूकंप और अन्य प्राकतिक आपदाओं से पीड़ित रहे हैं। विज्ञान के विशद विकास के बावजूद हम प्राकतिक भयावह घटनाओं के प्रभाव पर

नियंत्रण पाने में समर्थ नहीं हो पाये हैं और न ही प्राकतिक आपदाओं पर नियंत्रण पा सके हैं। इधर के समय में प्रौद्योगिकी नवाचारों और उन्नति ने हमारे लिये पर्यावरण के संभावित नये खतरे पैदा कर दिये हैं, जो मानवकत हैं। ये खतरे भौतिक दष्टि से हानिकारक और तनावपूर्ण हैं। लोगों को इन तनाव पैदा करने वाले कारकों का सामना करना है। ऐसे मानवकत तनाव पैदा करने वाले अनेक कारक हैं। ये तनाव पैदा करने वाले कारक प्रदूषक पदार्थ कहलाते हैं और मूलरूप से ये चार होते हैंः वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, और भीड़।

हम अनेक प्राकतिक आपदायें पाते हैं जो मनुष्य के व्यवहार को अनेक प्रकार से प्रभावित करती हैं। इन प्राकतिक आपदाओं में भूकंप, ज्वालामुखी फटना, तूफान, बवंडर, चक्रवात, दुर्भिक्ष, बाढ़ आदि आते हैं। लाटूर और भुज के भूकंप (2001) और उड़ीसा का बहत चक्रवात (1999) ने केवल संपत्ति और भौतिक पर्यावरण को भीषण क्षति नहीं पहुँचाई किंतु लोगों के जीवन पर भी उनका दीर्घकालिक प्रभाव पड़ा था।

बहुत सी मानव कत आपदायें भी होती हैं। प्रौद्योगिकी की आपदायें जैसे थ्रीमाइल आइलैंड (Three Mile Island, 1979), के केर्नोबिल (Chernobyl), 1986 और भोपाल मेथी आइसोसाइनाइड (Bhopal Methy Iso Cynide- MIC), आपदा, (1984) आदि कुछ प्रमुख मानवकत आपदायें हैं। मानव जीवन पर जिनका गहन और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ा है। भोपाल की दुर्घटना में आठ हजार से अधिक लोगो की मत्यु हुई और दो लाख से अधिक लोग शारीरिक दष्टि से प्रभावित हुये। गैस त्रासदी के शिकार हजारों लोग आज भी मानसिक और शारीरिक समस्याओं से पीड़ित हैं। शोध अध्ययनों से पता चलता है कि ऐसी आपदाओं में बचे हुए लोग चिंता, पलायन, अवसाद, तनाव, क्रोध, डरावने सपनों से पीड़ित रहते हैं।

23.4 मानवीय व्यवहार का पर्यावरण पर प्रभाव

जैसा पहले बताया जा चुका है कि मनुष्य के क्रियाकलाप भी पर्यावरण को प्रभावित करते हैं। वास्तव में, लगभग प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्रियाओं द्वारा पर्यावरण को जिसमें वह रहता है सकारात्मक और निषेधात्मक रूप से प्रभावित करता है। जब भी कोई स्कूटर, मोटर साइकिल या कार चलाता है, स्प्रे प्रयोग करता है, खाना बनाता है आदि तो पर्यावरण प्रभावित होता है। अपनी क्रियाओं द्वारा पर्यावरण के क्षय को हम प्रत्यक्ष देख नहीं पाते। कल्पना कीजिये अपने ग्रह पर रहने वाले असंख्य लोग किसी न किसी तरह से पर्यावरण पर प्रभाव डालते हैं और उसका संचित प्रभाव कितना विशद होगा। मानवीय क्रियाओं का पर्यावरण पर दीर्घकालिक प्रभाव आने वाली पीढ़ियों के जीवन को भी प्रभावित करेगा।

सौभाग्य से अपने पर्यावरण से विनाश लीला करने बाद समस्त विश्व के लोग मानवकत इस आपदा के बारे में सजग हो गए हैं। अब आपदा के दुष्परिणामों को नियंत्रित करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

23.5 भविष्य की योजना

जैसा पहले बताया जा चुका है कि राष्ट्र संघ गंभीरता से विश्वभर में पर्यावरण को हानि पहुँचाने वाली लोगों की क्रियाओं पर नियंत्रण पाने के लिए कार्य कर रहा है। पर्यावरण कुछ सीमाओं के साथ प्रकति दत्त संपत्ति है हमें उसका औचित्यपूर्ण प्रयोग करना सीखना है। हवा, पानी, भोजन, ईंधन आदि सभी मनुष्य को दिये गये वरदान हैं और हमें उनका न्यायपूर्ण प्रयोग एवं उनका संरक्षण करना सीखना है हमें पानी और हवा को संरक्षित रखने पर अधिक ध्यान देना है। निरर्थक पदार्थ, कचरा आदि को नाली में बहता मल और कूड़ा फेंकने पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

पानीः हम प्राकतिक संसाधनों का प्रयोग करते हैं पर उनकी पूर्ति नहीं कर पाते, और पानी एक ऐसा ही संसाधन है। हमारे ग्रह पर आज कम से कम 80 देशों में पानी की गंभीर कमी है जो खेती के लिए एक गंभीर खतरा है। इन देशों में भारत भी है जहाँ पानी की कमी खेती को बुरी तरह प्रभावित कर रही है। कर्नाटक और तमिलनाडु में पानी की कमी एक उदाहरण है। महानगरों में भी पानी की कमी एक गंभीर खतरा है। उदाहरण के लिए गर्मी के दिनों में दिल्ली क्षेत्र में पानी की अधिक कमी होती है और आस–पास के नगरों से आने वाली आबादी के कारण यह कमी दिन पर दिन बढ़ती ही जा रही है। इसका समाधान वर्षा के पानी के एकत्रीकरण में है और वर्षा के पानी को बढ़ी पानी की आवश्यकता की आपूर्ति के लिए प्रयोग किये जाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

हवाः हवा के गुण को मोटर वाहनों और औद्योगिक निस्सारित पदार्थों ने बुरी तरह प्रभावित किया है। इन साधनों से निस्सरित कार्बन मोनोऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड, सफल्र डाईऑक्साइड आदि जहरीली गैस हवा में मिल रही हैं जिन्हें हम अपनी सांस में लेते हैं जन स्वास्थ्य की रक्षा के लिए इस सड़न को रोकने के गंभीर प्रयास करने की आवश्यकता है। इस दिशा में दिल्ली प्रशासन ने सीएनजी का प्रयोग करके एक कदम उठाया है। इसे जनयातायात में प्रयोग किया जा रहा है जिससे दिल्ली में हवा में गुणात्मक अंतर आया है। ऐसे ही नवाचार बड़ी मात्रा में हवा की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए आवश्यक हैं।

निरर्थक पदार्थः संभवतः मानवीय क्रियाओं का सबसे अधिक प्रकट मानवकत उत्पाद निरर्थक पदार्थ है। इस निरर्थक पदार्थ में नाली में बहता मल और कचरा आते हैं। इनका प्रबंधन स्थानीय प्रशासन, नगर पालिका और महानगर निगम के लिए एक गंभीर समस्या है। और अभी तक नाली में बहते हुए मल को बिना समाधान के नदियों में गिरा दिया जाता है। इसने जल प्रदूषण की समस्या को गंभीर बना दिया है। यह नदियों के पानी को मनुष्य के उपयोग के योग्य नहीं रहने देता। अब इस गंभीर समस्या के प्रति जागरूकता पैदा हुई है और नाली के मल को पूर्व संशोधित किये बिना नदियों या सागर में न गिराया जाये इसके प्रयास किये जा रहे हैं।

जिस कचरे का उत्पाद हम अत्याधिक मात्रा में करते हैं उससे एक और भीषण समस्या पैदा होती है। कचरे का निस्तारण विशेषकर न गलने वाले पदार्थ जैसे प्लास्टिक के थैले एक गंभीर समस्या है। हमें दैनिक जीवन में प्लास्टिक बैग के प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए। धरती को ऐसे निरर्थक पदार्थ के प्रभाव से होने वाले प्रदूषण से बचाने के लिए प्रयुक्त वस्तुओं से फिर से वस्तुयें बनाने का कार्य प्रारंभ करना चाहिए।

पाठगत प्रश्न 23.2

1. पानी की कमी को दूर करने के लिए कोई एक सुझाव दीजिये।

   ____

2. वायु के प्रदूषण को कम करने के लिए क्या करना चाहिये?

   ____

3. निरर्थक (काम न आने वाला) पदार्थ के समाधान के लिए सुझाव दीजिये।

   ____

आपने क्या सीखा

- पर्यावरण के दो भाग होते हैं : भौतिक (जैसे ध्वनि, ताप, हवा, पानी आदि) और मनोवैज्ञानिक पर्यावरण (व्यक्ति द्वारा पर्यावरण का प्रत्यक्षीकरण एवं अनुभव)
- मानवीय व्यवहार व्यक्ति और पर्यावरण के मध्य अंतःक्रिया का परिणाम होता है।
- पर्यावरणीय परिवर्तन, प्राकतिक जैसे भूकंप, सुनामी आदि और मानवकत जैसे भोपाल एमआईसी त्रासदी दोनों मानव व्यवहार को प्रभावित करते हैं।
- मनुष्य भी अपने क्रिया–कलापों जैसे कार चलाना, खाना बनाना आदि द्वारा पर्यावरण को प्रभावित करता है।
- पर्यावरण की रक्षा के लिए प्रभावी तकनीक विकसित करने की आवश्यकता है।

पाठांत अभ्यास

1. मनुष्य–पर्यावरण अंतःक्रिया के कौन–कौन से पहलू हैं? मानव व्यवहार पर पर्यावरणीय प्रभाव को स्पष्ट कीजिये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

23.1

1. पर्यावरणीय व्यवहार
2. व्यवहार के उत्पाद
3. पर्यावरणीय दिशा–निर्देशन
4. सामाजिक–सांस्कतिक पर्यावरण
5. भौतिक पर्यावरण

23.2

1. वर्षा के जल का एकत्रीकरण
2. सीएनजी का प्रचलन
3. नाली के मल का पूर्व संसाधन और कचरे का चक्रीकरण

पाठांत अभ्यास के लिए संकेत

1. संदर्भ 23.1 और 23.3
2. संदर्भ 23.4 और 23.5

24

मनोरोग चिकित्सा

पिछले पाठ में मनोवैज्ञानिक विकारों के बारे में बताया गया था। मनोवैज्ञानिकों ने असामान्य व्यवहार के कारणों को समझाने और उनके समाधान के उत्तमतम समाधान खोजने का प्रयास किया है। ऐसे चार मुख्य प्रतिमान हैं जो मनोवैज्ञानिक विकारों और उनकी चिकित्सा से संबंधित हैं। इन्हें चिकित्सीय, मनोगतिक, व्यवहारपरक और मानवीय कहते हैं।

इस पाठ में असामान्य व्यवहार की चिकित्सा के लिए कुछ महत्वपूर्ण उपागमों का वर्णन किया गया है जिन्हें मनोचिकित्सा कहा गया है। मनोचिकित्सा शब्द का प्रयोग उस प्रक्रिया का वर्णन करने के लिए किया गया है जिसमें एक प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक पीड़ित व्यक्ति को सामान्य व्यवहार में सहायता करता है। मनोवैज्ञानिक सामान्यतः उपर्युक्त उपागमों में से एक का प्रयोग करता है।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप कर सकेंगे:

- मनोचिकित्सा के उद्देश्य का स्पष्टीकरण;
- मनोचिकित्सा के प्रमुख प्रतिमानों का वर्णन; और
- मनोचिकित्सा के प्रत्येक प्रतिमान के गुणों और दोषों का स्पष्टीकरण।

24.1 चिकित्सकीय प्रतिमान

चिकित्सकीय प्रतिमान के अनुसार असामान्यता शारीरिक कारणों से घटित होती है और यह एक प्रकार का रोग है, जिस का इलाज दवाओं के द्वारा किया जा सकता है। यह

उपागम अनुवांशिक और तंत्रिका संप्रवाहकों के असंतुलन की भूमिका की जाँच करता है। चिकित्सकीय प्रतिमान में प्रयोग किये जाने वाले चिकित्सात्मक उपागमों को दैहिक चिकित्सा कहा जाता है। जो तीन दैहिक चिकित्सा आजकल प्रयोग में लाई जाती हैं वे हैं, रसोचिकित्सा, विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा (इलेक्ट्रो कन्वल्जिवथिरैपी) (ई.सी.टी.) और मनोशल्य चिकित्सा (साइको सर्जरी)

विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा के अंतर्गत मनोविकार से पीड़ित व्यक्ति के सिर में विद्युताग्र के द्वारा थोड़े समय के लिए विद्युत धारा प्रवाहित करना आता है। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति के लिए विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा में दो विद्युताग्र कनपटी क्षेत्र में लगाये जाते हैं और लगभग 200 मिलियाम्प 110 वोल्ट पर एक धारा एक विद्युताग्र से दूसरे विद्युताग्र तक 4-5 सेकंड तक चलाई जाती है। विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा का प्रयोग अवसाद, दोहरा विकार (उन्माद–अवसाद) और अनियंत्रित इच्छा के सम्मोही विकार की चिकित्सा के लिए किया जाता है।

मनोशल्य चिकित्सा में मनोवैज्ञानिक कार्यशैली बदलने के लिए मस्तिष्क की शल्यक्रिया करना आता है। यह अंतिम उपाय है इसका प्रयोग आक्रमक मनोविदलन जैसे सीमांतक मनोवैज्ञानिक गड़बड़ी में किया जाता है।

सर्वसामान्य और प्रभावी दैहिक उपागम रसोचिकित्सा है जिसमें पीड़ित व्यक्ति को दवाइयाँ देना आता है। दवायें तीन प्रकार की होती है मनोविदलन और उन्माद की चिकित्सा के लिए मुख्य रूप से न्यूरोलिप्टिक (मुख्य शांत करने वाली या मनस्तापी विरोधी औषधियाँ) का प्रयोग करते हैं। अवसाद विरोधी दवाओं का प्रयोग अवसाद सहित अनेक विकारों में किया जाता है। चिंता विरोधी (छोटे ट्रैन्क्वीलाइजर) मुख्य रूप से चिंता विकार में प्रयोग होते हैं।

पाठगत प्रश्न 24.1

नीचे दिये गये रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये :

1. चिकित्सीय प्रतिमान में प्रयुक्त उपचारात्मक उपागमों को ——————— उपचार कहते हैं।
2. वर्तमान में तीन दैहिक उपचारों ——— ——— और ————— का प्रयोग किया जाता है।
3. मुख्य रूप से मनोविदलन के उपचार में ————— प्रयोग किये जाते हैं।
4. अवसाद के उपचार में —————— प्रयोग होते हैं।
5. चिंताविरोधी औषधियों का प्रयोग मुख्यरूप से —————— की गड़बड़ी में होता है।

24.2 मनोगतिक चिकित्सा

जैसा आपने पहले पढ़ा है कि सिग्मण्ड फ्रायड का मनोगतिक प्रतिमान मनोवैज्ञानिक आंतरिक कारकों के कारण पैदा होने वाले मानसिक विकारों को देखता है जो मूलतः बचपन के असमाधानित अचेतन द्वंद्व होते है। इस प्रतिमान में चिकित्सा को मनोविश्लेषण कहा जाता है। मनोविश्लेषण का उद्देश्य अचेतन द्वंद्वों को समझना होता है जो किसी व्यक्ति के मानसिक विकार के लिए उत्तरदायी होते हैं और तब व्यक्ति को उनके बारे में सचेत करना है। इससे व्यक्ति अपनी समस्याओं का प्रभावी ढंग से हल कर सकता है। मनोविश्लेषण में सामान्यतः मुक्त साहचर्य तकनीक प्रयोग की जाती है। इसका मूल उपक्रम है कि रोगी के मन में जो कुछ आता है वह कह देता है क्योंकि इसमें अहं की सेंसर करने या आतंकी अचेतन अनुक्रियाओं को बाधित करने की भूमिका को पार किया जाता है। मनोविश्लेषण का अंतिम लक्ष्य व्यक्तित्व में बड़ा परिवर्तन लाना है जिससे लोग बिना रक्षा युक्तियाँ प्रयोग किये हुए समस्याओं का यथार्थ तरीके से हल निकालने में समर्थ हो सकें। कभी–कभी सम्मोहन और स्वप्न व्याख्या का भी उपचार प्रक्रिया में प्रयोग किया जाता है।

24.3 व्यवहारपरक प्रतिमान

जैसा कि पिछले पाठ में आपने पढ़ा कि व्यवहारपरक प्रतिमान में विकारों को कुसमंजित व्यवहार के रूप में देखा जाता है। यह सुझाव देने वाले वाटसन प्रथम व्यक्ति थे कि दुर्भीत (किसी वस्तु, व्यक्ति, परिस्थिति जैसे चूहे या सर्प इत्यादि) को अनुकूलन तकनीक से स्पष्ट किया जा सकता है। व्यवहारपरक उपचार में क्लासिकी अनुकूलन सिद्धांत प्रयोग होता है, जबकि व्यवहार परिवर्तन तकनीक क्रिया प्रसूत अनुकूलन पर आधारित होती है (आपको छठे पाठ में अनुकूलन के प्रकार बताये गये हैं।

व्यवहारपरक उपचार में माना जाता है कि अगर कुसमंजित व्यवहार क्लासिकी अनुकूलन द्वारा अर्जित किए जा सकते हैं, तो उन्हें उसी सिद्धांत से मिटाया भी जा सकता है। व्यवहारपरक उपचार के तीन उपागम हैं – अंतःस्फोटक चिकित्सा, फलडिंग और व्यवस्थित निःसंवेदीकरण। अंतःस्फोटक चिकित्सा और फलडिंग इस संप्रत्यय पर आधारित हैं कि यदि भय अनुक्रिया उत्पन्न करने वाले उद्दीपन (जैसे सर्प) यदि बिना किसी अरूचिकर अनुभव के बार–बार उपस्थित होते हैं तो ये भय उत्पन्न करने वाली शक्ति खो देते हैं।

अंतःस्फोटक चिकित्सा में चिकित्सक सुरक्षित कक्ष में व्यक्ति के सामने बार–बार भय उत्पन्न करने वाली वस्तु की मानसिक प्रतिमायें प्रस्तुत करता है। व्यक्ति से कहा जाता है कि वह भय उत्पन्न करने वाली वस्तु के अधिकतम भयावह रूप की कल्पना करे। कई प्रयासों के बाद वह उद्दीपन चिंता पैदा करने वाली शक्ति खो देता है।

फलडिंग में व्यक्ति को भय या चिंता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति का सामना करने को विवश किया जाता है। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति ऊँचाई से डरता है, तो उसे एक

ऊँचे भवन की छत पर खड़े रहने को विवश किया जा सकता है। कुछ लोगों पर यह उपागम प्रभावी होता है और परिस्थिति के भय को मिटा देता है। अंतःस्फोटक और फ्लडिंग चिकित्सा सीमित प्रभाव रखती हैं। व्यवस्थित निःसंवेदीकरण इससे अच्छा उपागम है।

व्यवस्थित निःसंवेदीकरण में व्यक्ति को दश्यों या घटनाओं की एक श्रंखला बनाने को कहा जाता है जो व्यक्ति को धीरे–धीरे भय उत्पन्न करने वाली वस्तुओं या परिस्थितियों की ओर ले जाती हैं। उदाहरण के लिए शवों से डरने वाले व्यक्ति को एम्बुलेंस की कल्पना करने को कहा जा सकता है और तत्पश्चात विश्राम पर ध्यान दिया जाये। तब उसे शवदाहगह के पास जाने को कहा जा सकता है और अंत में (यद्यपि इसके बीच में कुछ और कदम हैं) व्यक्ति को शव के निकट जाने को कहा जा सकता है और उसी समय विश्राम पर ध्यान दिया जाये।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि क्लासिकी अनुकूलन पर आधारित उपागमों के अतिरिक्त कुछ चिकित्सायें क्रिया प्रसूत अनुकूलन पर आधारित हैं जिन्हें व्यवहार परिवर्तन कहा गया है। वैसे तो क्रियाप्रसूत अनुकूलन पर आधारित बहुत सी चिकित्सायें हैं, किंतु सभी में मूल रूप से तीन चरण शामिल हैं। पहला चरण अवांछित या कुसमायोजित व्यवहार की पहचान करना है। दूसरे चरण में कुसमायोजित व्यवहार को बनाये रखने वाले पुनर्बलनकों की पहचान शामिल है। अंतिम चरण में पर्यावरण को इस प्रकार पुनःसंचरित करना जिससे फिर से व्यवहार को पुनर्बलन न प्राप्त हो।

दूसरा रास्ता अवांछित व्यवहार को समाप्त करने के लिए उन उद्दीपनों को हटाना है जो उसे बनाये रखते हैं। यह विचार इस बात पर आधारित है कि उद्दीपन को हटाने से वह व्यवहार समाप्त हो जायेगा जो इससे पहले पुनर्बलित हुआ था। दूसरी विधि में उद्दीपन का प्रयोग होता है जिसमें स्वैच्छिक कुसमंजित व्यवहार के लिए दण्ड के रूप में निषेधात्मक प्रभाव होता है। सकारात्मक पुनर्बलन देकर वांछित व्यवहार को बढ़ाने के लिए क्रिया प्रसूत अनुकूलन का भी प्रयोग किया जा सकता है जबकि वांछित व्यवहार किया जा रहा हो। उदाहरण के लिए यदि हम चाहते हैं कि एक बच्चा प्रतिदिन अध्ययन करे, हम उसे जब भी वह अध्ययन करे उसकी रूचि के टीवी कार्यक्रम को देखने की अनुमति देकर यूँ कहें अधिक से अधिक एक घंटे के लिए, उसे पुनर्बलित कर सकते हैं।

हाल के वर्षों में मनोचिकित्सक का एक सामाजिक अधिगम उपागम उभर कर आया है। यह प्रतिमान व्यक्तित्व के व्यवहार एवं संज्ञानात्मक प्रतिमान के मध्य कड़ी के रूप में है। संज्ञानात्मक उपागमों की दष्टि में मानसिक विकार अतार्किक विश्वासों या त्रुटिपूर्ण सोच के कारण उत्पन्न होते हैं। चिकित्सा के अंतर्गत संज्ञानात्मक पुनर्रचना या सोचने के ढंग में परिवर्तन आते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक व्यक्ति विश्वास करता है कि यदि बिल्ली उसका रास्ता काटती है तो समस्यायें पैदा हो जायेंगी, ऐसा वह अनेक बार अनुभव कर सकता है जब तक कि उसे यह अनुभव नहीं हो जाता कि बिल्ली और निषेधात्मक घटनाओं के मध्य कोई संबंध नहीं है, इस प्रकार उसकी सोच में परिवर्तन हो जाता है।

पाठगत प्रश्न 24.2

नीचे दिये रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजियेः

1. मनोविश्लेषण में बहुत अधिक प्रयोग किये जाने वाले उपागम को मुक्त ————————— कहते हैं।
2. मनोविश्लेषण का उद्देश्य ———————— द्वंद्वों को समझना है जो व्यक्ति के असामान्य व्यवहार के लिए उत्तरदायी होते हैं।
3. मनोविश्लेषण में प्रयोग किये जाने वाले अन्य उपागम ——————— और ——————— व्याख्या है।
4. चिकित्सा का व्यवहारपरक प्रतिमान ————————— के सिद्धांत का प्रयोग करता है।
5. व्यवहारपरक चिकित्सा पर आधारित तीन उपागम ————— ———— और ———————— हैं।
6. व्यवहारपरक परिवर्तन उपागम ————————— अनुकूलन पर आधारित हैं।

24.4 मानवतावादी चिकित्सा

व्यक्तित्व के मानवतावादी दष्टिकोण के अनुसार मूलतः लोग अच्छे होते हैं और विकास की खोज करते हैं तथा अच्छे जीवन स्तर के लिए कार्य करते हैं। सभी लोगों को आत्म सम्मान और जीवन को स्वरूचि के अनुसार ढालने की आवश्यकता होती है। मानव विशिष्ट इसलिए हैं क्योंकि उनमें स्वतंत्र इच्छा तथा अपनी सामर्थ्य के अनुसार कार्य करने की स्वाभाविक आवश्यकता होती है। अपनी विभवता को प्रत्यक्ष करने की आवश्यकताओं को आत्म प्रत्यक्षीकरण की दिशा में मूल अन्तर्नोद कहा जाता है।

मानवतावादी दष्टि में मनोवैज्ञानिक विकार वाह्य वातावरण द्वारा व्यक्तिगत विकास की दिशा में बढ़ने में बाधा उत्पन्न करने के कारण घटित होते हैं। हमारे आस–पास के लोग अपनी अपेक्षाओं द्वारा हम पर दबाव डालते हैं और हमें वैसा स्वीकार नहीं करते जैसे कि हम हैं। यदि हमारे आस–पास का कोई व्यक्ति हमें बिना शर्त के सकारात्मक सम्मान देता है तो मुश्किल से हमारे होने और हमारे चाहने में कोई अन्तर होगा। इसका अर्थ हुआ कि आदर्श आत्म और यथार्थ आत्म में बहुत कम अंतर होता है। इससे हमारे कार्य करने में बहुत बड़ा सामंजस्य पैदा होता है जिसे ससाधकत्व कहते हैं।

मानवतावादी चिकित्सा का उद्देश्य चिकित्सक द्वारा बिना शर्त के सकारात्मक सम्मान का वातावरण निर्माण करके रोगी को उसकी वास्तविक भावनाओं और आंतरिक आत्म के संपर्क में आने का अवसर प्रदान करना है। तब रोगी को अधिक दायित्व संभालना और अपनी अंतर आत्मा की चाह के अधिक अनुकूल रहना होता है। अंत में यह विकास और जीवन में अधिक संतोष की ओर ले जाता है।

पाठांत अभ्यास

निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर दीजिये :

1. मनोविश्लेषण का मूल उद्देश्य एवं प्रक्रम का वर्णन कीजिये।
2. अन्तःविस्फोटक चिकित्सा, फलडिंग और व्यवस्थित निःसंवेदीकरण में प्रयुक्त उपागमों में भेद रेखांकित कीजिये।
3. वर्तमान में प्रयोग की जाने वाली तीन देहिक चिकित्साओं – रसोचिकित्सा, विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा और मनोशल्य–चिकित्सा, का संक्षेप में वर्णन कीजिये।
4. मानवतावादी मनोचिकित्सा में प्रयोग किए जाने वााला मूल उपागम क्या है?

आपने क्या सीखा

- औषधीय चिकित्सा प्रतिमान मनोवैज्ञानिक विकारों की चिकित्सा में ज्यादातर दवाओं और कभी–कभी विद्युत आघात और शल्यक्रिया में विश्वास करता है।
- मनोविश्लेषण वह मनोचिकित्सा है जो व्यक्ति के मन में अचेतन द्वंद्वों को पूर्व जीवन अनुभवों से उद्घाटित करती है और व्यक्ति को उनको चेतन रूप में स्वीकार करने में सहायता करती है।
- व्यवहार परक चिकित्सा क्लासिकी और क्रियाप्रसूत अनुकूलन सिद्धांतों पर आधारित है।
- मानवतावादी चिकित्सा व्यक्ति को अपनी गहन आवश्यकताओं और कामनाओं के संपर्क में आने में सहायता देती है और तब वे अपनी आंतरिक और यथार्थ प्रकति के अधिक अनुकूल रहने का दायित्व लेते हैं।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

24.1

1. दैहिक
2. रसोचिकित्सा, विद्युत सापेक्षीय चिकित्सा, मनोशल्य चिकित्सा
3. न्यूरोलिप्टिक
4. अवसाद विरोधी
5. चिंता विरोधी

24.2

1. मुक्त साहचर्य तकनीक
2. अचेतन
3. सम्मोहन और स्वप्न व्याख्या
4. क्लासिकी अनुकूलन
5. अंतः स्फोटक चिकित्सा, फलडिंग और व्यवस्थित निःसंवेदीकरण
6. प्रसूत अनुकूलन

25

स्वास्थ्य मनोविज्ञान

जीवन का आनन्द लेने के लिये स्वस्थ रहने की आवश्यकता है। जो लोग स्वस्थ नहीं होते उन्हें रोगी कहा जाता है। वे ठीक से अपने कार्य सम्पादित नहीं कर सकते हैं और जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकते। स्वास्थ्य व्यक्ति के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन के लिये महत्वपूर्ण है। समाज का एक उत्पादक सदस्य होने के नाते हमें मन से जागरूक और शरीर से क्रियाशील होने की आवश्यकता है। स्वास्थ्य मनोविज्ञान में वे मनोवैज्ञानिक कारक आते हैं जो स्वास्थ्य को बनाये रखने और उन्नत करने में सहायक होते हैं। यह उन कारकों की भी खोज करता है जो रोग की स्थिति पैदा करते हैं। हाल के वर्षों में यह क्षेत्र बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि हमारी जीवन शैली, और सोचने एवं व्यवहार करने के तरीके लोगों के स्वास्थ्य स्तर में योगदान करते हैं। विशेषज्ञों का सोचना है कि व्यायाम, पौष्टिक भोजन लेने और धूम्रपान जैसी बुरी आदतों में परिवर्तन से रोग और मत्यु को रोका जा सकता है। यह पाठ आपको स्वस्थ जीवन बिताने और कुशल से रहने से संबंधित मुद्दों को समझने और सीखने में सहायता करेगा।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप योग्य होंगे:

- स्वास्थ्य और सुखी जीवन के संप्रत्यय को समझने के;
- स्वास्थ्य को प्रोन्नत करने वाले व्यवहार का वर्णन करने के;
- स्वास्थ्य के खतरों के बारे में सीखने के;
- स्वास्थ्य और सुखी जीवन को उन्नत करने के लिय आवश्यक जीवन शैली अपनाने के सम्बन्ध में पूरी जानकारी पाने के;

- अनचाहे कामोत्तेजन और अन्य प्रकार के दुर्व्यवहार से बचने के आत्म प्रबन्धन और नियंत्रण कौशल को स्पष्ट करने के;
- सुरक्षित एवं असुरक्षित यौन में भेद करने के; और
- असुरक्षित यौन से होने वाले खतरों जैसे आर.टी.आई., एसटीडी, एचआईवी/एड्स और प्रेषण के अन्य तरीकों को सूचीबद्ध करने के।

25.1 स्वास्थ्य और कुशलक्षेम का संप्रत्यय

स्वास्थ्य शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक कुशलक्षेम की अवस्था को कहते हैं। रोग की अनुपस्थिति से स्वास्थ्य का भ्रम नहीं होना चाहिये। यह एक सकारात्मक अवस्था है। रोग की अनुपस्थिति के साथ ही इसमें सफल होना और नियंत्रण करना भी आते हैं। लोगों के व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में स्वास्थ्य का केन्द्रीय स्थान है। आज की दुनिया में लोगों के गुणात्मक जीवन को चारों ओर से चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जिसका परिणाम लोगों का गिरता स्वास्थ्य है। एक ओर बाहरी पर्यावरण बड़ी तेजी से बदल रहा है। इससे अनेक पर्यावरणीय तनावों से सफलतापूर्वक निपटने की आवश्यकता है। सामाजिक संरचना में ऐसे परिवर्तन जैसे परिवार और अन्य सामाजिक संस्थाओं का विघटन प्रतिस्पर्धा ओर उपभोक्तावाद में बढ़ोत्तरी भी निराशा, अकेलेपन, द्वन्द और असहयोग के बढ़ने में योगदान कर रहे हैं। परिणामस्वरूप मनोदैहिक विकार बढ़ते जा रहे हैं। इस परिदश्य के विश्लेषण बताते हैं कि स्वास्थ्य और कुशलक्षेम दुर्घटना होते जा रहे हैं।

आज के व्यस्त जीवन में हममें से हर व्यक्ति विभिन्न प्रकार के दबाव और तनाव अनुभव कर रहा है। दबाव अब एक मूक मारक है। शारीरिक स्वास्थ्य साथ ही मनोवैज्ञानिक कुशलक्षेम पर इसका निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। तकनीकी दष्टि से दबाव ऐसी घटनाओं जो हमारी मनोवैज्ञानिक क्रियाविधि के लिये खतरे वाली और बाधक होती है, के प्रति हमारी अनुक्रिया की ओर संकेत करता है। पर्यावरण में वे स्थितियां या कारक जो दबाव पैदा करते हैं स्ट्रेस कहे जाते हैं यद्यपि स्ट्रेस सूची लम्बी हो सकती है किन्तु उन्हें मुख्य चार श्रेणियों में बांटा जा सकता है: दबावयुक्त जीवन घटनायें (जैसे तलाक, अवकाश ग्रहण, गर्भकाल, किसी प्रिय व्यक्ति का निधन, बेकारी) दैनिक जीवन की परेशानियां (जैसे खरीदारी, बहुत अधिक वचनबद्धता, कार्यस्थल पर विषम परिस्थिति में वचनबद्धता); कार्य सम्बन्धी दबाव (जैसे भूमिका की संदिग्धता, अरुचिकर कार्य पर्यावरण, सहकर्मी के साथसंघर्ष, उद्देश्य आपूर्ति) और तबाही मचाने वाली विभीषिकायें (जैसे भूकम्प, बाढ़)। दबाव हर व्यक्ति के स्वास्थ्य के खतरे का संभावित साधन हो सकता है, परन्तु इसका प्रभाव व्यक्ति और पर्यावरण के मध्य संबंध की डिग्री पर निर्भर करता है। लोग अनेक चित्तवत्तियों जैसे आशावादिता, नियंत्रण का प्रत्यक्षीकरण, स्वास्थ्य–विश्वास, सांवेगिक स्थिति ओर व्यक्तित्व प्रतिमान में भी भिन्न होते हैं जो दबाव का सामना करने में सहायता या बाधा कर सकते हैं।

पाठगत प्रश्न 25.1

1. वर्तमान समय में गुणात्मक जीवन के लिये खतरा पैदा करने वाली मुख्य चुनौतियों की सूची बनाइये।
2. प्रत्येक के तीन–तीन उदाहरण दीजिये (क) दबावयुक्त जीवन घटनायें (ख) दैनिक जीवन की परेशानियां (ग) कार्य सम्बन्धी दबाव

भारतीय चिन्तन में स्वास्थ्य का अर्थ ' स्व में स्थित' होता है। अन्य शब्दों में एक आत्मस्थ व्यक्ति स्वस्थ कहा जा सकता है। आयुर्वेद या जीवन विज्ञान में संयम या उपयुक्तता स्वास्थ्य का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।

25.2 स्वास्थ्यवर्धक व्यवहार

स्वस्थ रहने के लिये व्यवहार के कुछ प्रतिमान नीचे दिये जा रहे हैः

1. विश्रान्ति

दबाव कम करने के लिये विश्रान्ति बहुत उपयोगी है। ध्यान, जिसमें हम अपने अवधान को एक वस्तु, शब्द या वाक्यांश पर केन्द्रित करते हैं, का बहुत ही शान्तिदायी प्रभाव होता है। दूसरे प्रकार की विश्रान्ति गत्यात्मक मांसपेशी विश्रान्ति कहलाता है। इसके अन्तर्गत लेटकर या आराम से बैठकर मांसपेशियों को व्यवस्थित रूप से तानना और ढीला छोड़ना आता है। इस उद्देश्य के लिये योगनिद्रा का भी प्रयोग किया जाता है। विश्रान्ति में कभी–कभी गहरी सांस लेना, थोड़ा सा रोकना और फिर धीरे–धीरे छोड़ा (पूरक, कुंभक, रेचक)

2. व्यायाम

शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बनाये रखने में नियमित व्यायाम सहायक होता है। इससे हृदय और फेफड़े मजबूत होते हैं और शरीर द्वारा आक्सीजन के उपयोग में बढ़ोत्तरी होती है। इस काम के लिये अपने स्थान पर धीरे–धीरे दौड़ना, दौड़ना, साइकिल चलाना और प्राणायाम पर आधारित व्यायाम बहुत उपयोगी होते हैं। इसके लाभ के अन्तर्गत हृदयपेशियों का पूर्ण स्वस्थ और सशक्त होना, शारीरिक श्रम की बढ़ी क्षमता, शारीरिक वजन का सन्तुलित रहना, मासंपेशियों की दढ़ता और शक्ति में बढ़ोत्तरी, उच्च रक्तचाप पर नियंत्रण, दबाव की सहनशक्ति में बढ़त, अवधान और एकाग्रता का बढ़ना आते हैं। व्यायाम से लाभ पाने के लिये नियमित रूप के करना चाहिए।

3. वजन पर नियंत्रण

भोजन की मात्रा का नियमितीकरण एक जटिल व्यवस्था द्वारा निश्चित होता है। वास्तव में जैव रासायनिक का एक संच इसे नियंत्रित करता है। अनियमित भोजन शरीर में

अधिक वसा का एकत्रीकरण करता है। परिणामस्वरूप मोटापा, रक्तचाप और कोलेस्ट्राल के बढ़ने में खतरे के कारक का काम करता है। मोटापे को अकाल मत्यु का कारण पाया गया है। जैविक कारक और दबाव दोनों ही मोटापे में योगदान करते हैं। वजन का नियंत्रण बहुत कठिन होता है। डाक्टरों द्वारा भोजन निर्देशन आवश्यक हो जाता है, किन्तु कभी–कभी कम भोजन वजन को बहुत कम कर देता है। उपवास, योग, शल्यचिकित्सा, भूख को दबाने की दवाइयों के प्रयोग भी इस कार्य के लिये प्रयोग किये जाते हैं। वजन नियंत्रण के बहुआयामी उपागम अधिक कारगर पाये गये हैं। खाने की आदतों का विश्लेषण लोगों को उनकी खाने के प्रतिमानों के बारे में सतर्क करने के लिए प्रयोग किया जाता है, करते हैं। खाने को प्रभावित करने वाले उद्दीपनों का विश्लेषण खाने को नियमित करने में अन्तर्दष्टि प्रदान करता है। लोगों को पर्यावरण के पूर्व में अधिक खाने को प्रोत्साहन देने वाले उद्दीपनों को सुधारने का प्रशिक्षण दिया जाता है। रोगियों को खाने की प्रक्रिया को ही नियंत्रित करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। अधिक खाने पर नियंत्रण करने का भाव ही वजन नियंत्रण में योगदान करता है।

4. भोजन

स्वस्थ भोजन हम सबका उद्देश्य होना चाहिये। अध्ययनों से पाया गया है कि भोजन की आदतें कैंसर, उच्च रक्तचाप, हदयपेशियों की बीमारियों के विकास में बुरी तरह सहायक होती हैं। कम बसा और कम कोलेस्ट्राल वाला भोजन हदय रोग की घटनाओं को कम कर देता है। भोजन नियंत्रण में खाने की योजना, पकाने के तरीके और खाने की आदतें शामिल होती हैं। देखा गया है परिवार के साथ हस्तक्षेप भोजन में परिवर्तन को बढ़ावा देने में और उसे बनाये रखने में मदद करता है।

पाठगत प्रश्न 25.2

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये:

   (क) मांसपेशियों को विश्रांति देने में .... श्वांस रोकना और धीरे–धीरे .... आता है।

   (ख) वजन नियंत्रण के लिय .... का .... विकसित करना।

   (ग) भोजन नियंत्रण में .... योजना .... के तरीके और .... आदतें आते हैं।

स्वास्थ्य समस्याओं की ओर ध्यान देना

अपनी स्वास्थ्य समस्याओं के प्रति समय रहते ध्यान देना बहुत महत्वपूर्ण है। स्वास्थ्य के किसी मामले में बिना विलम्ब के क्योंकि कभी–कभी समस्या बड़ी तेजी से बढ़ती है,

ध्यान देना प्राथमिक महत्व का होता है। एक बार शरीर में शारीरिक या मानसिक शिकायत या लक्षण दिखाई दे, उसे योग्य डाक्टर को बताना चाहिये। उनके सुझाव और मार्गदर्शन के अनुसार तुरन्त कदम उठाना चाहिये।

विध्यात्मक संवेग

अक्सर कहा जाता है कि मुस्कराता चेहरा और प्रसन्नता अच्छे मानसिक स्वास्थ्य का परिचय देता है। यह सच है किन्तु इसमें एक महत्वपूर्ण जानकारी छूट जाती है कि विध्यात्मक संवेगों की अनुभूति जैसे प्रेम, स्नेह, रुचि, तदोनुभूति, क्षमा, कतज्ञता आदि व्यक्ति के स्वास्थ्य की स्थिति में योगदान करते हैं। वर्तमान अध्ययनों से पता चला है कि विभिन्न विध्यात्मक संवेगों के अनुभव व्यक्ति के स्वास्थ्य के स्तर को उन्नत कर देते हैं इसलिये दैनिक जीवन में विध्यात्मक संवेगों का अनुभव करने के लिये सुअवसरों को खोजना, व्यवस्थित करना और बनाना महत्वपूर्ण है।

25.3 स्वास्थ्य के लिये खतरे

अब तक यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि बहुत से रोग और स्वास्थ्य के खतरे, अन्ततः जो हमारे दीर्घ जीवन को कम कर देते हैं, हमारे व्यवहार से सम्बन्धित होते है। इस प्रकार की स्थितियों को सुधारने के लिये हमें जीवन शैली में कुछ करने और न करने को अपनाने की जरूरत है। अक्सर लोग ऐसी आदते अपना लेते हैं जो समस्यायें पैदा करती हैं। वे अनेक आत्म विनाश की आदतों में लीन हो जाते हैं। कुछ ऐसी आदतें, जो स्वास्थ्य के लिये जोखिम पैदा करती हैं नीचे दी जा रही हैं।

1. **नशीले पदार्थों का प्रयोगः** आधुनिक काल में ये स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाली आदतें बहुत सामान्य हैं। अधिक खुराक लेने पर व्यक्ति मर सकता है। नशीले पदार्थों का व्यसन अक्सर श्वसन प्रणाली, आंतों, विशेषकर यकत तथा सामान्य रूप से शरीर के दूसरे अंगों को क्षति पहुँचाता है। चिन्तन और निर्णय शक्ति भी प्रभावित होती है। विशेषकर शराब यकत को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती है।

2. **धूम्रपानः** अध्ययन स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि धूम्रपान करने वालों में कैंसर और हृदयरोग की अधिक संभावना रहती है। धूम्रपान से असाध्य श्वसनी और श्वसन विकार पैदा हो जाते हैं। यह भी बात बड़ी रोचक है कि धूम्रपान के खतरे केवल धूम्रपान करने वाले तक सीमित नहीं रहते। परिवार के अन्य सदस्य, सहकर्मी जो धूम्रपानकर्ता के साथ रहते हैं अनेक प्रकार के स्वास्थ्य विकारों से ग्रसित होने की संभावना रहती है। धूम्रपान के साथ ही अधिक वजन और दबाव अधिक खतरनाक हो जाते हैं।

3. **तम्बाकू का सेवन:** भारत में तम्बाकू अनेक प्रकार से प्रयोग की जाती है। लोग कच्ची तम्बाकू खाते, सूंघते और पान के साथ चबाते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि तम्बाकू के प्रयोग का सम्बन्ध मुख कैंसर से होता है। ये मौखिक स्वच्छता को बुरी तरह प्रभावित करती है जिसमें दांत और मसूढ़े भी शामिल हो सकते हैं

4. **न्यून पोषक आदतें:** हाल के वर्षों में न्यून भोजन की आदतों में बढ़त आई है। तुरंत आहार और खाने की वस्तुओं का, जो कोलेस्ट्राल, बसा, कैलोरीज आदि के मामले में असन्तुलित होते हैं, प्रयोग आजकल का रिवाज बन गया है। जन सामान्य को कच्चे पदार्थों और फलों के अधिक सेवन के लाभों के प्रति जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता है। आहार को स्वस्थ जीवन के लिये योजनाबद्ध किया जाना चाहिए। नये स्वाद के प्रयोग के लिये लोग अक्सर पोषण में असन्तुलित भोजन की ओर जाते हैं। अनियंत्रित भोजन मोटपा बढ़ा सकता है।

5. **व्यायाम का अभाव:** आधुनिक जीवन मूल्य, सफेद पोश नौकरियां बढ़ते हुये अवसादी जीवन की ओर ले जा रहे हैं। उनमें व्यायाम के लिये समय और क्षमता का अभाव है। स्वस्थ शरीर के लिए पूरे शरीर के व्यायाम की आवश्यकता है। काहिली, समय का दबाव और शारीरिक प्रक्रम के बारे में अज्ञान बहुत से लोगों को व्यायाम से वंचित कर देता है। परिणाम स्वरूप शरीर कमजोर, रोगी और समय के पूर्व बढ़ा होने लगता है।

6. **असुरक्षित यौन:** एच.आई.वी और एड्स नशाखोरों (साझा सुई द्वारा) समलैंगिक, अधिक लोगों से समागम करने वाले लोगों में ये घातक बीमारी पाई जाती है। अनुमानतः 6.5 करोड़ लोग एड्स से मर चुके हैं। संवाहन के बाद ये वायरस तेजी से पूरे शरीर में फैल जाता है। इन जीवाणुओं द्वारा संक्रमित व्यक्ति अनेक असामान्यताओं से पीड़ित हो जाता है जैसे अन्तः तंत्रिका और हृदय तंत्रिका कार्यविधि।

पाठगत प्रश्न 25.3

रोग और उसके स्वरूप को पैदा करने वाले कारकों की दोनों सूचियों का मिलान कीजियेः

1. मद्यपान	(क) श्वांस रोग
2. धूम्रपान	(ख) आंत्र रोग
3. त्वरित भोजन	(ग) एच.आई.वी/एड्स
4. असुरक्षित यौन	(घ) मोटापा

25.4 कुशलक्षेम के लिये हस्तक्षेप

दीर्घजीवन और स्वस्थ तथा पुनरोत्पादक जीवन हर व्यक्ति का सपना होता है। हम उन लोगों से, जो इस ईर्ष्या उत्पन्न करने वाले लक्ष्य को पाने में सफल हो चुके हैं, इसके बारे में सीख सकते हैं। ऐसे सफल वद्ध व्यक्तियों को देखकर हम समझ सकते हैं कि बाकी लोगों से वे तीन बातों में भिन्न हैं जैसे आहार, शारीरिक क्रिया और सामुदायिक जीवन में लीनता। ये लोग विशेषकर हरी पत्ती वाली तथा मूल वाली सब्जियों, ताजे दूध, ताजे फल और कम तथा मध्यम मात्रा में खाने को वरीयता देते हैं। वे दैनिक भोजन से ऊष्मा लेने को कम एवं मध्यम बनाये रखते हैं। वे शारीरिक क्रिया और टहलने में भी नियमित रूप से व्यस्त रहते हैं और वे परिवार तथा समुदाय के मामलों में भी भाग लेते रहते हैं।

विस्तत प्रकार के शोधों के आधार पर यह अनुभव किया जाने लगा है कि कुछ रोकथाम वाली रणनीति अपनाने से ही अच्छे स्वास्थ्य के प्रति आश्वस्त हुआ जा सकता है। इन रणनीतियों का संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया जा रहा है:

1. **प्राथमिक रोकथाम:** इसमें रोके जा सकने वाले रोग या चोट के घटने को कम या समाप्त किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत व्यवहार और स्वास्थ्य, अभिप्रेरण स्वस्थ व्यवहार के अभ्यास को पुरोन्नत करने और गिरे स्वास्थ्य को सुधारने के लिए कौशलों को सीखने में सहायता करना आता है।

2. **गौण रोकथाम:** इस प्रकार की रोकथाम का उद्देश्य रोगी के रोग की गंभीरता को कम करना है। शीघ्र जानकारी की सहायता से निदानात्मक परीक्षण का उपयोग करके इलाज के लिये कदम उठाये जा सकते हैं। लोग शरीर के अंगों का आत्म परीक्षण और अंगों की क्रियाविधि के बारे में सीख सकते हैं, इससे उन्हें रोग की रोकथाम में सहायता मिल सकती है।

3. **जीवन शैली में बदलाव:** यह बात समझनी चाहिये कि केवल दवा ही रोग के उपचार के लिये पर्याप्त नहीं है जबकि जीवन शैली त्रुटिपूर्ण है। यह समझना जरूरी है कि हमारा सोचना और व्यवहार करना अन्तर्सम्बन्धित है। मन और शरीर साथ–साथ चलते हैं। विभिन्न प्रकार के रोग कई बार हमारे विश्वासों और आदतों के कारण बनते हैं। उत्तम स्वास्थ्य की स्थिति प्राप्त करने के लिये मन और शरीर का सामंजस्य प्राप्त करना महत्वपूर्ण है। इसी विचार से भारतीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद ने स्वास्थ्य और कुशलक्षेम के लिये कहा है कि ये उचित आहार, विहार, आचार और विचार पर निर्भर करते हैं। इनके मुख्य सिद्धान्त, जिनपर हमें ध्यान देना आवश्यक है, निम्नांकित हैं:

आहार

- शाकाहारी भोजन सुरक्षित और शरीर को बल प्रदायक होता है।

- ताजे फल, हरी सब्जियां जिनमें रेशे अधिक होते हैं, दही और शहद जिनसे विटामिन, ऐन्टीआक्सीडेन्ट्स, आइरन आदि मिलते हैं जो स्वास्थ्य के लिये उपयोगी होते हैं।
- विरोधी प्रभाव वाले भोजन से बचना (जैसे गर्म दूध और आइसक्रीम से बचना चाहिये)

आचार

- मौसम के अनुसार दिनचर्या निर्धारित करनी चाहिये।
- पानी अधिक पीना, नियमित मालिश, व्यायाम और योगिक आसन शरीर को चुस्त और क्रियामान रखते हैं।
- उचित समय प्रबन्धन का कौशल विकसित करना।

विहार और विचार

- समायोजनकारी बुद्धि, आलोचना की स्वीकति, दूसरों की सांवेगिक आवश्यकताओं की समझ विकसित करना।
- आत्म संयम का अभ्यास और व्यक्ति को काम और लालच से चालित नहीं होना चाहिये।
- भय, क्रोध, ईर्ष्या और चिन्ता जैसे नकारात्मक संवेगों के प्रभाव में नहीं आना चाहिये।
- स्थायी मित्रता और सामाजिक सम्बन्ध विकसित करना।
- आत्म जागरूकता, दूसरों से सम्बन्ध और आध्यात्मिक झुकाव विकसित करना।

पाठगत प्रश्न 25.4

1. सफल वद्धावस्था दर्शाने वाले लोगों में कौन से महत्वपूर्ण कारक होते हैं?
2. प्राथमिक रोकथाम के लिये उठाये जाने वाले कदमों की सूची बनाइये।
3. आयुर्वेदिक जीवन शैली के अंगों का वर्णन कीजिये।

आपने क्या सीखा

- स्वास्थ्य व्यक्ति कि लिये व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों दष्टियों से महत्वपूर्ण है। इसमें शारीरिक स्थिति, मानसिक और आध्यात्मिक कुशलक्षेम आते हैं।

- समकालीन जीवन परिवार, आर्थिक स्थिति, कार्य और पर्यावरण के संदर्भ में दबावपूर्ण अनुभवों से भरा है।
- प्रमुख दबावों को दबावपूर्ण जीवन घटनायें, दैनिक जीवन की परेशानियां, कार्य सम्बन्धी दबाव और तबाही मचाने वाली विभीषिकायें में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है।
- स्वास्थ्यवर्धक व्यवहार के अन्तर्गत विश्रान्ति, व्यायाम, वजन नियंत्रण और आहार आते हैं। उपयुक्त निदान द्वारा स्वास्थ्य समस्याओं का ध्यान देना चाहिये। सकारात्मक चिन्तन का स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- स्वास्थ्य को खतरों में शराब और नशीले पदार्थों का सेवन, धूम्रपान, तम्बाकू सेवन, निम्नपोषण, व्यायाम का अभाव और असुरक्षित यौन आते हैं।
- सफल वद्धावस्था का सम्बन्ध मध्यम खाने की आदतें, शारीरिक क्रिया और सामुदायिक कार्य से है।
- रोकथाम प्राथमिक और गौण स्तरों पर हो सकता है। फिर भी जीवन शैली में बदलाव की केन्द्रीय भूमिका है।
- आयुर्वेद के अनुसार आहार, विहार, आचार और विचार पर ध्यान दिया जाना चाहिये।

पाठांत अभ्यास

1. स्वास्थ्य और कुशलक्षेम के संप्रत्यय की चर्चा कीजिये।
2. स्वास्थ्य को उन्नत बनाने के कौन–कौन से कारक हैं?
3. स्वास्थ्य के कुछ खतरों का उल्लेख कीजिये।
4. स्वास्थ्य को उन्नत करने की कुछ जानकारी सुझाइये।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

25.1

1. पर्यावरण में परिवर्तन, परिवार का विखराव, प्रतिस्पर्धा, अकेलापन।
2. (क) प्रियजन की मत्यु, बेकारी, ऋण

   (ख) कार्यस्थल पर आना–जाना, पानी इकट्ठा करना, बच्चों को स्कूल भेजना

   (ग) अधिक कार्य–भार, असमंजन भूमिका, समय का दबाव।

25.2

(क) दीर्घश्वांस, रोकना, निकालना

(ख) नियंत्रण, योगदान

(ग) भोजन, पकाना, खाना

25.3

1. ख   2. क   3. घ   4. ग

25.4

1. आहार, शारीरिक क्रिया, सामुदायिक जीवन में लीनता
2. स्वास्थ्य के बारे में सीखना, अभिप्रेरणा को उन्नत करना, स्वस्थ व्यवहार के कौशलों का अभ्यास, निम्न स्वास्थ्य अभ्यास में सुधार
3. आहार, विहार, आचार और विचार

पाठान्त अभ्यास के लिये संकेत

1. सन्दर्भ 25.1
2. सन्दर्भ 25.2
3. सन्दर्भ 25.3
4. सन्दर्भ 25.4